।। श्रीविद्यान्तर्गता ।।

गायत्री ब्रह्मविद्या

सविमर्श-'प्रह्लाद'हिन्दीव्याख्यासहिता

('ज्ञान'-'सपर्या'-खण्डात्मिका)

लेखकः सम्पादकश्च

गोस्वामी प्रह्लाद गिरि

'वेदान्तकेशरी'

बिट्ठलदास संस्कृत सीरीज

३६

***

।।श्रीविद्यान्तर्गता।।

गायत्री ब्रह्मविद्या

सविमर्श–'प्रह्लाद' हिन्दीव्याख्यासहिता

('ज्ञान'–'सपर्या'–खण्डात्मिका)

लेखकः सम्पादकश्च

गोस्वामी प्रह्लाद गिरि

'वेदान्तकेशरी'

उत्तर प्रदेश संस्कृत अकादमी लखनऊ सम्मानितः

वेदान्ताचार्यः, सर्वदर्शनाचार्यः, संस्कृतसाहित्याचार्यः (एम. ए.),

विधिस्नातकः (एल-एल. बी.)

चौखम्बा कृष्णदास अकादमी

वाराणसी

प्रकाशक : चौखम्बा कृष्णदास अकादमी, वाराणसी
मुद्रक : चौखम्बा प्रेस, वाराणसी
संस्करण : प्रथम, वि०सं० २०७४, सन् २०१७

ISBN : 978-81-218-0386-1

All rights reserved. No reproduction or translation of this book or part thereof in any form, should be made. Neither it may be stored in a retrieval system or transmitted by any means, electronic, mechanical, photocopying, recording or otherwise, without the written permission of the author & publisher.

© गोस्वामी प्रह्लाद गिरि
के. २२/२ दुर्गाघाट,
वाराणसी-२२१००१

अपरं च प्राप्तिस्थानम्

चौखम्बा संस्कृत सीरीज आफिस

के० ३७/९९, गोपाल मन्दिर लेन
गोलघर (मैदागिन) के पास
पो० बा० नं० १००८, वाराणसी—२२१००१ (भारत)
फोन : (आफिस) (०५४२) २३३३४५८
(आवास) (०५४२) २३३५०२०, २३३४०३२
Fax : 0542 - 2333458
e-mail : cssoffice01@gmail.com
web-site : www.chowkhambasanskritseries.com

BITTHALDAS SANSKRIT SERIES
36
****

GĀYATRĪ BRAHMAVIDYĀ

ON

ŚRĪVIDYĀ

Edited With
'Prahlad' Hindi Commentary With Critical Notes
(Containing 'Jñāna khaṇḍa' & 'Saparyā khaṇḍa')

Author & Editor
Goswami Prahlad Giri
'Vedantakeshari'
Honoured by
Uttar Pradesh Sanskrit Academy, Lucknoe
Vedantacharya, Sarvadarshanacharya,
Sanskrit-Sahityacharya (M.A.), LL.B.

CHOWKHAMBA KRISHNADAS ACADEMY
VARANASI

Publisher : Chowkhamba Krishnadas Academy, Varanasi
Printer : Chowkhamba Press, Varanasi

ISBN : 978-81-218-0386-1

All rights reserved. No reproduction or translation of this book or part thereof in any form, should be made. Neither it may be stored in a retrieval system, or transmitted, by any means, electronic, mechanical, photocopying, recording or otherwise, without the written permission of the author & publisher.

© **Goswami Prahlad Giri**
K 22/2, Durgaghat,
Varanasi- 221001

Also can be had from :
CHOWKHAMBA SANSKRIT SERIES OFFICE
Publishers and Oriental and Foreign Book-sellers
K . 37/99, Gopal Mandir Lane
At the North Gate of Gopal Mandir
Near Golghar (Maidagin)
Post Box No. 1008, Varanasi- 221001 (India)
Phone { Office : (0542) 2333458
Resi. : (0542) 2334032, 2335020
Fax : 0542 - 2333458
e-mail : cssoffice01@gmail.com
web-site : www.chowkhambasanskritseries.com

समर्पणम्...

यत्करोषि यदश्नासि यज्जुहोषि ददासि यत्।
यत्तपस्यसि कौन्तेय! तत्कुरुष्व मदर्पणम्॥

श्रीमद्भगवद्गीतावचनानुसारं

प्रातःस्मरणीय-पूज्य-'परमगुरु'-

राष्ट्रपतिसम्मानित-महामहोपाध्याय-

स्वर्गीय-

सर्वतन्त्रस्वतन्त्र-महामाहेश्वर-

प्राचार्य श्रीरामेश्वर 'शिवयोगि' महोदयानां

पुण्यस्मृतौ.....

गोस्वामी प्रह्लाद गिरि
'वेदान्तकेशरी'

।। श्रीदक्षिणामूर्त्तये नमः।।

शान्तं त्रिनेत्रं विधुकान्तिशुभ्रं
संविभ्रतं दोष्कशुभैश्चतुर्भिः।
मुक्ताक्षमालां कलशं सुधायाः
श्रीज्ञानमुद्रामपि पुस्तकञ्च।।१।।

दिव्याम्बरं चन्दनगन्धलेपैः
समुज्ज्वलाङ्गं मणिरत्नकैश्च।
वीरासनस्थञ्च शशाङ्कचूडं
श्रीदक्षिणामूर्तिगुरुं स्मरामि।।२।।

होत्राग्नि-हौत्राग्नि-हविष्य-होतृ-
होमादि-सर्वाकृति-भासमानम्।
यद्ब्रह्मतद्बोधवितारिणीभ्यां
नमो नमः श्रीगुरुपादुकाभ्याम्।।३।।

सम्पादकीयम्

सत्स्वरूप परशिवको प्राप्त करनेके लिए उसकी सत्ता चिदानन्दमयी परा शक्तिकी उपासना करनी पड़ती है। परा शक्ति ही 'परा विद्या' कहलाती है। यही उपासकको 'भोग' तथा 'मोक्ष'का प्रदान करती है। 'परा विद्या' केवल 'भोग'की प्राप्ति हेतु उपासना करनेवाले उपासकके लिए 'श्रीविद्या'के रूपमें जानी जाती है; जबकि केवल मोक्षकी प्राप्ति हेतु उपासना करनेवाले उपासकके लिए 'ब्रह्मविद्या' कहलाती है। वस्तुतः 'परा विद्या, श्रीविद्या तथा ब्रह्मविद्या' ये पर्याय हैं। इन सभी विद्याओंका लक्ष्य है–पूर्ण 'भोग' तथा 'मोक्ष'की प्राप्ति कराना। इस उद्देश्यकी पूर्ति हेतु प्रस्तुत ग्रन्थ सरल विधिसे निर्देशन देता है जिससे उपासकको उस परशिवकी पूर्णताकी प्रत्यभिज्ञा हो सके।

गायत्री ब्रह्मविद्या। श्रीविद्यान्तर्गता। सविमर्श-'प्रह्लाद'-हिन्दी-व्याख्यासहिता। ज्ञान-सपर्या-खण्डात्मिका।

'श्रीविद्या' साधनाका सर्वश्रेष्ठ साधन दशचक्रात्मक 'श्रीचक्र' है। प्रस्तुत ग्रन्थमें दशचक्रात्मक 'श्रीगायत्री ब्रह्मविद्या चक्र'का निरूपण किया गया है। श्रीदक्षिणामूर्त्ति 'शिव' ही गुरु हैं, श्रीगायत्री ब्रह्म-विद्याकी त्रिबीजा ब्रह्मगायत्री विद्या ही मन्त्र है तथा श्रीगायत्री ब्रह्मविद्या ही देवता है। श्रीदक्षिणामूर्त्ति गुरुपरम्परामें इसकी उपासना ग्यारह आवरणोंके माध्यमसे की जाती है।

प्रस्तुत ग्रन्थमें दो खण्ड हैं–ज्ञानखण्ड तथा सपर्याखण्ड। ज्ञान-खण्डमें पीठशक्ति श्रीगायत्री ब्रह्मविद्याके पारम्परिक त्रिबीजा, त्रिपदा तथा तुरीया ब्रह्मगायत्री मन्त्रोंके अत्यन्त गूढ़ रहस्योंका निरूपण सरल भाषामें किया गया है; जबकि सपर्याखण्डके अन्तर्गत स्वदीक्षाकी

विधि, पूजाविधि तथा वन्दनाका निरूपण हुआ है। यह एक सम्पूर्ण पद्धति है। ग्रन्थका मूल संस्कृत तथा अनुवाद हिन्दी भाषामें निरूपित है। यह संस्करण श्रीगायत्री ब्रह्मविद्या परम्पराका अत्यन्त उपयोगी ग्रन्थरत्न है।

ज्ञानखण्डम्

'गायत्री ब्रह्मविद्या' ग्रन्थका प्रथम खण्ड है–ज्ञानखण्ड। इस ग्रन्थमें ग्यारह आवरण विद्यमान हैं जो कि श्रीचक्रात्मक श्रीगायत्री ब्रह्मविद्या चक्रमें अवस्थित देवताओंके स्वरूपका प्रदर्शन करते हैं। ज्ञानखण्डके अन्तर्गत विभिन्न आगम तथा शास्त्रोंसे समर्थित ज्ञानात्मक तथ्योंका प्रतिपादन किया गया है जिनके विशिष्ट विवेचन प्रसङ्गानुसार स्थान-स्थान पर प्राप्त हैं। अब ग्रन्थके आवरणोंका विवरण प्रस्तुत किया जा रहा है:–

प्रथमावरणमें सर्वप्रथम 'श्रीपरदेवता'के स्वरूपका वर्णन किया गया है। दशचक्रात्मक परयन्त्रराज 'श्रीचक्र'का निरूपण हुआ है। इन्द्र आदि दश दिक्पालोंके स्वरूपका वर्णन किया गया है। इन्द्र आदि दश दिक्पाल हैं–इन्द्र, अग्नि, यम, नैऋत, वरुण, वायु, कुवेर, ईशान, ब्रह्मा तथा अनन्त दिक्पाल। सृष्टिक्रमसे प्रारम्भ करके सबसे पहले त्रैलोक्यमोहनकर भूपुर चक्रका निरूपण किया गया है। भूपुर चक्रके चार द्वारोंमें द्वारपाल तथा द्वारनायिकाके रूपमें सर्वयोगिनी स्वरूप सर्वभूत, क्षेत्रपति, गणनायक, वटुकभैरव, तिरस्करी, वनदुर्गा, कामदेव, वसन्त, शङ्खनिधि, पद्मनिधि, कुब्जकेशी, सिद्धलक्ष्मी, उन्मनी तथा दक्षिण-कालिकाके स्वरूपका वर्णन हुआ है। भूपुर चक्रकी प्रथम रेखामें स्थित अणिमा आदि ग्यारह सिद्धियोंके स्वरूपका वर्णन हुआ है। अणिमा आदि ग्यारह सिद्धियाँ हैं–अणिमा, गरिमा, लघिमा, महिमा, ईशिता, वशिता, प्राकाम्यका, सर्वभुक्तिकरी, इच्छा, प्राप्ति तथा सर्वार्थसिद्धि। भूपुर चक्रकी द्वितीय रेखामें स्थित ब्राह्मी आदि आठ मातृकाओंके स्वरूपका वर्णन हुआ है। ब्राह्मी आदि आठ मातृकाएँ हैं–ब्राह्मी, माहेश्वरी, कौमारी, वैष्णवी, वाराही,

माहेन्द्री, चामुण्डा तथा महालक्ष्मी मातृका। भूपुर चक्रकी तृतीय रेखामें स्थित सर्वसङ्क्षोभिणी आदि ग्यारह मुद्राओंके स्वरूपका वर्णन हुआ है। सर्वसङ्क्षोभिणी आदि ग्यारह मुद्राएँ हैं—सर्वसङ्क्षोभिणी, महा-योनि, सर्वविद्राविणी, सर्वाकर्षिणी, सर्ववशङ्करी, सर्वोन्मादिनी, सर्व-महाङ्कुशा, सर्वखेचरी, सर्वबीजा, सर्वयोनि तथा सर्वत्रिखण्डा मुद्रा। इसके बाद भूपुर चक्रकी चक्रेश्वरी 'श्रीत्रिपुरा'के स्वरूपका वर्णन किया गया है।

द्वितीयावरणमें त्रैवर्गसाधनकर वृत्तत्रय चक्रका निरूपण हुआ है। वृत्तत्रय चक्रके प्रथम वृत्तमें स्थित कालरात्री आदि ऊनतीस मातृकाओंके स्वरूपका वर्णन किया गया है। कालरात्री आदि ऊनतीस मातृकाएँ हैं—कालरात्री, खातिता, गात्री, घण्टा, ङार्णात्मिका, चण्डा, छात्मिका, जया, झङ्कारिणी, ज्ञानरूपा, टङ्कहस्ता, ठङ्कारिणी, डकारिणी, ढङ्कारिणी, णकारिणी, तकारिणी, थाणी, दाक्षायणी, धात्री, नादा, पार्वती, फेट्कारिणी, बन्धिनी, भद्रकाली, माया, श्री, षण्ढा, सरस्वती तथा हंसवती मातृका। वृत्तत्रय चक्रके द्वितीय वृत्तमें स्थित अमृता आदि षोलह मातृकाम्बाओंके स्वरूपका वर्णन किया गया है। अमृता आदि षोलह मातृकाम्बाएँ हैं—अमृता, आकर्षिणी, इन्द्राणी, ईशानी, उमा, ऊर्ध्वकेशी, ऋद्धिरात्री, ॠद्धीश्वरी, ऌता, ॡका, एक-पादा, ऐश्वर्यिका, ओङ्कारात्मिका, औषधा, अम्बिका तथा अक्षरात्मिका मातृकाम्बा। वृत्तत्रय चक्रके तृतीय वृत्तमें स्थित कामेश्वरी आदि षोलह तिथि-नित्याकलाओंके स्वरूपका वर्णन किया गया है। कामेश्वरी आदि षोलह तिथि-नित्याकलाएँ हैं—कामेश्वरी, भगमालिनी, नित्यक्लिन्ना, भेरुण्डा, वह्निवासिनी, वज्रेश्वरी, शिवदूती, त्वरिता, कुलसुन्दरी, विमला, नीलपताका, विजया, सर्वमङ्गला, ज्वाला-मालिनी, विचित्रा तथा श्रीसुन्दरी तिथि-नित्याकला। इसके बाद वृत्तत्रय चक्रेश्वरी 'त्रिपुरेशिनी'के स्वरूपका वर्णन हुआ है।

तृतीयावरणमें सर्वाशापरिपूरक षोडश दल चक्रका निरूपण हुआ है। षोडश दल चक्रके षोलह दलोंमें कामाकर्षिणी आदि षोलह

नित्यशक्तियोंके स्वरूपका वर्णन हुआ है। कामाकर्षिणी आदि षोलह नित्यशक्तियाँ हैं–कामाकर्षिणी, बुद्ध्याकर्षिणी, अहङ्काराकर्षिणी, शब्दाकर्षिणी, स्पर्शाकर्षिणी, रूपाकर्षिणी, रसाकर्षिणी, गन्धाकर्षिणी, चित्ताकर्षिणी, धैर्याकर्षिणी, स्मृत्याकर्षिणी, नामाकर्षिणी, बीजा-कर्षिणी, आत्माकर्षिणी, अमृताकर्षिणी तथा शरीराकर्षिणी नित्यशक्ति। इसके बाद षोडश दल चक्रकी चक्रेश्वरी 'त्रिपुरेश्वरी'के स्वरूपका वर्णन किया गया है।

चतुर्थावरणमें सर्वसङ्क्षोभणकर अष्टदल चक्रका निरूपण किया गया है। अष्टदल चक्रके आठ दलोंमें अनङ्गकुसुमा आदि आठ देवियोंके स्वरूपका वर्णन हुआ है। अनङ्गकुसुमा आदि आठ देवियाँ हैं–अनङ्गकुसुमा, अनङ्गमेखला, अनङ्गमदना, अनङ्गमदनातुरा, अनङ्ग-रेखा, अनङ्गवेगिनी, अनङ्गाङ्कुशा तथा अनङ्गमालिनी देवी। इसके बाद अष्टदल चक्रेश्वरी 'त्रिपुरसुन्दरी'के स्वरूपका वर्णन हुआ है।

पञ्चमावरणमें सर्वसौभाग्यदायक चतुर्दशार चक्रका निरूपण किया गया है। चतुर्दशार चक्रके चौदह अराओंमें सर्वसङ्क्षोभिणी आदि चौदह शक्तियोंके स्वरूपका वर्णन हुआ है। सर्वसङ्क्षोभिणी आदि चौदह शक्तियाँ हैं–सर्वसङ्क्षोभिणी, सर्वविद्राविणी, सर्वा-कर्षिणी, सर्वाह्लादिनी, सर्वसम्मोहिनी, सर्वस्तम्भिनी, सर्वजृम्भिणी, सर्ववशङ्करी, सर्वरञ्जिनी, सर्वोन्मादिनी, सर्वार्थसाधिनी, सर्वसम्पत्ति-पूर्णा, सर्वमन्त्रमयी तथा सर्वद्वन्द्वक्षयङ्करी शक्ति। इसके बाद चतुर्दशार चक्रकी चक्रेश्वरी 'त्रिपुरवासिनी'के स्वरूपका वर्णन है।

षष्ठावरणमें सर्वार्थसाधक बहिर्दशार चक्रका निरूपण किया गया है। बहिर्दशार चक्रके दश अराओंमें सर्वसिद्धिप्रदा आदि दश देवियोंके स्वरूपका वर्णन हुआ है। सर्वसिद्धिप्रदा आदि दश देवियाँ हैं–सर्वसिद्धिप्रदा, सर्वसम्पत्प्रदा, सर्वप्रियङ्करी, सर्वमङ्गलकारिणी, सर्व-कामप्रदा, सर्वदुःखविमोचिनी, सर्वमृत्युविनाशिनी, सर्वविघ्ननिवारिणी, सर्वाङ्गसुन्दरी तथा सर्वसौभाग्यदायिनी देवी। इसके बाद बहिर्दशार चक्रकी चक्रेश्वरी 'त्रिपुराश्री'के स्वरूपका वर्णन हुआ है।

सप्तमावरणमें सर्वरक्षाकर अन्तर्दशार चक्रका निरूपण किया गया है। अन्तर्दशार चक्रके दश अराओंमें सर्वज्ञा आदि दश देवियोंके स्वरूपका वर्णन हुआ है। सर्वज्ञा आदि दश देवियाँ हैं–सर्वज्ञा, सर्वशक्तिमयी, सर्वैश्वर्यप्रदायिनी, सर्वज्ञानमयी, सर्वव्याधिविनाशिनी सर्वाधारस्वरूपिणी, सर्वपापहरा, सर्वानन्दमयी, सर्वरक्षास्वरूपिणी तथा सर्वेप्सितार्थप्रदा देवी। इसके बाद अन्तर्दशार चक्रकी चक्रेश्वरी 'त्रिपुरमालिनी'के स्वरूपका वर्णन हुआ है।

अष्टमावरणमें सर्वरोगहर अष्टार चक्रका निरूपण किया गया है। अष्टार चक्रके आठ अराओंमें वशिनी आदि आठ वाग्देवताम्बाओंके स्वरूपका वर्णन हुआ है। वशिनी आदि आठ वाग्देवताम्बाएँ हैं–वशिनी, कामेश्वरी, मोहिनी, विमला, अरुणा, जयिनी, सर्वेश्वरी तथा कौलिनी वाग्देवताम्बा। इसके बाद अष्टार चक्रकी चक्रेश्वरी 'त्रिपुरा-सिद्धा'के स्वरूपका वर्णन हुआ है।

नवमावरणमें सर्वसिद्धिप्रद त्रिकोण चक्रका निरूपण किया गया है। त्रिकोण चक्रके पूर्वमें 'सृष्टिक्रम'से गुरुमण्डलकी प्रथम रेखामें सर्वप्रथम ब्रह्मा आदि बारह दिव्य गुरु, शुक आदि ग्यारह सिद्ध गुरु तथा विष्णु आदि छह सुमानव गुरुओंके स्वरूपका वर्णन किया गया है। ब्रह्मा आदि बारह दिव्य गुरु हैं–ब्रह्मा, ब्रह्मशक्ति, विष्णु, विष्णु-शक्ति, रुद्र, रुद्रशक्ति, ईश्वर, ईश्वरशक्ति, सदाशिव, सदाशिवशक्ति, आदिनाथ तथा आदिनाथशक्ति दिव्य गुरु। शुक आदि ग्यारह सिद्ध गुरु हैं–शुक, व्यास, वामदेव, रैवतक, दत्तात्रेय, ऋभुक्षज, सनत्सुजात, सनत्कुमार, सनातन, सनन्द तथा सनक सिद्ध गुरु। विष्णु आदि छह सुमानव गुरु हैं–विष्णु, माधव, महेन्द्र, भास्कर, महेश तथा नृसिंह सुमानव गुरु। गुरुमण्डलकी द्वितीय रेखामें अपने श्रीगुरु आदि सात गुरुओंके स्वरूपका वर्णन किया गया है। श्रीगुरु आदि सात गुरु हैं–श्रीगुरु, परम गुरु, परापर गुरु, परमेष्ठि गुरु, परमाचार्य गुरु, पूर्वसिद्ध गुरु तथा आदिसिद्ध गुरु। गुरुमण्डलकी तृतीय रेखामें श्रीदक्षिणामूर्त्ति गुरुके स्वरूपका वर्णन किया गया है।

त्रिकोणके प्रत्येक कोणके बाहर युगलात्मरूपसे हृदयदेवी आदि षडङ्गयुवतियोंके स्वरूपका वर्णन हुआ है। हृदयदेवी आदि षडङ्ग-युवतियाँ हैं—हृदयदेवी, शिरोदेवी, शिखादेवी, कवचदेवी, नेत्रदेवी तथा अस्त्रदेवी अङ्गयुवति। त्रिकोणके तीनों कोणोंमें षोडशी तिथि आदि तीन नित्याकलाओंके स्वरूपका वर्णन हुआ है। षोडशी तिथि आदि तीन नित्याकलाएँ हैं—षोडशी तिथि, सप्तदशी तथा अष्टादशी नित्याकला। त्रिकोणके कल्पित भागचतुष्टयमें जृम्भण बाण आदि चार आयुध शक्तियोंके स्वरूपका वर्णन किया गया है। जृम्भण बाण आदि चार आयुध शक्तियाँ हैं—जृम्भण बाणशक्ति, मोहन चापशक्ति, वशीकरण पाशशक्ति तथा स्तम्भन अङ्कुशशक्ति। इसके बाद त्रिकोण चक्रकी चक्रेश्वरी 'श्रीत्रिपुराम्बिका'के स्वरूपका वर्णन हुआ है।

दशमावरणमें सर्वानन्दमय बिन्दु चक्रका निरूपण हुआ है। बिन्दु चक्रमें रति आदि पन्द्रह देवियोंके स्वरूपका वर्णन हुआ है। रति आदि पन्द्रह देवियाँ हैं—रति, प्रीति, मनोभवा, द्राविणी, क्षोभिणी, वशीकरिणी, आकर्षिणी, सुमीनकेतना, सुभगा, भगा, भगसर्पिणी, भगमालिनी, अनङ्गा, अनङ्गमेखला तथा अनङ्गमदनातुरा देवी। इसके बाद बिन्दु चक्रकी चक्रेश्वरी 'त्रिपुरभैरवी'के स्वरूपका वर्णन है।

एकादशावरणमें कल्पित सर्वानन्दस्वरूप महाबैन्दव चक्रका निरूपण हुआ है। इसके बाद महाबैन्दव चक्रकी चक्रेश्वरी 'श्रीत्रिपुर-सुन्दरी'के स्वरूपका वर्णन हुआ है। कल्पित 'षट्कोणक'में ब्रह्मा आदि षट्शाम्भव तथा श्रीमहाशाम्भवके स्वरूपका वर्णन हुआ है। ब्रह्मा आदि षट्शाम्भव हैं—ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र, ईश्वर, सदाशिव तथा आदि-नाथ शाम्भव। मध्यमें श्रीमहाशाम्भव हैं। श्रीचक्रमें चौबीस गायत्रीवर्ण-मातृकाओंके स्वरूपका वर्णन किया गया है। इसके बाद वर्णसमष्टि-रूपिणी तुरीया ब्रह्मगायत्री वेदमाता 'श्रीगायत्री ब्रह्मविद्या' पीठशक्तिके स्वरूपका वर्णन किया गया है।

सपर्याखण्डम्

प्रस्तुत *'गायत्री ब्रह्मविद्या'* ग्रन्थका द्वितीय खण्ड है—सपर्या

खण्ड। सपर्याखण्डमें तीन खण्ड हैं—दीक्षात्मक सपर्याखण्ड, पूजात्मक सपर्याखण्ड तथा वन्दनात्मक सपर्याखण्ड। इस प्रकारसे यह 'दीक्षा-पूजा-वन्दनात्मकं सपर्याखण्डम्' कहलाता है। अब तीनों खण्डोंका विवरण प्रस्तुत है:—

दीक्षात्मकं सपर्याखण्डम्—प्रस्तुत ग्रन्थके 'दीक्षात्मकं सपर्या-खण्डम्'के अन्तर्गत 'श्रीगायत्री-ब्रह्मविद्या-परम्परा'का निरूपण हुआ है जिसमें कि देवता, मन्त्र तथा गुरुके स्वरूपका वर्णन किया गया है। उसके बाद 'श्रीगायत्री-ब्रह्मविद्या-मन्त्रदीक्षाविधिः'का निरूपण हुआ है जिसमें कि अदीक्षित साधककी दीक्षाविधिका वर्णन किया गया है। यदि किसी साधकको सद्गुरुका दर्शन नहीं हो पाता है तो ऐसी परिस्थितिमें इस प्रकरणमें उल्लिखित दीक्षाविधिसे साधक स्वयं दीक्षित हो सकता है और उसे भी किसी सद्गुरुसे दीक्षित साधककी तरह वे समस्त सिद्धियाँ प्राप्त हो सकेंगी।

पूजात्मकं सपर्याखण्डम्—प्रस्तुत ग्रन्थके 'पूजात्मकं सपर्या-खण्डम्'के अन्तर्गत 'श्रीगायत्री-ब्रह्मविद्या-चक्रपूजाविधिः'का निरूपण हुआ है जिसमें कि प्रारम्भिक पूजाविधिके साथ-साथ श्रीगायत्री-ब्रह्मविद्याचक्रके आवरणोंकी पूजाविधिका भी वर्णन किया गया है।

वन्दनात्मकं सपर्याखण्डम्—प्रस्तुत ग्रन्थके 'वन्दनात्मकं सपर्या-खण्डम्'के अन्तर्गत 'श्रीगायत्रीब्रह्मविद्या-चक्रावरणवन्दनम्'का निरूपण हुआ है जिसमें कि सम्पूर्ण आवरणोंकी वन्दनाका वर्णन मूल संस्कृत तथा अनुवाद हिन्दीमें किया गया है जिससे कि साधक 'सूक्ष्म साधना' कर सके। ग्रन्थमें 'श्रीविद्या'के अन्तर्गत श्रीगायत्री ब्रह्मविद्याकी उपासनाके साङ्गोपाङ्गका निरूपण किया गया है।

कृतज्ञता प्रकाश

सर्वप्रथम मैं पारम्परिक आगम शास्त्रोंके ज्ञानका प्रदान करने-वाली अपनी गुरुपरम्पराका स्मरण करता हूँ। अपनी गुरुपरम्परामें मैं अपने पूज्य 'श्रीगुरु' राष्ट्रपतिसम्मानित काशीपण्डितसभाध्यक्ष स्वर्गीय म. म. पण्डितराज *डॉ. गोपाल शास्त्री दर्शनकेशरी* 'शिव'जीका

हृदयमें स्मरण करता हूँ कि जिनकी कृपासे आज मैं 'शैवागम परम्परा'में प्रविष्ट हूँ। मैं अपने परम पूज्य 'परमगुरु' राष्ट्रपतिसम्मानित सर्वतन्त्र-स्वतन्त्र महामाहेश्वर स्वर्गीय महामहोपाध्याय प्राचार्य *श्रीरामेश्वर 'शिवयोगी'*जीका स्वात्मैकरूपसे स्मरण करता हूँ जो कि मेरे हृदयमें सदा विराजमान हैं। इन्हींसे प्राप्त ज्ञानके आधार पर प्रस्तुत ग्रन्थकी रचना की गयी है। अतः यह ग्रन्थ उनकी स्मृतिमें समर्पित है।

प्रस्तुत ग्रन्थके प्रकाशकके सञ्चालकवर्गको अशेष धन्यवाद देता हूँ कि जिन्होंने इसका अत्यन्त सुन्दर प्रकाशन कर श्रीगायत्री ब्रह्मविद्याके साधकोंका महान् उपकार किया है।

अन्तमें दक्षिणामूर्ति गुरुपरम्पराके अन्तर्गत श्रीगायत्री ब्रह्मविद्याकी साधना करनेवाले साधकवर्गको हार्दिक शुभकामना। इति शिवम्।।

नवसंवत्सर — विदुषां वशंवदः

विक्रम संवत् २०७४ — *गोस्वामी प्रह्लाद गिरि*

वाराणसी। — 'वेदान्तकेशरी'

विषयसूची

विषयः *पृष्ठाङ्कः*

ज्ञानखण्डम्

श्रीगायत्रीब्रह्मविद्यापरम्परा ३

(श्रीगायत्री-ब्रह्मविद्या-यन्त्र-मन्त्र-श्रीगुरुपरम्परानिरूपणम्)

प्रथमावरणम् ७

(त्रैलोक्यमोहनकरभूपुरचक्र-निरूपणम्)

द्वितीयावरणम् ६८

(त्रैवर्गसाधनकरवृत्तत्रयचक्र-निरूपणम्)

तृतीयावरणम् ९७

(सर्वाशापरिपूरकषोडशदल-चक्रनिरूपणम्)

चतुर्थावरणम् १०५

(सर्वसङ्क्षोभणकराष्ट-दल-चक्रनिरूपणम्)

पञ्चमावरणम् ११२

(सर्वसौभाग्यदायकचतुर्दशार-चक्रनिरूपणम्)

षष्ठावरणम् ११९

(सर्वार्थसाधकबहिर्दशारचक्र-निरूपणम्)

सप्तमावरणम् १२६

(सर्वरक्षाकरान्तर्दशार-चक्र-निरूपणम्)

अष्टमावरणम् १३४

(सर्वरोगहराष्टारचक्रनिरूपणम्)

नवमावरणम् १४४

(सर्वसिद्धिप्रदत्रिकोणचक्रनिरू-पणम्)

दशमावरणम् १६२

(सर्वानन्दमयबिन्दुचक्रनिरूपणम्)

एकादशावरणम् १७२

(सर्वानन्दस्वरूपमहाबैन्दवचक्रनिरूपणम्)

सपर्याखण्डम्

दीक्षात्मकं सपर्याखण्डम्

उपक्रमः २२०

श्रीगायत्रीब्रह्मविद्यापरम्परा २२४

विषयः	*पृष्ठाङ्कः*
मन्त्रदीक्षाविधिः	२२८
पूजात्मकं सपर्याखण्डम्	
चक्रपूजाविधिः	२४५
प्रथमावरणपूजनम्	२५८
द्वितीयावरणपूजनम्	२७६
तृतीयावरणपूजनम्	२८७
चतुर्थावरणपूजनम्	२९२
पञ्चमावरणपूजनम्	२९५
षष्ठावरणपूजनम्	२९९
सप्तमावरणपूजनम्	३०३
अष्टमावरणपूजनम्	३०७
नवमावरणपूजनम्	३११
दशमावरणपूजनम्	३२३
एकादशावरणपूजनम्	३२७
श्रीगायत्रीब्रह्मविद्यापूजनम्	३३३
वन्दनात्मकं सपर्याखण्डम्	
चक्रावरणवन्दना	३३७
प्रथमावरणवन्दना	३३८
द्वितीयावरणवन्दना	३५१
तृतीयावरणवन्दना	३५६
चतुर्थावरणवन्दना	३५९
पञ्चमावरणवन्दना	३६१

विषयः	*पृष्ठाङ्कः*
षष्ठावरणवन्दना	३६३
सप्तमावरणवन्दना	३६५
अष्टमावरणवन्दना	३६८
नवमावरणवन्दना	३७१
दशमावरणवन्दना	३७६
एकादशावरणवन्दना	३७९
परिशिष्टम्	
नित्यार्चनम्	३८२

।।श्रीः।।

श्रीविद्यान्तर्गता

गायत्री ब्रह्मविद्या

सविमर्श-'प्रह्लाद'हिन्दीव्याख्यासहिता

(ज्ञानखण्डम्)

❖❖❖

॥ श्रीगायत्रीब्रह्मविद्यायै नमः ॥

नवत्रिकोणै रचितेषु दिव्य-
स्यन्देषु संस्थाः किल वर्णरूपाः।
विभिन्नमूर्त्तीर्हरिकेशपूज्या
वन्दे चतुर्विंशतिवेदमातॄः॥१॥

स्यन्दे स्थिता मनुमयी रुचिराऽन्यभागे
पूर्वोक्तवेदजननी सुसमष्टिरूपा।
मुक्ताभविद्रुमसुकाञ्चननीलशुक्ल-
तत्त्वात्मवर्णयुतपञ्चमुखाब्जयुक्ता॥
पाशाङ्कुशाब्जयुगलाभयपात्रशङ्ख-
श्रीमद्रथाङ्गवरसूत्रकरा स्मितास्या।
सङ्गीयते च मुखरैः परमेश्वरी या
तां वै नमामि सततं निगमादिरूपाम्॥२॥

❖❖❖

॥श्रीः॥

श्रीविद्यान्तर्गता

गायत्री ब्रह्मविद्या

सविमर्श-'प्रह्लाद'हिन्दीव्याख्यासहिता

(ज्ञानखण्डम्)

❖❖❖

॥ श्रीगायत्रीब्रह्मविद्यायै नमः ॥

श्रीगायत्रीब्रह्मविद्यापरम्परा

श्रीगायत्री-ब्रह्मविद्या- यन्त्र-परम्परा

गायत्री ब्रह्मविद्या (ज्ञानखण्डम्)—श्रीविद्याके अन्तर्गत श्रीगायत्री ब्रह्मविद्या चक्रका निरूपण किया गया है। 'गायत्री ब्रह्मविद्या' ग्रन्थ दो खण्डोंमें प्रस्तुत है। प्रथम खण्ड है—ज्ञानखण्ड तथा द्वितीय खण्ड है—सपर्याखण्ड। सपर्याखण्ड दीक्षात्मक, पूजात्मक तथा वन्दनात्मक है। प्रस्तुत ज्ञानखण्डमें श्रीगायत्री ब्रह्मविद्या परम्पराके अन्तर्गत 'श्रीगायत्री ब्रह्मविद्या चक्र'के स्थूल, सूक्ष्म तथा पर ज्ञानका विशिष्टरूपसे विवेचन किया गया है। विशिष्ट स्थलोंमें पारम्परिक रहस्योंका उद्घाटन किया गया है जिससे साधकोंकी साधना गतिशीलताको प्राप्त कर सके।

श्रीगायत्री ब्रह्मविद्या परम्परा—पारमेश्वरी भगवती परा शक्ति श्रीमहात्रिपुरसुन्दरी परदेवता 'श्री'के रूपमें विख्यात है। 'विद्या' कहते हैं—ज्ञानको। 'श्री'के ज्ञानको 'श्रीविद्या' कहते हैं। 'श्रीविद्या'से साधक भोग और मोक्षको प्राप्त कर लेता है। भोगको 'शक्ति' तथा मोक्षको 'शिव' कहते हैं। श्रीमहात्रिपुरसुन्दरीकी त्रिबीजा ब्रह्मगायत्री तथा तुरीया ब्रह्मगायत्रीकी मन्त्रावस्था ही श्रीगायत्री ब्रह्मविद्या है।

श्रीगायत्री ब्रह्मविद्या यन्त्रपरम्परा—श्रीगायत्री ब्रह्मविद्याके यन्त्रको 'श्रीचक्रात्मक

'गायत्रीब्रह्मविद्यायाः पीठं श्रीयन्त्ररूपकम्।
वक्ष्यामि तत्स्वरूपञ्च शृणुष्व परमेश्वरि॥१॥
चतुरस्रं त्रिवृत्तञ्च पत्रषोडशकं तथा।
अष्टदलञ्च मन्वस्रं दशारञ्च दशारकम्॥२॥
अष्टारकं त्रिकोणञ्च बैन्दवं चार्चयेत्क्रमात्।
गायत्रीब्रह्मविद्याया यन्त्रमेतत्कुलेश्वरि॥३॥'

'चतुरस्रम्, त्रिवृत्तम्, षोडशदलम्, अष्टदलम्, चतुर्दशारम्, बहिर्दशारम्, अन्तर्दशारम्, अष्टकोणम्, त्रिकोणम्, बिन्दुचक्रञ्च।' इत्येवमत्र दशचक्रात्मकस्य श्रीगायत्री-ब्रह्मविद्या-यन्त्रस्य पूजनमपि स्यादिति परम्परा।

श्रीगायत्री-ब्रह्मविद्या-मन्त्र-परम्परा

'गायत्रीब्रह्मविद्याया मन्त्रौ वक्ष्ये सनातनौ।
ययोः स्मरणमात्रेण भुक्तिमुक्तिफलं लभेत्॥१॥
आदौ तारस्ततो माया रमा च तदनन्तरम्।
त्रिबीजाब्रह्मगायत्र्या मन्त्रोऽयं कथितः प्रिये॥२॥
अहं विमर्शरूपोऽयं मन्त्रराजः सनातनः।
तुरीयाब्रह्मगायत्र्या विज्ञेयः परमेश्वरि॥३॥
गायत्रीब्रह्मविद्याया मन्त्रौ तु कथितौ प्रिये।
ययोर्विज्ञानमात्रेण भोक्ता मुक्तो भवेन्नरः॥४॥'

श्रीयन्त्र' कहते हैं। 'श्रीचक्र' दशचक्रात्मक चक्रराजके रूपमें विख्यात है। दश चक्र हैं—चतुरस्र, त्रिवृत्तक, षोडशदल, अष्टदल, चतुर्दशार, बहिर्दशार, अन्तर्दशार, अष्टकोण, त्रिकोण तथा बिन्दु चक्र।' श्रीगायत्री ब्रह्मविद्याकी उपासनाके लिए श्रीयन्त्र सर्वश्रेष्ठ साधन है। इस परम्परामें दशों चक्रोंकी पूजा की जाती है।

श्रीगायत्री ब्रह्मविद्या मन्त्रपरम्परा-श्रीगायत्री ब्रह्मविद्याके मन्त्र हैं—त्रिबीजा ब्रह्मगायत्री तथा तुरीया ब्रह्मगायत्री। 'त्रिबीजा ब्रह्मगायत्री' है—'ॐ ह्रीं श्रीं'। 'तुरीया

श्रीगायत्रीब्रह्मविद्यामन्त्रपरम्परायां द्वौ मन्त्रौ स्तः। तत्रैकः त्रिबीजा-ब्रह्मगायत्रीमन्त्रः–'ॐ ह्रीं श्रीं।' अपरश्च तुरीयाब्रह्मगायत्रीमन्त्रः–'अहम्।' इति। तुरीयाब्रह्मगायत्रीमन्त्रस्य बाह्यदीक्षा नैव भवतीति परम्परा स्यादिति निश्चप्रचम्।

श्रीगायत्री-ब्रह्मविद्या-गुरु-परम्परा

।। श्रीदक्षिणामूर्तिगुरवे नमः ।।

'शान्तं त्रिनेत्रं विधुकान्तिशुभ्रं
संविभ्रतं दोष्कशुभैश्चतुर्भिः।
मुक्ताक्षमालां कलशं सुधायाः
श्रीज्ञानमुद्रामपि पुस्तकञ्च।।१।।
दिव्याम्बरं चन्दनगन्धलेपैः
समुज्ज्वलाङ्गं मणिरत्नकैश्च।
वीरासनस्थञ्च शशाङ्कचूडं
श्रीदक्षिणामूर्तिगुरुं स्मरामि।।२।।'

अत्र शान्तः, त्रिनेत्रः, चन्द्रकान्तिशुभ्रः, चतुर्भुजः, मुक्ताक्षमाला-सुधाकलश-ज्ञानमुद्रा-पुस्तकाढ्यः, दिव्यवस्त्रालङ्कृतः, चन्दन-गन्ध-लेपैः मणि-रत्नकैश्च समुज्ज्वलाङ्गः, वीरासनस्थः, चन्द्रशेखरः, श्रीदक्षिणा-मूर्तिः शिव एव गुरुः स्यादिति निश्चप्रचम्।

ब्रह्मगायत्री' है–'अहम्'। तुरीया ब्रह्मगायत्री मन्त्रकी बाह्य दीक्षा नहीं होती है। यही परम्परा है।

श्रीगायत्री ब्रह्मविद्या गुरुपरम्परा–श्रीगायत्री ब्रह्मविद्याकी गुरु-परम्पराके अन्तर्गत श्रीगुरुदेवके रूपमें श्रीदक्षिणामूर्ति शिव ही आदि-गुरुके रूपमें विराजमान हैं। श्रीदक्षिणामूर्ति गुरु शान्त हैं; त्रिनेत्रधारी हैं। उनके 'चन्द्र, सूर्य तथा वह्नि' ये तीन ज्योतिःस्वरूप नेत्र हैं; शरीरकी कान्ति चन्द्रमाके समान उज्ज्वल शुभ्र है। वे चतुर्भुज हैं। उनके चारों हाथोंमें मुक्ताकी अक्षमाला, अमृतका कलश, ज्ञान मुद्रा तथा पुस्तक सुशोभित हो रहे हैं। चन्दन-गन्धके लेपनसे तथा मणि-रत्नोंसे उनके अङ्ग समुज्ज्वल

श्रीगायत्री-ब्रह्मविद्या-गुरुपादुका-परम्परा

'होत्राग्नि-हौत्राग्नि-हविष्य-होतृ-
होमादि-सर्वाकृति-भासमानम्।
यद्ब्रह्मतद्बोधवितारिणीभ्यां
नमो नमः श्रीगुरुपादुकाभ्याम्॥'

श्रीगायत्री-ब्रह्मविद्या-परम्परायां श्रीदक्षिणामूर्तिगुरोः पादुकैव सर्वत्र श्रीपादुकारूपेण पूजनीया वर्तत इति परम्परा स्यादिति निश्चप्रचम्। इति शिवम्॥

प्रतीत हो रहे हैं। वीरासन पर आसीन श्रीदक्षिणामूर्ति शिव ही गुरुके रूपमें विराजमान हैं। यही परम्परा है।

श्रीगायत्री ब्रह्मविद्या गुरुपादुका परम्परा—ब्रह्मज्ञानका वितरण करनेवाली शक्ति श्रीगुरुपादुका ही है। श्रीगायत्री ब्रह्मविद्याकी परम्परामें 'श्रीदक्षिणामूर्ति गुरुपादुका ही श्रीपादुकाके रूपमें सर्वत्र पूजनीया है' ऐसी परम्परा है॥

प्रथमावरणम्

॥ श्रीगायत्रीब्रह्मविद्यायै नमः ॥

पदार्थका स्वभाव है–'प्रकाश'। प्रकाशसे भिन्न जो भी पदार्थ है वह स्वयं प्रकाशित नहीं हो सकता है। प्रकाशका कोई अन्य प्रकाशक नहीं है। इसलिए प्रकाश एक है, अनेक नहीं। इस सम्पूर्ण जगतका आत्मा चेतन है और यह चेतन ही प्रकाश है। इसलिए प्रकाश 'चैतन्यस्वरूप' है। इसी प्रकाशको आगममें 'शिव' तथा 'संविद्' कहते हैं। किसी भी पदार्थका भेद करनेवाले भेदक तत्त्व दो हैं–देश तथा काल। ये दोनों तत्त्व प्रकाशसे ही अपनी स्थितिको प्राप्त करते हैं। इसलिए ये प्रकाशके भेदक नहीं हो सकते। प्रकाशमें क्रम तथा अक्रमका प्रश्न ही नहीं उठता है और न ही किसी प्रकारकी कालकी विकल्पना है। यह प्रकाश सभी विकल्पनाओंसे परे है और अपरिछिन्न है। इसलिए यह 'पर' है और इसी अपरिछिन्न संवित्स्वरूप अनुत्तर परमेश्वरको आगममें 'परशिव' कहते हैं। 'संविद्'में स्वप्रकाशत्मिका जो संवित्ति है उसे 'स्वसंवेदन' कहते हैं। संवित्तिसे ही विश्वकी व्यवस्थिति है।

प्रकाशमें पारतन्त्र्य नहीं है। परतन्त्र उसे कहते हैं जो दूसरेसे प्रकाशित हो और प्रकाशित होनेके लिए दूसरे पदार्थकी अपेक्षा रखता हो। स्वतन्त्र उसे कहते हैं जो स्वयं प्रकाशित हो और प्रकाशित होनेके लिए दूसरे पदार्थकी अपेक्षा न रखता हो। वस्तुतः अन्य किसी दूसरे प्रकाशकी सत्ता ही नहीं है तो प्रकाशका किसी अन्य प्रकाशसे प्रकाशित होनेका प्रश्न ही नहीं उठता है। इसलिए प्रकाशमें स्वातन्त्र्य ही है, न कि पारतन्त्र्य। प्रकाशकी ही स्वातन्त्र्य सत्ता है। 'सत्' उसे

कहते हैं जो तीनों कालोंमें अविकारी रूपसे विद्यमान हो। प्रकाश ही तीनों कालोंमें अविकारीरूपसे स्थित है। 'विकार' कहते हैं–परिवर्तनको। प्रकाशमें परिवर्तन नहीं है। विकारीमें अनेकता है। प्रकाशमें एकता है। इसलिए यह प्रकाश 'अद्वैत' कहलाता है। यहाँ यह प्रश्न उठता है कि अविकारीसे भिन्न विकारी है तो इस विकारशील विश्वकी सत्ता प्रकाशसे भिन्न होगी? कहते हैं–नहीं।

सत्ता तो एक मात्र प्रकाशकी है और यह सत्ता स्वातन्त्र्य सत्ता ही है। यह स्वातन्त्र्य सत्ता ही स्वतन्त्र प्रकाशका स्वभाव है। वही विश्वाकार तथा निराकार स्वभाववाला एकमात्र प्रकाश स्वातन्त्र्य स्वभावसे सर्वोपरि विराजमान है। प्रकाश देश-कालकी सीमासे परे होनेसे व्यापक है तथा आदि एवं अन्तसे रहित होनेके कारण निराकार कहलाता है। यदि प्रकाशका नियत आकार तथा देश हो तो वह कभी भी विश्वाकार नहीं बन सकता है।

जहाँ तक प्रकाशकी निराकारताकी बात है हम व्यावहारिक उदाहरणके द्वारा स्पष्ट करते हैं कि 'सागर' शब्द समुद्र, जलधि आदि शब्दोंसे विख्यात है। सागर एक महान् जलभण्डार है। यह जल-भण्डार जब शान्त रहता है तो तरङ्गसे रहित होता है और जब उल्लसित होता है तब तरङ्ग उसमें उठते हैं। उस जलके परिवर्तित रूपको जल नहीं कहते हैं बल्कि तरङ्ग ही कहते हैं। तरङ्गका एक नियत आकार है, रूप है और नाम है, किन्तु है तो वह जल। तरङ्ग क्या जलसे भिन्न है? कहते हैं–नहीं; क्योंकि तरङ्ग ही जल है और जल ही तरङ्ग है। तरङ्गकी भिन्न सत्ता नहीं है और न ही तरङ्ग जलका विकार है। विकार तो कवेल नाम-रूपका प्रसारण ही है। अब एक प्रकारसे पुनः स्पष्ट करते हैं–निस्तरङ्ग सागर और सतरङ्ग सागरमें क्या अन्तर है? कहते हैं–अन्तर केवल नाम-रूपका ही है और नाम-रूप ही विवर्त है। इस प्रकारसे हम देखते हैं कि विकार केवल नाम-रूपका प्रसारण ही है। यह जगत् नाम-रूपात्मक है, विवर्त है और इसकी सत्ता कभी भी भिन्न नहीं हो सकती है। इसलिए

परम प्रकाश 'सत्स्वरूप' है।

यह परम प्रकाश ही परम आनन्दके रूपमें विराजमान है; क्योंकि वैषयिक आनन्द तो वृत्तिरूप है और विच्छिन्न है। इसलिए विषयमें 'आनन्दमयता' अर्थात् आनन्दकी प्रचुरता है। मिठाईको मिठा नहीं कहा जाता है; अन्य सामग्रियोंकी अपेक्षा मिठाईमें मिठा प्रचुर मात्रामें रहता है इसलिए मिठाई है। शक्कर मिठास्वरूप है। शक्करकी भिन्नता मिठासे नहीं हो सकती है और यही इसकी अखण्डता है। ठीक् उसी प्रकार प्रकाश ही 'आनन्दस्वरूप' और अखण्डानन्द है।

निष्कर्ष यह है कि संविद्रूप प्रकाश निरपेक्ष, पूर्ण, स्वतन्त्र, सर्वप्रकाशक तथा 'सच्चिदानन्दस्वरूप' है । यह प्रकाश स्वातन्त्र्यरससे परिपूर्ण 'परशिव' है। इसे ही दर्शन शास्त्रोंमें 'परब्रह्म' कहा गया है। उल्लासकी इच्छा आदि व्यापारसे रहित निस्तरङ्ग सागरके समान प्रकाशको अनुत्तर परमेश्वर कहते हैं। परमेश्वर स्वतन्त्र है और उसका स्वभाव स्वातन्त्र्य है। 'स्वभाव' शब्द 'प्रकृति' शब्दके रूपमें व्यवहृत होता है और प्रकृति शब्द स्त्रीवाचक है। उस परमेश्वरकी प्रकृतिको 'शक्ति' कहते हैं। परमेश्वरकी यह स्वातन्त्र्य प्रकृति ही 'परा शक्ति' कहलाती है। परमेश्वरसे इस परमेश्वरी परा शक्तिको कभी भी अलग नहीं किया जा सकता। स्वतन्त्रसे स्वातन्त्र्यकी सत्ता भिन्न नहीं हो सकती। परमेश्वरसे परा शक्तिकी सत्ता भिन्न नहीं हो सकती। जिस प्रकार व्यक्तिसे व्यक्तिके कार्य करनेकी शक्ति अलग नहीं हो सकती ठीक् उसी प्रकार परमेशवरसे स्वातन्त्र्य शक्ति परा शक्ति अलग नहीं हो सकती। यह परा शक्ति परमशिवाश्रया है। इसे दर्शनशास्त्रोंमें 'ब्रह्माश्रया माया' भी कहते हैं। यह परा शक्ति इच्छा-ज्ञान-क्रियात्मिका होनेके कारण 'त्रिपुरा' कहलाती है।

जैसा कि हमने देखा–परमेश्वरकी प्रकृति ही शक्ति है। वास्तविक रूपसे देखा जाय तो परमेश्वरमें हुए उल्लासको ही उसकी शक्ति कहते हैं और यह शक्ति प्रथमतः इच्छारूपा ही होती है। इस प्रकारसे परमेश्वरकी इच्छाशक्तिको 'परा शक्ति', ज्ञानशक्तिको 'परापरा शक्ति'

तथा क्रियाशक्तिको 'अपरा शक्ति' कहते हैं और यही 'त्रिपुरा' है। अब हम निम्नलिखित रूपसे इसका विवेचन करते हैं:–

किसी व्यक्तिका परिचय उसके स्वभावसे ही होता है और हमने देखा कि प्रकाशस्वरूप परमेश्वर परमशिव 'सच्चिदानन्दस्वरूप' है तो फिर उसका परिचय कैसे करें? कहते हैं–परमशिव सत्स्वरूप, चित्स्वरूप और आनन्दस्वरूप है। परमशिव स्वतन्त्र है। उसकी प्रकृति स्वातन्त्र्य शक्ति कहलाती है। शक्तिसे ही व्यक्तिका परिचय होता है। परमशिव सत्स्वरूप है और उसका परिचय इच्छाशक्तिसे होता है। व्यक्तिकी स्थिति उसकी सत्तासे ही होती है। सत्ताधारी सर्वदा सर्वसमर्थ होता है; करने, न करने तथा अन्यथा करनेमें सक्षम होता है। उसकी इच्छा ही विधि-नियमकी व्यवस्थाके रूपमें परिवर्तित हो जाती है। राजाकी आज्ञा ही राज्यके विधि-नियमकी व्यवस्था बन जाती है। राजसत्ता ही राजाका परिचय है। उसकी इच्छा सर्वोपरि है। इच्छारूपी प्रकृति ही सत्ता की परिचायिका है। इसी प्रकार परमेश्वर परशिवकी इच्छाशक्ति ही उसके सत्स्वरूपकी परिचायिका है।

चेतनाके बिना किसी भी पदार्थका बोध नहीं हो सकता है। यह बोधरूपी चेतना प्रत्येक पदार्थमें विद्यमान है। यह चेतना ही पदार्थका परिचय कराती है। उसी प्रकार परमेश्वरके चित्स्वरूपकी परिचायिका उसकी ज्ञानशक्ति ही है।

यह विश्व आनन्दमय है; क्योंकि प्रत्येक पदार्थ किसी न किसी रूपसे, किसी न किसी व्यक्तिको, कुछ न कुछ समय तक आनन्द पहुँचाता है। आनन्द प्रदान करना पदार्थका धर्म नहीं है। इसलिए इससे मिलनेवाले आनन्दमें निरन्तरता नहीं रह पाती है। मिठाईके समान विश्व आनन्दमय और क्रियारूप है। परमेश्वर 'आनन्दस्वरूप' है और अखण्डानन्द है। परमेश्वरके आनन्दस्वरूपकी परिचायिका उसकी क्रियाशक्ति ही है और वही क्रियाशक्ति ही प्रपञ्च है।

इस प्रकारसे परमेश्वरके सत्, चित् तथा आनन्दस्वरूपकी परिचायिका इच्छा, ज्ञान तथा क्रियाशक्ति ही हैं। निष्कर्षरूपसे हम यही

कह सकते हैं कि एक मात्र सच्चिदानन्दस्वरूप परमेश्वरकी प्रकृति एकमात्र इच्छा-ज्ञान-क्रियात्मिका शक्ति 'त्रिपुरा' ही है। यही शक्ति पारमेश्वरी 'परा शक्ति'के रूपमें प्रसिद्ध है। इसकी व्याख्या हम निम्नलिखित रूपसे करते हैं:–

'परा शक्ति' परमेश्वरकी इच्छा शक्ति है और यह इच्छा शक्ति चमत्कृतिरूपा है। इसका शास्त्रमें 'निखिल-बीजाङ्कुरा' शब्दसे परिचय कराया गया है। यह शक्ति कारणरूपा कारणशक्ति है और इसमें कर्तृत्व भाव विद्यमान है। इसी 'परा शक्ति'के द्वारा परमेश्वर समस्त तत्त्वोंका अभेदरूपसे धारण, दर्शन तथा प्रकाशन करता रहता है। यह परा शक्ति भैरव नामक कालको अपनेमें भासित होने देती रहती है अतः 'कालकर्षिणी'के नामसे शास्त्रमें प्रसिद्ध है। परा शक्तिको 'अघोरशक्ति' भी कहते हैं। घोरका अर्थ है–भयङ्कर। जो भयङ्कर न हो, सुन्दर हो उसे 'अघोर' कहते हैं। अघोर ही 'परमशिव' है और इच्छात्मिका पराशक्ति ही अघोरेश्वर परमशिवकी 'अघोरशक्ति' है।

आगम शास्त्रमें आन्तरिक उल्लास तथा बाह्य उल्लासका कथन भेद-प्रदर्शन पूर्वक किया गया है कि परमेश्वरकी स्वातन्त्र्य शक्ति जो कि निराकाङ्क्ष अनुत्तरस्वरूपा है वह उल्लाससे रहित है और 'परा वाक्' कहालाती है। यह शक्ति अहमात्मक विमर्शरूपा है। इसे 'स्पन्द' भी कहते हैं किन्तु जब इसका बाह्य उल्लास होता है तब यह शक्ति इच्छाकी ओर उन्मुख होनेके कारण 'पश्यन्ती वाक्' कहलाती है। इस 'पश्यन्ती'की अवस्थामें वाच्य-वाचक क्रमका उदय नहीं होता है और न ही भेदकी स्फुटता दिखाई पड़ती है। इसमें चैतन्यस्वरूप ज्योतिःकी प्रधानता रहनेके कारण द्रष्टृस्वरूपता रहती है। द्रष्टा सकल दृश्य वस्तुका दर्शन करता है अर्थात् दृश्य वस्तुको देखता रहता है। इसलिए इस इच्छारूपा शक्तिको 'पश्यन्ती वाक्' कहते हैं। इस 'पश्यन्ती वाक्'को जब हम 'परा शक्ति' कहते हैं तो उस आन्तरिक उल्लासमें अहमात्मक शक्तिको 'परतरा शक्ति' कहेंगे। इस प्रकारसे भी कहा जाता है कि परा शक्ति इच्छारूपा है और इच्छावस्थामें

ज्ञानकी ओर उन्मुख होनेपर 'पश्यन्ती' कहलाती है।

'परापरा शक्ति' परमेश्वरकी ज्ञानशक्ति है। इसको शास्त्रमें 'अखिल-चेतनारूपिणी' कहा गया है और यह प्रपञ्चसे रहित है। यह ज्ञानशक्ति प्रत्येक वस्तुमें विद्यमान है तभी तो वस्तुमें चेतना रहती है। यही वस्तुकी सूक्ष्मावस्था है। 'परापरा शक्ति'के द्वारा परमेश्वर दर्पणमें नगर आदिके भिन्न तथा अभिन्नरूपसे होनेवाले भासनके समान भेदाभेदरूपसे विश्वरूपसे विराजमान रहता है। यह परापरा शक्ति ज्ञान और क्रियाकी मध्यभूमिक होनेके कारण आगम शास्त्रमें 'मध्यमा वाक्'के रूपमें प्रसिद्ध है। इस अवस्थामें द्रष्टा तथा दृश्य दोनोंका भान रहता है; वाच्य-वाचककी स्फुटास्फुटता रहती है। यह बुद्धिग्राह्यावस्था है। इसलिए यह सार्थक नामवाली 'मध्यमा वाक्' कहलाती है। इसे शास्त्रमें 'घोराघोरशक्ति' भी कहते हैं। उसी प्रकार कहते हैं कि ज्ञानावस्थामें क्रियाकी ओर उन्मुख होनेपर यही क्रिया शक्ति कहलाती है।

'अपरा शक्ति' परमेश्वरकी क्रियाशक्ति है। इसे शास्त्रमें 'अखिल-प्रपञ्चरूपिणी' कहा गया है। सृष्टि, स्थिति तथा संहाररूपी प्रपञ्च इसी 'अपरा शक्ति'से सञ्चालित होता है अर्थात् यह स्वयं प्रपञ्चरूपा बन जाती है। परमेश्वर इस 'अपरा शक्ति'के द्वारा भिन्न-भिन्नरूपसे सकल तत्त्वोंको देखता रहता है। इसमें भेदका भासन होता है। दृश्यमात्र इसमें विद्यमान रहता है; वाच्यमात्र भेदरूपताको प्राप्त होकर स्फुट-रूपसे विराजमान रहता है। यह इन्द्रियग्राह्यावस्था है। यह शक्ति 'घोरशक्ति' कहलाती है। शास्त्रमें इसे 'वैखरी वाक्' भी कहते हैं। 'विखर'का अर्थ है—शरीर। स्थूल शरीर ही विखर होता है और यह शरीर क्रियारूप होता है। शास्त्रमें इसे इस प्रकार भी कहा गया है कि 'वैखरी वाक्'की अवस्थामें ज्ञान तथा क्रिया दोनों रहते हैं।

इस प्रकारसे परमेश्वरकी इच्छा-ज्ञान-क्रियात्मिका 'त्रिपुरा' शक्ति परा, परापरा तथा अपराके रूपमें विराजमान है। प्रकाशस्वरूप परमेश्वर जब त्रिपुरा शक्तिसे युक्त होता है तो 'शिव' कहलाता है

और सृष्टि, स्थिति, संहार, निग्रह तथा अनुग्रहरूपी पाँच कर्मोंका सम्पादन करता है। विश्व जो कि ग्राह्य, ग्रहीता और ग्रहणरूप है, एक मात्र 'शक्तिचक्र' है। ग्राह्य कहते हैं–पदार्थको। उस पदार्थका ग्रहण करनेवाला ग्रहीता कहलाता है और ग्राह्य पदार्थका ग्रहीता जिस करणके द्वारा ग्रहण करता है उसे ग्रहण कहते हैं। करण ही साधन है। इन्द्रिय ही करण है और इसे ग्रहण कहते हैं। 'श्री' कहते हैं–शक्तिको। 'चक्र' का अर्थ है–समूह। इस प्रकारसे यह विश्व शक्ति-समूहात्मक है। इसीका प्रदर्शन हुआ है 'श्रीचक्र'में। 'श्रीचक्र' शक्तिका समूह ही है। अतः श्रीचक्र विश्वात्मक है।

शिव और शक्तिमें कोई भेद नहीं है। भेद है तो केवल नाम और रूपका; क्योंकि शिवसे भिन्न किसी अन्य पदार्थकी स्वतन्त्र सत्ता नहीं है और एक मात्र शिव ही स्वतन्त्र है और उसकी ही एक मात्र स्वातन्त्र्य शक्ति है जो कि परा, परापरा तथा अपरारूपसे त्रिविधात्मिका शक्ति 'त्रिपुरा' कहलाती है। यही महात्रिपुरसुन्दरी है और इसकी उपासनाका पीठ है यह 'श्रीयन्त्र'। पारमेश्वरी भगवती परा शक्ति श्रीमहात्रिपुरसुन्दरी ही 'आदिशक्ति' है।

वास्तविक रूपसे देखा जाये तो न कोई कामना उस परम प्रकाशमें है और न ही शक्तिमें। फिर भी वह पारमेश्वरी 'परा शक्ति' प्रकाशस्वरूप परमशिवके स्वभावरूपसे उत्पन्न हुई है। इच्छाशक्ति ही परमशिवकी प्रकृति है और यही 'परा शक्ति' है। 'परा शक्ति'के ज्ञानसे 'परमशिवत्व'की प्राप्ति होती है। प्रस्तुत शास्त्र *'गायत्री ब्रह्मविद्या'* श्रीगायत्री ब्रह्मविद्याकी उपासनाके माध्यमसे परमशिवत्वको प्राप्त करानेमें पूर्ण रूपसे समर्थ है। इसलिए इसका विशिष्ट विवेचन प्रस्तुत किया जा रहा है:–

श्रीपरदेवतायाः स्वरूपम्

दिव्यां परां सुधवलारुणचक्रताप्तां
मूलादिबिन्दुपरिपूर्णकलात्मरूपाम्।

स्थित्यात्मिकां शरधनुःसृणिपाशहस्तां
श्रीचक्रतां परिणतां सततं नमामि॥१॥

परदेवताका स्वरूप

मैं उस परदेवताको नमस्कार करता हूँ कि जिसने श्वेत-रक्तवर्णरूपी शिव-शक्तिरूपी चक्रताको प्राप्त कर ली है, जो मूलादिसे बिन्दु पर्यन्त सूक्ष्मरूपसे परिपूर्ण है, जो हाथोंमें बाण, धनुष, अङ्कुश तथा पाशका धारण करके स्थूलरूपसे विराजमान है और जिसने श्रीचक्रके रूपमें परिणतिको प्राप्त कर ली है।

विमर्श-सर्वप्रथम श्रीचक्रमें परदेवताके स्वरूपका वर्णन किया जा रहा है—दिव्यामिति।

दिव्याम्-ग्रन्थके प्रथम श्लोकके प्रारम्भमें ही 'दिव्या' शब्दका प्रयोग हुआ है जिससे ज्ञात होता है कि ग्रन्थमें किसी दिव्य नायिका-का वर्णन किया गया है। 'दिव्या' शब्द स्त्रीवाचक होनेसे शक्तिका द्योतक बन जाता है। 'दिव्या'का अर्थ है—अलौकिकरूपा। कोई ऐसी शक्ति है जो कि निश्चित रूपसे अलौकिक ही होगी। लोकसे परे होनेके कारण उसे अलौकिक कहा गया है। अलौकिक कहते हैं—देवताको। इस प्रकारसे 'दिव्या'का अर्थ है—देवता। 'दिव्या' शब्द स्वतः मङ्गलवाचक है।

पराम्—सबसे परे होनेके कारण उस शक्तिको 'परा शक्ति' कहते हैं। सृष्ट्युन्मुख शक्तिकी तीन अवस्थाओंका वर्णन यहाँ पर विशेषतः किया जा रहा है और वे तीन अवस्थाएँ हैं—परावस्था, सूक्ष्मावस्था तथा स्थूलावस्था। शरीरको भी इन तीन अवस्थाओंके कारण 'पर शरीर, सूक्ष्म शरीर तथा स्थूल शरीर'के रूपमें विभाजित किया गया है। पर शरीरको कारण शरीर कहते हैं; क्योंकि यह सभी कार्योंका कारण है।

जगतका कोई भी पदार्थ जो हमारे सामने दिखाई पड़ता है उसकी उपर्युक्त तीन अवस्थाएँ होती हैं। पारमेश्वरी आदिशक्ति भगवती

परा शक्ति 'त्रिपुरा' सर्वप्रथम आविर्भूत हुई। इसलिए वह परा शक्ति परमेश्वरी त्रिपुरा ही 'परदेवता' है।

सुधवलारुणचक्रताप्ताम्–परमेश्वरी भगवती त्रिपुरा त्रिगुणात्मिका है। तीन गुण हैं–सत्त्व, रजस् तथा तमस्। इन तीनों गुणोंकी साम्यावस्थामें किसी प्रकारकी कोई उत्पत्ति नहीं होती है किन्तु जब इनकी वैषम्यावस्था होती है तब सृष्टि होती है। इसलिए दर्शन शास्त्रमें कहा गया है कि तीनों गुणोंकी साम्यावस्था 'प्रकृति' है और वैषम्यावस्था सृष्टि है। त्रिपुरा ही दर्शन शास्त्रमें माया, प्रकृति, नियति आदि शब्दोंसे भाषित है। तीनों गुणोंके तीन वर्ण होते हैं और इन गुणोंका परिचय वर्णोंसे होता है; जैसे–सत्त्वगुण श्वेतवर्णवान् है, रजोगुण रक्तवर्णवान् है तथा तमोगुण कृष्णवर्णवान् है। इन तीनों गुणोंके स्वभाव भी भिन्न-भिन्न होते हैं; जैसे–सत्त्वगुण ज्ञानवान् है, रजोगुण क्रियावान् है तथा तमोगुण जड़स्वभाववान् है। यहाँ पर जब भगवती परा शक्ति सृष्ट्युन्मुख हुई तो सत्त्वगुण प्रधान, रजोगुण बाहुल्य तथा तमोगुण न्यूनरूपी चक्रताको प्राप्त हो गयी। 'सुधवल' शब्द सत्त्वगुणकी प्रधानताका द्योतक है। 'अरुण' शब्द रजोगुण क्रियाशीलताका सूचक है। यहाँ पर न्यूनातिन्यून है–तमोगुण। इसलिए यह प्रकट नहीं है किन्तु जो स्थूल पदार्थ श्रीयन्त्र माध्यम पीठ है, वही तमोगुण जड़ताका प्रतीक है।

यहाँ पर विशेषतः ध्यान देनेकी बात है कि उस परा शक्तिकी सात्त्विकता तथा राजसिकता अधिक मात्रामें होनेके कारण साधकको शीघ्र ही भोग तथा मोक्षकी सिद्धि प्राप्त हो जाती है। इस प्रकारसे वैषम्यावस्थामें आदिशक्ति भगवती परा शक्ति त्रिपुरा चक्रताको प्राप्त हो गयी। 'चक्रता'का अर्थ है–समूहता। यहाँ पर 'सुधवल' शब्दसे शिव तथा 'अरुण' शब्दसे शक्तिका ग्रहण होता है। इस प्रकारसे भगवती परा शक्ति यहाँ पर शिव एवं शक्तियोंकी समूहताको प्राप्त हो गयी है। इसलिए श्रीचक्र धवल एवं अरुणके मिश्रणसे कुङ्कुम वर्णवाला शिव-शक्तिरूप है।

मूलादि-बिन्दु-परिपूर्ण-कलात्मरूपाम्—अत्यन्त सूक्ष्मरूप शक्तिको कला कहते हैं। 'मूल' कहते हैं-'भूपुर'को। परा शक्ति अत्यन्त सूक्ष्मरूपसे श्रीचक्रमें विद्यमान है और यही शक्ति प्रपञ्चसे रहित 'अखिल-चेतनाऽरूपिणी' परापरा शक्ति है; कलात्मरूपसे 'भूपुर'से लेकर 'बिन्दु' पर्यन्त परिपूर्ण है। इस प्रकारसे परा शक्ति कलात्मरूपसे सूक्ष्मावस्थामें 'भूपुर'से लेकर 'बिन्दु' चक्र तक सम्पूर्ण 'श्रीचक्र'में विद्यमान है। 'मूल' शब्दसे मूलाधार चक्रका भी बोध होता है।

योगशास्त्रमें [१]'षट् चक्र' तथा 'सहस्रार' प्रसिद्ध हैं। षट् चक्र हैं—मूलाधार, स्वाधिष्ठान, मणिपुर, अनाहत, विशुद्धि तथा आज्ञा। इनके साथ एक सहस्रारका भी वर्णन किया गया है। सहस्रारको चक्र नहीं मानते हैं; क्योंकि यह चक्रकी श्रेणिमें नहीं आता है। सहस्रारमें ही 'बिन्दु' स्थित है। इस प्रकारसे ये अन्तश्चक्र कहलाते हैं। बहिश्चक्रके रूपमें 'श्रीचक्र'में दश चक्र हैं। इसलिए श्रीचक्र दशचक्रात्मक कहलाता है। इसका विवेचन हम आगे करेंगे। 'भूपुर'से लेकर 'बिन्दु' पर्यन्त दश चक्रोंका समष्टि रूप है—श्रीचक्र। 'आदि' पदसे बाह्य चक्रमें भूपुरसे तथा अन्तश्चक्रमें मूलाधारसे उपासना प्रारम्भ करनेका निर्देश दिया गया है। पारमेश्वरी भगवती परा शक्ति त्रिपुरा इसी 'श्रीचक्र'में सूक्ष्मावस्थामें कलात्मरूपसे विराजमान हैं। यहाँ पर 'परिपूर्ण' शब्दसे तादात्म्यका बोध होता है।

स्थित्यात्मिकाम्—परा शक्ति त्रिपुराकी स्थूलावस्था ही श्रीचक्रमें 'स्थित्यात्मिका' कहलाती है और इस अवस्थामें परा शक्ति प्रपञ्च-रूपताको प्राप्त करती है और स्थूलरूपका धारण करती है।

शर-धनुः-सृणि-पाशहस्ताम्—जब परा शक्ति स्थूलावस्थाको प्राप्त कर लेती है तब 'चतुर्भुजा' त्रिपुराका दर्शन होता है। परदेवता आदिशक्ति त्रिपुराने अपनी चार भुजाओंमें चार शस्त्रोंका धारण किया

---

१. *षट्चक्रनिरूपणम्*। सविमर्श-'प्रह्लाद'हिन्दी-व्याख्यासहितम्। व्याख्याकारः सम्पादकश्च—गोस्वामी प्रह्लाद गिरि 'वेदान्तकेशरी'। प्राप्तिस्थान—चौखम्बा संस्कृत सीरीज आफिस, वाराणसी-२२१००१(उत्तर प्रदेश)

है। वे चार शस्त्र हैं–बाण, धनुष, अङ्कुश तथा पाश।

श्रीचक्रतां परिणताम्–अब यहाँ पर प्रश्न उठता है कि भगवती परा शक्तिके चतुर्भुज रूपका दर्शन श्रीचक्रमें क्यों नहीं होता है? कहते हैं–भगवती परा शक्ति श्रीचक्रके रूपमें परिणतिको प्राप्त हो गयी तो उनके चतुर्भुज विग्रहका दर्शन स्थूलाकारमें सम्भव नहीं हो सकता। वह तो तादात्म्य रूपसे श्रीचक्रमें स्थित है। इसलिए बुद्धिमान् साधक त्रिपुराके पूजनके लिए श्रीचक्रके अतिरिक्त अन्य किसी दूसरे माध्यमका आश्रय नहीं लेता है। यही परम रहस्य है।

सततं नमामि–'नमामि' शब्द एक वचनान्त है। इससे बोध होता है कि श्रीचक्रकी साधना व्यक्तिगत रूपसे की जाती है, न कि समष्टि रूपसे। समष्टि या सामूहिक रूपसे साधना सिद्धान्ततः नहीं हो सकती है; क्योंकि योगक्रिया प्रतिशरीर भिन्न होती है। श्रीचक्रकी साधना अन्तश्चक्र समावेश पूर्वक होती है। इसलिए व्यक्ति अपने-अपने देश-कालकी मर्यादाके अनुरूप साधना किया करते हैं। जब साधना व्यक्तिगत रूपसे अनुष्ठित होती है तब उसमें निरन्तरता बनी रहती है। इसी व्यक्तिगत साधनाकी दृष्टिसे 'सततम्' शब्दका प्रयोग किया गया है। 'नमामि' शब्दके प्रयोगसे 'अहम्' शब्दमें कर्तृत्व रहता है जो कि लिङ्गभेदसे रहित होकर सर्वनाम वाचक बन जाता है। इसलिए श्रीचक्रकी उपासनाके लिए स्त्री, पुरुष सभी व्यक्ति अधिकारी पाये जाते हैं; इसमें कोई सन्देह नहीं है। आगम शास्त्रमें 'नमामि' शब्दका प्रयोग 'समाविशामि' शब्दके रूपमें किया जाता है जिसका अर्थ है–'मैं उस तत्त्वमें समाविष्ट हो रहा हूँ'। उपर्युक्त प्रकारसे चिन्तन करता हुआ साधक जब परदेवताका आवाहन पूर्वक पूजन करता है तब श्रीयन्त्रमें परदेवताके प्राणकी प्रतिष्ठा स्वतः हो जाती है। इसलिए श्रीदक्षिणामूर्तिको गुरु मानकर श्रीपरदेवताकी उपासना करनेवाले बुद्धिमान् साधक श्रीयन्त्रमें परदेवताके प्राणकी प्रतिष्ठा करना आवश्यक नहीं समझते हैं। यही साधनाका परम रहस्य है। इस प्रकारसे मैं पूर्ववर्णित उस परदेवताको नमस्कार करता हूँ॥१॥

श्रीपरयन्त्रराजस्य निरूपणम्

भूःपूस्त्रिवृत्तकमथेन्दुकलारविन्दम्
अष्टारकञ्च मनुकोणमथो दशारम्।
दिक्कोणकञ्च गजकोणमथ त्रिकोणं
वन्दे च बिन्दुसहितं परयन्त्रराजम्॥२॥

श्रीपरयन्त्रराजका निरूपण

मैं चतुरस्र, त्रिवृत्तक, षोडशदल, अष्टदल, चतुर्दशार, बहिर्दशार, अन्तर्दशार, अष्टकोण, त्रिकोण तथा बिन्दुके साथ परयन्त्रराजकी वन्दना करता हूँ।

विमर्श–परदेवताके स्वरूपके वर्णनके बाद श्रीचक्रका निरूपण किया जा रहा है–भूःपूरिति।

बाह्य दर्शनसे ज्ञात होता है कि श्रीचक्रका निर्माण दश चक्रोंके समूहसे हुआ है। इन दश चक्रोंके आवरणोंको 'दशावरण' कहते हैं। आवरणका अर्थ है–आच्छादन। बाह्य आवरणके रूपमें दश आवरणोंका दर्शन होता है। किन्तु यहाँ पर आभ्यन्तर आवरणके रूपमें साधकको पाँच कल्प तथा षोडश आवरण प्राप्त होते हैं।[१] परा शक्तिकी दो शक्तियाँ मुख्य रूपसे कार्य करती हैं। वे शक्तियाँ हैं–आवरण शक्ति तथा विक्षेप शक्ति। आवरण शक्ति जब साधककी बुद्धि-वृत्तिका आच्छादन कर लेती है तब साधकको सत्यका ज्ञान नहीं हो पाता है और विक्षेप शक्ति सत्यके वास्तविक स्वरूपका भान न कराके और ही कुछ भान कराती है। इसी प्रकार जब इन आवरणोंका भेदन हो जाता है तब वह परा शक्ति अपने वास्तविक स्वरूपका बोध कराकर 'परशिव'का बोध करा देती है और जो

१. *श्रीचक्रनिरूपणम्*। सविमर्श-'प्रह्लाद'हिन्दी-व्याख्यासहितम्। लेखकः सम्पादकश्च–गोस्वामी प्रह्लाद गिरि 'वेदान्तकेशरी'। प्राप्तिस्थान–चौखम्बा संस्कृत सीरीज आफिस, वाराणसी-२२१००१(उत्तर प्रदेश)

परशिवको जान लेता है वह साक्षात् परशिव हो जाता है। यही है श्रीचक्रमें स्थित आवरणोंके भेदनका फल। यही है परम पुरुषार्थ मोक्ष। यही है साधकका परम लक्ष्य–जीवसे शिव बनना, पशुसे पशुपति होना। अब हम श्रीचक्रमें स्थित दश चक्रोंके सम्बन्धमें विचार प्रस्तुत करते हैं:–

भूःपूः–प्रथम चक्र है–भूपुर। 'भू'का अर्थ है–धरणी, पृथ्वी, भूमि, आधार आदि। 'पूः'का अर्थ है–पुर, सदन, गृह आदि। इसलिए भूपुरको धरणीसदन, भूसदन तथा भूगृह कहते हैं। इसे धरणी चक्र तथा सबका आधार होनेके कारण आधार चक्र और पृथ्वी तत्त्वात्मक होनेसे पार्थिव चक्र भी कहते हैं। चार द्वारोंसे युक्त चतुष्कोणात्मक यह भूपुर चक्र 'चतुरस्त्र'के नामसे प्रसिद्ध है।

त्रिवृत्तकम्–द्वितीय चक्रका नाम है–त्रिवृत्तक। यह वृत्तत्रय, त्रिवृत्तक आदि संस्कृत शब्दोंसे जाना जाता है। तीन वृत्तोंसे निर्मित होनेके कारण यह चक्र 'त्रिवृत्तक' कहलाता है।

इन्दुकलारविन्दम्–तृतीय चक्रका नाम है–षोडश दल। 'इन्दुकला' कहते हैं–चन्द्रकलाको। चन्द्रमाकी षोलह कलाएँ होती हैं। पञ्चदश तिथियाँ ही पन्द्रह कलाएँ हैं किन्तु इसकी अमाकला 'षोड़शी' कला कहलाती है। इसीलिए अङ्कगणनामें साङ्केतिक शब्द 'इन्दुकला'का अर्थ है–षोड़श। 'अरविन्द'का अर्थ है–कमल। दलोंका आकार कमलदलके समान है इसलिए इसे 'षोड़श दल' चक्र कहते हैं। ध्यान रहे कि आगम शास्त्रमें प्रायः साङ्केतिक शब्दोंका प्रयोग होता है जिससे कि अयोग्य व्यक्तिके लिए यह ज्ञान दुष्प्राप्य हो जाये।

अष्टारकम्–चतुर्थ चक्रका नाम है–अष्टदल चक्र। इस चक्रके आठ दलोंका आकार भी कमलदलके समान है। इसलिए इसे 'अष्ट दल' चक्र कहते हैं।

मनुकोणम्–पञ्चम चक्रका नाम है–चतुर्दशार चक्र। मनुओंकी संख्या चतुर्दश है। यहाँ पर 'मनु' शब्दसे चतुर्दश संख्याका संकेत

किया गया है। यह चक्र कोणात्मक है। चतुर्दश कोणोंसे निर्मित होनेसे यह 'चतुर्दशार' चक्र कहलाता है।

दशारम्–षष्ठ चक्रका नाम है–बहिर्दशार चक्र। दश कोणात्मक चक्र दो हैं–बहिर्दशार तथा अन्तर्दशार। सृष्टिक्रमके अन्तर्गत भूपुरसे बिन्दुकी ओर चलते हैं तो पहले पड़नेवाले चक्रको बहिर्दशार तथा उसके बादमें पड़नेवाले चक्रको अन्तर्दशार कहते हैं। बहिर्दशार चक्र कोणात्मक होनेके कारण 'बहिर्दशकोण' चक्र भी कहलाता है।

दिक्कोणकम्–सप्तम चक्रका नाम है–अन्तर्दशार चक्र। समस्त दिशाओंकी संख्या दश है। अतः 'दिक्' शब्दसे दश संख्याका बोध होता है। दश कोणोंसे निर्मित होनेके कारण इसे दशार चक्र कहते हैं और बहिर्दशारकी अपेक्षा इसकी आन्तरिक स्थिति होनेसे यह 'अन्तर्दशार' चक्र कहलाता है।

गजकोणम्–अष्टम चक्रका नाम है–अष्टकोण चक्र। दिग्गजोंकी संख्या आठ है। आठों दिशाओंमें आठ गज रहते हैं। इसलिए वे दिग्गज कहलाते हैं। 'गज' शब्दके संकेतसे आठ संख्याका बोध होता है। यह चक्र आठ कोणोंसे निर्मित होनेके कारण 'अष्टकोण' चक्र कहलाता है।

त्रिकोणम्–नवम चक्रका नाम है–त्रिकोण चक्र। यह चक्र तीन कोणोंसे निर्मित होनेके कारण 'त्रिकोण' चक्र कहलाता है।

बिन्दुसहितम्–दशम चक्रका नाम है–बिन्दु चक्र। त्रिकोण चक्रके मध्यमें जो बिन्दु स्थित है उसे 'बिन्दु' चक्र कहते हैं।

परयन्त्रराजम्–देवता अनेक हैं तो स्वाभाविक रूपसे उनके यन्त्र भी अनेक होंगे। जिस प्रकार परदेवता सभी देवताओंमें श्रेष्ठ है उसी प्रकार यन्त्रोंमें भी परदेवताका यन्त्र श्रेष्ठ है। इसलिए इस यन्त्रको 'यन्त्रराज' कहते हैं और परदेवताका यन्त्र होनेके कारण यह 'पर-यन्त्रराज' कहलाता है। किसी भी यन्त्रका निर्माण परयन्त्रराजके विना हो नहीं सकता है। जो भी अन्य देवताओंके यन्त्र होंगे वे सब

इस यन्त्रराजके अन्तर्गत अवश्य पाये जायेंगे। यही रहस्य है।

ध्यान रहे कि 'परशिव' कोई देवता नहीं है और न ही इनका कोई यन्त्र है। ये तो देवोंका देव परम देव हैं जो कि सर्वव्यापक होनेके कारण किसी सीमाके अन्तर्गत नहीं आते हैं। ये ही परमेश्वर परम 'सत्' कहलाते हैं। 'श्री' शब्द निर्मित है—शकार, रकार तथा ईकारसे। जिस प्रकारसे परदेवताकी स्थूल, सूक्ष्म तथा पर अवस्थाओं-का विवेचन किया गया है उसी प्रकारसे 'श्री' शब्द भी उपर्युक्त तीन अक्षरोंसे निर्मित होनेके कारण उसमें तीन अवस्थाएँ प्राप्त होती हैं। 'विद्या' कहते हैं—ज्ञानको। 'परा विद्या' ही श्रीविद्याके रूपमें जानी जाती है। परा विद्यासे ही स्वरूपका बोध सरलतासे हो जाता है। इस प्रकारसे समझते हुए उपर्युक्त दशचक्रात्मक श्रीचक्र 'परयन्त्रराज' श्रीयन्त्रकी उपासना करनी चाहिए। इस श्रीचक्रसे बढ़कर कोई अन्य उपासना नहीं है जो सहजतासे जीवत्वसे शिवत्वको प्राप्त करा सके; पशुत्वसे पशुपतित्वको प्राप्त करा सके।

वन्दे—मैं पूर्ववर्णित उस परयन्त्रराजकी वन्दना करता हूँ॥२॥

भूपुरके बाहर दश दिक्पालोंकी उपासना की जाती है। दश दिशाओंके दश दिक्पाल हैं। यहाँ पर इनकी उपासना विशिष्ट क्रमसे की जाती है। जैसे—पूर्वमें इन्द्र, आग्नेयमें अग्नि, दक्षिणमें यम, नैर्ऋत्यमें नैर्ऋत, पश्चिममें वरुण, वायव्यमें वायु, उत्तरमें कुबेर, ईशानमें ईशान, ईशान-पूर्वके मध्यमें ब्रह्मा तथा नैर्ऋत्य-पश्चिमके मध्यमें अनन्त। ब्रह्मा ऊर्ध्व दिशाका तथा अनन्त अधोदिशाका दिक्पाल है। अब श्रीचक्रमें इन्द्रादि दश दिक्पालोंके स्वरूपका विचार किया जा रहा है:—

भूपुर्बहिः क्रमेण पूर्वाग्नेयदक्षिणनैर्ऋत्यपश्चिमवायव्योत्तरेशानेषु, ईशानपूर्वयोर्मध्ये नैर्ऋत्यपश्चिमयोर्मध्ये चेन्द्रादीनां दशदिक्पालानां स्वरूपम्

देवेन्द्रं तं वज्रहस्तं सुपीतं
रक्ताभं वैश्वानरं शक्तिहस्तम्।

श्रीमत्सौरिं दण्डहस्तञ्च कृष्णं
बन्धूकाभं नैऋतं खड्गहस्तम्।।
पाशाढ्यं श्रीपाशिनं श्वेतवर्णं
वायुं सृण्याढ्यं हरिद्वर्णदेहम्।
पौलस्त्यं वै शुक्लवर्णं गदाढ्यम्
ईशानं श्रीशूलहस्तञ्च शुभ्रम्।।
ब्रह्माणं तं पद्महस्तं सुपीतं
रम्यं श्यामं चक्रहस्तं ह्यनन्तम्।
सर्वान् देवान् नौमि भूपुर्बहिस्थान्
पूर्वादारभ्याभिवर्त्तक्रमेण।।३।।

भूपुरके बाहर क्रमसे पूर्व, आग्नेय, दक्षिण, नैऋत्य, पश्चिम, वायव्य, उत्तर, ईशान, ईशान-पूर्व तथा नैऋत्य-पश्चिममें इन्द्र आदि दश दिक्पालोंका स्वरूप

मैं भूपुरके बाहरमें स्थित गाढ़ पीत वर्णवाला तथा हाथसे वज्रका धारण करनेवाला इन्द्र देव, लाल वर्णवाला तथा हाथसे शक्तिका धारण करनेवाला अग्नि देव, कृष्ण वर्णवाला तथा हाथसे दण्डका धारण करनेवाला यम देव, बन्धूक पुष्पके समान लाल वर्णवाला तथा हाथसे खड्गका धारण करनेवाला नैऋत देव, श्वेत वर्णवाला तथा हाथसे पाशका धारण करनेवाला वरुण देव, हरित वर्णके शरीरवाला तथा हाथसे अङ्कुशका धारण करनेवाला वायु देव, श्वेत वर्णवाला तथा हाथसे गदाका धारण करनेवाला कुबेर देव, श्वेत वर्णवाला तथा हाथसे शूलका धारण करनेवाला ईशान देव, गाढ़ पीत वर्णवाला तथा हाथसे कमलका धारण करनेवाला ब्रह्मा देव और रमणीय श्याम वर्णवाला तथा हाथसे चक्रका धारण करनेवाला अनन्त देव; इन सभी दिक्पालोंको पूर्वसे आरम्भ करके अभिवर्त्त क्रमसे नमस्कार करता हूँ।

विमर्श—अब भूपुर चक्रके बाहरमें इन्द्र आदि दश दिक्पालोंके स्वरूपका वर्णन किया जा रहा है—देवेन्द्रमिति।

देवेन्द्रं तं सुपीतं वज्रहस्तम्—पहला दिक्पाल है—इन्द्र देव। देवताओंमें श्रेष्ठ देवको 'देवेन्द्र' कहते हैं। यह 'इन्द्र'के नामसे सर्वत्र प्रसिद्ध है। इन्द्र पूर्व दिशाका दिक्पाल है। इन्द्रके शरीरकी कान्ति गाढ़ पीत वर्णकी है। इसने अपने हाथमें वज्रका धारण किया है। इन्द्र देव 'वज्रधर'के रूपमें प्रसिद्ध है।

वैश्वानरं रक्ताभं शक्तिहस्तम्—दूसरा दिक्पाल है—अग्नि देव। 'वैश्वानर' कहते हैं—अग्नि देवको। अग्नि देव आग्नेय दिशाका दिक्पाल है। इसके शरीरकी कान्ति लाल वर्णकी है। इसने अपने हाथमें शक्तिका धारण किया है। अग्नि देव 'शक्तिधर'के रूपमें प्रसिद्ध है।

श्रीमत्सौरिं कृष्णां दण्डहस्तम्—तीसरा दिक्पाल है—यम देव। 'सौरि' कहते हैं—यम देवको। यह 'सूर्यपुत्र'के नामसे सर्वत्र प्रसिद्ध है। यम देव दक्षिण दिशाका दिक्पाल है। इसके शरीरकी कान्ति कृष्ण वर्णकी है। इसने अपने हाथमें दण्डका धारण किया है। यम देव 'दण्डधर'के रूपमें प्रसिद्ध है।

नैऋतं बन्धूकाभं खड्गहस्तम्—चौथा दिक्पाल है—नैऋत देव। नैऋत देव नैऋत्य दिशाका दिक्पाल है। इसके शरीरकी कान्ति बन्धूक पुष्पके समान लाल वर्णकी है। इसने अपने हाथमें खड्गका धारण किया है। नैऋत देव 'खड्गधर'के रूपमें प्रसिद्ध है।

श्रीपाशिनं श्वेतवर्णं पाशाढ्यम्—पाँचवाँ दिक्पाल है—वरुण देव। 'पाशी' कहते हैं—वरुण देवको। वरुण देव पश्चिम दिशाका दिक्पाल है। इसके शरीरकी कान्ति श्वेत वर्णकी है। इसने अपने हाथमें पाशका धारण किया है। वरुण देव 'पाशधर'के रूपमें प्रसिद्ध है।

वायुं हरिद्वर्णदेहं सृण्याढ्यम्—छठवाँ दिक्पाल है—वायु देव। 'हरित' कहते हैं—हरेको। 'सृणि' कहते हैं—अङ्कुशको। वायु देव वायव्य दिशाका दिक्पाल है। वायु देवके शरीरकी कान्ति हरे वर्णकी है।

इसने अपने हाथमें अङ्कुशका धारण किया है। वायु देव 'अङ्कुशधर'के रूपमें प्रसिद्ध है।

पौलस्त्यं वै शुक्लवर्णं गदाढ्यम्–सातवाँ दिक्पाल है–कुबेर देव। 'पौलस्त्य' कहते हैं–कुबेर देवको। यह पुलस्त्य ऋषिका पुत्र है। कुबेर देव उत्तर दिशाका दिक्पाल है। इसके शरीरकी कान्ति श्वेत वर्णकी है। इसने अपने हाथमें गदाका धारण किया है। कुबेर देव 'गदाधर'के रूपमें प्रसिद्ध है।

ईशानं शुभ्रं श्रीशूलहस्तम्–आठवाँ दिक्पाल है–ईशान देव। ईशान देव ईशान दिशाका दिक्पाल है। इसके शरीरकी कान्ति श्वेत वर्णकी है। इसने अपने हाथमें शूलका धारण किया है। ईशान देव 'शूलधर'के रूपमें प्रसिद्ध है।

ब्रह्माणं तं सुपीतं पद्महस्तम्–नौवाँ दिक्पाल है–ब्रह्मा देव। ब्रह्मा देव ऊर्ध्व दिशाका दिक्पाल है। इसके शरीरकी कान्ति गाढ़ पीत वर्णकी है। इसने अपने हाथमें कमलका धारण किया है। श्रीचक्रमें भूपुरके बाहर इसका स्थान ईशान और पूर्वके मध्यमें है। ब्रह्मा देव 'पद्मधर'के रूपमें प्रसिद्ध है।

अनन्तं रम्यं श्यामं चक्रहस्तम्–दशवाँ दिक्पाल है–अनन्त देव। अनन्त देव अधो दिशाका दिक्पाल है। इसके शरीरकी कान्ति श्याम वर्णकी है। श्याम वर्णसे उसका शरीर अत्यन्त रमणीय शोभायमान हो रहा है। अनन्त देवने अपने हाथमें चक्रका धारण किया है। श्रीचक्रमें भूपुरके बाहर इसका स्थान नैर्ऋत्य और पश्चिमके मध्यमें है। अनन्त देव 'चक्रधर'के रूपमें प्रसिद्ध है।

सर्वान् देवान् भूपुर्बहिस्थान्–श्रीचक्रमें भूपुरके बाहर पूर्व आदि सभी दिशाओंमें इन्द्र देव आदि सभी दश दिक्पालोंकी अवस्थिति है। दिशा और दिक्पालोंकी स्थितिका निरूपण उपर्युक्त प्रकारसे किया जा चुका है।

पूर्वादारभ्याभिवर्त्तक्रमेण–'अभिवर्त्त क्रम' कहते हैं–घड़िके क्रम-

को। श्रीचक्रमें भूपुरके बाहर विशिष्ट क्रममें उपासनाका प्रारम्भ किया जाता है। जैसे—पूर्व, आग्नेय, दक्षिण, नैर्ऋत्य, पश्चिम, वायव्य, उत्तर, ईशान, ईशान और पूर्वका मध्य स्थान तथा नैर्ऋत्य और पश्चिमका मध्य स्थान।

नौमि—मैं पूर्ववर्णित उन इन्द्र देव आदि सभी दश दिक्पालोंको नमस्कार करता हूँ॥३॥

भूपुरस्य निरूपणम्

रेखात्रयैर्धवलरक्तसुकृष्णवर्णैः
सन्निर्मितं कृतमुखं वसुधाख्यचक्रम्।
रम्यं महाप्रकटयोगिनिकासमेतं
त्रैलोक्यमोहनकरं सततं नमामि॥४॥

भूपुरका निरूपण

मैं श्वेत, रक्त और अत्यन्त कृष्ण वर्णवाली तीन रेखाओंसे निर्मित, चार द्वारोंसे युक्त, रमणीय, तीनों लोकोंका सम्मोहक तथा महाप्रकट योगिनियोंके समेत भूपुर नामक चक्रको प्रणाम करता हूँ।

विमर्श—अब भूपुर चक्रका निरूपण किया जा रहा है—रेखा-त्रयैरिति।

रेखात्रयैः—भूपुर चक्र तीन रेखाओंसे निर्मित है। प्रत्येक रेखा अखण्ड तथा स्वतन्त्र है। इस प्रकारसे तीनों रेखाएँ अखण्ड होनेके कारण भूपुरके द्वार पर कोई रिक्त स्थान नहीं है। ये द्वार तब तक दिखाई नहीं पड़ते हैं जब तक उन द्वारों पर स्थित द्वारपालोंकी कृपा नहीं होती। द्वारपालोंके प्रसन्न होने पर द्वार खुल जाते हैं।

धवलरक्तसुकृष्णवर्णैः—तीनों रेखाएँ अलग-अलग वर्णकी हैं। बाहरसे प्रथम रेखा श्वेत वर्णवाली है और यह सत्त्वगुण प्रकृतिकी है। द्वितीय रेखा रक्त वर्णवाली है और यह रजोगुण प्रकृतिकी है। तृतीय रेखा अत्यन्त कृष्ण वर्णवाली है और यह तमोगुण प्रकृतिकी

है। यहाँ पर यह प्रश्न उठता है कि पहले तो तमोगुण प्रकृतिकी कृष्ण वर्णकी रेखा होनी चाहिए; क्योंकि सृष्टिक्रममें चक्र पहले स्थूल रूपसे प्रारम्भ होता है? कहते हैं—नहीं; क्योंकि श्वेत वर्णसे शिव, रक्त वर्णसे शक्ति तथा कृष्ण वर्णसे स्थूल जगतका बोध होता है। श्वेत वर्ण सत्त्वगुणका प्रतीक होनेके कारण सत्त्वगुणसे युक्त होकर उपासना करेंगे तो प्रबल तमोगुण भी नियन्त्रित हो जायेगा और सरलतासे साधक सिद्धिको प्राप्त कर सकेगा। ऐसे भी परम शिव सकल विश्वका आधार है। उसी पर सकल विश्व जलमें जलतरङ्गके समान स्थित होकर भासित हो रहा है। इसलिए उसे 'सर्वाधार' कहते हैं। इसी परम शिवत्वकी प्राप्ति ही तो परम प्रयोजन है।

कृतमुखम्—'कृत' शब्दसे युगका सङ्केत प्राप्त होता है और युग चार हैं अतः यहाँ पर चार सङ्ख्याका बोध होता है। । 'मुख' कहते हैं—द्वारको। इस प्रकारसे ज्ञात होता है कि भूपुर चक्र चार द्वारोंसे युक्त है।

वसुधाख्यचक्रम्—वसुधाके पर्याय हैं—पृथिवी, धरणी, भू आदि। भूपुर पृथिवी चक्र, वसुधा चक्र आदिके नामसे जाना जाता है। जिस प्रकारसे पृथिवी समस्त पदार्थोंका आधार है उसी प्रकारसे सम्पूर्ण चक्रका आधार होनेके कारण इसे 'आधार चक्र' भी कहते हैं। यह चक्र पृथिवी तत्त्वरूप है।

रम्यम्—भूपुर चक्र तीन वर्णोंकी तीन रेखाओंसे सुन्दर रूपसे निर्मित होनेके कारण साधकोंके मनका हरण कर लेता है। बाह्य रूप ही प्रायः व्यक्तिको प्रभावित करता है। इसलिए बाह्य रूपसे प्रभावित होकर साधक प्रसन्नतापूर्वक साधनाकी ओर अग्रसर होता रहता है।

महाप्रकट-योगिनिका-समेतम्—सम्पूर्ण विश्व पञ्चमहाभूतात्मक है। पञ्च महाभूत हैं—आकाश, वायु, अग्नि, जल तथा पृथिवी। ये पञ्च तत्त्व स्थूल, सूक्ष्म तथा पर रूपसे विद्यमान रहते हैं। चूँकि इनकी सृष्टि त्रिगुणात्मिका प्रकृतिसे हुई है अतः ये त्रिगुणात्मक हैं। परावस्था-

में ये परशक्तिरूप होते हैं किन्तु शक्तिरूपमें योग करानेके कारण ये 'योगिनी' भी कहलाते हैं। चूँकि भूपुर चक्र अत्यन्त विशाल है और स्थूलरूपात्मक है इसलिए इसमें स्थित योगिनियाँ 'महाप्रकट-योगिनी'के रूपमें प्रसिद्ध हैं। 'प्रकट' शब्द स्थूलताका परिचायक है।

त्रैलोक्यमोहनकरम्–भूपुर चक्रमें अवस्थित महाप्रकट-योगिनियों-के पूजनसे साधकको तीनों लोकोंको मोहित करनेकी शक्ति प्राप्त हो जाती है। इसलिए भूपुर चक्रको 'त्रैलोक्यमोहनकर' चक्र भी कहते हैं। चूँकि साधकका प्रयोजन है–चक्रके पूजनसे प्राप्त होनेवाला परिणाम। परिणाम ही उसका लक्ष्य होनेके कारण वह 'त्रैलोक्य-मोहनकर' चक्रके रूपमें इसे जानता है।

सततं नमामि–'सतत' शब्दसे निर्देशन दिया गया है कि साधक केवल बाह्य पूजनकी अवस्थामें चिन्तन न करें बल्कि अन्य अवस्थामें भी आन्तरिक रूपसे चिन्तन करें। 'नमामि' शब्दसे यह विदित होता है कि अहङ्कारपूर्वक पूजन करनेसे सिद्धियाँ प्राप्त नहीं होती हैं। इसलिए साधक अपने आपको समर्पित कर पूजन करें। इस प्रकारसे मैं पूर्ववर्णित त्रैलोक्यमोहनकर भूपुर चक्रको नमस्कार करता हूँ॥४॥

पश्चिमद्वारे द्वारपाल-सर्वयोगिनीस्वरूप-सर्वभूतानां स्वरूपम्

नानायुधाढ्याः सकलमनोज्ञा
नानाम्बराढ्या विविधाकृतीश्च।
योगिन्य एता अपि सर्वभूतान्
नानास्वरूपानतिभीमरूपान्॥
अनेकशस्त्राङ्कितहस्तयुक्तान्
अनेकवक्त्रान्वितघोरवक्त्रान्।
स्मराम्यहं तान् सकलान् प्रसन्नान्
श्रीद्वारपालान् किल पश्चिमस्थान्॥५॥

पश्चिमद्वारमें स्थित द्वारपाल सर्वयोगिनीरूपी सर्वभूतोंका स्वरूप

मैं अनेक आयुधोंसे युक्त, अनेक वस्त्रोंसे भूषित, अनेक आकृतिवाली इन सभी योगिनियोंका और सभी भूत जो कि अनेक आकृतिवाले, अत्यन्त भयङ्कर रूपवाले, अनेक शस्त्रोंसे चिह्नित हाथोंवाले, अनेक मुखोंसे युक्त भयङ्कर मुखोंवाले तथा पश्चिम द्वार पर स्थित हैं उन सभी प्रसन्न द्वारपालोंका स्मरण करता हूँ।

विमर्श—अब श्रीचक्रके पश्चिमी द्वार पर स्थित द्वारपाल सर्व-योगिनीरूपी सर्वभूतोंका वर्णन किया जा रहा है—नानायुधाढ्या इति।

श्रीचक्रके पश्चिमी द्वार पर द्वारपालोंके रूपमें योगिनीगण तथा भूतगण विराजमान हैं। योगिनियाँ गुप्त रूपसे तथा भूतगण प्रकटित रूपसे स्थित हैं। जिस प्रकारसे किसी घरकी सुरक्षा पुरुषवर्ग करता है किन्तु पुरुषवर्गके समाप्त हो जाने पर घरमें रहनेवाली स्त्रियाँ ही करती हैं ठीक उसी प्रकार यहाँ पर प्रकटित रूपसे असङ्ख्य भूत रक्षा करते हैं तथा तत्पश्चात् गुप्त रूपसे योगिनियाँ करती हैं।

वास्तविक तथ्य यह है कि 'भूतों'से तात्पर्य है—पञ्च महाभूत। ये पञ्च महाभूत यहाँ पर स्थूल रूपसे विराजमान हैं और ये प्रत्येक असङ्ख्य बन जाते हैं। ये ही जगतके रूपमें विराजमान हैं और ये ही परावस्थामें शक्तिरूप होनेके कारण योगिनी कहलाते हैं। इस प्रकारसे योगिनियों एवं पञ्च महाभूतोंके बीच कोई अन्तर नहीं है। इसलिए 'सर्वयोगिनीरूप-सर्वभूत'के रूपसे यहाँ पर पूजन किया जाता है। ये स्थूलरूप पञ्च महाभूत ही 'पञ्चदशी' तथा पुनः 'षोडशी' अवस्थाको प्राप्त करते हैं।[१] यही रहस्य है। इस प्रकारसे पश्चिमी द्वार पर स्थित योगिनियों तथा भूतोंका वर्णन कर रहे हैं:—

नानायुधाढ्याः—आयुध कहते हैं—शस्त्रको। यहाँ 'नाना' शब्दके

---

१. *श्रीचक्रनिरूपणम्*। सविमर्श-'प्रह्लाद'हिन्दी-व्याख्यासहितम्। लेखकः सम्पादकश्च—गोस्वामी प्रह्लाद गिरि 'वेदान्तकेशरी'। प्राप्तिस्थान—चौखम्बा संस्कृत सीरीज आफिस, वाराणसी-२२१००१(उत्तर प्रदेश)

प्रयोगसे ज्ञात होता है कि सङ्ख्या और प्रकारका कोई निश्चित आकलन नहीं है। साथमें बहुवचनान्त विशेषण शब्दका प्रयोग होनेसे विशेष्यकी सङ्ख्या भी असीमित है।

सकल-मनोज्ञाः–'मनोज्ञ' कहते हैं–सुन्दरको। जो मनका हरण कर ले वही सुन्दर है। वे सभी योगिनियाँ विभिन्न प्रकारके आयुधोंसे युक्त, विभिन्न प्रकारकी वेश-भूषाओंसे भूषित तथा विभिन्न प्रकारकी आकृतिवाली होती हुई भी अत्यधिक सुन्दर लगती हैं।

नानाम्बराढ्याः–'अम्बर' शब्दका अर्थ है–वस्त्र। सभी योगिनियाँ विभिन्न प्रकारकी वेश-भूषावाली हैं। उन्होंने विभिन्न वर्णोंके वस्त्रोंका धारण किया है।

विविधाकृतीः–'आकृति' कहते हैं–आकारको। सभी योगिनियोंके आकार-प्रकार भी भिन्न-भिन्न हैं।

सर्वभूतान्–पञ्च महाभूत ही असङ्ख्य भूतोंके रूपोंको प्राप्त हो जाते हैं। ये पञ्च महाभूत हैं–आकाश, वायु, अग्नि, जल तथा पृथिवी। इन्हीं पञ्च महाभूतोंके विस्तारके कारण असङ्ख्य भूत हो जाते हैं। जहाँ 'असङ्ख्यता' है वहीं 'नानात्व' है।

नाना-स्वरूपान्–भूतोंके स्वरूपमें भी अनेकता है। वे भिन्न-भिन्न स्वरूपके हैं।

अतिभीमरूपान्–'भीम' कहते हैं–भयङ्करको। वे भूत अत्यन्त भयङ्कर रूपवाले हैं। स्थूल संसार 'घोर' रूपात्मक है। 'घोरता'में ही असङ्ख्यता है अर्थात् अनिश्चित सङ्ख्या रहती है और 'अघोर' तो एक मात्र प्रभु परमेश्वर है, सङ्ख्यादि कलनाओंसे परे है, 'सत्यं शिवं सुन्दरम्' है तथा भूतसङ्गसे परे है।

अनेकशस्त्राङ्कितहस्तयुक्तान्–वे भूत अनेक शस्त्रोंसे अङ्कित हाथ-वाले हैं। यहाँ पर 'अङ्कित' शब्दका प्रयोग हुआ है। इससे ज्ञात होता है कि भूतोंके हाथोंमें नाना प्रकारके शस्त्रोंके चिह्न मात्र हैं और चिह्न मात्रके स्मरणसे अभीष्ट शस्त्र प्रकट हो जाते हैं।

अनेकवक्त्रान्वितघोरवक्त्रान्–'वक्त्र'का अर्थ है–मुख। मुख भी उनके अनेक हैं। उन अनेक मुखोंमें घोर अर्थात् भयङ्कर मुख भी अनेक हैं।

तान् सकलान् प्रसन्नान्–यहाँ 'प्रसन्न' शब्दके प्रयोगसे निर्देशन प्राप्त होता है कि उन सभी भूतोंका स्मरण प्रसन्न रूपमें करें। प्रसन्न रूपसे स्मरण करने पर उनकी भयङ्करता समाप्त हो जाती है और वे प्रसन्न होकर द्वारमें प्रवेश करनेकी अनुमति दे देते हैं; तब कहीं द्वारका भेदन हो पाता है और एक द्वारके भेदनसे चक्रका भेदन हो जाता है। यहाँ पर द्वारपालोंके उपर्युक्त यथारूपका ध्यान करें किन्तु उनके प्रसन्नरूपमें ध्यानको केन्द्रित करें। यही रहस्य है।

श्रीद्वारपालान्–पश्चिमी द्वार पर द्वारपाल 'श्रीद्वारपाल' शब्दके द्वारा परिचित हैं। 'श्रीचक्र'में अधिष्ठात्री देवी 'परदेवता' परा शक्ति ही है। शक्ति दो कलाओंके रूपमें विराजमान है–कारणात्मिका कला तथा कार्यात्मिका कला। वह 'कारणात्मिका कला' अर्थात् कर्तृत्वकलाकी अवस्थामें 'ह्रीं' बीज तथा 'कार्यात्मिका कला'की अवस्थामें 'श्रीं' बीजके रूपमें जानी जाती है। कार्य तो स्थूल रूपसे दृश्य होता है किन्तु कारण द्रष्टाके रूपमें परावस्थामें होनेके कारण दृश्यके रूपमें ज्ञात नहीं होता है। 'श्रीचक्र' कार्यात्मिका कलाके रूपमें है किन्तु उसी कार्यात्मिका कलामें कारणात्मिका कला परावस्थामें विद्यमान है। इसलिए 'ह्रीचक्र' शब्दका प्रयोग न होकर 'श्रीचक्र' शब्दका प्रयोग होता है और इस प्रकारसे 'श्रीचक्र' ही लोकमें प्रसिद्ध है। यहाँ पर 'श्रीद्वारपाल' शब्दमें 'श्री' अक्षरके प्रयोगसे द्वारपालोंमें शक्तिकी पूर्णताका बोध होता है और द्वारपाल अपने द्वाररक्षण कार्यको करनेमें पूर्णरूपसे समर्थ हैं। यहाँ पर पराजयका प्रश्न ही नहीं उठता है; क्योंकि योगिनियाँ इस द्वार पर गुप्तरूपसे विराजमान हैं।

किल पश्चिमस्थान्–'श्रीचक्र'के पश्चिमी द्वारको ही मुख्य द्वार कहते हैं। यही प्रथम द्वार है। इसी द्वारसे ही श्रीचक्रका भेदन हो सकता है, अन्यथा नहीं। इसलिए यहाँ पर 'किल' शब्दका प्रयोग

किया गया है। 'किल' शब्दका अर्थ है—प्रसिद्ध। इतना ही नहीं, 'किल' शब्द सामान्य प्रसिद्धिका ख्यापन नहीं करता है बल्कि उसकी प्राचीनताका भी बोध कराता है। यह प्रसिद्धि पारम्परिक एवं प्रामाणिक है। इसमें आगमिक प्रामाण्य विद्यमान है। इसलिए सर्व-प्रथम पश्चिमी द्वारका ही पूजन किया जाता है। यही रहस्य है। 'श्रीचक्र'में श्रीगायत्री ब्रह्मविद्या पश्चिमाभिमुखी बनकर विराजमान है। पश्चिमी द्वार मुख्य है जो कि श्रीगायत्री ब्रह्मविद्याके सम्मुखमें स्थित है। पूर्वी द्वार श्रीगायत्री ब्रह्मविद्याके पृष्ठ भागमें स्थित है। श्रीगायत्री ब्रह्मविद्याके वाम पार्श्वमें दक्षिणी द्वार तथा दक्षिण पार्श्वमें उत्तरी द्वार स्थित है। साधक पूर्वाभिमुखी होकर श्रीगायत्री ब्रह्मविद्याके सम्मुखमें बैठकर पूजन करें।

अहं स्मरामि—मैं पूर्ववर्णित उन सभी प्रसन्नस्वरूप द्वारपालोंका स्मरण करता हूँ॥५॥

पूर्वद्वारे द्वारपाल-क्षेत्रपतेः स्वरूपम्

नीलाञ्जनाभं परमं त्रिनेत्रं
चञ्चत्कृपाणं नृकपालपात्रम्।
श्रीशूलकं सड्डमरुं च मुद्रां
दण्डं दधानं रसपाणिपद्मैः॥
श्रीद्वारपालं किल पूर्वसंस्थं
स्मराम्यहं क्षेत्रपतिं प्रसन्नम्॥६॥

पूर्वद्वारमें स्थित द्वारपाल क्षेत्रपतिका स्वरूप

मैं काले सुरमेके समान कान्तिमान्, विशाल त्रिनेत्रधारी, षड् भुजाओंमें चमकता हुआ तलवार, नरकपाल पात्र, त्रिशूल, डमरु, मुद्रा तथा दण्डका धारण किये हुए, प्रसिद्ध पूर्वद्वारमें स्थित द्वारपाल प्रसन्नस्वरूप क्षेत्रपतिका स्मरण करता हूँ।

विमर्श—अब पूर्वद्वारमें स्थित द्वारपाल क्षेत्रपतिके स्वरूपका वर्णन

किया जा रहा है—नीलाञ्जनाभमिति।

नीलाञ्जनाभम्—'नीलाञ्जन' कहते हैं—काले सुरमे अर्थात् आँखोंमें लगानेवाले काजलको। काजलका वर्ण कृष्ण होता है। क्षेत्रपतिके शरीरका वर्ण सुरमेके समान कृष्णवर्ण है। यहाँ पर 'आभा'का अर्थ है—प्रकाश तथा कान्ति। क्षेत्रपतिके शरीरका वर्ण सुरमेके समान कृष्ण वर्ण होनेके कारण उसके शरीरके सभी ओर कृष्ण वर्णका अन्धकार फैला हुआ दिखाई पड़ रहा है। कृष्ण वर्ण एक ऐसा वर्ण है जो कि सभी वर्णोंको अपनेमें विलीन कर देता है। उसका स्थूल रूप भयङ्कर होता है। यहाँ पर 'नील' शब्दके प्रयोगसे ज्ञात होता है कि यह कृष्ण वर्ण नील मिश्रित है। नील वर्ण अदृश्य कारक होता है; सामने दृश्य होते हुए भी अदृश्य होता है। यही है नील वर्णकी मायावी शक्ति। व्यवहारमें भी हम देखते हैं कि किसी वस्तुका चित्र लेना है तो उस वस्तुके पीछे एक नील वर्णकी विशिष्ट परदा लटका दी जाती है और उसके बाद उस वस्तुका चित्र लिया जाता है। वस्तुका चित्र तो दिखाई पड़ता है किन्तु उसके पीछे स्थित परदाका चित्र नहीं दिखाई पड़ता है। यह नील वर्णका एक विशिष्ट गुण है। इसी प्रकार क्षेत्रपतिका वर्ण नील मिश्रित कृष्ण वर्ण होनेके कारण उसमें अदृश्य होनेकी शक्ति विद्यमान है और वह मायावी विद्यामें निपुण है।

परम-त्रिनेत्रम्—पूर्वी द्वारके द्वारपाल क्षेत्रपतिकी तीन बड़ी-बड़ी आँखे हैं।

चञ्चत्कृपाणं नृकपालपात्रं श्रीशूलकं सड्डमरुं च मुद्रां दण्डं दधानम्—क्षेत्रपतिके हाथोंमें चमकता हुआ तलवार, पात्रके रूपमें मनुष्यका कपाल, शूल, डमरु, अभय मुद्रा तथा दण्ड सुशोभित हैं। 'मुद्रा' शब्दसे यहाँ पर अभय मुद्रा ही ग्राह्य है; क्योंकि द्वारपाल शरणागतको केवल अभयका प्रदान कर सकता है, न कि वरका।

रसपाणिपद्मैः—'रस' शब्दसे छह सङ्ख्याका सङ्केत प्राप्त होता है; क्योंकि रस छह होते हैं। इस प्रकारसे ज्ञात होता है कि क्षेत्रपतिके

छह हाथ हैं।

श्रीद्वारपालं किल पूर्वसंस्थम्—पूर्वी द्वार प्रायः मन्दिरोंका मुख्य द्वार होता है किन्तु यहाँ पर श्रीचक्रमें पश्चिमी द्वार ही मुख्य द्वार है। श्रीचक्रका पूर्वी द्वार अभेद्य है। क्षेत्रपति भी श्रीद्वारपाल है अतः कार्यावस्थामें वह अत्यधिक शक्तिशाली है और अपराजेय है। युद्ध करनेवालेकी मृत्यु सुनिश्चित है और शरणागतको अवश्य अभयका प्रदान किया जाता है। 'किल' शब्दसे यहाँ पर पूर्वी द्वारकी प्राचीन सिद्धिकी परम्पराका बोध होता है।

क्षेत्रपतिं प्रसन्नम्—क्षेत्रपतिको क्षेत्रपाल भी कहते हैं। 'पति' शब्दसे स्वामीका बोध होता है। द्वाररक्षक होते हुए भी क्षेत्रपति हैं अतः क्षेत्रपतिको पूर्वी क्षेत्रका पूर्णाधिकार प्राप्त है। प्रसन्नस्वरूप क्षेत्रपतिके पूजनसे भी इस सर्वप्रसिद्ध पूर्वी द्वारका भेदन नहीं किया जा सकता है। यह पूर्वी द्वार सर्वदा अभेद्य ही है परन्तु प्रसन्नस्वरूपका ध्यान करनेसे अभयताकी प्राप्ति अवश्य होती है जिससे आगेके द्वारका भेदन सम्भव हो जाता है। इसलिए पूर्वी द्वारमें स्थित द्वारपालके प्रसन्न स्वरूपका पूजन किया जाता है।

अहं स्मरामि—मैं पूर्ववर्णित पूर्वी द्वारमें स्थित द्वारपाल क्षेत्रपतिका स्मरण करता हूँ॥६॥

दक्षिणद्वारे द्वारपाल-गणनायकस्य स्वरूपम्

लम्बोदरं नीलतनुं गजास्यं
　　पाशाङ्कुशौ चैव कपालशूले।
करैर्वहन्तं गणनायकं तं
　　श्रीद्वारपं नौमि च दक्षिणस्थम्॥७॥

दक्षिणद्वारमें स्थित द्वारपाल गणनायकका स्वरूप

मैं उस गणनायकको प्रणाम करता हूँ कि जिसका उदर लम्बा है, शरीर नीला है, हाथीके समान मुख है; जिसने हाथोंसे पाश,

अङ्कुश, कपाल तथा शूलका धारण किया है और जो दक्षिणी द्वारका द्वारपाल है।

विमर्श–अब दक्षिणी द्वारमें स्थित द्वारपाल गणनायकके स्वरूप-का वर्णन किया जा रहा है–लम्बोदरमिति।

लम्बोदरम्–जिसका उदर लम्बा है उसे लम्बोदर कहते हैं। 'उदर'का अर्थ है–पेट। गणनायक गणपतिका पेट लम्बा है इसलिए उसे 'लम्बोदर' कहते हैं।

नीलतनुम्–गणनायकका शरीर नीला है। नील वर्ण अदृश्य कारक होता है। इसलिए गणनायकको अदृश्य विद्याकी सिद्धिके साथ-साथ मायावी युद्धका नाश करनेके लिए भी शक्ति प्राप्त है।

गजास्यम्–'आस्य' कहते हैं–मुखको। गणनायकका मुख हाथीके मुखके समान है। इसलिए गणनायकको 'गजानन' भी कहते हैं। हाथी शुभकारक होता है इसलिए गजमुख गणनायकका दर्शन अत्यन्त शुभ होता है।

पाशाङ्कुशौ च एव कपालशूले करैः वहन्तम्–यहाँ पर गणनायक चतुर्भुजके रूपमें विराजमान हैं। उसके चारों हाथोंमे पाश, अङ्कुश, कपाल तथा शूल सुशोभित हैं। कपाल ही गणनायकका पात्र है; क्योंकि गणनायक यहाँ पर द्वारपालके रूपमें विराजमान है।

गणनायकम्–दक्षिणी द्वार पर गणोंके नायकके रूपमें गणपति विराजमान है। गणपतिके अनेक रूप हैं किन्तु द्वारके रक्षकके रूपमें वह गणोंका नायक है।

श्रीद्वारपम्–'श्री' अक्षरसे यह सङ्केत मिलता है कि श्रीचक्रमें कार्यावस्थामें दक्षिणी द्वारका द्वारपाल गणनायक अत्यधिक शक्ति-सम्पन्न एवं अपराजेय है।

दक्षिणस्थं च–दक्षिणी द्वारमें आसुरी शक्तिके प्रवेशकी सम्भावना प्रबल होती है। आसुरी शक्ति मायावी विद्यासे युक्त है और मायावी युद्धमें मायावी शक्तिको पराजित करनेमें गणनायक पूर्ण रूपसे सक्षम

है। इसलिए गणनायकको द्वारपाल बनाना समुचित प्रतीत होता है।

नौमि—मैं पूर्ववर्णित दक्षिणी द्वार पर स्थित द्वारपाल श्रीगणनायक गजाननको नमस्कार करता हूँ॥७॥

उत्तरद्वारे द्वारपाल-वटुकभैरवस्य स्वरूपम्

बालं विशुद्धस्फटिकप्रभास्यं
श्रीशूलदण्डौ दधतं त्रिनेत्रम्।
देवीसुतं श्रीवटुकाभिधानं
श्रीद्वारपं नौमि सदोत्तरस्थम्॥८॥

उत्तरी द्वारमें स्थित द्वारपाल वटुक भैरवका स्वरूप

मैं बालरूप, विशुद्ध स्फटिककी प्रभाके समान मुखवाले, त्रिशूल तथा दण्डका धारण करनेवाले, त्रिनेत्रधारी, सदैव उत्तरी द्वारमें स्थित द्वारपाल, श्रीवटुक नामक देवीके पुत्रको प्रणाम करता हूँ।

विमर्श—अब उत्तरी द्वारमें स्थित द्वारपाल वटुक भैरवके स्वरूपका वर्णन किया जा रहा है—बालमिति।

बालम्—उत्तरी द्वार पर द्वारपालके रूपमें वटुक भैरव नित्य बाल-स्वरूपमें विराजमान है।

विशुद्धस्फटिकप्रभास्यम्—स्फटिककी प्रभा उज्ज्वल होती है और उसमें भी यदि स्फटिक पूर्णरूपसे विशुद्ध हो तो उसकी उज्ज्वलतामें अत्यधिक वृद्धि हो जाती है। ऐसा ही अत्यन्त उज्ज्वल मुख है वटुक भैरवका।

श्रीशूलदण्डौ दधतम्—वटुक भैरवके दो हाथ हैं। उसने एक हाथमें त्रिशूल तथा दूसरे हाथमें दण्डका धारण किया है।

त्रिनेत्रम्—वटुक भैरवके तीन आँखें हैं। इसलिए ज्ञात होता है कि वह शिवांश है।

देवीसुतं श्रीवटुकाभिधानम्—'श्री' अक्षरके प्रयोगसे ज्ञात होता है

कि बालरूप वटुक भैरव सर्वमान्य द्वाररक्षकके रूपमें प्रसिद्ध है। 'देवीसुत' शब्द देवीके प्रिय पुत्र तथा शक्तिसम्पन्नका सङ्केत देता है।

श्रीद्वारपम्—यहाँ पर 'श्री' अक्षरसे पूर्ववत् ज्ञात होता है कि श्रीचक्रकी कार्यावस्थामें द्वारपालके रूपमें वटुक भैरव विराजमान है।

सदोत्तरस्थम्—उत्तरी द्वार निग्रहात्मक होता है। इसलिए वटुक भैरवके पास निग्रहकी शक्ति विद्यमान है। वह बालरूप होते हुए भी निग्रह करनेकी शक्तिसे सम्पन्न है। निग्रहके अन्तर्गत तीनों गुणोंका निग्रह होता है अतः उसमें उपर्युक्त विशुद्ध स्फटिककी प्रभा होना स्वाभाविक है। स्फटिकमें सभी गुणोंके वर्णोंकी प्रभा पड़ सकती है। 'सदा' शब्दसे यह सङ्केत मिलता है कि उत्तरी द्वारमें स्थित द्वारपाल वटुक भैरव कभी भी द्वारको छोड़कर नहीं भागता है; सर्वदा अपने निग्रहात्मक कार्यमें संलग्न रहता है। जिस प्रकारसे शासनाध्यक्षका पद रिक्त नहीं होता है उसी प्रकारसे वटुक भैरव निग्रहात्मक उत्तरी द्वारको कभी भी रिक्त नहीं रखता है; यहाँ पर सर्वदा विराजमान है।

नौमि—मैं पूर्ववर्णित उत्तरी द्वार पर स्थित द्वारपाल वटुक भैरवको नमस्कार करता हूँ॥८॥

भूसदने नैर्ऋत्ये तिरस्कर्याः स्वरूपम्

श्यामाननाब्जामरुणत्रिनेत्रां
कृष्णाम्बरां नीलहयाधिरूढाम्।
गदां च खड्‌गं दधतीं कराभ्याम्
अधस्कराभ्यां मधुपूर्णकुम्भम्॥
तां दर्शयन्तीं निजरम्ययोनिं
विमोहयन्तीं पशुवर्गकांश्च।
तिरस्करीं चारुमुखीं मनोज्ञां
नैर्ऋत्यसंस्थां मनसा स्मरामि॥९॥

भूपुरके नैऋत्य कोणमें स्थित तिरस्करी देवीका स्वरूप

मैं कृष्ण वर्णके मुखवाली, लाल वर्णकी तीन आँखोंवाली, कृष्ण वर्णके वस्त्रका धारण करनेवाली, नीलवर्णके घोड़े पर आरूढ़, ऊपरके दोनों हाथोंसे गदा और खड्ग तथा नीचेके हाथोंसे मधुसे भरे हुए घड़ेको ली हुई, अपनी रम्य योनिका प्रदर्शन करती हुई और पशुवर्गको विमोहित करती हुई नैऋत्य कोणमें स्थित सुन्दर मुखवाली तिरस्करी देवीका मनसे स्मरण करता हूँ।

विमर्श–अब नैऋत्य कोणमें स्थित तिरस्करी देवीके स्वरूपका वर्णन किया जा रहा है–श्यामाननाब्जामिति।

श्यामाननाब्जाम्–'श्याम' कहते हैं–कृष्ण वर्णको। 'आनन' कहते हैं–मुखको। 'अब्ज' कहते हैं–कमलको। तिरस्करी देवीका मुखकमल श्याम वर्णवाला है। यहाँ पर 'अब्ज' शब्दके योगसे मुखका वर्ण श्याम होते हुए भी नीलकमलके समान होनेका सङ्केत मिलता है।

अरुणात्रिनेत्राम्–नैऋत्य कोणमें स्थित तिरस्करी देवी रक्त वर्णकी तीन आँखोंसे युक्त है।

कृष्णाम्बराम्–नैऋत्य कोणमें स्थित देवी तिरस्करीके द्वारा धारण किये गये वस्त्र काले रंगके हैं।

नीलहयाधिरूढाम्–'हय' कहते हैं–घोड़ेको। नैऋत्य कोणमें स्थित देवी तिरस्करीका वाहन नील अर्थात् कृष्ण वर्णका घोड़ा है।

गदां च खड्गं दधतीं कराभ्याम् अधस्कराभ्यां मधुपूर्णकुम्भम्–चतुर्भुजा है देवी तिरस्करी। ऊपरके दोनों हाथोंमें गदा तथा खड्ग स्थित हैं; जबकि देवीने नीचेके दोनों हाथोंमें मधुसे परिपूर्ण घटका धारण किया है।

निजरम्ययोनिं दर्शयन्तीम्–नैऋत्य कोणमें स्थित देवी तिरस्करी अपनी रम्य योनिका प्रदर्शन करती रहती है।

विमोहयन्तीं पशुवर्गकांश्च–देवी तिरस्करीके द्वारा योनिके प्रदर्शन-से पशुवर्ग मोहित हो जाते हैं। 'पशुवर्गक' शब्दसे अज्ञानी जीवोंका

ग्रहण होता है।

तिरस्करीम्–देवी तिरस्करी तामस प्रवृत्तिके प्रतीकके रूपमें विराजमान है। तमोगुणका परिचय कृष्ण वर्णसे होता है। इसलिए देवीके मुख तथा वस्त्र कृष्ण वर्णके हैं; वाहन भी काले रंगका घोड़ा है। गदा और खड्ग तमोगुणके शस्त्र हैं; हाथमें मधुका घट है तथा देवी स्वयं मधु पिलाती हुई अज्ञानी जीवोंको विमोहित करती रहती है किन्तु साधक जब भौतिक भोगवासनाओंके प्रलोभनमें न पड़कर इनका तिरस्कार कर देता है तब उसे तिरस्करी देवीके वास्तविक स्वरूपका दर्शन होता है। ऐसी अवस्थामें वह देवी अब प्रलोभन-कारिणी नहीं बनती है।

चारुमुखीं मनोज्ञाम्–जब विवेकी साधक भौतिक भोगवासनाओं-के प्रलोभनका तिरस्कार कर देता है तब उसे देवी तिरस्करीके सुन्दर मुख तथा रूपका दर्शन होता है और इस दर्शनसे साधक कृतार्थ होकर आगेकी प्रक्रियामें पहुँच जाता है।

नैऋत्यसंस्थाम्–भवनकी वास्तु विद्याके अन्तर्गत नैऋत्य कोणका माहात्म्य सर्वोपरि है। गृहके निर्माणमें नैऋत्य कोण अन्य कोणोंकी अपेक्षा उच्च रहता है। यह कोण गृहस्वामीके निवासके लिए सर्वोत्तम माना गया है। इस कोणमें निवास करनेवाला गृहस्वामी समस्त सुख-सम्पदा तथा भोग-वासनाओंको निर्विघ्न प्राप्त करता रहता है। हमने उपर्युक्त विवेचनसे देखा कि तिरस्करी देवी समस्त भौतिक भोगोंकी प्रदानकारिणी शक्ति है। यह देवी नैऋत्य कोणमें स्थित रहती है। इसलिए समस्त भौतिक भोगोंका स्थान है नैऋत्य कोण। यहाँ तिरस्करी देवीका निवास स्थान होना स्वाभाविक ही है।

मनसा स्मरामि–'मनसा' शब्दसे साधकको निर्देशन दिया गया है कि सावधान होकर देवीका पूजन करें। यदि मनसे न करके बाह्य भावसे करेंगे तो प्रलोभित हो जायेंगे और आगे नहीं बढ़ सकेंगे। जागरुक मस्तिष्कवाला साधक सिद्धिको अवश्य प्राप्त कर लेता है। इसलिए सदैव जागरुक बनें। मैं पूर्ववर्णित उस तिरस्करी देवीका मनसे

स्मरण करता हूँ॥९॥

आग्नेये वनदुर्गायाः स्वरूपम्

श्रीश्यामलाङ्गीं धृतचन्द्रचूडां
शङ्खं रथाङ्गं करवालबाणान्।
सत्तर्जनीं चर्म च खेटकाख्यं
चापं भुजाब्जैर्ननु धारयन्तीम्॥
स्मेराननाब्जां मणिरत्नभूषां
रक्ताम्बराढ्यां वनपूर्वदुर्गाम्।
आग्नेयसंस्थां मनसा स्मरामि॥१०॥

आग्नेयकोणमें स्थित वनदुर्गाका स्वरूप

मैं श्याम अङ्गोंवाली, मस्तक पर चन्द्रमाका धारण करनेवाली, करकमलोंसे शङ्ख, चक्र, तलवार, बाण, तर्जनी मुद्रा, चर्म, खेटक तथा चापका धारण करनेवाली, विहसित मुखवाली, मणिरत्नोंसे अलङ्कृत, रक्त वस्त्रका धारण करनेवाली, आग्नेय कोणमें स्थित वनदुर्गाका मनसे स्मरण करता हूँ।

विमर्श—अब आग्नेय कोणमें स्थित वनदुर्गाका वर्णन किया जा रहा है—श्रीश्यामलाङ्गीमिति।

श्रीश्यामलाङ्गीम्—देवी वनदुर्गाके अङ्ग श्यामल हैं अर्थात् वनदुर्गा श्याम वर्णकी है। 'श्री' अक्षरके संयोजनसे ज्ञात होता है कि स्थूल रूपमें उपासना करने पर रक्षा करनेकी शक्ति सिद्ध होती है। इसलिए कुछ साधक वनदुर्गाको इष्ट देवी मानकर उपासना करते रहते हैं। ध्यान रहे कि श्याम वर्ण सभी वर्णोंको अपने में विलीन कर देता है। इसलिए समस्त दुर्गतिको अपनेमें विलीन करके रक्षा करनेवाली शक्ति श्यामलाङ्गी 'दुर्गा' कहलाती है। श्याम वर्ण तमोवर्णका प्रतीक है अतः स्थूल रूपकी उपासना होती है।

धृतचन्द्रचूडाम्–देवी वनदुर्गाने अपने मस्तक पर चूड़ामणिके रूपमें चन्द्रमाका धारण किया है। चन्द्रमा श्वेत वर्णका है। यहाँ पर यह सत्त्व गुणका प्रतीक है जो कि परा अवस्थाका सङ्केत देता है।

शङ्खं रथाङ्गं करवालबाणान् सत्तर्जनीं चर्म च खेटकाख्यं चापं भुजाब्जैर्ननु धारयन्तीम्–देवी वनदुर्गाके आठ हाथ हैं। इसलिए यह 'अष्टभुजा' कहलाती है। 'रथाङ्ग'का अर्थ है–चक्र। 'करवाल' कहते हैं–तलवारको। 'सत्तर्जनी' शब्दमें 'सत्' शब्दका साङ्केतिक अर्थ है–एक। एक सङ्ख्याका संकेत भर्त्सनाका प्रतीक है। इसलिए 'सत्तर्जनी'-का अर्थ है–एक सङ्ख्याका प्रदर्शन करनेवाली 'एक मुद्रा'। 'चर्म' कहते हैं–शूल, बाण आदिके भेदनसे बचानेवाले ढ़ालको। 'खेटक' कहते हैं–तलवार, परशु आदिके प्रहारसे बचानेवाले ढ़ालको। 'चाप' कहते हैं–धनुषको। इस प्रकारसे देवीके आठों हाथोंमें आठ शस्त्र जैसे–शङ्ख, चक्र, तलवार, बाण, सत्तर्जनी मुद्रा, चर्मरूपी ढ़ाल, खेटक नामक ढ़ाल तथा धनुष शोभायामान हो रहे हैं।

स्मेराननाब्जाम्–देवी वनदुर्गाका मुखकमल प्रसन्नताके कारण विहसित है और इस विहसित मुखवाली देवीकी उपासना करनसे वह शीघ्र ही प्रसन्न हो जाती है।

मणिरत्नभूषाम्–देवी वनदुर्गा विभिन्न प्रकारके मणि एवं रत्नोंसे निर्मित अलङ्कारोंसे अलङ्कृत है। इससे देवीकी सुन्दरताका यहाँ पर दर्शन होता है।

रक्ताम्बराढ्याम्–देवी वनदुर्गाने लाल वर्णके वस्त्रोंका धारण किया है। लाल वर्ण रजोगुणका प्रतीक है और इसमें क्रियाशीलता रहती है।

वनपूर्वदुर्गाम्–'दुर्गा' शब्दके पहले यहाँ पर 'वनपूर्व' शब्दका प्रयोग हुआ है इसलिए 'वनदुर्गा'के नामसे देवी जानी जाती है। श्लोक, छन्द, पद आदिकी दृष्टिसे 'पूर्व' शब्द लगाकर लिखनेकी यह एक कला है। हम 'वन' शब्दके सम्बन्धमें विचार करते हैं कि

'वन' शब्द अरण्यार्थक ही नहीं बल्कि उपमा वाचक भी है। जैसे 'तद्वन' नामक ब्रह्मकी उपासना केनोपनिषद्में वर्णित है। यदि 'वन' शब्दका प्रयोग उपमाके रूपमें किया जाता है तो प्रश्न उठता है कि दुर्गा किसकी उपमा है? कहते हैं—महादुर्गाकी समरूपताके कारण यहाँ पर इस देवी दुर्गाको 'वनदुर्गा' कहते हैं। यह दुर्गाकी स्थूलावस्थाका रूप है। इसलिए वनदुर्गाको इष्ट देवी मानकर साधना करनेवाले साधक अनेक मिल जाते हैं। वास्तविक रूपसे देखा जाय तो अरण्यार्थक शब्द यहाँ पर अनुपयुज्य है।

आग्नेयसंस्थाम्—दक्षिण-पूर्व दिशाको आग्नेय कोण कहते हैं। देवी वनदुर्गा आग्नेय कोणमें स्थित है। यह आग्नेय कोण ज्योतिर्मय होता है। गृहके अग्नि कोणमें ऐसा कार्य किया जाता है जिससे सदा अग्नि ज्योतिःकी निरन्तरता बनी रहे। इसलिए पाकशाला, प्रकाशके साधन आदिकी व्यवस्था अग्नि कोणमें की जाती है।

मनसा स्मरामि—देवी वनदुर्गाका स्मरण मनसे करनेके लिए यहाँ पर निर्देश दिया गया है। सामान्य स्मरण तो औपचारिक है और औपचारिक स्मरण मात्रसे सिद्धिकी प्राप्ति नहीं हो सकती है। मैं आग्नेय कोणमें स्थित पूर्ववर्णित वनदुर्गाका मनसे स्मरण करता हूँ॥१०॥

ईशाने कामदेवस्य स्वरूपम्

बन्धूकखट्वाङ्गधरं मनोज्ञं
पुष्पेक्षुकोदण्डधरं द्विहस्तम्।
ईशानसंस्थं कुसुमादिभूष्यं
रत्यान्वितं काममहं स्मरामि॥११॥

ईशान कोणमें स्थित कामदेवका स्वरूप

मैं एक हाथमें बन्धूक पुष्प तथा दूसरे हाथमें पुष्पबाण एवं ईखसे बने हुए धनुषका धारण करनेवाले, दो हाथोंवाले, कुसुम

आदिसे विभूषित, रतिसे युक्त, अत्यन्त सुन्दर, ईशान कोणमें स्थित कामदेवका स्मरण करता हूँ।

विमर्श–अब ईशान कोणमें स्थित कामदेवके स्वरूपका वर्णन किया जा रहा है–बन्धूकखट्वाङ्गधरमिति।

बन्धूक-खट्वाङ्गधरम्–'बन्धूक' एक प्रकारका आकर्षक पुष्प है जो अत्यधिक लाल रंगका है। 'खट्वाङ्ग' कहते हैं–खाटके पायेको। कामदेवके एक हाथमें बन्धूक पुष्प और खाटका पाया स्थित हैं।

पुष्पेक्षुकोदण्डधरम्–'ईक्षु' कहते हैं–ईखको। कामदेवका धनुष ईखके दण्डसे बना है। कामदेवके दूसरे हाथमें पुष्पबाण तथा ईखसे निर्मित धनुष स्थित हैं।

द्विहस्तम्–कामदेव द्विभुज है। उपर्युक्त चार पदार्थोंको देख चार हाथ होनेकी शङ्काका निवारण करने हेतु 'द्विहस्त' शब्दका प्रयोग किया गया है।

मनोज्ञम्–कामदेवके दो हाथोंमें चार पदार्थोंके विद्यमान रहने पर उसकी सुन्दरतामें कमी होनेकी शङ्काको दूर करते हुए कहते हैं कि कामदेव अत्यन्त सुन्दर है। उसका रूप मनको मोहित कर लेता है।

कुसुमादिभूष्यम्–कामदेवके आभूषण पुष्प, पत्र, फल आदिसे निर्मित हैं। इस प्राकृतिक अलङ्कारोंसे अलङ्कृत कामदेव अत्यन्त सुन्दर लग रहा है।

रत्यान्वितम्–कामदेवकी पत्नी रति है। रतिके बिना कामदेव निष्क्रिय हो जायेगा इसलिए वह सर्वदा रतिसे युक्त रहता है। 'सशक्तिकम्' शब्दके पाठमें भी कामदेवकी शक्ति 'रति' ही तो होगी।

ईशानसंस्थम्–कामदेव ईशान कोणमें स्थित है। पूर्वोत्तर कोणको ईशान कोण कहते हैं। गृहका ईशान कोण देवस्थान तथा जल-भण्डारके लिए उपयुक्त माना गया है। ईशान कोणमें कामदेवका स्थान होनेके कारण कामदेव नियन्त्रित हो पाता है, अन्यथा चक्रका भेदन असम्भव हो जाता।

कामम् अहं स्मरामि—कामदेव एक ऐसा देव है जो प्राणी मात्रको वशीभूत करनेमें समर्थ है। इसके शस्त्र समस्त प्राणियोंको कामग्रस्त बना देते हैं। ये प्रसन्न होने पर नियन्त्रित रूप होकर प्राणीको कामसुखका प्रदान करते हैं। इसलिए इनका पूजन प्रसन्नतापूर्वक करना चाहिए। मैं ईशान कोणमें स्थित पूर्ववर्णित कामदेवका स्मरण करता हूँ॥११॥

वायव्ये वसन्तस्य स्वरूपम्

स्मेराननाढ्यं शरदिन्दुगौरं
प्रीत्या युतं श्रीऋतुराजराजम्।
रत्नादिभूषं ललितं वसन्तं
वायव्यसंस्थं सततं नमामि॥१२॥

वायव्य कोणमें स्थित वसन्तका स्वरूप

मैं वसन्तको निरन्तर प्रणाम करता हूँ कि जो विहसित मुखसे युक्त है, शरत्कालीन चन्द्रमाके समान गौर वर्णवाला है, प्रीतिसे युक्त है, ऋतुओंका राजा है, रत्न आदिसे अलङ्कृत है, सुन्दर है तथा वायव्य कोणमें स्थित है।

विमर्श—अब वायव्य कोणमें स्थित वसन्तके स्वरूपका वर्णन किया जा रहा है—स्मेराननाढ्यमिति।

स्मेराननाढ्यम्—वसन्तका मुख विहसित है। जहाँ पर प्रसन्नता रहती है वहाँ मुख पर वह झलकती रहती है। जब वसन्त ऋतु आ जाता है तब समस्त प्राणी प्रफुल्लित हो जाते हैं। 'स्मेरान्विता-स्यम्' पाठका भी यही भाव है।

शरदिन्दुगौरम्—वसन्तका वर्ण शरत्कालीन चन्द्रमाके समान गौर वर्ण है।

प्रीत्या युतम्—वसन्तकी सहचरी प्रीति है। वसन्त सर्वदा प्रीतिसे युक्त रहता है।

श्रीऋतुराज-राजम्—वसन्त ऋतुको ऋतुओंका राजा कहते हैं। इसलिए वसन्तका नाम 'ऋतुराज' है। 'राज' शब्दके प्रयोगसे श्रेष्ठताकी अभिव्यक्ति होती है। जब कोई विशिष्ट अभिव्यक्ति हो तो 'श्री' अक्षरका प्रयोग किया जाता है। यहाँ पर भी वसन्तको श्रीत्व प्राप्त होनके कारण 'श्रीऋतुराज' कहा गया है।

रत्नादिभूषम्—वसन्तने रत्न, मणि आदिसे निर्मित अलङ्कारोंका धारण किया है। 'आदि' पदसे बहुमूल्य अलङ्करण पदार्थोंका ग्रहण होता है।

ललितम्—'ललित' शब्दका अर्थ है—सुन्दर। वह भी ऐसा सुन्दर कि जिसके अवलोकनसे आनन्दकी अनुभूति हो।

वायव्यसंस्थम्—वसन्तका स्थान वायव्य कोण है। पश्चिमोत्तर कोणको वायव्य कोण कहते हैं। वसन्तका सम्बन्ध वायुसे है। वसन्त ऋतुमें वासन्तिक पवन प्राणीको मदमत्त बनानेमें समर्थ है। ध्यान रहे कि वास्तुशास्त्रकी दृष्टिसे गृहका वायव्य कोण प्रायः अपशिष्ट निकासीके लिए उपयुक्त माना जाता है। इस कोणमें कोई भी पदार्थ स्थिर नहीं रहता है। इस कोणमें रहनेवाले व्यक्तिका निवास अस्थायी होता है। इसलिए इस कोणमें गृहका स्वामी कभी भी निवास नहीं करता है और न ही स्थायी वस्तुके लिए भण्डार गृहका निर्माण कराता है।

वसन्तं सततं नमामि—वसन्तको निरन्तर प्रणाम करनेके लिए 'सतत' शब्दका प्रयोग किया गया है जिससे कि साधककी आन्तरिक दुर्वृत्ति बाहर होकर दूर चली जाये और साधक प्रसन्न होकर उपासना-के कार्यमें प्रवृत्त रहे। मैं वायव्य कोणमें स्थित पूर्ववर्णित वसन्तको निरन्तर नमस्कार करता हूँ॥१२॥

भूसदन-पार्श्वयोः शङ्खनिधेः पद्मनिधेश्च स्वरूपम्

श्रीपद्ममालाङ्कितदिव्यदेहौ
स्मेराननाब्जौ वरदाभयाढ्यौ।

श्रीपार्श्वसंस्थौ ललितौ प्रसन्नौ
तौ शङ्खपद्माख्यनिधी स्मरामि॥१३॥

भूपुरके दोनों पार्श्वोंमें स्थित शंखनिधि तथा पद्मनिधिके स्वरूप

मैं उन शंखनिधि तथा पद्मनिधिका स्मरण करता हूँ कि जिनके पद्ममालासे चिह्नित दिव्य शरीर हैं; विहसित मुखकमल, हाथोंमें वर मुद्रा तथा अभय मुद्रा सुशोभित हैं; जो भूपुरके दोनों पार्श्वोंमें स्थित हैं; सुन्दर तथा प्रसन्नस्वरूप हैं।

विमर्श—अब भूपुरके दोनों पार्श्वोंमें स्थित शंखनिधि तथा पद्मनिधिके स्वरूपका वर्णन किया जा रहा है—श्रीपद्ममालाङ्कित-दिव्य-देहाविति।

श्रीपद्ममालाङ्कित-दिव्यदेहौ—शङ्खनिधि तथा पद्मनिधि दोनों दिव्य शरीरवाले हैं। इनके शरीर पर पद्ममालाके चिह्न दिखाई पड़ रहे हैं। 'श्री' अक्षरके संयोगसे पद्ममालाकी महत्ता झलकती है। वह पद्ममाला 'श्री'की शक्तिसे युक्त है अतः स्थूलाकारसे दिखाई न पड़ने पर भी चिह्नके रूपमें शक्तिरूप है। इसलिए दोनों शक्तिसम्पन्न हैं।

स्मेराननाब्जौ—शङ्खनिधि तथा पद्मनिधि दोनों निधियोंके मुख-कमल विहसित हैं।

वरदाभयाढ्यौ—शङ्खनिधि तथा पद्मनिधि दोनों द्विभुज हैं। दोनोंने अपने-अपने वामहस्तमें वर मुद्रा तथा दक्षिण हस्तमें अभय मुद्राका धारण किया है।

श्रीपार्श्वसंस्थौ—यहाँ पर 'श्री' अक्षरसे श्रीचक्रके मुख्यद्वारका बोध होता है। मुख्य द्वारके दोनों पार्श्वोंमें शङ्खनिधि तथा पद्मनिधि दोनों विराजमान हैं। इन दोनोंके द्वार पर रहनेसे सर्वदा शुभ होता रहता है। इसलिए गृहके द्वार पर लोग शङ्खनिधि तथा पद्मनिधिके चित्रका अङ्कन कराते हैं।

ललितौ प्रसन्नौ—शङ्खनिधि तथा पद्मनिधि दोनों अत्यन्त सुन्दर

लग रहे हैं और दोनोंके मुखमण्डलमें प्रसन्नता छायी हुई है। इस प्रकारके सुन्दर एवं प्रसन्न व्यक्तिको देखकर स्वाभाविक रूपसे प्रसन्नता प्राप्त होती है। प्रसन्न साधक निश्चित ही अपनी साधनामें उत्साह पूर्वक लगा रहता है।

शङ्खपद्माख्यनिधी–श्रीचक्रके मुख्य द्वारके दोनों पार्श्वोंमें रहनेवाले दो निधियाँ हैं–शंखनिधि तथा पद्मनिधि। ये दोनों निधियोंके रूपमें पूजित होते हैं जिनसे कि गृह सकल संपदासे परिपूर्ण रहे। ये दोनों प्रतीकके रूपमें द्वारके दोनों पार्श्वोंमें स्थित हैं।

तौ स्मरामि–मैं पूर्ववर्णित उन शंखनिधि तथा पद्मनिधि दोनोंका स्मरण करता हूँ॥१३॥

पश्चिमद्वारे द्वारनायिकारूपिण्याः कुब्जकेश्याः स्वरूपम्

देवीं खण्डेन्दुचूडां मदमुदितमुखां बर्बराकेशभाराम्
उद्यद्बालार्कभासां कुचभरनमितां सर्वभूषाभिरामाम्।
सिंहस्कन्धाधिरूढामभयवरकरामेकवक्त्रां त्रिनेत्रां
श्रीद्वारेशीं प्रतीच्यां कुलजननमितां कुब्जकेशीं नमामि॥१४॥

पश्चिमी द्वारमें स्थित द्वारनायिका कुब्जकेशीका स्वरूप

मैं देवी कुब्जकेशीको प्रणाम करता हूँ कि जिसने मस्तक पर अर्द्ध चन्द्रका धारण किया है; जिसके मुखमें दर्पके कारण प्रसन्नता छाई हुई है; जो विखरे हुए बालवाली, उगते हुए सूर्यके समान कांतिवाली, स्तनोंके भारसे झुकी हुई, सभी अलंकरणोंसे सुन्दर लगनेवाली, सिंहके कन्धे पर बैठी हुई, अभय मुद्रा तथा वर मुद्राका धारण करनेवाली, एक मुखवाली, तीन आँखोंवाली, पश्चिमी द्वारकी द्वारनायिका है तथा शक्तिसमूहसे वन्दित है।

विमर्श–अब पश्चिमी द्वारमें स्थित द्वारनायिका कुब्जकेशीके स्वरूपका वर्णन किया जा रहा है–देवीमिति।

देवीम्–कुब्जकेशीको अलौकिक रूपसम्पन्न होनेके कारण देवीके

रूपमें स्वीकार करते हुए सम्मान दिया गया है।

खण्डेन्दुचूडाम्–'खण्डेन्दु' कहते हैं–अर्द्ध चन्द्रको। देवीके मस्तक पर अर्द्ध चन्द्र चूड़ामणिके रूपमें सुशोभित है।

मदमुदितमुखाम्–'मद' कहते हैं–दर्पको। 'मुदित' कहते हैं–प्रसन्न-को। जब किसीमें स्वाभिमान होता है तब व्यक्ति दर्पयुक्त हो जाता है। देवी कुब्जकेशी दर्पयुक्त है इसलिए उसके मुख पर प्रसन्नता झलक रही है।

बर्बराकेशभाराम्–'बर्बरा' कहते हैं–अव्यवस्थितको। 'भार' कहते हैं–समूहको। देवी कुब्जकेशीके केशसमूह अधिक घने हैं और विखरे हुए हैं। वस्तुतः देवी कुब्जकेशीके नामके अनुरूप उसके मस्तक पर कुब्जाकार केशसमूह है और उसके चारों ओर केश विखरे हुए हैं।

उद्यद्बालार्कभासाम्–देवीके शरीरकी कांति उगते हुए बाल सूर्यके प्रकाशके समान है। उगते हुए बाल सूर्यकी कांति सिन्दूर वर्णकी होती है। इस प्रकारसे देवी कुब्जकेशीके शरीरकी कांति भी सिन्दूर वर्णकी है।

कुचभरनमिताम्–देवी कुब्जकेशीके अत्यन्त पृथुल स्तन हैं और वे इतने भारी हैं कि उनके भारसे देवी झुकी हुई है।

सर्वभूषाभिरामाम्–देवी कुब्जकेशीने विभिन्न प्रकारके आभूषणोंका धारण किया है। वे सारे आभूषण उनके रूपके अनुकूल हैं। उन आभूषणोंका धारण करनेसे देवीके रूपमें अभिनवता दिखाई पड़ रही है जिससे उसकी आकर्षणकी शक्तिमें वृद्धि हो रही है।

सिंहस्कन्धाधिरूढाम्–देवी कुब्जकेशीका वाहन सिंह है और वह सिंहके कंधेपर बैठी हुई है।

अभयवरकराम्–देवी कुब्जकेशी द्विभुजा है। उसके एक हाथमें अभय मुद्रा तथा दूसरे हाथमें वर मुद्रा सुशोभित हैं।

एकवक्त्राम्–'वक्त्र' कहते हैं–मुखको। देवी कुब्जकेशी एक

मुखवाली है।

त्रिनेत्राम्–देवी कुब्जकेशीकी तीन आँखें हैं। इसलिए वह 'त्रिनेत्रा' कहलाती है।

श्रीद्वारेशीम्–देवी कुब्जकेशी यहाँ पर द्वारनायिकाके रूपमें विराजमान है। 'श्री' अक्षरके संयोजनसे यहाँ पर पूर्ववत् कार्यावस्थामें प्राप्त शक्तिका बोध होता है।

प्रतीच्याम्–'प्रतीची' कहते हैं–पश्चिम दिशाको। देवी कुब्जकेशी पश्चिमी द्वारकी द्वारनायिका है।

कुलजननमिताम्–'कुल' कहते हैं–शक्तिको। 'जन' कहते हैं–समूहको। देवी कुब्जकेशी शक्तियोंके समूहसे वंदित है।

कुब्जकेशीम्–'कुब्ज' कहते हैं–कुबड़ेको। कुबड़ाकार केशवालीको कुब्जकेशी कहते हैं। देवी कुब्जकेशीके मस्तक पर अत्यधिक घने एवं लम्बे केश हैं। इन केशोंको सँवारनेके लिए देवीने अपने मस्तक पर जो जूड़ा बाँध रखी है वह देखनेमें कुबड़ेके समान है। इसलिए वह 'कुब्जकेशी'के नामसे जानी जाती है।

नमामि–मैं पूर्ववर्णित पश्चिम दिशाकी द्वारनायिका देवी कुब्ज-केशीको नमस्कार करता हूँ।।१४।।

उत्तरद्वारे द्वारनायिकारूपिण्याः सिद्धलक्ष्म्याः स्वरूपम्

सत्खट्वाङ्गत्रिशूलाभयवरनृशिरःपाशकुम्भाङ्कुशासि-
पात्राढ्यां सुप्रसन्नां ललितदशभुजां श्रीशरच्चन्द्रगौरीम्।
रुद्रस्कन्धाधिरूढामभिनवयुवतिं पञ्चवक्त्राभिरामां
श्रीद्वारेशीमुदीच्यां स्मितमुखकमलां सिद्धलक्ष्मीं स्मरामि।।१५।।

उत्तरी द्वारमें स्थित द्वारनायिका सिद्धलक्ष्मीका स्वरूप

मैं खाटके पाया, त्रिशूल, अभय मुद्रा, वर मुद्रा, नरमुण्ड, पाश, कुम्भ, अङ्कुश, तलवार तथा पानपात्रसे युक्त अत्यन्त प्रसन्न

स्वरूप सुन्दर दश भुजाओंसे युक्त शरत्कालीन चन्द्रमाके समान गौर वर्णवाली, रुद्रके कंधे पर बैठी हुई, नवयुवति, पाँच मुखोंसे सुशोभित, विहसित मुखोंवाली तथा उत्तरी द्वारमें स्थित द्वारनायिका सिद्धलक्ष्मीका स्मरण करता हूँ।

विमर्श–अब उत्तरी द्वारमें स्थित द्वारनायिका सिद्धलक्ष्मीके स्वरूपका वर्णन किया जा रहा है–सत्खट्वाङ्गत्रिशूलाभयवर-नृशिरः-पाशकुम्भाङ्कुशासिपात्राढ्यामिति।

सत्खट्वाङ्ग-त्रिशूलाभय-वर-नृशिरःपाशकुम्भाङ्कुशासिपात्राढ्याम्–देवी सिद्धलक्ष्मीके हाथोंमें खाटका पाया, त्रिशूल, अभय मुद्रा, वर मुद्रा, नरमुण्ड, पाश, कुम्भ, अङ्कुश, तलवार तथा पानपात्र सुशोभित हो रहे हैं।

सुप्रसन्नाम्–देवी सिद्धलक्ष्मी अत्यन्त प्रसन्न दिखाई पड़ रही है इसलिए उसके प्रसन्न स्वरूपका ध्यान करें।

ललितदशभुजाम्–देवी सिद्धलक्ष्मीकी दश भुजाएँ हैं इसलिए वह 'दशभुजा' कहलाती है। देवी सिद्धलक्ष्मीकी दशों भुजाएँ अत्यन्त सुन्दर लग रही हैं।

श्रीशरच्चन्द्रगौरीम्–शरत्कालीन चन्द्रमा अत्यन्त निर्मल तथा गौर वर्णका होता है। उसकी किरणें अत्यन्त उज्ज्वल होती हैं। चन्द्रमाके समान देवी सिद्धलक्ष्मी अत्यन्त गौर वर्णवाली है। इसलिए उसे 'गौरी' भी कहते हैं।

रुद्रस्कन्धाधिरूढाम्–देवी सिद्धलक्ष्मी रुद्रके कन्धे पर आरूढ़ है। कुछ साधक देवी सिद्धलक्ष्मीको इष्ट देवी मानकर उसकी उपासना करते हैं। वे सिद्धिको प्राप्त करके सिद्ध पुरुष बन जाते हैं। रुद्रस्कन्धा देवी सिद्धलक्ष्मी सिद्धिदायिका है। इसलिए साधक लोग रुद्रके कन्धे पर चढ़ी हुई देवी सिद्धलक्ष्मीकी उपासना करते हैं।

अभिनवयुवतिम्–यहाँ पर देवी सिद्धलक्ष्मीके नवयौवन रूपकी आराधना की जाती है। 'अभिनव' शब्दके प्रयोगसे ज्ञात होता है

कि देवी सिद्धलक्ष्मीने मानो यौवनकी प्रथमावस्थामें अभी-अभी प्रवेश किया हो।

पञ्चवक्त्राभिरामाम्–देवी सिद्धलक्ष्मीके पाँच मुख हैं। पाँच मुखके होते हुए भी वह अत्यन्त सुन्दर लग रही है।

श्रीद्वारेशीम् उदीच्याम्–'उदीची' कहते हैं–उत्तर दिशाको। देवी सिद्धलक्ष्मी उत्तरी दिशामें स्थित द्वारकी द्वारनायिका है। 'श्री' अक्षरके संयोजनसे पूर्ववत् कार्यावस्थाकी सभी शक्तियाँ प्राप्त हैं द्वारनायिका देवी सिद्धलक्ष्मीको।

स्मितमुखकमलाम्–'स्मित' कहते हैं–मन्द हासको। देवी सिद्धलक्ष्मीका मुखकमल मन्द-मन्द मुस्कानसे सुशोभित है।

सिद्धलक्ष्मीम्–देवी सिद्धलक्ष्मी साधकको शीघ्र ही सिद्धिका प्रदान करती है जिससे साधक निश्चित ही सिद्ध बन जाता है। साधकको सिद्ध बनानेवाली देवी 'सिद्धलक्ष्मी' कहलाती है। यही देवी सिद्धिका प्रदान करनेके कारण 'सिद्धिलक्ष्मी' भी कहलाती है।

स्मरामि–मैं पूर्ववर्णित उत्तरी दिशामें स्थित द्वारनायिका सिद्धलक्ष्मीका स्मरण करता हूँ॥१५॥

पूर्वद्वारे द्वारनायिकारूपिण्या उन्मन्याः स्वरूपम्

उद्यद्भास्वत्समाभां सुललितवदनामिन्दुचूडां त्रिनेत्राम्
अम्बां पाशाङ्कुशेष्टाभयकरकमलां चारुहासां प्रसन्नाम्।
द्यौस्तन्माणिक्यरत्नैर्ज्वलितसुललितालङ्कृतां रक्तवस्त्रां
श्रीद्वारेशीं हि पूर्वेऽरुणकमलगतामुन्मनीं तां नमामि॥१६॥

पूर्वी द्वारमें स्थित द्वारनायिका उन्मनीका स्वरूप

मैं उस उन्मनी देवीको नमस्कार करता हूँ कि जो उगते हुए सूर्यके समान कान्तिवाली, अत्यन्त सुन्दर मुखवाली, मस्तक पर चन्द्रमाका धारण करनेवाली, तीन आँखोंवाली माता है; पाश, अंकुश, वर मुद्रा तथा अभय मुद्राका करकमलोंमें धारण करनेवाली,

मन्द मुस्कानवाली, प्रसन्नस्वरूप, अलौकिक माणिक्य-रत्नोंसे दीप्त सुन्दर अलंकारोंसे अलंकृत, लाल वस्त्रवाली है; लाल कमल पर बैठी हुई है तथा पूर्वी द्वारकी द्वारनायिका है।

विमर्श–अब पूर्वी द्वारमें स्थित द्वारनायिका देवी उन्मनीके स्वरूपका वर्णन किया जा रहा है–उद्यद्भास्वत्समाभामिति।

उद्यद्भास्वत्समाभाम्–देवी उन्मनीके शरीरकी कान्ति उगते हुए सूर्यकी कान्तिके समान है। उगते हुए सूर्यकी कान्ति सिन्दूर वर्णकी होती है इसलिए देवी उन्मनी सिन्दूर वर्णकी है।

सुललितवदनाम्–देवी उन्मनीके वदनकी कांति सिन्दूर वर्णके समान होनेके कारण कहीं सुन्दरतामें कमी तो नहीं आ गयी है इस शंकाका समाधान करते हुए कहते हैं–नहीं; बल्कि उसका मुख तो और भी 'सुललित' बन गया है। लाल वर्ण उसके मुखकी शोभाको बढ़ा रहा है।

इन्दुचूडाम्–देवी उन्मनीने अपने मस्तक पर आभूषणके रूपमें चन्द्रमाका धारण किया।

त्रिनेत्राम्–देवी उन्मनीकी तीन आँखें हैं। इसलिए उसे त्रिनेत्रा भी कहते हैं।

अम्बाम्–'अम्बा'का अर्थ है–माता। यहाँ पर माताके रूपमें जब साधक देवी उन्मनीकी उपासना करता है तब उसे देवी ऊर्ध्वगति प्रदान करती है।

पाशाङ्कुशेष्टाभय-करकमलाम्–'इष्ट' शब्द से वर मुद्रा का बोध होता है। देवी उन्मनीने अपने करकमलोंमें पाश, अंकुश, वर मुद्रा तथा अभय मुद्राका धारण किया है। इससे ज्ञात होता है कि देवी उन्मनी 'चतुर्भुजा' है।

चारुहासाम्–देवी उन्मनी मन्द-मन्द मुस्कुरा रही हैं। उसकी हँसीमें प्रसन्नता झलक रही है।

प्रसन्नाम्–देवी उन्मनी अत्यन्त प्रसन्नस्वरूपा है। प्रसन्न स्वरूपका

ध्यान करनेसे सिद्धिकी प्राप्ति होती है।

द्यौस्तन्माणिक्यरत्नैः ज्वलित-सुललितालङ्कृताम्–'द्यौः' कहते हैं–स्वर्गको। 'द्यौ' शब्दके प्रयोगसे ज्ञात होता है कि देवी उन्मनीके द्वारा धारण किये गये माणिक्य-रत्न अलौकिक हैं और उनके चमकसे देवी उन्मनीके शरीरकी शोभामें अत्यधिक वृद्धि हो रही है। इसलिए वह अत्यधिक सुन्दर लग रही है।

रक्तवस्त्राम्–देवी उन्मनीने लाल रंगके वस्त्रका धारण किया है।

श्रीद्वारेशीं हि पूर्वे–देवी उन्मनी पूर्वी द्वारकी द्वारनायिका है। 'श्री' शब्दके संयोजनसे पूर्ववत् श्रीचक्रकी स्थूलावस्थाकी शक्ति भी देवी उन्मनीको प्राप्त होनेका संकेत मिलता है।

अरुणकमलगताम्–पूर्वी द्वारमें देवी उन्मनी लाल कमल पर विराजमान है। कमलका सम्बन्ध प्रायः पूर्व दिशासे होता है। व्यवहारमें भी हम देखते हैं कि कमलका विकास सूर्यके उदयके साथ होता है और सूर्यका उदय पूर्व दिशासे होता है इसलिए प्रसन्नताकी प्राप्तिके लिए गृहका द्वार पूर्व दिशामें होता है तथा द्वार पर द्वारलक्ष्मीकी पूजा की जाती है और देवी द्वारलक्ष्मी द्वार पर रक्त कमलके आसन पर विराजमान रहती है। इसलिए इसे 'द्वारलक्ष्मी' भी कहते हैं।

उन्मनीम्–साधकके मनको ऊर्ध्व गति प्रदान करनेवाली देवीको उन्मनी कहते हैं। उन्मनीके रूपमें देवीकी उपासना करनेसे साधकका मन नियन्त्रित होकर सिद्धिकी ओर अग्रसर होता है।

तां नमामि–मैं पूर्ववर्णित उस पूर्वी द्वारकी द्वारनायिका द्वारलक्ष्मी उन्मनी देवीको नमस्कार करता हूँ॥१६॥

दक्षिणद्वारे द्वारनायिकारूपिण्या दक्षिणकालिकायाः स्वरूपम्

दण्डं चक्रं कपालाभयवरडमरून् तर्जनीखेटखड्गान्
खट्वाङ्गं पाशकुण्डीसुसृणिशरधनुर्मुण्डकान् धारयन्तीम्।

निश्शेषीं मुक्तकेशीं शशिशकलधरां व्याघ्रचर्माम्बराढ्यां
द्वारेशीं दक्षिणे तां तरुणरविनिभां नौम्यहं पञ्चवक्त्राम्॥१७॥

दक्षिणी द्वारमें स्थित द्वारनायिका दक्षिणकालिकाका स्वरूप

मैं उस दक्षिणकालिकाको प्रणाम करता हूँ जो दण्ड, चक्र, कपाल, अभय मुद्रा, वर मुद्रा, डमरु, तर्जनी मुद्रा, खेट, खड्ग, खट्वाङ्ग, पाश, कुण्डी, सृणि, शर, धनुष तथा नर मुण्डका धारण करनेवाली, सम्पूर्ण रूपसे खुले बालवाली, अर्द्धचन्द्रका धारण करनेवाली, व्याघ्र चर्मरूपी वस्त्रसे युक्त है तथा दक्षिणमें द्वारनायिकाके रूपमें स्थित है; मध्याह्न कालीन सूर्यके समान है तथा पाँच मुखोंवाली है।

विमर्श–अब दक्षिणी द्वारमें स्थित द्वारनायिका दक्षिणकालिकाके स्वरूपका वर्णन किया जा रहा है–दण्डमिति।

दण्डं चक्रं कपालाभयवरडमरून् तर्जनीखेटखड्गान् खट्वाङ्गं पाश-कुण्डी-सुसृणि-शरधनुर्मुण्डकान् धारयन्तीम्–'कपाल' शब्दसे नर-कपालसे बने हुए पात्रका ग्रहण होता है। 'खेट' कहते हैं–ढ़ालको। 'कुण्डी' कहते हैं–वक्राकार अस्त्रको। 'मुण्डक' शब्दसे नरमुण्डका ग्रहण होता है। देवी दक्षिणकालिकाके हाथोंमें दण्ड, चक्र, नर कपाल पात्र, अभय मुद्रा, वर मुद्रा, डमरु, तर्जनी मुद्रा, ढ़ाल, तलवार, खाटका पाया, पाश, कुण्डी, अङ्कुश, शर, धनुष तथा नर मुण्ड स्थित हैं। इससे ज्ञात होता है कि देवी दक्षिणकालिकाके षोलह हाथ हैं। इसलिए वह 'षोडशभुजा' कहलाती है।

निःशेषीं मुक्तकेशीम्–'निःशेष' कहते हैं–सम्पूर्णको। देवी दक्षिण-कालिकाके केश पूर्णरूपसे खुले हुए हैं।

शशिशकलधराम्–'शशि' कहते हैं–चन्द्रमाको। 'शकल' कहते हैं–खण्डको। देवी दक्षिणकालिकाने अपने मस्तक पर अर्द्ध चन्द्रका धारण किया है।

व्याघ्रचर्माम्बराढ्याम्–'अम्बर' कहते हैं–वस्त्रको। वस्त्रके रूपमें

व्याघ्रचर्म मात्र देवी दक्षिणकालिकाके शरीरमें शोभित है।

द्वारेशीं दक्षिणे–देवी दक्षिणकालिका दक्षिणी द्वारकी द्वारनायिका है। इसे भी पूर्ववत् श्रीचक्रकी स्थूलावस्थाकी समस्त शक्ति प्राप्त है।

तरुणरविनिभाम्–जिस प्रकार मध्याह्न कालके सूर्यकी किरणें प्रखर होती हैं और प्रकाश तीव्र होता है उसी प्रकार देवी दक्षिण-कालिका प्रखर ज्योतिर्मयी है। यहाँ पर देवी दक्षिणकालिकाकी तरुणावस्थाका ध्यान किया जाता है जिससे साधकको ज्योतिर्मयी शक्तिको प्राप्त करनेमें कोई कठिनाई नहीं होती है। अन्यत्र देवीकी 'अरुणरविकान्ति'का ध्यान किया जाता है, किन्तु दक्षिणी द्वारमें 'तरुणरविकान्ति'का ध्यान करें।

पञ्चवक्त्राम्–देवी दक्षिणकालिकाके पाँच मुख हैं। इसलिए वह 'पञ्चमुखी काली' भी कहलाती है। कुछ साधक पराक्रमकी सिद्धिके लिए पञ्चमुखी कालीको इष्ट देवी मानकर 'पञ्चमुख' शिव एवं 'पञ्चमुखी' शक्तिकी उपासना करते हैं।

अहं नौमि–मैं पूर्ववर्णित उस दक्षिणी द्वारकी द्वारनायिका दक्षिणकालिकाको प्रणाम करता हूँ॥१७॥

प्रथमरेखायां क्रमेण पूर्वदक्षिणपश्चिमोत्तरेषु, आग्नेयनैर्ऋत्यवायव्येशानेषु, पूर्वेशानयोर्मध्ये नैर्ऋत्यदक्षिणयोर्मध्ये नैर्ऋत्यपश्चिमयोर्मध्ये चाणिमादीनामेकादशसिद्धीनां स्वरूपम्

पूर्णाणिमाञ्च गरिमां लघिमाख्यसिद्धिं
सिद्धिञ्च तां सुमहिमां सकलप्रसिद्धाम्।
ईशित्वसिद्धिमथ शुद्धवशित्वसिद्धिं
प्राकाम्यकां निखिलभुक्तिकरीं स्पृहाख्याम्॥
प्राप्त्याख्यसिद्धिमथ तां सकलार्थसिद्धिम्॥
रेखाद्यगाश्च सकलाः प्रकटादिसिद्धीः
बालेन्दुमौलिमुकुटा निधिवाहनस्थाः।

पाशाङ्कुशाब्जयुगयुक्तकरास्त्रिनेत्रा
रक्ताम्बरा अरुणकान्तियुताः स्मरामि॥१८॥

प्रथम रेखामें क्रमसे पूर्व, दक्षिण, पश्चिम, उत्तर, आग्नेय, नैर्ऋत्य, वायव्य, ईशान, पूर्व-ईशान, दक्षिण-नैर्ऋत्य तथा नैर्ऋत्य-पश्चिम स्थित अणिमा आदि एकादश सिद्धियोंका स्वरूप

मैं पूर्णस्वरूप अणिमा, गरिमा, लघिमा, सर्वप्रसिद्ध महिमा, ईशित्व, शुद्ध वशित्व, प्राकाम्य, सर्वभुक्ति, इच्छा, प्राप्ति तथा सर्वार्थसिद्धि नामक उन सिद्धियोंका स्मरण करता हूँ; जो कि प्रथम रेखामें स्थित हैं; महाप्रकट सिद्धि योगिनियाँ हैं; मस्तक पर अर्द्ध-चन्द्राकार मुकुटोंका धारण की हुई हैं; निधिरूपी वाहनों पर आरूढ़ हैं; पाश, अंकुश तथा कमलयुगलसे युक्त हाथोंवाली, तीन आँखों-वाली, लाल रंगके वस्त्रोंका धारण की हुई हैं तथा रक्त वर्णकी कांतिसे युक्त हैं।

विमर्श—अब भूपुरकी प्रथम रेखामें स्थित अणिमा आदि ग्यारह सिद्धियोंके स्वरूपका वर्णन किया जा रहा है—पूर्णाणिमामिति।

पूर्णाणिमाम्—पहली सिद्धि है—अणिमा सिद्धि। अणुके भावको 'अणिमा' कहते हैं। अणु सर्वत्र व्याप्त है। इसलिए इसे पूर्ण भी कहते हैं। इस सिद्धिसे अणु रूपका धारण किया जाता है।

गरिमाम्—दूसरी सिद्धि है—गरिमा सिद्धि। गुरुके भावको गरिमा कहते हैं। 'गुरु' कहते हैं—भारीको। इस सिद्धिसे शरीरको इतना भारी बना दिया जाता है कि उसे कोई भी व्यक्ति उठा नहीं सकता है।

लघिमाख्यसिद्धिम्—तीसरी सिद्धि है—लघिमा सिद्धि। लघुके भाव-को लघिमा कहते हैं। इस सिद्धिसे शरीरको रूईके समान हलका बनानेकी शक्ति प्राप्त होती है। इससे व्यक्ति आसानीसे आकाशमें उड़ सकता है।

सिद्धिश्च तां सुमहिमां सकलप्रसिद्धाम्—चौथी सिद्धि है—महिमा सिद्धि। महत्के भावको महिमा कहते हैं। महिमा सिद्धिकी महिमाको

सब कोई जानता है। यह सर्वप्रसिद्ध है। इस सिद्धिसे शरीरके आकारको इतना बड़ा बना दिया जाता है कि इसके आकारको कोई नाप नहीं सकता है।

ईशित्वसिद्धिम्–पाँचवीं सिद्धि है–ईशित्व सिद्धि। 'ईश' कहते हैं–शासनको। ईशके भावको ईशित्व कहते हैं। इस सिद्धिसे किसी भी व्यक्ति पर शासन किया जा सकता है। इस सिद्धिको 'ईशिता' सिद्धि भी कहते हैं।

शुद्ध-वशित्व-सिद्धिम्–छठवीं सिद्धि है–वशित्व सिद्धि। वश करनेवाले भावको वशित्व कहते हैं। इस सिद्धिसे किसी भी प्राणीको वशमें किया जा सकता है। इस सिद्धिको 'वशिता' सिद्धि भी कहते हैं। 'शुद्ध' शब्दके प्रयोगसे निर्देश दिया गया है कि दुर्भावनासे युक्त होकर किसीको भी वशीभूत न करें।

प्राकाम्यकाम्–सातवीं सिद्धि है–प्राकाम्य सिद्धि। प्रकामके भावको प्राकाम्य कहते हैं। 'प्रकाम' कहते हैं–कामनाके अनुरूप उपलब्धिको। इस सिद्धिसे कामनाके अनुसार द्रव्यकी प्राप्ति होती है।

निखिलभुक्तिकरीम्–आठवीं सिद्धि है–भुक्ति सिद्धि। भुक्ति सिद्धिसे सभी पदार्थोंके उपभोग करनेमें साधक समर्थ हो जाता है।

स्पृहाख्याम्–नौवीं सिद्धि है–इच्छा सिद्धि। 'स्पृहा' कहते हैं–इच्छाको। इच्छा मात्रसे ही द्रव्य उपलब्ध हो जाय, यह इच्छा सिद्धिसे ही संभव है।

प्राप्त्याख्यसिद्धिम्–दशवीं सिद्धि है–प्राप्ति सिद्धि। प्राप्ति नामक सिद्धिसे सिद्ध पुरुषको विश्वके सकल पदार्थ प्राप्त ही रहते हैं। उन्हें अलगसे प्राप्त करनेके लिए कुछ भी नहीं करना पड़ता है।

सकलार्थसिद्धिम्–ग्यारहवीं सिद्धि है–सर्वार्थ सिद्धि। सकलार्थ सिद्धिको 'सर्वार्थ सिद्धि' कहते हैं। 'अर्थ' कहते हैं– प्रयोजनको। सभी प्रयोजनोंको सिद्ध करनेवाली सिद्धि 'सर्वार्थ सिद्धि' कहलाती है। इसे 'सर्वकामावशायिता' तथा 'सर्वकाम सिद्धि' भी कहते हैं। सर्वार्थसिद्धि

चार पुरुषार्थोंकी सिद्धिमें आधारभूत कार्य करती है।

रेखाद्यगाः–भूपुरकी प्रथम रेखामें अणिमा आदि ग्यारह सिद्धियाँ विराजमान हैं। ये सिद्धियाँ प्रथम रेखामें पूर्व, दक्षिण, पश्चिम, उत्तर, आग्नेय, नैऋत्य, वायव्य, ईशान, पूर्व-ईशान, दक्षिण-नैऋत्य तथा पश्चिम-नैऋत्य दिशाओंमें स्थित हैं। इसी क्रमसे इनकी उपासना की जाती है।

प्रकटादिसिद्धीः–सिद्धियोंको योगिनी भी कहते हैं। भूपुर चक्र स्थूल रूप होनके कारण इसमें स्थित योगिनियाँ प्रकट योगिनी कहलाती हैं। स्थूल पदार्थ ही प्रकट होता है। इस प्रकारसे ये ग्यारह सिद्धियाँ प्रकट योगिनी कहलाती हैं।

बालेन्दुमौलिमुकुटाः–'बालेन्दु' कहते हैं–अर्ध चन्द्रको। 'मौलि' कहते हैं–मस्तकको। सभी प्रकट सिद्धियोंने अपने-अपने मस्तक पर मुकुटके रूपमें अर्द्ध चन्द्रका धारण किया है।

निधि-वाहनस्थाः–'निधि' कहते हैं–खजानेको। शास्त्रमें खजानेके दो नाम हैं–निधि तथा शेवधि। जो निरन्तर धारण तथा पोषण करता हैं उसे 'निधि' कहते हैं। 'शेव' कहते हैं–सुखको। जिसमें सुखका धारण होता है उसे 'शेवधि' कहते हैं। इस प्रकारसे ये सामान्य निधिके दो नाम हैं। कुबेरके खजानेमें नौ विशिष्ट निधि हैं; जैसे–महापद्म, पद्म, शङ्ख, मकर, कच्छप, मुकुन्द, कुन्द, नील तथा खर्व। ये नौ विशिष्ट निधि तथा दो सामान्य निधि इस प्रकारसे कुल मिला कर ग्यारह निधि होते हैं। ये ग्यारह निधि सभी ग्यारह प्रकट सिद्धियोंके वाहन हैं। ये ग्यारह सिद्धियाँ इन ग्यारह निधिरूपी वाहनों पर विराजमान हैं।

पाशाङ्कुशाब्जयुगयुक्तकराः–'अब्ज' कहते हैं–जलमें उत्पन्न होने-वाले कमलको। 'युग' कहते हैं–जोड़ेको अर्थात् 'दो'को। 'कर' कहते हैं–हाथको। अणिमा आदि सभी ग्यारह सिद्धियोंके हाथोंमें पाश, अंकुश तथा दो कमल सुशोभित हैं। इससे ज्ञात होता है कि सभी सिद्धियाँ चतुर्भुजा हैं।

त्रिनेत्राः—अणिमा आदि सभी ग्यारह सिद्धियाँ तीन आँखोंवाली हैं। इसलिए वे 'त्रिनेत्रा' कहलाती हैं।

रक्ताम्बराः—अणिमा आदि सभी ग्यारह सिद्धियोंने लाल वर्णके वस्त्रोंका धारण किया है।

अरुण-कान्तियुताः—अणिमा आदि सभी ग्यारह सिद्धियोंके शरीरकी कान्ति लाल वर्णकी है।

स्मरामि—मैं पूर्ववर्णित उन अणिमा आदि सभी ग्यारह सिद्धियों-का स्मरण करता हूँ॥१८॥

द्वितीयरेखायां क्रमेण पूर्वदक्षिणपश्चिमोत्तरेषु, आग्नेयनैर्ऋत्यवायव्येशानेषु च ब्राह्म्यादीनामष्टमातृकानां स्वरूपम्

ब्राह्मीमथावरणरूपधरां तथैव
माहेश्वरीमथ कुमारवरस्य सत्ताम्।
श्रीवैष्णवीं विटमुखीं सुरराजशक्तिं
चामुण्डिकामपि महापदयुक्तलक्ष्मीम्॥
अष्टा इमा अरुणपद्मकपालहस्ता
नीलाम्बुजन्मसुषमारुचिरास्त्रिनेत्राः।
वन्दे सदा ह्यरुणवस्त्रसुरत्नभूषाः
रेखारुणे परिगताः प्रकटादिकाम्बाः॥१९॥

द्वितीय रेखामें क्रमसे पूर्व, दक्षिण, पश्चिम, उत्तर, आग्नेय, नैर्ऋत्य, वायव्य, ईशान स्थित ब्राह्मी आदि आठ मातृकाओंका स्वरूप

मैं आवरण रूपका धारण करनेवाली ब्राह्मी, उस प्रकार माहेश्वरी, कुमारवरकी सत्ता कौमारी, वैष्णवी, शूकर मुखवाली वाराही, देवराजकी शक्ति माहेन्द्री, चामुण्डा तथा महालक्ष्मी प्रकट अम्बाओंकी सर्वदा वन्दना करता हूँ जो कि लाल कमल तथा कपालसे युक्त हाथोंवाली हैं; जिनके शरीरकी कान्ति नील कमलके

समान अत्यन्त सुन्दर है; जो तीन आँखोंवाली हैं; लाल वस्त्र तथा रत्नके आभूषणोंसे अलंकृत हैं और लाल रेखाके चारों ओर विराजमान हैं।

विमर्श—अब भूपुरकी लाल वर्णवाली द्वितीय रेखामें स्थित ब्राह्मी आदि अष्ट मातृकाओंके स्वरूपका वर्णन किया जा रहा है—ब्राह्मीमिति।

ब्राह्मीम्—भूपुरकी द्वितीय रेखामें ब्राह्मी आदि आठ मातृकाएँ क्रमसे पूर्व, दक्षिण, पश्चिम, उत्तर, आग्नेय, नैऋत्य, वायव्य, ईशान पर्यन्त स्थित हैं। पहली मातृका है—ब्राह्मी मातृका। यह मातृका ब्रह्माकी शक्ति है।

आवरणरूपधराम्—ब्रह्माकी शक्ति ब्राह्मी मातृका यहाँ पर आवरण देवताके रूपमें परिणत हो गयी है।

तथैव—उसी प्रकार सभी अन्य सात मातृकाएँ भी आवरण देवताके रूपमें परिणत हो गयी हैं।

माहेश्वरीम्—दूसरी मातृका है—माहेश्वरी मातृका। यह मातृका महेश्वरकी शक्ति है।

कुमारवरस्य सत्ताम्—तीसरी मातृका है—कौमारी मातृका। 'कुमार' कहते हैं—कार्तिकेय स्वामीको। 'वर' कहते हैं-श्रेष्ठको। 'सत्ता' कहते हैं—शक्तिको। इस प्रकारसे कुमारश्रेष्ठ कार्तिकेय स्वामीकी शक्ति कौमारी मातृका है।

श्रीवैष्णवीम्—चौथी मातृका है—वैष्णवी मातृका। यह मातृका विष्णुकी शक्ति है।

विटमुखीम्—पाँचवीं मातृका है—वाराही मातृका। 'विट' कहते हैं—शूकरको। वाराही मातृकाका मुख शूकरके मुखके समान है।

सुरराजशक्तिम्—छठवीं मातृका है—माहेन्द्री मातृका। 'सुरराज' कहते हैं—देवताओंके राजा इन्द्रको। इसे महेन्द्र भी कहते हैं। माहेन्द्री मातृका महेन्द्रकी शक्ति है।

चामुण्डिकाम्–सातवीं मातृका है–चामुण्डा मातृका। यह मातृका भगवती दुर्गाकी स्थूलकार्यात्मिका शक्ति है।

महापदयुक्तलक्ष्मीम्–आठवीं मातृका है–महालक्ष्मी मातृका। यह मातृका साक्षात् शक्ति है भगवती श्रीकी ।

अष्टाः इमाः–ये ब्राह्मी आदि आठ मातृकाएँ 'अष्ट मातृका' कहलाती हैं और आगे बताये जानेवाले विशेषणोंसे युक्त हैं।

अरुणपद्मकपालहस्ताः–अपने हाथोंमें लाल कमल तथा कपालका धारण की हुई हैं सभी मातृकाएँ। ध्यान रहे कि यहाँ पर ब्राह्मी आदि सभी आठ मातृकाएँ दो हाथोंवाली हैं।

नीलाम्बुजन्मसुषमारुचिराः–'अम्बुजन्म' कहते हैं–कमलको। सभी मातृकाओंके शरीरकी कान्ति नीलकमलकी छटासे अत्यन्त सुन्दर लग रही है।

त्रिनेत्राः–ब्राह्मी आदि सभी आठ मातृकाएँ तीन आँखोंवाली हैं। इसलिए वे 'त्रिनेत्रा' कहलाती हैं।

अरुणवस्त्रसुरत्नभूषाः–ब्राह्मी आदि सभी आठ मातृकाओंने लाल वर्णके वस्त्र तथा रत्नोंके आभूषणोंसे अलंकृत हैं।

रेखारुणे परिगताः–भूपुरकी रजोगुणात्मिका द्वितीय रेखा लाल वर्णकी है। ये आठ मातृकाएँ द्वितीय रेखामें क्रमसे पूर्व, दक्षिण, पश्चिम, उत्तर, आग्नेय, नैऋत्य, वायव्य, ईशान कोण पर्यन्त घिरी हुई हैं।

प्रकटादिकाम्बाः–'अम्बा' कहते हैं–मातृकाको। ये ब्राह्मी आदि आठ मातृकाएँ 'प्रकट मातृका योगिनी' कहलाती हैं। भूपुर चक्रमें इन सभी मतृकाओंकी स्थूलावस्था है। इसलिए यहाँ पर ये दृश्य रूपमें विराजमान हैं।

वन्दे सदा–मैं भूपुर चक्रकी द्वितीय रेखामें स्थित पूर्ववर्णित ब्राह्मी आदि सभी आठ मातृकाओंकी सदैव वन्दना करता हूँ। 'सदा' शब्दसे आन्तरिक चिन्तनका संकेत मिलता है॥१९॥

तृतीयरेखायां क्रमेण पूर्वदक्षिणपश्चिमोत्तरेषु, आग्नेयनैर्ऋत्यवायव्येशानेषु, पूर्वेशानयोर्मध्ये नैर्ऋत्यदक्षिणयोर्मध्ये नैर्ऋत्यपश्चिमयोर्मध्ये च सर्वसङ्क्षोभिण्यादीनामेकादशमुद्राणां स्वरूपम्

सङ्क्षोभिणीं सकलविद्रवणात्मरूपाम्
आकर्षिणीं वशकरीं निखिलोन्मदाख्याम्।
श्रेष्ठाङ्कुशामपि च तां सकलत्रिखण्डां
बीजामथो नभचरीञ्च समस्तयोनिम्॥
पाशाङ्कुशाढ्यनिजमुद्रितदोश्चतुष्का
नेत्रत्रयैर्विकसिताननपङ्कजाढ्याः।
रेखातृतीयगमिताः प्रकटादिमुद्रा
नानातिरम्यमणिरत्नधराः स्मरामि॥२०॥

तृतीय रेखामें क्रमसे पूर्व, दक्षिण, पश्चिम, उत्तर, आग्नेय, नैर्ऋत्य, वायव्य, ईशान, पूर्व-ईशान, दक्षिण-नैर्ऋत्य तथा नैर्ऋत्य-पश्चिम स्थित सर्वसंक्षोभिणी आदि ग्यारह मुद्राओंका स्वरूप

मैं सर्वसंक्षोभिणी, महायोनि, सर्वविद्राविणी, सर्वाकर्षिणी, सर्व-वशंकरी, सर्वोन्मादिनी, सर्वमहांकुशा, सर्वखेचरी, सर्वबीजा, सर्वयोनि तथा सर्वत्रिखण्डा प्रकट मुद्राओंका स्मरण करता हूँ कि जो पाश, अंकुश. तथा अपनी दो मुद्राओंसे युक्त चार भुजाओंवाली हैं; तीन आँखोंवाली तथा प्रसन्न मुखकमलसे युक्त तृतीय रेखामें स्थित हैं; प्रकट मुद्रा योगिनी हैं तथा विभिन्न प्रकारके अत्यन्त सुन्दर मणि-रत्नोंका धारण की हुई हैं।

विमर्श—अब भूपुरकी तृतीय रेखामें स्थित सर्वसंक्षोभिणी आदि ग्यारह मुद्राओंके स्वरूपका वर्णन किया जा रहा है—सङ्क्षोभिणी-परमयोनिसुविद्रवाख्या इति।

सङ्क्षोभिणीपरमयोनिसुविद्रवाख्याः—पहली मुद्रा है—सर्वसंक्षोभिणी मुद्रा। इस मुद्रासे किसी भी व्यक्तिमें क्षोभण उत्पन्न किया जा सकता

है। दूसरी मुद्रा है–महायोनि मुद्रा। 'परमयोनि' कहते हैं–महायोनि मुद्राको। इस मुद्राको 'साक्षात् योनि मुद्रा' भी कहते हैं। इस मुद्रासे सर्वसमर्थता प्राप्त होती है। तीसरी मुद्रा है–सर्वविद्राविणी मुद्रा। इस मुद्रासे किसी भी व्यक्तिको विद्रावित किया जा सकता है।

आकर्षिणीम्–चौथी मुद्रा है–सर्वाकर्षिणी मुद्रा। इस मुद्राकी उपासनासे सभी प्राणियोंका आकर्षण करनेमें साधक समर्थ हो जाता है, किन्तु दुर्भावनाके वशमें होकर किसी भी प्राणीका आकर्षण नहीं करना चाहिए।

वशकरीम्–पाँचवी मुद्रा है–सर्ववशंकरी मुद्रा। इस मुद्रासे जगतके किसी भी प्राणीको वशमें किया जा सकता है।

निखिलोन्मदाख्याम्–छठवीं मुद्रा है–सर्वोन्मादिनी मुद्रा। इस मुद्रासे सभी व्यक्तियोंको उन्मादित किया जा सकता है।

श्रेष्ठाङ्कुशाम्–सातवीं मुद्रा है–सर्वमहांकुशा मुद्रा। जिस प्रकारसे हाथीको नियन्त्रित किया जाता है ठीक् उसी प्रकार साधक सर्व-महांकुशा मुद्राकी उपासनासे जगतके सभी प्राणियोंको नियन्त्रित करनेकी शक्ति प्राप्त कर लेता है।

नभचरीम्–आठवीं मुद्रा है–सर्वखेचरी मुद्रा। 'नभ' कहते हैं–आकाशको। आकाशका पर्याय 'ख' भी है। इस प्रकारसे 'ख' अर्थात् आकाशमें विचरण करनेवालेको 'खेचरी' भी कहते हैं। इस मुद्राकी साधनासे साधकको कुण्डलिनी योगकी सिद्धि प्राप्त हो जाती है। इतना ही नहीं बल्कि उसे आकाश गमनकी सिद्धि भी प्राप्त हो जाती है।

समस्तबीजाम्–नौवीं मुद्रा है–सर्वबीजा मुद्रा। 'बीज' कहते हैं–कारणको। इस मुद्राकी साधनासे साधक सभी कार्योंके कारणोंको जाननेमें समर्थ हो जाता है।

योनिम्–दशवीं मुद्रा है–सर्वयोनि मुद्रा। इस मुद्राकी साधनासे साधक स्वयं कारणरूप बन जाता है। सर्वयोनि एवं महायोनिमें

अन्तर केवल यह है कि सर्वयोनि मुद्रासे साधक सभी कार्योंके कारणरूप बन जाता है; जबकि महायोनि मुद्रासे साधकको साक्षात् योनिस्वरूपिणी जगतकी योनिस्वरूपा शक्ति प्राप्त हो जाती है। इसलिए महायोनि मुद्राकी विशेषताके कारण वृत्तत्रय चक्रकी महत्ता सर्वोपरि है।

तामपि शुभां सकलत्रिखडाम्—ग्यारहवीं मुद्रा है—सर्वत्रिखण्डा मुद्रा। पूर्णस्वरूपा शक्ति इच्छा, ज्ञान तथा क्रियाके रूपमें तीन खण्डों-में अपनी महिमाका प्रकट करती रहती है। इसलिए वह शक्ति 'त्रिपुरा' कहलाती है। त्रिपुरा शक्तिके आवाहन कार्यमें त्रिखण्डा मुद्रा सदैव प्रयुक्त होती है। विचक्षण साधक इस मुद्रा शक्तिकी उपासना अवश्य करते हैं; क्योंकि यही एकमात्र मुद्रा है जिससे दीक्षामें मन्त्रका प्रदान किया जाता है। इसके विना मन्त्र प्रज्वलित नहीं होता है। मन्त्रका आवाहन त्रिपुरावाहनपूर्वक किया जाता है। इस मुद्रासे परा शक्ति मन्त्ररूपिणी बनकर साधकके सहस्रारको प्रज्वलित करती है।

पाशाङ्कुशाढ्य-निजमुद्रित-दोश्चतुष्काः—सभी मुद्राएँ 'चतुर्भुजा' हैं। सभी मुद्राओंके एक हाथमें पाश तथा दूसरे हाथमें अङ्कुश स्थित हैं और अन्य दो हाथोंमें अपनी मुद्राओंके चिह्न विद्यमान हैं। 'निज-मुद्रित' शब्दसे सङ्केत प्राप्त होता है कि एक मुद्राका चिह्न एक हाथमें शस्त्रके रूपमें है तो दूसरे हाथमें उसी मुद्राका चिह्न अधिष्ठात्री शक्तिके रूपमें है।

नेत्रत्रयैः विकसिताननपङ्कजाढ्याः—'आननपङ्कज' कहते हैं—मुखकमलको। सर्वसंक्षोभिणी आदि सभी ग्यारह मुद्राओंकी तीन-तीन आँखें हैं। सभी मुद्राएँ 'त्रिनेत्रा' हैं। सभी मुद्राएँ एक-एक मुखवाली हैं। इनके मुख-कमल विकसित हैं। वे अत्यन्त प्रसन्न दिखायी दे रही हैं।

रेखातृतीयगमिताः—भूपुरकी तृतीय रेखामें सर्वसंक्षोभिणी आदि ग्यारह मुद्राएँ स्थित हैं। ये मुद्राएँ तृतीय रेखामें क्रमसे पूर्व, दक्षिण, पश्चिम, उत्तर, आग्नेय, नैर्ऋत्य, वायव्य, ईशान, पूर्व-ईशान, दक्षिण-

नैऋत्य तथा पश्चिम-नैऋत्य दिशामें स्थित हैं। इसी क्रमसे इनकी उपासना की जाती है।

प्रकटादिमुद्राः—सभी ग्यारह मुद्राएँ 'प्रकटमुद्रा योगिनी' कहलाती हैं। भूपुर चक्रमें इनकी स्थूलावस्था है अतः इनका यहाँ प्रत्यक्ष रूपमें दर्शन होता है।

नानातिरम्यमणिरत्नधराः—सभी ग्यारह मुद्रओंने अनेक प्रकारके अत्यन्त सुन्दर मणिरत्नोंका धारण किया है।

स्मरामि—मैं पूर्ववर्णित उन सर्वसङ्क्षोभिणी आदि सभी ग्यारह मुद्राओंका स्मरण करता हूँ॥२०॥

भूपुरचक्रेश्वर्याः श्रीत्रिपुरायाः स्वरूपम्

बिम्बौष्ठीं शरदिन्दुगौरवदनां रत्नादिभूषोज्ज्वलां
विद्याक्षाब्जयुगाङ्कितैर्भुजवरैः संशोभितां त्र्यम्बकाम्।
श्रीसङ्क्षोभणिकाणिमाख्यसहितां चार्वाकशास्त्रैर्युतां
साक्षाच्छ्रीत्रिपुरां नमामि धरणीचक्रेश्वरीं मोहिनीम्॥२१॥

भूपुर चक्रेश्वरी श्रीत्रिपुराका स्वरूप

मैं बिम्ब फलके समान लाल ओष्ठवाली, शरत्कालीन चन्द्रमाके समान गौर मुखवाली, रत्नादि आभूषणोंसे उज्ज्वल कान्तिवाली, पुस्तक, अक्षमाला तथा कमलयुगलसे अङ्कित भुजाओंसे सुशोभित, तीन आँखोंवाली, संक्षोभिणी मुद्रा तथा अणिमा सिद्धिके साथ चार्वाक दर्शनसे युक्त, मोहन करनेवाली, पृथ्वी चक्रकी नायिका श्रीत्रिपुराको नमस्कार करता हूँ।

विमर्श—अब भूपुर चक्रकी नायिका श्रीत्रिपुराके स्वरूपका वर्णन किया जा रहा है—बिम्बौष्ठीमिति।

बिम्बौष्ठीम्—'बिम्ब' एक प्रकारका फल होता है। इसका वर्ण अत्यन्त लाल है। भूपुर चक्रकी नायिका श्रीत्रिपुराका ओष्ठ बिम्ब फलके समान लाल है।

शरदिन्दुगौरवदनाम्—शरत्कालीन चन्द्रमा अत्यन्त निर्मल होनेके कारण अधिक उज्ज्वल होता है; अत्यन्त गौर वर्णका होता है। चक्रेश्वरी श्रीत्रिपुराका मुख अत्यन्त गौर वर्णका है।

रत्नादि-भूषोज्ज्वलाम्—चक्रेश्वरी श्रीत्रिपुराने रत्न आदिसे निर्मित अलङ्कारोंका धारण किया है। वे अलङ्कार अत्यन्त उज्ज्वल हैं। इसलिए श्रीत्रिपुराके शरीरकी कान्ति अत्यन्त उज्ज्वल लग रही है।

विद्याक्षाब्ज-युगाङ्कितैः भुजवरैः संशोभिताम्—चक्रेश्वरी श्रीत्रिपुरा चतुर्भुजा है। एक हाथमें विद्या अर्थात् पुस्तक है तथा दूसरे हाथमें अक्षमाला अर्थात् जपमाला स्थित है। अन्य दोनों हाथोंमें कमल स्थित हैं। इस प्रकारसे श्रीत्रिपुरा 'चतुर्भुजा'के रूपमें सुशोभित हो रही है।

त्र्यम्बकाम्—'अम्बक' कहते हैं—आँखको। श्रीत्रिपुराकी तीन आँखें हैं। इसलिए वह 'त्रिनयना' कहलाती है।

श्रीसङ्क्षोभणिकाणिमाख्यसहिताम्—हमने देखा कि अणिमा आदि ग्यारह सिद्धियाँ हैं तथा सर्वसङ्क्षोभिणी आदि ग्यारह मुद्राएँ हैं। चक्र तो बाह्यरूपसे दश दिखाई पड़ते हैं किन्तु ग्यारहवाँ चक्र दिखाई नहीं पड़ता है। ग्यारहवें चक्रको 'ब्रह्मात्म चक्र' कहते हैं। यह चक्र 'समरसाकार चक्र' भी कहलाता है। इस प्रकारसे ग्यारह चक्रोंकी ग्यारह चक्रेश्वरी भी हैं। प्रत्येक चक्रेश्वरी एक विशिष्ट सिद्धि तथा एक विशिष्ट मुद्रासे युक्त रहती है। भूपुर चक्रकी चक्रेश्वरी श्रीत्रिपुरा है। यह चक्रेश्वरी एक विशिष्ट अणिमा सिद्धि तथा एक विशिष्ट सर्वसङ्क्षोभिणी मुद्रासे युक्त है।

चार्वाकशास्त्रैः युताम्—हमने देखा कि प्रत्येक चक्रेश्वरी एक विशिष्ट सिद्धि तथा एक विशिष्ट मुद्राके साथ विराजमान रहती है। इसी प्रकार एक विशिष्ट दर्शनसे भी युक्त रहती है। ग्यारह चक्रेश्वरियोंके ग्यारह दर्शन हैं। भूपुर चक्रकी चक्रेश्वरी श्रीत्रिपुरा एक विशिष्ट चार्वाक दर्शनसे युक्त है।

'चार्वाक' शब्दकी व्याख्या करते हुए कहते हैं कि 'चारु'का

अर्थ है–सुन्दर। 'वाक्'का अर्थ है–वचन। सुन्दर वचनका प्रतिपादन करनेवाला दर्शन 'चार्वाक दर्शन' कहलाता है। चार्वाक दर्शनके अनुसार बाह्य स्थूल पदार्थ ही सब कुछ है। प्राणीका पुनर्जन्म नहीं होता है। पाप-पुण्य नामक कोई वस्तु नहीं है। 'खाओ, पीओ और मौज करो' इस दर्शनका परम सिद्धान्त है। इसे नास्तिक दर्शन कहते हैं। नास्तिक दर्शन वेदके मतको नहीं स्वीकारता है। कहते हैं कि देवगुरु वृहस्पतिने देवेन्द्रसे किसी बात पर नाराज होकर इन्द्रको प्राप्त होनेवाले यज्ञ भागका निषेध करनेके लिए वैदिक यज्ञ क्रियाके विरूद्ध प्रचार किया। इसलिए देवगुरु वृहस्पतिको चार्वाक दर्शनका प्रणेता माना जाता है। यहाँ पर चार्वाक दर्शन जगतके स्थूल रूपको सत्य मान कर स्थूल भोगको प्राधान्य प्रदान करता है। भूपुर चक्र स्थूल रूप है। स्थूल भोगकी प्राप्तिके लिए भूपुरकी तीनों रेखाओंमें स्थित ग्यारह सिद्धियों, ब्राह्मी आदि आठ मातृकाओं तथा ग्यारह मुद्राओंकी उपासना की जाती है। भूपुर चक्रकी नायिका श्रीत्रिपुरा स्थूल चक्रकी नायिका होनेके कारण चार्वाक दर्शनकी अधिष्ठात्री देवीके रूपमें जानी जाती है।

ध्यान रहे कि यहाँ पर चक्रेश्वरीके साथ 'सिद्धि, मुद्रा तथा दर्शन' इन तीनोंका पूजन अलगसे नहीं होता है। चक्रेश्वरीको इन तीन विशिष्ट शक्तियाँ प्राप्त हैं। यह नियम सभी ग्यारह चक्रोंके लिए है। भूपुरकी प्रथम रेखामें अणिमा आदि सभी ग्यारह सिद्धियोंका तथा तृतीय रेखामें सर्वसङ्क्षोभिणी आदि सभी ग्यारह मुद्राओंका पूजन होता है।

साक्षाच्छ्रीत्रिपुराम्–हमने देखा कि साक्षात् श्रीत्रिपुरसुन्दरी ही परा विद्या कहलाती है और वह इच्छा, ज्ञान तथा क्रिया रूप होनेके कारण 'त्रिपुरा' कहलाती है।

धरणीचक्रेश्वरीम्–'धरणी' कहते हैं–पृथ्वीको। भूपुरको पार्थिव चक्र भी कहते हैं। यह चक्र भूसदन, आधार चक्र, भूर्गृह, चतुरस्र आदि विभिन्न नामोंसे शास्त्रोंमें जाना जाता है। इसमें पृथ्वी तत्त्व

प्रधानरूपसे विद्यमान है। श्रीचक्रका निर्माण दश चक्रोंके समूहसे हुआ है। प्रत्येक चक्रकी एक चक्रेश्वरी है। इस प्रकारसे वस्तुतः दश चक्रेश्वरियाँ हैं। ग्यारहवाँ चक्र कल्पित है और वह चक्र अदृश्यरूपमें स्थित है जो कि 'परब्रह्म चक्र' कहलाता है। उसकी चक्रेश्वरी त्रिपुरसुन्दरी है।

मोहिनीम्—प्रत्येक व्यक्तिमें बाह्य दृष्टिकी प्रधानता रहती है। व्यक्ति बाह्य वस्तुके सुन्दर रूपको देखकर मोहित होता रहता है। श्रीचक्रका भूपुर चक्र बाह्यरूपसे स्थूलात्मक है। यह स्थूल जगतका प्रतीक है और सम्मोहक है। इसलिए भूपुर चक्रको 'त्रैलोक्यमोहन चक्र' कहते हैं। इस भूपुर चक्रकी चक्रेश्वरी त्रैलोक्यमोहिनी साक्षात् श्रीत्रिपुरा है। इस चक्रेश्वरीकी उपासनासे साधकको त्रैलोक्यमोहनकी क्षमता प्राप्त होती है और इस चक्रकी उपासनाका फल भी त्रैलोक्यमोहन है। इसलिए अनेक साधक इस चक्रकी महत्ताको देखकर इसीके साधनाजालमें फँसकर रह जाते हैं और आगे बढ़ नहीं पाते हैं। इसलिए साधकको सर्वदा सावधान रहना चाहिए।

नमामि—मैं पूर्ववर्णित उस भूपुर चक्रेश्वरी त्रैलोक्यमोहिनी साक्षात् श्रीत्रिपुराको नमस्कार करता हूँ।।२१।।

।। इति प्रथमावरणम् ।।

द्वितीयावरणम्

॥ श्रीगायत्रीब्रह्मविद्यायै नमः ॥

सत्स्वरूप परमप्रकाश परमशिव देश-कालकी मर्यादासे परे है। इसलिए वह 'देशकालातीत' भी कहलाता है। इच्छाज्ञानक्रियात्मिका पराशक्ति त्रिपुरा सत्स्वरूप उस परमेश्वर परमशिवकी प्रकृति है। यही प्रकृति शिवकी बाह्योल्लासरूपिणी शक्ति है। शक्ति सदैव बाह्योन्मुखी रहती है। यही कालातीत कालकी कल्पनारूपिणी काली है। यही काली जब बाह्योन्मुखी होकर व्यापकताको प्राप्त करती है तब 'सृष्टि' कहलाती है। यह सृष्टि ही उसकी देशरूपता है। इस प्रकारसे शक्ति 'कालरूपता' तथा 'देशरूपता'को प्राप्त होकर 'परममातृका' पदका धारण करती है।

श्रीचक्रके अन्तर्गत वृत्तत्रय चक्रमें परममातृकाकी अवस्थिति है। यही परममातृका 'कालरूप' तथा 'देशरूप'में क्रमसे 'तिथिमातृका' तथा 'वर्णमातृका' कहलाती है। यहाँ पर वृत्तत्रय चक्रके अन्तर्गत सृष्टिक्रमसे प्रथम तथा द्वितीय वृत्तमें 'वर्णमातृका' और तृतीय वृत्तमें 'तिथिमातृका' स्थित हैं। इस प्रकारसे वृत्तत्रय चक्रमें दोनों प्रकारकी मातृकाओंका अवस्थान है। ये ही कालक्रममें क्रिया-वैचित्र्यसे 'वर्ण-मन्त्रपद' तथा देशक्रममें मूर्ति-वैचित्र्यसे 'कलातत्त्वभुवन' षडध्वाओंके रूपमें परिणतिको प्राप्त होती हैं।[१]

कालरूपा काली जब बाह्योन्मुखी होकर कालकी कलनामें

---

१. *श्रीचक्रनिरूपणम्*। सविमर्श-'प्रह्लाद'हिन्दी-व्याख्यासहितम्। व्याख्याकारः सम्पादकश्च–गोस्वामी प्रह्लाद गिरि 'वेदान्तकेशरी'। प्राप्तिस्थान–चौखम्बा संस्कृत सीरीज आफिस, वाराणसी-२२१००१(उत्तर प्रदेश)

तिथिमातृका पदको प्राप्त हुई तो उसने चन्द्रमाकी कलाके अनुसार स्वयं षोलहवीं तिथिकला बन कर समरूपवाली अन्य पन्द्रह तिथि-कलाओंका विस्तार किया। वे पन्द्रह तिथिकलाएँ हैं–प्रथमा, द्वितीया, तृतीया, चतुर्थी, पञ्चमी, षष्ठी, सप्तमी, अष्टमी, नवमी, दशमी, एकादशी, द्वादशी, त्रयोदशी, चतुर्दशी तथा पञ्चदशी तिथिकला। चन्द्रमाके अनुसार तिथियाँ तो संख्यामें पन्द्रह होती हैं किन्तु उसकी कलाएँ षोलह होती हैं। ये पञ्चदश कलाएँ 'पञ्चदशी' कहलाती हैं तथा षोलहवीं कला 'षोडशी' कहलाती है। षोडशी कला चन्द्रकी 'अमा' नामक कला है। इसलिए यह 'अमाकला'के रूपमें विशेषतः जानी जाती है।

यहाँ पर यह प्रश्न उठता है कि तिथिमातृकाकी कलना चन्द्रमाकी कलाके रूपमें क्यों की गयी है? कहते हैं–चन्द्रमाका दूसरा नाम 'अमृतांशु' भी है। 'अमृत' वही पदार्थ है जो कि अमरताका प्रदान करता है। जो मृत्युसे अप्रभावित हो वही अमर, शाश्वत, नित्यके रूपमें जाना जाता है। नित्य तो केवल शिव है। 'अंशु' कहते हैं–किरणको। चन्द्रमा प्रकाशमान् है। इसकी किरणें शीतल और शुभ्र होती हैं। चन्द्रमामें आह्लादकता है। ऐसे भी हमने देखा कि जो सत्य है वही नित्य है। इसलिए शिव चन्द्रशेखर है।

ये सभी षोलह तिथिकलाएँ नित्याकलाके रूपमें जानी जाती हैं। 'नित्या' कहते हैं–पारमेश्वरी पराशक्तिको। परमेश्वर परशिव 'नित्य' है। इसलिए उसकी शक्ति 'नित्या' कहलाती है। 'कला' कहते हैं–समरूपवाली शक्तिको। इस प्रकारकी समरूपवाली शक्तियोंके समूहकी एक गणके रूपमें कलना करनेके लिए भी 'कला' शब्दका प्रयोग होता है।

शिव स्वतन्त्र है और उसकी शक्ति स्वातन्त्र्य है। शिव बीज है और शक्ति योनि है। बिन्दु शिवका स्वरूप है और बाह्योल्लास विसर्ग सृष्टि है। बिन्दु (ं) और विसर्ग (:) इन दोनोंकी अभिव्यक्ति 'अ' आदि वर्णसे होती है। 'अं' वर्णमें 'अ' शक्ति तथा बिन्दु शिव

है। इसी प्रकार 'अ:' वर्णमें 'अ' शक्ति तथा विसर्ग (:) बाह्योल्लास-का इच्छुक शिव है। महाबिन्दु अव्यक्त शिव है। उस अव्यक्त महाबिन्दुसे शक्ति स्वरूप 'अ' आदि षोलह स्वर वर्णोंकी उत्पत्ति हुई है। इसलिए महाबिन्दु स्वतन्त्र होनेके कारण 'अ' आदि षोलह स्वर वर्ण भी स्वतन्त्र रूपमें अभिव्यक्त हो रहे हैं। इसलिए स्वर वर्णोंको स्वतन्त्र कहते हैं और ये बीज रूप हैं।

'क्' आदि तैंतीस व्यञ्जन वर्ण स्वतन्त्र नहीं हैं; क्योंकि विना स्वर वर्णके इनका उच्चारण नहीं हो सकता है। 'क्' आदि तैंतीस व्यञ्जन वर्ण योनि कहलाते हैं। वस्तुतः 'संविद्'में ही निरपेक्ष स्वातन्त्र्य विद्यमान है। 'अ' आदि सभी ऊनचास स्वर तथा व्यञ्जन वर्ण मायिक हैं। अमायिक तो महाबिन्दु है। मायिक वर्णोंमें 'अ' आदि स्वर वर्ण स्वतन्त्र बीज हैं; जबकि 'क्' आदि व्यञ्जन वर्ण स्वातन्त्र्य योनि हैं। 'अ' आदि वर्णोंमें जो स्वातन्त्र्य है वह सापेक्ष है। महाबिन्दुमें निरपेक्ष स्वातन्त्र्य होनेके कारण महाबिन्दु व्यञ्जनके मध्यवर्ती 'अ' आदि स्वर वर्ण 'बीज-योनि' रूपसे उभयात्मक हैं; जबकि 'क्' आदि व्यञ्जन वर्ण केवल योनि-रूपात्मक हैं।

इस प्रकारसे भी हम देखते हैं कि बिन्दु 'पर-बीज' रूप है। 'अ' आदि स्वर वर्ण 'परापर-बीज' रूप हैं और ये बिन्दु रूप वेत्तामें समाविष्ट होकर प्रकाशित होनेके कारण बिन्दुकी शक्तिरूप हैं। स्वर वर्णके विना व्यञ्जन वर्ण कभी भी अपनी सत्ताको प्राप्त नहीं कर सकते हैं। इसलिए व्यञ्जनका बीज स्वर है और व्यञ्जन शक्तिरूप योनि है।

इस प्रकारसे स्वर तथा व्यञ्जन सभी वर्ण बिन्दुकी शक्ति रूप हैं और मायिक हैं; जबकि बिन्दु सदैव अमायिक है। ऐसे भी जब 'मन्त्र' आदिका विस्तार होता है तो व्यञ्जन वर्ण भी 'अपर-बीज' रूप होते हैं। इस प्रकारसे 'अ' आदि स्वर वर्णोंको 'मातृकाम्बा' तथा 'क्' आदि व्यञ्जन वर्णोंको 'मातृका' संज्ञा दी गयी है। यही परम रहस्य है।

वृत्तत्रय-चक्रस्य निरूपणम्

वृत्तत्रयैः सुधवलारुणकृष्णवर्णैः
सन्निर्मितं परममातृकयोगिनीभिः।
त्रैवर्गसाधनकरं भुवि दुर्लभं च
वृत्तत्रयाख्यमपरं प्रणमामि चक्रम्।।१।।

वृत्तत्रय चक्रका निरूपण

मैं श्वेत, लाल तथा कृष्ण वर्णके तीन वृत्तोंसे निर्मित, परम मातृका योगिनियोंके साथ धर्म, अर्थ तथा कामरूपी त्रिवर्गको सिद्ध करनेवाला और भूलोकमें दुर्लभ वृत्तत्रय नामक एक अन्य चक्रको प्रणाम करता हूँ।

विमर्श—अब वृत्तत्रय चक्रका निरूपण किया जा रहा है—वृत्तत्रयैरिति।

वृत्तत्रयैः सुधवलारुण-कृष्ण-वर्णैः सन्निर्मितम्—श्रीचक्रके अन्तर्गत दूसरा चक्र है—वृत्तत्रय चक्र। इसे त्रिवृत्तक भी कहते हैं। यह वृत्तत्रय चक्र तीन वृत्तोंसे निर्मित है। वृत्तोंके वर्ण भिन्न-भिन्न हैं। बाहरसे प्रथम वृत्त श्वेत वर्णका है, द्वितीय वृत्त लाल वर्णका है तथा तृतीय वृत्त कृष्ण वर्णका है। श्वेत वर्ण सत्त्व गुणका प्रतीक है, रक्त वर्ण रजो गुणका प्रतीक है तथा कृष्ण वर्ण तमो गुणका प्रतीक है। साधक सत्त्व गुणसे युक्त होकर जब साधना करता है तो अवश्य सिद्ध बन जाता है। वृत्तत्रयका निर्माण आनुपातिक विधिसे हुआ है। इनके व्यासका माप बाहरसे अन्दरकी ओर कम होता जाता है।

परममातृकयोगिनीभिः—वृत्तत्रय चक्रमें मातृकाओंका अवस्थान है। ये मातृकाएँ 'तिथि' तथा 'वर्ण'के रूपमें दो प्रकारकी होती हैं। वर्ण-मातृकाओंके दो भेद हैं—वर्णमातृका तथा वर्णमातृकाम्बा। व्यञ्जन वर्ण-को वर्णमातृका कहते हैं; जबकि स्वर वर्णको वर्णमातृकाम्बा कहते हैं। इन्हीं मातृकाओंसे सृष्टि कार्य अग्रसारित होनेके कारण ये 'परम-

मातृका' कहलाती हैं। पञ्च महाभूतात्मक होनेके कारण इनको योगिनी कहते हैं। इस प्रकारसे वृत्तत्रय मातृका चक्र परममातृका योगिनियोंसे सुशोभित हो रहा है।

त्रैवर्गसाधनकरम्–'चतुर्वर्ग' कहते हैं–धर्म, अर्थ, काम तथा मोक्षको। ये पुरुषार्थ चतुष्टय भी कहलाते हैं। 'पुरुषार्थ' कहते हैं–पुरुषके प्रयोजनको। प्रत्येक व्यक्तिका परम लक्ष्य होता है कि वह अपने प्रयोजनोंको पूरा कर ले। मूल रूपसे ये ही चार प्रयोजन हैं। वृत्तत्रय चक्रकी उपासनासे 'धर्म, अर्थ तथा काम' इन तीन प्रयोजनों-की सिद्धि होती है। इन तीन प्रयोजनोंको 'त्रिवर्ग' कहते हैं। श्वेत वर्णवाले वृत्तमें सात्त्विक भावसे उपासना करनेसे व्यक्ति 'धर्म'को प्राप्त कर लेता है; क्योंकि आचारसे धर्मकी प्राप्ति होती है। सदाचार सत्त्व गुणका बाह्य रूप है। रक्त वर्णवाले द्वितीय वृत्तमें रजो गुणी कामकी सिद्धि होती है। रजो गुण रागात्मक होता है। यदि प्रथम वृत्तमें सात्त्विक भावसे धर्मका आचरण करते हैं तो यहाँ 'काम' रागात्मक नहीं होता है, बल्कि वह धर्मका सहायक बन जाता है। कृष्ण वृत्तवाले तृतीय वृत्तमें 'अर्थ'की सिद्धि होती है। इस अर्थसे तात्पर्य है–सुरक्षा। व्यक्तिकी सुरक्षा भौतिक साधनोंसे होती है। यदि सात्त्विक वृत्तिसे धर्माचरण करते हुए कामका सेवन किया जाता है तो अर्थ नामक पुरुषार्थ सुरक्षात्मक हो जाता है, अन्यथा तमो गुणके तत्त्व निद्रा, आलस्य, प्रमाद, विलासिता आदिसे युक्त होकर व्यक्ति निम्न गतिको प्राप्त करता है। इसलिए यहाँ पर 'धर्म'को प्रथम वृत्तमें स्थान दिया गया है। वृत्तत्रय चक्रकी उपासनाका फल है–'धर्म, अर्थ तथा काम' इन त्रिवर्गका प्राप्त होना। यह चक्र चतुर्थ पुरुषार्थ मोक्षकी प्राप्तिमें सहायक सिद्ध होता है।

भुवि दुर्लभं च–वृत्तत्रय चक्रको संसारमें दुर्लभ बताया गया है; क्योंकि श्रीचक्रकी साधनाका परम लक्ष्य है–मोक्ष। मोक्षकी प्राप्ति भैरवावस्थाकी प्राप्ति ही है। भैरवको ही शिव कहते हैं। शिवत्वको प्राप्त करना ही परम प्रयोजन है और यही मोक्ष है। इस मोक्षको

प्राप्त करनेके लिए धर्म, अर्थ तथा काम पारम्परिक रूपसे साधन बनते हैं और यह वृत्तत्रय चक्र इसका सबसे बड़ा साधन है। एकमात्र वृत्तत्रय चक्रकी उपासनासे साधक श्रीचक्रकी समस्त सिद्धियोंको प्राप्त करनेमें समर्थ हो जाता है। इसलिए गुरुजन एकमात्र वृत्तत्रय चक्रकी साधनाको अधिक महत्त्व देते हैं। यही रहस्य है। 'एक साधे तो सब सधे' यह कहावत यहाँ पर चरितार्थ होता है। ऐसा चक्र संसारमें दूसरा है ही नहीं, तो स्वाभाविक रूपसे यह दुर्लभ ही है।

वृत्तत्रयाख्यम् अपरं चक्रम्—श्रीचक्रके दश चक्रोंमें वृत्तत्रय चक्र द्वितीयावरणके रूपमें जाना जाता है। जब इसकी महत्ता अधिक हो तो फिर इसे प्रथम चक्रके रूपमें स्थान क्यों नहीं प्राप्त है? कहते हैं—प्रथम चक्र भूपुरमें संसारके बाह्य पदार्थ साधकको भौतिक सम्पदा-के चकाचौंधमें अन्धा बना देते हैं। इसलिए साधकमें हिताहितका विवेक नहीं रह पाता है। प्रथम चक्रसे सकल भौतिक सम्पदाको प्राप्त करना अत्यन्त आसान कार्य है। इससे सिद्धियाँ आसानीसे प्राप्त हो जाती हैं। ये सिद्धियाँ ही योगके विघ्नके रूपमें उपस्थित होती हैं। इसलिए इन्हें 'योगान्तराय' कहते हैं। 'अन्तराय' कहते हैं—विघ्नको। साधकका मन उन्हीं सिद्धियोंकी ओर चलायमान रहता है और साधक सर्वसमर्थ बन कर निम्न गतिकी ओर अग्रसर होता रहता है। इसी दुष्प्रवृत्तिको रोकनेके लिए ही यह त्रैवर्गसाधनकर वृत्तत्रय चक्र द्वितीय चक्रके स्थान पर आरूढ़ है। यही रहस्य है।

प्रणमामि—मैं पूर्ववर्णित उस महिमाशाली वृत्तत्रय चक्रको प्रणाम करता हूँ॥१॥

प्रथमवृत्ते पूर्वादिदक्षिणावर्तेन·कालरात्र्यादीनामेकोनत्रिंशन्मातृकानां स्वरूपम्

श्रीकालरात्रीमथ खातिताम्बां
गात्रीञ्च घण्टां विधृताम्बिकाञ्च।
ङार्णात्मिकां भीषणरूपचण्डां
श्रीछात्मिकाञ्चैव जयाख्यमूर्तिम्॥

झङ्कारिणीं ज्ञानशरीरिणीञ्च

श्रीटङ्कहस्तामतिदिव्यरूपाम्।

ठङ्कारिणीं चैव डकारिणीञ्च

ढङ्कारिणीञ्चैव णकारिणीं ताम्।।

तकारिणीं थाणिकमूर्तिरूपां

दाक्षायणीञ्चैव तथा च धात्रीम्।

नादामथो पर्वतराजकन्यां

फेट्कारिणीं बन्धिनिकां तथा ताम्।।

श्रीभद्रकालीमथ विष्णुमायां

श्रियञ्च षण्ढाञ्च सरस्वतीञ्च।

पुनश्च तां हंसवतीं समस्ता

एकोनत्रिंशच्छुभमातृकास्ताः।।

अमूः स्मितास्याः सृणिपाशहस्ताः

समुद्यदादित्यनिभास्त्रिनेत्राः।

रक्ताम्बराश्चन्द्रकलावतंसा

आद्ये च वृत्ते सततं नमामि।।२।।

प्रथम वृत्तमें पूर्वादि दक्षिणावर्त क्रमसे स्थित कालरात्री आदि ऊनतीस मातृकाओंका स्वरूप

मैं कालरात्री मातृका, उसके बाद खातिता मातृका, मातृका पदका धारण करनेवाली गात्री मातृका तथा घण्टा मातृका, ङार्णात्मिका मातृका, भयङ्कर रूपवाली चण्डा मातृका, छात्मिका मातृका तथा जया नामक मूर्तिरूपिणी जया मातृका, झङ्कारिणी मातृका तथा ज्ञानरूपी शरीरवाली ज्ञानशरीरिणी मातृका, अतिदिव्य

रूपवाली टङ्कहस्ता मातृका, ठङ्कारिणी मातृका, डकारिणी मातृका और ढङ्कारिणी मातृका तथा णकारिणी मातृका, तकारिणी मातृका, थाणिक मूर्तिरूपिणी थाणी मातृका और दाक्षायणी मातृका तथा उस प्रकार धात्री मातृका, नादा मातृका, उसके बाद पर्वतराजकी पुत्री पार्वती मातृका, फेट्कारिणी मातृका, उस प्रकार बन्धिनी मातृका, भद्रकाली मातृका, उसके बाद विष्णुकी माया माया मातृका तथा श्री मातृका, षण्ढा मातृका और सरस्वती मातृका, फिर हंसवती मातृका, उन सभी ऊनतीस शुभ मातृकाएँ जो विहसित मुखवाली, अङ्कुश तथा पाशका धारण करनेवाली, उगते हुए सूर्यके समान रक्त वर्णवाली, तीन आँखोंवाली, रक्तवर्णके वस्त्रोंसे युक्त तथा अर्द्ध चन्द्रका धारण करनेवाली हैं, को प्रथम वृत्तमें निरन्तर नमस्कार करता हूँ।

विमर्श–अब वृत्तत्रय चक्रके श्वेत वर्णवाले प्रथम वृत्तमें स्थित कालरात्री आदि ऊनतीस मातृकाओंके स्वरूपका वर्णन किया जा रहा है–श्रीकालरात्रीमिति।

श्वेत वर्णवाले प्रथम वृत्तमें व्यञ्जन वर्णकी मातृकाएँ मूर्तिरूपमें स्थित हैं। यहाँ पर कुछ व्यञ्जन मातृकाओंका नामकरण भी पारम्परिक रूपसे किया गया है जिससे यह संकेत मिलता है कि व्यवहार जगतमें व्यवहारके अनुरूप मातृकाके अनेक नाम हो सकते हैं। यहाँ मूल मातृकाओंके अनुरूप पाठ निम्नलिखित प्रकारसे प्रस्तुत किये जा रहे हैं:–

"ककाररूपाभिधमातृकां तां खकारिणीञ्चैव गकारिणीञ्च।
घकारिणीञ्चैव ङकारिणीं तां चकारिणीञ्चैव छकारिणीञ्च॥
जकारिणीञ्चैव झकारिणीं तां ञकारिणीञ्चैव टकारिणीञ्च।
ठकारिणीञ्चैव डकारिणीं तां ढकारिणीञ्चैव णकारिणीञ्च॥
तकारिणीञ्चैव थकारिणीं तां दकारिणीञ्चैव धकारिणीञ्च।
नकारिणीञ्चैव पकारिणीं तां फकारिणीञ्चैव बकारिणीञ्च॥
भकारिणीञ्चैव मकारिणीं तां शकारिणीञ्चैव षकारिणीञ्च।

सकारिणीश्चैव हकारिणीं तामेकोनत्रिंशच्छुभमातृकास्ताः।।
अमूः स्मितास्याः सृणिपाशहस्ताः समुद्यदादित्यनिभा त्रिनेत्राः।
रक्ताम्बराश्चन्द्रकलावतंसा आद्ये च वृत्ते सततं नमामि।।''

श्रीकालरात्रीम्–'क' वर्णसे पहली व्यञ्जन वर्ण मातृका है–*'ककारिणी मातृका'।* यहींसे सर्वप्रथम व्यावहारिक व्यञ्जन मातृकाका प्रारम्भ होता है। यहाँ पर यह कालरात्री मातृकाके नामसे ख्यात है। 'काल' कहते हैं–समयको। 'रात्री' कहते हैं–अन्धकारको। समयको अन्धकारके रूपमें परिवर्तित कर देनेवाली मातृका 'कालरात्री मातृका' कहलाती है। रहस्यार्थ है कि 'शिव' कालातीत और प्रकाशस्वरूप है; जबकि यह 'विश्व' कालात्मक और अन्धकाररूप शाक्त है। 'शिव' व्यवहारसे परे है; जबकि 'विश्व' व्यावहारिक है।

अथ खातिताम्बाम्–'ख' वर्णसे दूसरी व्यञ्जन वर्ण मातृका है–*'खकारिणी मातृका'।* यहाँ पर इसका खातिता नाम रखा गया है। 'खात'का अर्थ है–खाई। जीवको गर्तमें ढ़केल देनेवाली मातृका 'खातिता मातृका' कहलाती है। रहस्यार्थ है कि विश्व सबसे बड़ा गर्त है। इसमें खातिता मातृका जीवको व्यावहारिक बना देती है।

गात्रीं च–'ग' वर्णसे तीसरी व्यञ्जन वर्ण मातृका है–*'गकारिणी मातृका'।* यहाँ पर इसका 'गात्री' नाम रखा गया है। 'गात्र' कहते हैं–शरीरको। 'गात्री' कहते हैं–गात्र अर्थात् शरीरका धारण करानेवालीको। यह मातृका व्यावहारिक जीवको शरीरका धारण कराती है। ऐसे भी 'गात्री' कहते हैं–गान करनेवालीको। यह मातृका सदैव उस विश्वातीत परम प्रकाशस्वरूप शिवकी महिमाका गन्धर्व गान करती है। यह 'गात्री मातृका' लोकमें गायत्रीके रूपमें भी परिचित है और यह अपने गन्धर्व गानसे जीवको मोहरूपी पाशसे भी जकड़ लेती है। उसकी उपासनासे जीव ऊर्ध्व गतिको प्राप्त करता है अन्यथा निम्न गतिसे विश्वकी ओर अग्रसर होता है।

घण्टाम्–'घ' वर्णसे चौथी व्यञ्जन वर्ण मातृका है–*'घकारिणी*

मातृका'। यहाँ पर इसका 'घण्टा' नाम रखा गया है। यह मातृका घण्टाके समान ध्वनि करती है। वस्तुतः यह मातृका जीवको निम्न गतिको प्राप्त करनेके पहलेसे ही सतर्क कर देती है।

विधृताम्बिकां च–'अम्बिका' कहते हैं–मातृकाको। उपर्युक्त सभी मातृकाएँ 'मातृका' पदका धारण करती हैं।

ङार्णात्मिकाम्–'ङ' वर्णसे पाँचवीं व्यञ्जन वर्ण मातृका है–*'ङकारिणी मातृका'*। यहाँ पर इसका 'ङार्णात्मिका' नाम रखा गया है। 'अर्ण' कहते हैं–वर्णको। यह मातृका शून्यका प्रदान करती है जिससे वस्तुका धारण हो सके।

भीषणरूपचण्डाम्–'च' वर्णसे छठवीं व्यञ्जन वर्ण मातृका है–*'चकारिणी मातृका'*। यहाँ पर इसका 'चण्डा' नाम रखा गया है। इस मातृकाका रूप अत्यन्त भयानक होता है।

श्रीछात्मिकां च एव–'छ' वर्णसे सातवीं व्यञ्जन वर्ण मातृका है–*'छकारिणी मातृका'*। यहाँ पर इसका 'छात्मिका' नाम रखा गया है। यह मातृका अपनेको असंख्य खण्डोंमें विभक्त कर देती है और समान आकृतिवाली असंख्य मूर्तिके रूपमें प्रकट हो जाती है तथा शत्रुको खण्ड-खण्ड करनेमें पूर्ण रूपसे समर्थ रहती है।

जयाख्यमूर्तिम्–'ज' वर्णसे आठवीं व्यञ्जन वर्ण मातृका है–*'जकारिणी मातृका'*। यहाँ पर इसका 'जया' नाम रखा गया है। यह मातृका सर्वदा जयका प्रदान करती है। यह स्वयं जयस्वरूपा है। इस जया मातृकाकी उपासनासे शत्रु निश्चित रूपसे पराजयको प्राप्त करते हैं।

झङ्कारिणीम्–'झ' वर्णसे नौवीं व्यञ्जन वर्ण मातृका है–*'झकारिणी मातृका'*। यहाँ पर इसका 'झङ्कारिणी' नाम रखा गया है। यह मातृका झङ्कार ध्वनिसे पदार्थको झङ्कृत कर देती है।

ज्ञानशरीरिणीं च–'ञ' वर्णसे दशवीं व्यञ्जन वर्ण मातृका है–*'ञकारिणी मातृका'*। यहाँ पर इसका 'ज्ञानशरीरिणी' नाम रखा गया

है 'ञ' वर्ण ज्ञानका बोध कराता है। इसलिए यहाँ पर 'ञ' वर्णसे ज्ञान शब्दका ग्रहण होता है।

टङ्कहस्ताम्–'ट' वर्णसे ग्यारहवीं व्यञ्जन वर्ण मातृका है–*'टकारिणी मातृका'*। यहाँ पर इसका 'टङ्कहस्ता' नाम रखा गया है। 'टङ्क' कहते हैं–कुठारको। इसे कुल्हाड़ी भी कहते हैं। टङ्कहस्ता मातृकाके हाथमें कुठारका चिह्न सुशोभित हो रहा है।

ठङ्कारिणीं च एव–'ठ' वर्णसे बारहवीं व्यञ्जन वर्ण मातृका है–*'ठकारिणी मातृका'*। यहाँ पर इसका 'ठङ्कारिणी' नाम रखा गया है। वर्तनोंके गिरनेसे उत्पन्न होनेवाली ध्वनिको 'ठं' कहते हैं। इस प्रकार-की ध्वनिको उत्पन्न करनेवाली यह मातृका ठङ्कारिणी मातृका कहलाती है।

डकारिणीं च–'ड' वर्णसे तेरहवीं व्यञ्जन वर्ण मातृका है–*'डकारिणी मातृका'*। यहाँ पर इसका 'डकारिणी' नाम रखा गया है। उदरसे मुखके द्वारा बाहर निकलनेवाले वायुसे जो शब्द होता है उसे 'डकार' कहते हैं। डकारको उत्पन्न करनेवाली मातृका डकारिणी मातृका कहलाती है।

ढङ्कारिणीं च एव–'ढ' वर्णसे चौदहवीं व्यञ्जन वर्ण मातृका है–*'ढङ्कारिणी मातृका'*। यहाँ पर इसका 'ढङ्कारिणी' नाम रखा गया है। 'ढं'की ध्वनिको उत्पन्न करनेवाली वर्णमातृकाको ढङ्कारिणी मातृका कहते हैं।

णकारिणीं ताम्–'ण' वर्णसे पन्द्रहवीं व्यञ्जन वर्ण मातृका है–*'णकारिणी मातृका'*। यहाँ पर इसका 'णकारिणी' नाम रखा गया है। 'ण' कहते हैं–बलको। जो सदैव बलका प्रयोग करनेवाली हो उस मातृकाको णकारिणी मातृका कहते हैं।

तकारिणीम्–'त' वर्णसे षोलहवीं व्यञ्जन वर्ण मातृका है–*'तकारिणी मातृका'*। यहाँ पर इसका 'तकारिणी' नाम रखा गया है। 'त' कहते हैं–वशीकरणको। तकारिणी मात्काको सबको वशमें

करनेकी शक्ति प्राप्त है।

थाणिकमूर्तिरूपाम्–'थ' वर्णसे सत्रहवीं व्यञ्जन वर्ण मातृका है–'*थकारिणी मातृका*'। यहाँ पर इसका 'थाणी' नाम रखा गया है। 'थाणु' कहते हैं–निर्जीव वस्तुके समान स्थित हो जानेको। यह एक ऐसी अवस्था है कि जिसमें प्रत्येक प्राणी जड़ वस्तुके समान गतिहीन हो जाता है। जिस प्रकारसे यह मातृका स्वयं थाणिक मूर्तिरूपा है ठीक् उसी प्रकारसे शत्रुको भी यह थाणिक रूप प्रदान करती है।

दाक्षायणीं च एव–'द' वर्णसे अठारहवीं व्यञ्जन वर्ण मातृका है–'*दकारिणी मातृका*'। यहाँ पर इसका 'दाक्षायणी' नाम रखा गया है। दक्षकी पुत्रीको दाक्षायणी कहते हैं। दक्षके घरमें उत्पन्न हुई सती दाक्षायणीके रूपमें जानी जाती है।

तथा च धात्रीम्–'ध' वर्णसे ऊन्नीसवीं व्यञ्जन वर्ण मातृका है–'*धकारिणी मातृका*'। यहाँ पर इसका 'धात्री' नाम रखा गया है। 'धात्री' कहते हैं–माताके समान पालन करनेवाली उपमाताको। इसे 'धाय' भी कहते हैं।

नादाम्–'न' वर्णसे बीसवीं व्यञ्जन वर्ण मातृका है–'*नकारिणी मातृका*'। यहाँ पर इसका 'नादा' नाम रखा गया है। 'नाद'की ध्वनिको उत्पन्न करनेवाली मातृकाको 'नादा मातृका' कहते हैं।

अथो पर्वतराजकन्याम्–'प' वर्णसे इक्कीसवीं व्यञ्जन वर्ण मातृका है–'*पकारिणी मातृका*'। यहाँ पर इसका 'पार्वती' नाम रखा गया है। 'पर्वतराज' कहते हैं–हिमालयको। हिमालयकी कन्या है–पार्वती। 'अथो' शब्दका प्रयोग भी 'अथ' शब्दके रूपमें होता है जो कि आनन्तर्यार्थक है।

फेट्कारिणीम्–'फ' वर्णसे बाईसवीं व्यञ्जन वर्ण मातृका है–'*फकारिणी मातृका*'। यहाँ पर इसका 'फेट्कारिणी' नाम रखा गया है। 'फेट्कार' कहते हैं–चीखनेको। यह चीख भयावना होती है। इस प्रकारसे भयङ्कर रूपसे चीखनेवाली मातृकाको 'फेट्कारिणी मातृका'

कहते हैं।

बन्धिनिकां तथा ताम्–'ब' वर्णसे तेईसवीं व्यञ्जन वर्ण मातृका है–*'बकारिणी मातृका'*। यहाँ पर इसका 'बन्धिनी' नाम रखा गया है। यह मातृका शत्रुओंको बन्धनमें ड़ालनेवाली तथा साधकोंको बन्धनसे छुड़ानेवाली होनेके कारण 'बन्धिनी मातृका' कहलाती है।

श्रीभद्रकालीम्–'भ' वर्णसे चौबीसवीं व्यञ्जन वर्ण मातृका है–*'भकारिणी मातृका'*। यहाँ पर इसका 'भद्रकाली' नाम रखा गया है। 'भद्र' कहते हैं–कल्याणको। कल्याण करनेवाली काली 'भद्रकाली' कहलाती है।

अथ विष्णुमायाम्–'म' वर्णसे पच्चीसवीं व्यञ्जन वर्ण मातृका है–*'मकारिणी मातृका'*। यहाँ पर इसका 'माया' नाम रखा गया है। माया मातृका विष्णुकी माया है जिससे सम्पूर्ण जगत सम्मोहित है।

श्रियं च–'श' वर्णसे छब्बीसवीं व्यञ्जन वर्ण मातृका है–*'शकारिणी मातृका'*। यहाँ पर इसका 'श्री' नाम रखा गया है। सौभाग्यकी वृद्धि करनेवाली मातृका 'श्री मातृका' कहलाती है।

षण्ढां च–'ष' वर्णसे सत्ताईसवीं व्यञ्जन वर्ण मातृका है–*'षकारिणी मातृका'*। यहाँ पर इसका 'षण्ढा' नाम रखा गया है। 'षण्ढ' कहते हैं–नपुंसकको। यह मातृका शत्रुओंको नपुंसक बना देनेके कारण 'षण्ढा मातृका' कहलाती है।

सरस्वतीं च–'स' वर्णसे अट्ठाईसवीं व्यञ्जन वर्ण मातृका है–*'सकारिणी मातृका'*। यहाँ पर इसका 'सरस्वती' नाम रखा गया है। यह मातृका वाणीमें शक्ति प्रदान करती है।

पुनः च तां हंसवतीम्–'ह' वर्णसे ऊनतीसवीं व्यञ्जन वर्ण मातृका है–*'हकारिणी मातृका'*। यहाँ पर इसका 'हंसवती' नाम रखा गया है। 'हंस' शब्दसे यहाँ पर जीवात्माका बोध होता है। जीव ही प्राणस्वरूप है। प्राणका सञ्चरण करानेवाली मातृका 'हंसवती मातृका' कहलाती है।

समस्ताः एकोनत्रिंशत् शुभमातृकाः ताः—कालरात्री आदि सभी ऊनतीस मातृकाएँ शुभ हैं। 'अ' वर्णसे लेकर 'ह' वर्ण तककी वर्णमालामें ऊनचास वर्ण हैं। ये सभी मातृका कहलाती हैं। इनमें 'अ'से लेकर 'अः' तक षोलह वर्ण 'स्वर मातृका' तथा 'क'से लेकर 'ह' तक तैंतीस वर्ण 'व्यञ्जन मातृका' कहलाती हैं।

प्रथम वृत्तमें व्यञ्जन मातृकाएँ विराजमान हैं। प्रथम वृत्तमें ऊनतीस मातृकाओंकी स्थिति है। 'य, र, ल, व' ये चार अन्तःस्थ व्यञ्जन वर्ण हैं। ये चार वर्ण चार महाभूतोंके बीज हैं। पाँचवाँ बीज 'ह' वर्ण महाभूत आकाशका है। महाभूत आकाशसे वायु, वायुसे अग्नि, अग्निसे जल तथा जलसे पृथिवीकी उत्पत्ति होती है। इस प्रकारसे आकाशमें सभी चार महाभूत बीजरूपसे अन्तर्भूत हैं।

यहाँ पर हमने देखा कि 'ह' वर्णसे 'हंसवती' मातृका विराजमान है। शरीरमें हंस ही जीवात्मा है और यही प्राणस्वरूपात्मक है। इस प्रकारसे 'ह' स्वतः प्राणस्वरूपात्मक है। 'ह' वर्णकी स्थिति ही प्राणकी स्थिति है और इसमें अन्य चार बीज—'य, र, ल, व' अन्तर्भूत हैं। इसलिए श्रीचक्रमें 'ह' वर्णकी उपस्थिति ही स्वतः प्राणप्रतिष्ठा करा देती है। 'य, र, ल, व' ये चार वर्ण प्राणप्रतिष्ठा क्रियामें प्रयुक्त होते हैं और बाह्यरूपसे मूर्तिमें प्राणप्रतिष्ठा करने हेतु प्राणप्रतिष्ठा करनेवाले साधक इनका प्रयोग करते हैं। श्रीचक्रकी बाह्य प्राणप्रतिष्ठा नहीं की जाती है। इसलिए ये चार वर्ण यहाँ पर बाह्यरूपसे स्थित नहीं हैं; जबकि अन्तःस्थरूपमें 'ह' वर्णमें अन्तर्भूत हैं। इस प्रकारसे यहाँ पर कुल ऊनतीस वर्णोंका ग्रहण होता है। यही रहस्य है; परम्परा है।

अमूः स्मितास्याः—कालरात्री आदि सभी ऊनतीस मातृकाएँ विहसित मुखवाली हैं; सदैव मुसकुराती रहती हैं।

सृणि-पाशहस्ताः—'सृणि' कहते हैं—अङ्कुशको। कालरात्री आदि सभी ऊनतीस शुभ मातृकाएँ द्विभुजा हैं। इनके एक हाथमें अङ्कुश

तथा दूसरे हाथमें पाश स्थित है।

समुद्यदादित्यनिभाः–'आदित्य' कहते हैं–सूर्यको। कालरात्री आदि सभी ऊनतीस मातृकाओंके शरीरकी कान्ति प्रातःकालीन उगते हुए सूर्यके समान लाल वर्णकी है।

त्रिनेत्राः–कालरात्री आदि सभी ऊनतीस मातृकाएँ तीन आँखों-वाली हैं। इसलिए ये 'त्रिनेत्रा' कहलाती हैं।

रक्ताम्बराः–कालरात्री आदि सभी ऊनतीस मातृकाओंने लाल वर्णके वस्त्रोंका धारण किया है।

चन्द्रकलावतंसाः–'कला' कहते हैं–खण्डको। यहाँ पर 'चन्द्र-कला' शब्दसे अर्द्ध चन्द्रका बोध होता है। 'अवतंस' कहते हैं–मस्तक पर धारण किये जानेवाले आभरणको। कालरात्री आदि सभी ऊनतीस मातृकाओंने अपने मस्तक पर आभरणके रूपमें अर्द्ध चन्द्रका धारण किया है। यहाँ पर 'अवतंस' शब्दसे कर्णाभरणको नहीं लिया जाता है बल्कि कानके पास मस्तक पर धारण किये जानेवाले आभरणका ग्रहण होता है।

आद्ये च वृत्ते–भूपुर चक्रके बाद प्रारम्भ होनेवाले वृत्तत्रय चक्रके प्रथम वृत्तको आद्य वृत्त कहते हैं। आद्य वृत्तका वर्ण श्वेत होता है। इस श्वेत वर्णके वृत्तमें रक्त वर्णकी कान्तिवाली कालरात्री आदि सभी ऊनतीस मातृकाएँ पूर्वसे दक्षिणावर्त क्रमसे विराजमान हैं।

सततं नमामि–मैं पूर्ववर्णित उन सभी कालरात्री आदि ऊनतीस मातृकाओंको निरन्तर नमस्कार करता हूँ।।२।।

द्वितीयवृत्ते पूर्वादिदक्षिणावर्तेनाऽमृतादीनां षोडशमातृकाम्बानां स्वरूपम्

अथोऽमृतां मात्रभिधाम्बिकां ताम्
आकर्षिणीञ्चैव महेन्द्रशक्तिम्।
ईशानिकां शक्तिमुमाख्यशक्तिं
महोर्ध्वकेशीं तत ऋद्धिरात्रीम्।।

ऋद्धीश्वरीञ्चैव लृतां लृकाञ्च
तामेकपादाभिधमातृकाम्बाम्।
ऐश्वर्यिकां तां प्रणवात्मिकां तां
महौषधाञ्चैव महाम्बिकाञ्च॥
वर्णात्मिकाः षोडश मातृकाम्बा
एता हि रक्ताः शरचापहस्ताः।
स्मेरानना इन्दुधरास्त्रिनेत्रा
मध्यस्थवृत्ते सततं नमामि॥३॥

द्वितीय वृत्तमें पूर्वादि दक्षिणावर्त क्रमसे स्थित अमृता आदि षोलह मातृकाम्बाओंका स्वरूप

मैं अब मातृका नामका धारण करनेवाली उस अमृता मातृकाम्बा, आकर्षिणी मातृकाम्बा, महेन्द्रकी शक्ति इन्द्राणी मातृकाम्बा, ईशानकी शक्ति ईशानी मातृकाम्बा, उमा नामक शक्ति उमा मातृकाम्बा, महान् ऊर्ध्वकेशी मातृकाम्बा, उसके बाद ऋद्धिरात्री मातृकाम्बा, ऋद्धीश्वरी मातृकाम्बा, लृता मातृकाम्बा, लृका मातृकाम्बा, उस एक पादवाली एकपादा मातृकाम्बा, उस ऐश्वर्यिका मातृकाम्बा, उस ओङ्कारात्मिका मातृकाम्बा, महान् औषधा मातृकाम्बा, अम्बिका मातृकाम्बा तथा अक्षरात्मिका मातृकाम्बा जो कि षोडश मातृकाम्बा हैं; इन रक्त वर्णवाली, बाण तथा धनुषसे युक्त हाथोंवाली, विहसित मुखवाली, चन्द्रमाका धारण करनेवाली तथा तीन आँखोंवालीको मध्यस्थ वृत्तमें नमस्कार करता हूँ।

विमर्श—अब द्वितीय वृत्तमें स्थित अमृता आदि षोलह स्वर वर्ण मातृकाम्बाओंके स्वरूपका वर्णन किया जा रहा है—अथोऽमृतामिति।

द्वितीय वृत्तमें स्वर वर्णकी मातृकाम्बाएँ मूर्तिरूपमें स्थित हैं। यहाँ पर कुछ स्वर मातृकाम्बाओंका नामकरण भी पारम्परिक रूपसे किया

गया है जिससे यह संकेत मिलता है कि व्यवहार जगतमें व्यवहारके अनुरूप मातृकाम्बाओंके अनेक नाम हो सकते हैं। यहाँ पर मूल मातृकाम्बाओंके अनुरूप पाठ निम्नलिखित प्रकारसे प्रस्तुत किये जा रहे हैं:—

"अकारिणीं मातृमहाम्बिकां तामाकारिणीञ्चैवमिकारिणीञ्च।
ईकारिणीञ्चैवमुकारिणीं तामूकारिणीञ्चैवमृकारिणीं ताम्॥
ॠकारिणीं मात्रभिधाम्बिकां तां ऌस्मेरवक्त्रां किल मातृकाम्बाम्।
ॡकाररूपाभिधमातृकाम्बामेकारिणीं मात्रभिधाम्बिकां ताम्॥
ऐकाररूपाभिधमातृकाम्बामोकारिणीं मात्रभिधाम्बिकाञ्च।
औकाररूपाभिधमातृकाम्बां बिन्द्वात्मिकां ताञ्च विसर्गरूपाम्॥
वर्णात्मिकाः षोडश मातृकाम्बा एता हि रक्ताः शरचापहस्ताः।
स्मेरानना इन्दुधराः त्रिनेत्रा मध्यस्थवृत्ते सततं नमामि॥"

अथोऽमृताम्—'अथो' शब्दका प्रयोग आनन्तर्यार्थक है। प्रथम वृत्तके अनन्तर द्वितीय वृत्तका निरूपण किया जा रहा है। 'अ' वर्णसे पहली स्वर वर्ण मातृकाम्बा है—*'अकारिणी मातृकाम्बा'*। यहाँ पर इसका 'अमृता' नाम रखा गया है। अमृतस्वरूपा होनेके कारण यह मातृकाम्बा जीवनदायिनी है। मातृसंज्ञक अम्बिकाको मातृकाम्बिका कहते हैं।

आकर्षिणीं च एव—'आ' वर्णसे दूसरी स्वर वर्ण मातृकाम्बा है—*'आकारिणी मातृकाम्बा'*। यहाँ पर इसका 'आकर्षिणी' नाम रखा गया है। आकर्षण करनेकी शक्ति इस मातृकाम्बाको प्राप्त है।

माहेन्द्रशक्तिम्—'इ' वर्णसे तीसरी स्वर वर्ण मातृकाम्बा है—*'इकारिणी मातृकाम्बा'*। यहाँ पर इसका 'इन्द्राणी' नाम रखा गया है। 'महेन्द्र' कहते हैं—देवराज इन्द्रको। इन्द्रकी शक्ति 'इन्द्राणी' है। इसे शासन करनेकी शक्ति प्राप्त है।

ईशानिकां शक्तिम्—'ई' वर्णसे चौथी स्वर वर्ण मातृकाम्बा है—

'ईकारिणी मातृकाम्बा'। यहाँ पर इसका 'ईशानी' नाम रखा गया है। ईशानकी शक्ति ईशानी है। इस मातृकाम्बाको क्षेत्रकी स्वामिनीके रूपमें शक्ति प्राप्त है।

उमाख्यशक्तिम्–'उ' वर्णसे प्रसिद्ध पाँचवीं स्वर वर्ण मातृकाम्बा है–*'उकारिणी मातृकाम्बा'*। यहाँ पर इसका 'उमा' नाम रखा गया है। 'उ' कहते हैं–तर्कको। 'मा' कहते हैं–निषेधको। जो तर्कका निषेध करके एकमात्र सिद्धान्त पर अटल रहती है उसे 'उमा' कहते हैं।

महोर्ध्वकेशीम्–'ऊ' वर्णसे छठवीं स्वर वर्ण मातृकाम्बा है–*'ऊकारिणी मातृकाम्बा'*। यहाँ पर इसका 'ऊर्ध्वकेशी' नाम रखा गया है। ऊर्ध्वकेश होनेके कारण इसे ऊर्ध्वकेशी कहते हैं।

ततः ऋद्धिरात्रीम्–उसके बाद 'ऋ' वर्णसे सातवीं स्वर वर्ण मातृकाम्बा है–*'ऋकारिणी मातृकाम्बा'*। यहाँ पर इसका 'ऋद्धिरात्री' नाम रखा गया है। यह मातृकाम्बा स्वयं ऋद्धिरूप होनेके कारण 'ऋद्धिका' भी कहलाती है। यहाँ पर 'रात्री' शब्दसे एकमातृक ह्रस्व वर्णका बोध होता है।

ऋद्धीश्वरीं च एव–'ॠ' वर्णसे आठवीं स्वर वर्ण मातृकाम्बा है–*'ॠकारिणी मातृकाम्बा'*। यहाँ पर इसका 'ऋद्धीश्वरी' नाम रखा गया है। यहाँ पर 'ईश्वरी' शब्दसे द्विमातृक दीर्घ वर्णका बोध होता है। यह स्वयं ऋद्धियोंको नियन्त्रित करनेवाली मातृकाम्बा है।

ऌताम्–'ऌ' वर्णसे नौवीं स्वर वर्ण मातृकाम्बा है–*'ऌकारिणी मातृकाम्बा'*। यहाँ पर इसका 'ऌता' नाम रखा गया है। इसे षण्ढ़ मातृका भी कहते हैं। यह मातृका भयङ्कर गर्जन करती है।

ॡकां च–'ॡ' वर्णसे दशवीं स्वर वर्ण मातृकाम्बा है–*'ॡकारिणी मातृकाम्बा'*। यहाँ पर इसका 'ऌका' नाम रखा गया है। यहाँ पर 'ऌ' वर्णके त्रिमातृक रूपका ग्रहण होता है। 'ऌ' वर्णका दीर्घ रूप नहीं होता है। यह मातृकाम्बा भी षण्ढ़रूपा है किन्तु इसमें बल अत्यधिक रहता है।

ताम् एकपादाभिध-मातृकाम्बाम्–'ए' वर्णसे ग्यारहवीं स्वर वर्ण मातृकाम्बा है–*'एकारिणी मातृकाम्बा'*। यहाँ पर इसका 'एकपादा' नाम रखा गया है। यह मातृकाम्बा एक पादसे खड़े होकर तपस्या करनेवाले तपस्वीको सिद्धिका प्रदान करती है।

ऐश्वर्यिकां ताम्–'ऐ' वर्णसे बारहवीं स्वर वर्ण मातृकाम्बा है–*'ऐकारिणी मातृकाम्बा'*। यहाँ पर इसका 'ऐश्वर्यिका' नाम रखा गया है। यह मातृकाम्बा ऐश्वर्यकी प्राप्ति कराती है।

प्रणवात्मिकां ताम्–'ओ' वर्णसे तेरहवीं स्वर वर्ण मातृकाम्बा है–*'ओकारिणी मातृकाम्बा'*। यहाँ पर इसका 'ओङ्कारात्मिका' नाम रखा गया है। 'प्रणव' कहते हैं–ओङ्कारको। ओङ्कारकी सिद्धि यही मातृकाम्बा कराती है।

महौषधां च एव–'औ' वर्णसे चौदहवीं स्वर वर्ण मातृकाम्बा है–*'औकारिणी मातृकाम्बा'*। यहाँ पर इसका 'महौषधा' नाम रखा गया है। यह साक्षात् औषधरूपा है। इसकी उपासनासे औषधमें शक्ति आती है तथा शीघ्रतासे रोगका निवारण होता है।

महाम्बिकां च–'अं' वर्णसे पन्द्रहवीं स्वर वर्ण मातृकाम्बा है–*'बिन्दु मातृकाम्बा'*। यहाँ पर इसका 'महाम्बिका' नाम रखा गया है। 'अं' यह वर्ण बिन्दु मातृकाम्बा कहलाती है। यह मातृकाम्बा 'बिन्दु'को प्राप्त कराती है। बिन्दुको शिव भी कहते हैं। व्यवहारमें बिन्दु(ं)का प्रयोग सदैव स्वर वर्णके साथ उपर होता है।

वर्णात्मिकाम्–'अः' वर्णसे षोलहवीं स्वर वर्ण मातृकाम्बा है–*'विसर्ग मातृकाम्बा'*। 'अः' यह वर्ण विसर्ग मातृकाम्बाके रूपमें जानी जाती है। 'वर्ण' कहते हैं–अक्षरको। यहाँ पर विसर्ग मातृकाम्बाका 'अक्षरात्मिका' नाम रखा गया है। विसर्ग(:)को बिन्दुके बाह्योल्लासकी अभिव्यक्ति कहते हैं और यह अभिव्यक्ति 'अ' आदि वर्णके रूपमें होती है। इसलिए विसर्ग वर्ण तथा अक्षरके रूपमें परिचित है। व्यवहारमें विसर्गका प्रयोग सदैव स्वर वर्णके साथ पार्श्वमें होता है।

षोडश मातृकाम्बाः–'अ' से लेकर 'अः' तक ये षोलह स्वर वर्णात्मिका षोडश मातृकाम्बा हैं। ये पञ्च भूतात्मक होनेके कारण योगिनी भी कहलाती हैं।

एताः हि रक्ताः–अमृता आदि सभी षोडश स्वर वर्ण मातृकाम्बाओंके शरीरकी कान्ति लाल वर्णकी है।

शरचापहस्ताः–अमृता आदि सभी षोडश स्वर वर्ण मातृकाम्बाएँ दो भुजाओंवाली हैं। इसलिए ये 'द्विभुजा' कहलाती हैं। इनके दोनों हाथोंमें बाण तथा धनुष सुशोभित हो रहे हैं।

स्मेराननाः–अमृता आदि सभी षोडश स्वर वर्ण मातृकाम्बाओंके मुख विहसित हैं; मुसकानसे युक्त प्रसन्न हैं।

इन्दुधराः–'इन्दु' कहते हैं–चन्द्रमाको। अमृता आदि सभी षोडश स्वर वर्ण मातृकाम्बाओंने अपने-अपने मस्तक पर चन्द्रमाका धारण किया है।

त्रिनेत्राः–अमृता आदि सभी षोडश स्वर वर्ण मातृकाम्बाओंकी तीन-तीन आँखें हैं। इसलिए ये 'त्रिनेत्रा' कहलाती हैं।

मध्यस्थवृत्ते–वृत्तत्रय चक्रके रक्तवर्णवाले वृत्तको 'मध्यस्थ वृत्त' कहते हैं। इस मध्यस्थ वृत्तमें अमृता आदि सभी षोडश स्वर वर्ण मातृकाम्बाएँ पूर्वसे दक्षिणावर्त क्रमसे विराजमान हैं।

सततं नमामि–मैं पूर्ववर्णित अमृता आदि सभी षोडश स्वर वर्ण मातृकाम्बाओंको नमस्कार करता हूँ॥३॥

तृतीयवृत्ते पूर्वादिदक्षिणावर्तेन कामेश्वर्यादीनां षोडशतिथिमातृकाम्बानां स्वरूपम्

कामेश्वरीं श्रीभगमालिनीञ्च
क्लिन्नाञ्च भेरुण्डकलां हुतस्थाम्।
वज्रेश्वरीं श्रीशिवदूतिकाम्बां
श्रीसत्वराम्बां कुलसुन्दरीञ्च॥

ततश्च श्रीमद्विमलाञ्च नील-
पताकिनीं श्रीविजयात्मिकाञ्च।
श्रीमङ्गलां ज्वालशिखां विचित्रां
श्रीसुन्दरीं षोडश नित्यरूपाः।।
एता हि साक्षात्तिथिमातृकाम्बाः
पाशाङ्कुशौ चापशरान्दधानाः।
चतुर्भुजा बालरविप्रभास्याः
तार्तीयवृत्ते सततं स्मरामि।।४।।

तृतीय वृत्तमें पूर्वादि दक्षिणावर्त क्रमसे स्थित कामेश्वरी आदि षोलह तिथिमातृकाम्बाओंका स्वरूप

मैं कामेश्वरी, भगमालिनी, नित्यक्लिन्ना, भेरुण्डा, वह्निवासिनी, वज्रेश्वरी, शिवदूती, त्वरिता, कुलसुन्दरी, उसके बाद विमला, नील-पताका, विजया, मङ्गला, ज्वालामालिनी, विचित्रा तथा श्रीसुन्दरी, इन षोलह नित्यरूपा साक्षात् तिथिमातृकाम्बाओंको जो कि पाश, अङ्कुश, धनुष तथा बाणका धारण की हुई चार भुजाओंवाली, उगते हुए सूर्यकी प्रभाके समान लाल मुखवाली हैं, का तृतीय वृत्तमें निरन्तर स्मरण करता हूँ।

विमर्श—अब तृतीय वृत्तमें स्थित कामेश्वरी आदि षोडश तिथि-मातृकाम्बाओंके स्वरूपका वर्णन किया जा रहा है—कामेश्वरीमिति।

तृतीय वृत्तमें षोडश तिथिमातृकाम्बाएँ मूर्तिरूपमें स्थित हैं। यहाँ पर कुछ तिथिमातृकाम्बाओंका नामकरण भी पारम्परिक रूपसे किया गया है जिससे यह संकेत मिलता है कि व्यवहार जगतमें व्यवहारके अनुरूप तिथिमातृकाम्बाओंके अनेक नाम हो सकते हैं। यहाँ पर मूल तिथिमातृकाम्बाओंके अनुरूप पाठ निम्नलिखित प्रकारसे प्रस्तुत किये जा रहे हैं:—

''आदौ तिथिं तां प्रतिपत्स्वरूपां नित्यां द्वितीयाञ्च तिथिं तृतीयाम्।
नित्याञ्चतुर्थीं तिथिपञ्चमीं तां षष्ठीञ्च नित्यां तिथिसप्तमीञ्च।।
नित्याष्टमीं तां नवमीतिथिञ्च नित्यां तिथिं तां दशमीस्वरूपाम्।
एकादशीं तां तिथिमातृकाम्बां श्रीद्वादशीं तां तिथिनित्यरूपाम्।।
त्रयोदशीं ताञ्च तिथिस्वरूपां चतुर्दशीं तां तिथिमातृकाम्बाम्।
नित्याकलां पञ्चदशीं तिथिं तां श्रीषोडशीं षोडश नित्यरूपाः।।
एता हि साक्षात्तिथिमातृकाम्बाः पाशाङ्कुशौ चापशरान्दधानाः।
चतुर्भुजा बालरविप्रभास्याः तार्तीयवृत्ते सततं स्मरामि।।''

कामेश्वरीम्–पहली तिथिनित्याकला है–*'प्रतिपदा तिथिमातृकाम्बा'*। प्रथमा तिथिको प्रतिपदा भी कहते हैं। यहाँ पर इसका 'कामेश्वरी' नाम रखा गया है। कामनाओंकी अधिष्ठात्री तिथिमातृकाम्बा कामेश्वरी है। सबसे पहले मनमें कामनाकी उत्पत्ति होती है। इसलिए यह प्रथमा नित्याकला है।

श्रीभगमालिनीं च–दूसरी तिथि-नित्याकला है–*'द्वितीया तिथि-मातृकाम्बा'*। यहाँ पर इसका 'भगमालिनी' नाम रखा गया है। 'भग' कहते हैं–योनिको। सम्पूर्ण जगत योनिरूपात्मक है। यह जगत भोग है। इसलिए पराशक्ति भग, योनि, भोग तथा विश्वके रूपमें जानी जाती है। इस प्रकारसे भगमालिनी तिथिमातृकाम्बा समस्त भोगोंकी अधिष्ठात्री द्वितीया नित्याकला है।

क्लिन्नां च–तीसरी तिथिनित्याकला है–*'तृतीया तिथिमातृकाम्बा'*। यहाँ पर इसका 'नित्यक्लिन्ना' नाम रखा गया है। यहाँ पर 'क्लिन्न' शब्दका अर्थ है–आसक्ति। नित्यक्लिन्ना तिथिनित्याकला जीवको भोगमें आसक्त बना देती है। यह तृतीया नित्याकला है।

भेरुण्डकलाम्–चौथी तिथि-नित्याकला है–*'चतुर्थी तिथि-मातृकाम्बा'*। यहाँ पर इसका 'भेरुण्डा' नाम रखा गया है। 'भेरुण्ड'का अर्थ है–गीदड़। गीदड़में लूट-खसोटकी प्रवृत्ति बनी रहती है। भेरुण्डा

नित्याकला जीवको भोग्य वस्तुकी लूट-खसोटके लिए प्रेरित करती है; उसे गीदड़के समान वृत्तिवाला बना देती है। 'भेरुण्ड'का अर्थ 'गर्भ' भी होता है। भेरुण्डा नित्याकला जीवको पापके गर्भमें ढ़केल देती है जिससे वह पापी पाप-स्वभाववाला बन जाता है और उसका पापमुक्त होना कठिन हो जाता है। यह चतुर्थी नित्याकला है।

हुतस्थाम्–पाँचवीं तिथि-नित्याकला है–*'पञ्चमी तिथिमातृकाम्बा'*। यहाँ पर इसका 'वह्निवासिनी' नाम रखा गया है। 'हुत' कहते हैं–वह्निको। यह तिथिनित्याकला वह्निस्वरूपा होती है। इसकी उपासनासे जीवके सारे पाप भस्म हो जाते हैं। यह पञ्चमी नित्याकला है।

वज्रेश्वरीम्–छठवीं तिथि-नित्याकला है–*'षष्ठी तिथिमातृकाम्बा'*। यहाँ पर इसका 'वज्रेश्वरी' नाम रखा गया है। 'वज्र' कहते हैं–श्रेष्ठ शक्तिवाले शस्त्रको। देवराज इन्द्र श्रेष्ठ देव होनेके कारण वही वज्रधर कहलाता है। सभी पापोंकी समाप्ति होनेपर जीव वज्रके समान शक्तिशाली बन जाता है। वज्रेश्वरी ही यहाँ पर विद्येश्वरीके रूपमें भी जानी जाती है। 'विद्या' कहते हैं–ज्ञानको। विद्येश्वरी तिथिनित्याकला ज्ञानकी अधिष्ठात्री शक्ति है। इसकी उपासनासे जीव जिज्ञासु बन जाता है। यह षष्ठी नित्याकला है।

श्रीशिवदूतिकाम्बाम्–सातवीं तिथि-नित्याकला है–*'सप्तमी तिथिमातृकाम्बा'*। यहाँ पर इसका 'शिवदूती' नाम रखा गया है। 'दूतिका' कहते हैं–संवादकी वाहिकाको। जीव सदैव शिवसे मिलना चाहता है, किन्तु संवादवाहकके अभावमें शिवसे सङ्गम नहीं कर पाता है और शिवदूती तिथिनित्याकला जीवको शिवसे सङ्गम करानेका कार्य करती है। यह सप्तमी नित्याकला है।

श्रीसत्वराम्बाम्–आठवीं तिथि-नित्याकला है–*'अष्टमी तिथिमातृकाम्बा'*। यहाँ पर इसका 'त्वरिता' नाम रखा गया है। 'सत्वर' कहते हैं–त्वरितको। 'त्वरित' शब्दका पर्याय 'शीघ्र' भी है। यह त्वरिता तिथिनित्याकला जीवको त्वरित प्रेरणा देकर अत्यन्त गतिशील बना देती है। यह अष्टमी नित्याकला है।

कुलसुन्दरीं च–नौवीं तिथि-नित्याकला है–*'नवमी तिथि-मातृकाम्बा'*। यहाँ पर इसका 'कुलसुन्दरी' नाम रखा गया है। 'कुल' कहते हैं–कुण्डलिनी शक्तिको। जीव जब ऊर्ध्व गमन करता है तब उसे विशुद्ध भोगस्वरूपा कुण्डलिनी पराशक्तिका दर्शन होता है। यदि जीव उसी भोग मात्रके प्रलोभनमें आ जाता है तो उसे ऊर्ध्व गति प्राप्त नहीं होती है। यह नवमी नित्याकला है।

ततः च श्रीमद्विमलां च–दशवीं तिथि-नित्याकला है–*'दशमी तिथिमातृकाम्बा'*। यहाँ पर इसका 'विमला' नाम रखा गया है। 'विमल' कहते हैं–पवित्रको। विमला तिथिनित्याकलाकी उपासनासे जीव पवित्र हो जाता है। यह दशमी नित्याकला है।

नीलपताकिनीम्–ग्यारहवीं तिथिनित्याकला है–*'एकादशी तिथि-मातृकाम्बा'*। यहाँ पर इसका 'नीलपताका' नाम रखा गया है। 'नील' वर्ण कामनाका प्रतीक है। यहाँ पर जो कामना है वह मात्र स्वाभाविक मूल इच्छा ही है। मूल इच्छा है–सुखको प्राप्त करना। यह इच्छा तब पूरी होती है जब परम सुखस्वरूप शिवकी प्राप्ति होती है। इस प्रकारसे यहाँ कामना परिवर्तित रूपसे प्राप्त होती है। यह एकादशी नित्याकला है।

श्रीविजयात्मिकां च–बारहवीं तिथिनित्याकला है–*'द्वादशी तिथि-मातृकाम्बा'*। विजया तिथिनित्याकला जीवको कामना पर विजय प्राप्त कराती है। यह द्वादशी नित्याकला है।

श्रीमङ्गलाम्–तेरहवीं तिथि-नित्याकला है–*'त्रयोदशी तिथि-मातृकाम्बा'*। यहाँ पर इसका 'मङ्गला' नाम रखा गया है। मङ्गला तिथिनित्याकला जीवका सदैव मङ्गल करती है। यह त्रयोदशी नित्याकला है।

ज्वालशिखाम्–चौदहवीं तिथि-नित्याकला है–*'चतुर्दशी तिथि-मातृकाम्बा'*। यहाँ पर इसका 'ज्वालामालिनी' नाम रखा गया है। ज्वालामालिनी तिथिनित्याकला जीवके सामने एकमात्र ज्वालापुञ्जके रूपमें सम्पूर्ण विश्वको प्रस्तुत करती है। यह चतुर्दशी नित्याकला है।

विचित्राम्–पन्द्रहवीं तिथि-नित्याकला है–*'पञ्चदशी तिथि-मातृकाम्बा'।* यहाँ पर इसका 'विचित्रा' नाम रखा गया है। विचित्र-स्वरूपा होनेके कारण यह नित्याकला 'विचित्रा' कहलाती है। विचित्रा नित्याकलाकी उपासनासे जीवके सामने जगतकी विचित्रता समाप्त हो जाती है; शक्तिका व्याकृत रूप मिट जाता है। यह पञ्चदशी नित्याकला है।

श्रीसुन्दरीम्–षोलहवीं तिथि-नित्याकला है–*'षोडशी तिथि-मातृकाम्बा'।* यहाँ पर इसका 'श्रीसुन्दरी' नाम रखा गया है। इस नित्याकलाको श्रीत्रिपुरसुन्दरी नित्याकला भी कहते हैं। श्रीसुन्दरी तिथिनित्याकला 'षोडशी' कलाके रूपमें प्रसिद्ध है। श्रीसुन्दरी नित्याकला अव्याकृत रूपसे प्रत्येक व्याकृत तिथि-नित्याकलाओंमें विद्यमान है। इसके विना सभी तिथिनित्याकलाएँ निष्क्रिय हो जाती हैं। जीव जब इसका साक्षात्कार कर लेता है तब उसे कालका बोध हो जाता है। यह षोडशी नित्याकला है।

षोडश नित्यरूपाः–'नित्य' कहते हैं–शिवको। जिसका विनाश कभी भी न हो वह नित्य है। 'नित्य' शिवकी प्रकृति 'नित्या' शक्ति है। शिवकी शक्तिको ही 'नित्या' कहते हैं। ये नित्याएँ कलाके रूपमें विराजमान हैं। 'कला' कहते हैं–सूक्ष्म स्वरूपको। कामेश्वरी आदि षोलह शक्तियाँ तिथिनित्याकला कहलाती हैं। जब इनकी यहाँ पर स्थूल रूपसे उपासना की जाती है तो वे स्थूलरूपा बन जाती हैं।

एताः हि साक्षात्तिथि-मातृकाम्बाः–कालकी गणना चन्द्रमाके अनुसार तिथियोंके रूपमें की गयी है। तिथियाँ पन्द्रह हैं; जैसे–प्रतिपदा, द्वितीया, तृतीया, चतुर्थी, पञ्चमी, षष्ठी, सप्तमी, अष्टमी, नवमी, दशमी, एकादशी, द्वादशी, त्रयोदशी, चतुर्दशी तथा पञ्च-दशी। पञ्चदशी तिथिको ही पूर्णिमा तथा अमावास्या कहते हैं। शुक्ल पक्षकी पञ्चदशी तिथिको पूर्णिमा तथा कृष्ण पक्षकी पञ्चदशी तिथिको अमावास्या कहते हैं। मूलरूपसे इन तिथियोंकी अधिष्ठात्री शक्तियाँ हैं–'प्रतिपदा तिथिमातृकाम्बा, द्वितीया तिथिमातृकाम्बा,

तृतीया तिथिमातृकाम्बा, चतुर्थी तिथिमातृकाम्बा, पञ्चमी तिथिमातृकाम्बा, षष्ठी तिथिमातृकाम्बा, सप्तमी तिथिमातृकाम्बा, अष्टमी तिथिमातृकाम्बा, नवमी तिथिमातृकाम्बा, दशमी तिथिमातृकाम्बा, एकादशी तिथिमातृकाम्बा, द्वादशी तिथिमातृकाम्बा, त्रयोदशी तिथिमातृकाम्बा, चतुर्दशी तिथिमातृकाम्बा तथा पञ्चदशी तिथिमातृकाम्बा। पारम्परिक रूपसे इनका नामकरण किया गया है:–

प्रतिपदाकी अधिष्ठात्री *कामेश्वरी* तिथिनित्याकला, द्वितीयाकी अधिष्ठात्री *भगमालिनी* तिथिनित्याकला, तृतीयाकी अधिष्ठात्री *नित्यक्लिन्ना* तिथिनित्याकला, चतुर्थीकी अधिष्ठात्री *भेरुण्डा* तिथिनित्याकला, पञ्चमीकी अधिष्ठात्री *वह्निवासिनी* तिथि-नित्याकला, षष्ठीकी अधिष्ठात्री *वज्रेश्वरी* तिथि-नित्याकला, सप्तमीकी अधिष्ठात्री *शिवदूती* तिथि-नित्याकला, अष्टमीकी अधिष्ठात्री *त्वरिता* तिथि-नित्याकला, नवमीकी अधिष्ठात्री *कुलसुन्दरी* तिथिनित्याकला, दशमीकी अधिष्ठात्री *विमला* तिथि-नित्याकला, एकादशीकी अधिष्ठात्री *नीलपताका* तिथिनित्याकला, द्वादशीकी अधिष्ठात्री *विजया* तिथि-नित्याकला, त्रयोदशीकी अधिष्ठात्री *मङ्गला* तिथि-नित्याकला, चतुर्दशीकी अधिष्ठात्री *ज्वालामालिनी* तिथि-नित्याकला तथा पञ्चदशीकी अधिष्ठात्री *विचित्रा* तिथि-नित्याकला।

पन्द्रह तिथियोंके साथ यहाँ पर षोलहवीं तिथिकी भी गणना की गयी है। षोलहवीं तिथिनित्याकला है–*'षोडशी तिथिमातृकाम्बा'।* पारम्परिक रूपसे नामकरणके आधार पर षोडशी तिथिकी अधिष्ठात्रीके रूपमें *श्रीसुन्दरी* तिथि-नित्याकलाको दर्शाया गया है। पन्द्रह तिथियाँ कालकी कलनारूपी व्याकृत कलाएँ हैं; जबकि षोलहवीं तिथि कालकी कलनारूपी अव्याकृत कला है। व्याकृत कलाएँ तभी सक्रिय होती हैं जब उनमें अव्याकृत कला विद्यमान हो। सदैव अव्याकृत कला उन व्याकृत कलाओंमें स्थित रहती है। इस प्रकारसे षोडशी कला श्रीसुन्दरी उन सभी पन्द्रह कलाओंकी आधार शक्ति है। षोडशी कला भी उपाधिके अनुसार तिथि-नित्याकला कहलाती

है। कामेश्वरी आदि सभी षोलह कलाएँ मातृकाम्बा हैं और ये 'तिथि-मातृकाम्बा' कहलाती हैं। 'साक्षात्' शब्द बोध कराता है कि कालकी व्याकृत अवस्थामें सबसे पहले तिथियोंका आकलन किया गया है और अव्याकृत कालसे इनका साक्षात् सम्बन्ध है।

पाशाङ्कुशौ चापशरान्दधानाः—कामेश्वरी आदि सभी षोलह नित्या तिथि-मातृकाम्बाओंने हाथोंमें पाश, अङ्कुश, धनुष तथा बाणका धारण किया है।

चतुर्भुजाः—कामेश्वरी आदि सभी षोलह नित्या तिथि-मातृकाम्बाएँ चार भुजाओंवाली हैं। इसलिए वे 'चतुर्भुजा' कहलाती हैं।

बालरवि-प्रभास्याः—कामेश्वरी आदि सभी षोलह नित्या तिथि-मातृकाम्बाओंके शरीरकी कान्ति उगते हुए सूर्यकी प्रभाके समान लाल वर्णकी है। ये सभी रक्तवर्णा हैं।

तार्तीय-वृत्ते—कामेश्वरी आदि सभी षोलह नित्या तिथि-मातृकाम्बाएँ वृत्तत्रय चक्रके तृतीय वृत्तमें पूर्व आदि दक्षिणावर्त क्रमसे विराजमान हैं।

सततं स्मरामि—मैं पूर्ववर्णित उन कामेश्वरी आदि सभी षोलह नित्या तिथि-मातृकाम्बाओंका स्मरण करता हूँ॥४॥

वृत्तत्रय-चक्रेश्वर्याः त्रिपुरेशिन्याः स्वरूपम्

तप्तस्वर्णनिभां स्मितास्यकमलां विद्यामभीतिं वरं
चाक्षस्त्रग्दधतीं चतुर्भुजधरां चन्द्रार्द्धचूडामणिम्।
शास्त्रस्मार्तमहासुयोनिगरिमासिद्धित्रयैः संयुतां
वृत्ताख्ये त्रिपुरेशिनीं भगवतीं चक्रेश्वरीं नौम्यहम्॥५॥

वृत्तत्रय चक्रेश्वरी त्रिपुरेशिनीका स्वरूप

मैं तपे हुए स्वर्णके समान कान्तिवाली, विहसित मुखवाली, पुस्तक, अभयमुद्रा, वरमुद्रा तथा अक्षमालाका धारण करनेवाली, चार भुजाओंवाली, मस्तक पर चूड़ामणिके रूपमें अर्द्ध चन्द्रका धारण

करनेवाली, स्मार्तशास्त्र, महायोनि मुद्रा तथा गरिमा सिद्धि, इन तीनोंसे युक्त चक्रेश्वरी भगवती त्रिपुरेशिनीको वृत्तत्रय चक्रमें नमस्कार करता हूँ।

विमर्श–अब वृत्तत्रय चक्रमें स्थित चक्रेश्वरी त्रिपुरेशिनीके स्वरूप-का वर्णन किया जा रहा है–तप्तस्वर्णनिभामिति।

तप्तस्वर्णनिभाम्–वृत्तत्रय चक्रकी चक्रेश्वरी त्रिपुरेशिनीके शरीरकी कान्ति तपे हुए स्वर्णकी कान्तिके समान चमकीले पीले वर्णकी है।

स्मितास्यकमलाम्–चक्रेश्वरी त्रिपुरेशिनीका मुखकमल विहसित है। वह सदैव मुसकुराती रहती है। उसके मुखमें सर्वदा प्रसन्नता छायी रहती है।

विद्याम् अभीतिं वरं च अक्षस्रग्दधतीम्–'विद्या' शब्दसे पुस्तकका ग्रहण होता है। चक्रेश्वरी त्रिपुरेशिनीने अपने हाथोंमें पुस्तक, अभय मुद्रा, वर मुद्रा तथा अक्षमालाका धारण किया है।

चतुर्भुजधराम्–चक्रेश्वरी त्रिपुरेशिनीके चार हाथ हैं। इसलिए वह 'चतुर्भुजा' कहलाती है।

चन्द्रार्द्धचूडामणिम्–'चूड़ामणि' कहते हैं–मस्तक पर धारण किये जानेवाले रत्नरूपी अलङ्कारको। वृत्तत्रय चक्रकी चक्रेश्वरी त्रिपुरेशिनीने अपने मस्तक पर चूड़ामणिके रूपमें अर्द्ध चन्द्रका धारण किया है।

शास्त्रस्मार्त-महासुयोनि-गरिमासिद्धित्रयैः संयुताम्–'शास्त्रस्मार्त'का अर्थ है–स्मार्त दर्शन। स्मार्त दर्शनमें आचार-विचारका विशिष्ट विवेचन प्रस्तुत हुआ है। आचार-विचारके पालनसे अन्तःकरण शुद्ध होता है और इन्द्रियाँ संयमित होकर वशमें रहती हैं। वृत्तत्रय चक्रमें दर्शनके रूपमें 'स्मार्त दर्शन' स्थित है। 'महासुयोनि' शब्दसे ग्यारह मुद्राओंमेंसे एक मुद्रा 'महायोनि मुद्रा'का ग्रहण होता है। यहाँ पर चक्रेश्वरी त्रिपुरेशिनी महायोनि मुद्रासे युत है। 'गरिमा-सिद्धि' शब्दसे ग्यारह सिद्धियोंमेंसे एक सिद्धि 'गरिमा सिद्धि'का ग्रहण होता है। 'त्रय' शब्दसे 'स्मार्त दर्शन, महायोनि मुद्रा तथा गरिमा सिद्धि' इन

तीनोंका बोध होता है। इन तीन प्रकारकी विशिष्ट शक्तियाँ वृत्तत्रय चक्रकी चक्रेश्वरी त्रिपुरेशिनीको प्राप्त है। 'साक्षाद्योनि-रसेन्द्रसिद्धिसहितां वश्येन्द्रियैः'का पाठ भी उपलब्ध होता है। यहाँ पर 'साक्षाद्योनि' शब्दसे 'महायोनि मुद्रा'का ग्रहण होता है। 'रसेन्द्र-सिद्धि' शब्दसे 'रसेन्द्र' नामक सिद्धिका ग्रहण होता है। 'इन्द्र' कहते श्रेष्ठको। श्रेष्ठ रस तो 'मोक्ष' होता है। इसलिए वृत्तत्रय चक्रकी उपासनासे मोक्ष-सिद्धिकी प्राप्ति होती है। 'वश्येन्द्रियैः' शब्दसे 'जितेन्द्रिय दर्शन'का ग्रहण होता है। 'जितेन्द्रिय दर्शन'का भाव भी 'स्मार्त दर्शन'के समान इन्द्रिय निग्रहरूप है। इसलिए यहाँ पर दोनोंमें कोई अन्तर नहीं है।

वृत्ताख्ये—श्रीचक्रके अन्तर्गत द्वितीय चक्रके रूपमें वृत्तत्रय चक्र ही त्रिवृत्तक चक्र तथा वृत्तचक्रके नामसे प्रसिद्ध है।

चक्रेश्वरीम्—प्रत्येक चक्रकी एक चक्रेश्वरी होती है। चक्रेश्वरी चक्रकी अधिष्ठात्री शक्ति होती है। विशिष्ट शक्तियोंसे युक्त होकर चक्रेश्वरी अपने चक्रका नियन्त्रण करती है।

त्रिपुरेशिनीं भगवतीम्—श्रीचक्र श्रीमहात्रिपुरसुन्दरीका परम यन्त्र है और दशचक्रात्मक है। इन दश चक्रोंमें वह विभिन्न नामोंसे 'त्रिपुरा' शब्दसे सुशोभित है। वृत्तत्रय चक्रमें 'त्रिपुरेशिनी' नामसे चक्रेश्वरीके रूपमें विराजमान है। 'भगवती' शब्दसे यहाँ पर बोध होता है कि 'भग' कहते हैं—ऐश्वर्य, धर्म, यश, श्री, ज्ञान तथा वैराग्यको। वृत्तत्रय चक्रेश्वरीकी जब भगवतीके रूपमें उपासना करते हैं तो इन छह भगोंकी सिद्धि हो जाती है। इस वृत्तत्रय चक्रको 'त्रैवर्गसाधन चक्र' भी कहते हैं और इस चक्रकी उपासनाका फल भी यही है। साथमें इसकी उपासनासे मोक्ष प्राप्तिकी ओर साधक अग्रसर हो जाता है।

नौमि अहम्—मैं पूर्ववर्णित उस वृत्तत्रय चक्रकी चक्रेश्वरी भगवती त्रिपुरेशिनीको नमस्कार करता हूँ॥५॥

॥ इति द्वितीयावरणम् ॥

तृतीयावरणम्

॥ श्रीगायत्रीब्रह्मविद्यायै नमः ॥

षोडशदल-चक्रस्य निरूपणम्

श्रीसर्वाशापूरकं पद्मरूपं
दिव्यं शुद्धं श्रीनिशानाथतुल्यम्।
रम्यैः पत्रैरिन्दुभिः शोभमानं
वन्दे चक्रं श्रीसुधावर्षकं हि॥१॥

षोडशदल चक्रका निरूपण

मैं सभी आशाओंको पूर्ण करनेवाले, कमलाकार, चन्द्रमाके समान दिव्य तथा शुद्ध षोलह सुन्दर दलोंसे संशोभित, अमृतकी वृष्टि करनेवाले चक्रकी वन्दना करता हूँ।

विमर्श—अब षोडशदल चक्रका निरूपण किया जा रहा है—सर्वाशापूरकमिति।

श्रीसर्वाशापूरकम्—श्रीचक्रमें तीसरा चक्र है—षोडशदल चक्र। यह षोडशदल चक्र 'सर्वाशापूरक चक्र' भी कहलाता है; क्योंकि इसकी उपासनासे समस्त आशाएँ परिपूर्ण हो जाती हैं; साधककी मनः-कामनाकी पूर्ति होती है। इसकी उपासनाका यही फल है।

पद्मरूपम्—यह षोडशदल चक्र पद्माकार है और षोलह दलोंसे युक्त है।

दिव्यं शुद्धं श्रीनिशानाथतुल्यम्—'निशानाथ' कहते हैं—चन्द्रमा-को। यह षोडशदल चक्र चन्द्रमाके समान दिव्य तथा शुद्ध धवल

वर्णवाला है।

रम्यैः पत्रैः इन्दुभिः शोभमानम्–'इन्दु' कहते हैं–चन्द्रमाको। चन्द्रमाकी षोलह कलाएँ हैं। इसलिए यहाँ पर 'इन्दु' शब्दसे षोलह संख्याके संकेतका ग्रहण होता है। यह चक्र सुन्दर षोलह दलोंसे सुशोभित हो रहा है।

चक्रं श्रीसुधावर्षकं हि–'सुधा' कहते हैं–अमृतको। यह षोडशदल चक्र अमृतकी वृष्टि करता है। यह चक्र शीतलताका प्रदान करती है। 'श्रीसुधावर्षक' शब्दसे सङ्केत प्राप्त होता है कि अमृत वृष्टिसे यह चक्र सारस्वत सिद्धिका प्रदान करती है।

वन्दे–मैं पूर्ववर्णित उस सुधावर्षक षोडशदल चक्रकी वन्दना करता हूँ॥१॥

पश्चिमादिवामावर्तेन कामाकर्षिण्यादीनां षोडशनित्यशक्तीनां स्वरूपम्

आदौ कामाकर्षिणीं नित्यशक्तिं
श्रीमद्बुद्ध्याकर्षिणीं नित्यशक्तिम्।
चाहङ्काराकर्षिणीं नित्यशक्तिं
भूयः शब्दाकर्षिणीं नित्यशक्तिम्॥
देवीं स्पर्शाकर्षिणीं नित्यशक्तिं
चान्यां रूपाकर्षिणीं नित्यशक्तिम्।
साक्षान्नित्यां श्रीरसाकर्षिणीं तां
भूयो गन्धाकर्षिणीं नित्यशक्तिम्॥
देवीं चित्ताकर्षिणीं नित्यशक्तिं
श्रीमद्धैर्याकर्षिणीं नित्यशक्तिम्।
श्रीमत्स्मृत्याकर्षिणीं नित्यशक्तिं
श्रीमन्नामाकर्षिणीं नित्यशक्तिम्॥

भूयो बीजाकर्षिणीं नित्यशक्तिं
साक्षादात्माकर्षिणीं नित्यशक्तिम्।
नित्यां शक्तिञ्चामृतकर्षिणीं तां
पश्चाद्देहाकर्षिणीं नित्यशक्तिम्।।
वन्दे श्रीमद्गुप्तयोगिन्य एताः
शुभ्रास्त्र्यक्षाः श्रीनिशानाथभूषाः।
हस्तैः पाशं चाङ्कुशं स्फाटिकञ्च
पूर्णं पात्रं सद्वरं सन्दधानाः।।२।।

पश्चिमादि वामावर्त क्रमसे कामाकर्षिणी आदि षोलह नित्यशक्तियोंका स्वरूप

मैं सबसे पहले कामाकर्षिणी नित्यशक्ति तथा बुद्ध्याकर्षिणी नित्यशक्ति, अहंकाराकर्षिणी नित्यशक्ति, फिर शब्दाकर्षिणी नित्य-शक्ति, देवी स्पर्शाकर्षिणी नित्यशक्ति तथा दूसरी रूपाकर्षिणी नित्य-शक्ति, साक्षात् नित्यशक्ति उस रसाकर्षिणी नित्यशक्ति, फिर गन्धा-कर्षिणी नित्यशक्ति, देवी चित्ताकर्षिणी नित्यशक्ति, धैर्याकर्षिणी नित्यशक्ति, स्मृत्याकर्षिणी नित्यशक्ति, नामाकर्षिणी नित्यशक्ति, फिर बीजाकर्षिणी नित्यशक्ति, साक्षात् आत्माकर्षिणी नित्यशक्ति तथा उस अमृताकर्षिणी नित्यशक्ति, उसके बाद देहाकर्षिणी नित्यशक्तिको जो कि शुभ्र वर्णकी हैं; तीन आँखोंवाली हैं; चन्द्रमाका धारण करनेवाली हैं; हाथोंमें पाश, अंकुश, स्फाटिक पूर्णपात्र तथा वर मुद्राका धारण की हुई हैं; इन गुप्त योगिनियोंकी वन्दना करता हूँ।

विमर्श–अब षोडशदल चक्रमें स्थित कामाकर्षिणी नित्यशक्ति आदि षोलह नित्यशक्तियोंके स्वरूपका वर्णन किया जा रहा है– आदाविति।

आदौ कामाकर्षिणीं नित्यशक्तिम्–षोडशदल चक्रमें कामाकर्षिणी नित्यशक्ति आदि षोलह नित्यशक्तियाँ पश्चिमसे वामावर्त क्रमसे स्थित

हैं। पहली आकर्षिणी नित्यशक्ति है—कामाकर्षिणी नित्यशक्ति। यह 'काम'का आकर्षण करती है। यहाँ पर 'काम' शब्दसे मनका ग्रहण होता है; क्योंकि यह मनकी वृत्ति है। 'नित्यशक्ति' शब्दसे यह बोध होता है कि कामाकर्षिणी नित्यशक्ति आदि षोलह नित्यशक्तियाँ 'नित्या' अर्थात् परदेवताकी शक्ति हैं।

श्रीमद्बुद्ध्याकर्षिणीं नित्यशक्तिम्—दूसरी आकर्षिणी नित्यशक्ति है—बुद्ध्याकर्षिणी नित्यशक्ति। यह नित्यशक्ति 'बुद्धि'का आकर्षण करती है।

अहङ्काराकर्षिणीं नित्यशक्तिम्—तीसरी आकर्षिणी नित्यशक्ति है—अहङ्काराकर्षिणी नित्यशक्ति। यह नित्य शक्ति 'अहङ्कार'का आकर्षण करती है।

भूयः शब्दाकर्षिणीं नित्यशक्तिम्—चौथी आकर्षिणी नित्यशक्ति है—शब्दाकर्षिणी नित्यशक्ति। यह नित्यशक्ति 'शब्द'का आकर्षण करती है। मन, बुद्धि तथा अहङ्कार तत्त्वके पश्चात् 'भूयः' शब्दसे 'शब्द' तन्मात्राका प्रारम्भ होता है।

देवीं स्पर्शाकर्षिणीं नित्यशक्तिम्—पाँचवीं आकर्षिणी नित्यशक्ति है—स्पर्शाकर्षिणी नित्यशक्ति। यह नित्यशक्ति 'स्पर्श' तन्मात्राका आकर्षण करती है। 'देवी' शब्द अलौकिकताका बोध कराता है।

च अन्यां रूपाकर्षिणीं नित्यशक्तिम्—छठवीं आकर्षिणी नित्य-शक्ति है—रूपाकर्षिणी नित्यशक्ति। यह नित्यशक्ति 'रूप' तन्मात्राका आकर्षण करती है। 'अन्या' शब्द पूर्व नित्यशक्तिके स्वरूप कथनके बाद अगली नित्यशक्तिका संकेत करता है।

साक्षान्नित्यां श्रीरसाकर्षिणीं ताम्—सातवीं आकर्षिणी नित्यशक्ति है—रसाकर्षिणी नित्यशक्ति। यह नित्यशक्ति 'रस' तन्मात्राका आकर्षण करती है। 'साक्षात्' शब्द शक्तिका बोधक है।

गन्धाकर्षिणीं नित्यशक्तिम्—आठवीं आकर्षिणी नित्यशक्ति है—गन्धाकर्षिणी नित्यशक्ति। यह नित्यशक्ति 'गन्ध' तन्मात्राका आकर्षण

करती है।

भूयः–'भूयः' शब्दका अर्थ है–पुनः। यह शब्द आगेके तत्त्वोंका निर्देशन कर रहा है।

देवीं चित्ताकर्षिणीं नित्यशक्तिम्–नौवीं आकर्षिणी नित्यशक्ति है–चित्ताकर्षिणी नित्यशक्ति। यह नित्यशक्ति 'चित्त'का आकषर्ण करती है। तन्मात्राओंके पश्चात् अन्य अन्तःकरण वृत्तियोंका निर्देशन किया जा रहा है।

श्रीमद्धैर्याकर्षिणीं नित्यशक्तिम्–दशवीं आकर्षिणी नित्यशक्ति है–धैर्याकर्षिणी नित्यशक्ति। यह आकर्षिणी नित्यशक्ति 'धैर्य'का आकर्षण करती है।

श्रीमत्स्मृत्याकर्षिणीं नित्यशक्तिम्–ग्यारहवीं आकर्षिणी नित्यशक्ति है–स्मृत्याकर्षिणी नित्यशक्ति। यह नित्यशक्ति 'स्मृति'का आकर्षण करती है।

श्रीमन्नामाकर्षिणीं नित्यशक्तिम्–बारहवीं आकर्षिणी नित्यशक्ति है–नामाकर्षिणी नित्यशक्ति। यह नित्यशक्ति अपने नामके अनुरूप 'नाम'के आकर्षण करनेका कार्य करती है।

भूयो बीजाकर्षिणीं नित्यशक्तिम्–तेरहवीं आकर्षिणी नित्यशक्ति है–बीजाकर्षिणी नित्यशक्ति। यह नित्यशक्ति 'बीज'का आकर्षण करती है। 'बीज' कहते हैं–कारणको। यहाँ 'बीज' शब्दसे कारण शरीरका बोध होता है।

साक्षादात्माकर्षिणीं नित्यशक्तिम्–चौदहवीं आकर्षिणी नित्यशक्ति है–आत्माकर्षिणी नित्यशक्ति। यह नित्यशक्ति 'आत्मा'का आकर्षण करती है। 'आत्मा' शब्दसे जीवात्माका बोध होता है।

नित्यां शक्तिं च अमृताकर्षिणीं ताम्–पन्द्रहवीं आकर्षिणी नित्यशक्ति है–अमृताकर्षिणी नित्यशक्ति। यह नित्यशक्ति 'अमृत'का आकर्षण करती है। यहाँ पर 'अमृत' शब्द आयु अर्थात् जीवनका बोध कराता है।

पश्चाद् देहाकर्षिणी नित्यशक्तिम्–षोलहवीं आकर्षिणी नित्यशक्ति है–शरीराकर्षिणी नित्यशक्ति। यह नित्यशक्ति 'देह' अर्थात् शरीरका आकर्षण करती है। इस प्रकारसे एक व्यक्तिके शरीरमें जितने भी तत्त्व रहते हैं उन सभी तत्त्वोंका आकर्षण ये षोलह आकर्षिणी नित्यशक्तियाँ करती हैं। इन आकर्षिणी नित्यशक्तियोंकी उपासनासे व्यक्तिका समग्र विकास होता है।

श्रीमद्गुप्तयोगिन्यः एताः–षोडशदल चक्रमें स्थित ये सभी आकर्षिणी नित्यशक्तियाँ गुप्त योगिनी हैं। भूपुरमें जो योगिनियाँ विराजमान हैं वे प्रकट योगिनी कहलाती हैं; जबकि षोडशदलमें स्थित योगिनियाँ गुप्त योगिनी कहलाती हैं। सभी नित्यशक्तियाँ पञ्चभूतात्मक होनेके कारण योगिनी कहलाती हैं।

शुभ्राः–कामाकर्षिणी नित्यशक्ति आदि सभी षोलह नित्यशक्तियोंके शरीरका वर्ण शुभ्र है। षोडशदल चक्र चन्द्रमाके समान शुक्ल वर्णवाला होनेके कारण इसमें स्थित योगिनियाँ भी शुभ्र वर्णकी हैं।

त्र्यक्षाः–'अक्ष' कहते हैं–आँखको। कामाकर्षिणी नित्यशक्ति आदि सभी षोलह नित्यशक्तियोंकी तीन-तीन आँखें हैं; इसलिए वे 'त्रिनेत्रा' भी कहलाती हैं।

श्रीनिशानाथभूषाः–'निशानाथ' कहते हैं–चन्द्रमाको। कामाकर्षिणी नित्यशक्ति आदि सभी षोलह नित्यशक्तियोंने अपने मस्तक पर चन्द्रमाका धारण किया है।

हस्तैः पाशं च अङ्कुशं स्फाटिकं च पूर्णं पात्रं सद्वरं सन्दधानाः–'स्फाटिकं च पूर्णं पात्रम्' शब्दसे ज्ञात होता है कि पूर्णपात्र स्फटिकसे निर्मित है। कामाकर्षिणी नित्यशक्ति आदि सभी षोलह नित्यशक्तियोंने अपने हाथोंमें पाश, अंकुश, स्फाटिक पूर्णपात्र तथा वरमुद्राका धारण किया है। कामाकर्षिणी नित्यशक्ति आदि सभी षोलह नित्यशक्तियाँ 'चतुर्भुजा' हैं। इनके एक हाथमें पाश है तो दूसरे हाथमें अंकुश है तथा अन्य दो हाथोंमें स्फटिकसे निर्मित पूर्णपात्र तथा वरमुद्रा

सुशोभित हो रहे हैं।

वन्दे—मैं पूर्ववर्णित उन कामाकर्षिणी नित्यशक्ति आदि सभी षोलह नित्यशक्तियोंकी वन्दना करता हूँ॥२॥

षोडशदल-चक्रेश्वरी-त्रिपुरेश्वर्याः स्वरूपम्

तां विद्रावणिकां सुसिद्धिलघिमाबौद्धाख्यशास्त्रैर्युतां
साक्षादिन्दुमरीचिगौरवदनां स्मेराननाम्भोरुहाम्।
पाशं सत्यसृणिं ह्यभीतिवरदे दोर्भिः सदा बिभ्रतीं
वन्देऽहं त्रिपुरेश्वरीं शशिधरां सोमात्मचक्रेश्वरीम्॥३॥

षोडशदल चक्रेश्वरी त्रिपुरेश्वरीका स्वरूप

मैं उस विद्राविणी मुद्रा, लघिमा सिद्धि तथा बौद्ध दर्शनसे युक्त, साक्षात् चन्द्रमाकी किरणोंके समान गौर वर्णकी मुखवाली, विहसित मुखकमलवाली, हाथोंमें सर्वदा पाश, अंकुश, अभय मुद्रा तथा वर मुद्राका धारण करनेवाली, चन्द्रमाका धारण करनेवाली, चन्द्रात्मक षोडशदल चक्रेश्वरी त्रिपुरेश्वरीकी वन्दना करता हूँ।

विमर्श—अब षोडशदल चक्रेश्वरी त्रिपुरेश्वरीके स्वरूपका वर्णन किया जा रहा है—तामिति।

ताम्—'ताम्' शब्द आगे वर्णित षोडशल चक्रेश्वरीके स्वरूपका निर्देशन कर रहा है।

विद्रावणिका-सुसिद्धिलघिमा-बौद्धाख्यशास्त्रैर्युताम्—श्रीषोडशदल चक्रेश्वरी त्रिपुरेश्वरी यहाँ पर एक मुद्रा, एक सिद्धि तथा एक दर्शनकी विशिष्ट शक्तिसे युक्त होकर विराजमान है। 'विद्रावणिका' शब्दसे 'सर्वविद्राविणी मुद्रा'का ग्रहण होता है। यह तीसरी मुद्रा है। 'सुसिद्धि-लघिमा' शब्दसे 'लघिमा सिद्धि'का ग्रहण होता है। यह तीसरी सिद्धि है। 'बौद्धाख्यशास्त्र' शब्दसे 'बौद्ध दर्शन'का ग्रहण होता है। बौद्ध दर्शनके सिद्धान्तके अनुसार सब कुछ क्षणिक है तथा सब शून्य है। यह दर्शन वैराग्यकी वृद्धि करता है।

साक्षादिन्दुमरीचिगौरवदनाम्–पूर्ण चन्द्र सदैव निर्मल रहता है। उसकी किरणें गौर वर्णकी होती हैं। षोडशदल चक्रेश्वरी त्रिपुरेश्वरीका मुख निर्मल चन्द्रकी किरणोंके समान गौर वर्णका है।

स्मेराननाम्भोरुहाम्–'आनन' कहते हैं–मुखको। 'अम्भोरुह' कहते हैं–कमलको। षोडशदल चक्रेश्वरी त्रिपुरेश्वरीका मुखकमल विहसित है। वह प्रसन्न मुखवाली है। चक्रेश्वरी त्रिपुरेश्वरीके मुखमें सर्वदा प्रसन्नता छायी हुई है।

पाशं सत्यसृणिं हि अभीति-वरदे दोर्भिः सदा बिभ्रतीम्–'दोः' कहते हैं–हाथको। षोडशदल चक्रेश्वरी त्रिपुरेश्वरीके हाथोंमें पाश, अंकुश, अभय मुद्रा तथा वर मुद्रा सुशोभित हो रहे हैं। 'सत्य' शब्द संकेत करता है कि यह अंकुश सत्यरूप है।

शशिधराम्–षोडशदल चक्रेश्वरी त्रिपुरेश्वरीने अपने मस्तक पर चन्द्रमाका धारण किया है।

सोमात्मचक्रेश्वरीम्–'सोम' कहते हैं–चन्द्रमाको। षोडशदल चक्र चन्द्रात्मक होनेके कारण इसे 'सोमात्मचक्र' भी कहते हैं। 'सोमात्म' शब्द षोडशदलका संकेत देता है।

त्रिपुरेश्वरीम्–पराशक्ति भगवती श्रीमहात्रिपुरसुन्दरी सर्वाशापूरक षोडशदल चक्रमें चक्रेश्वरीके रूपमें 'त्रिपुरेश्वरी'के नामसे ख्यात है।

वन्दे अहम्–मैं पूर्ववर्णित उस षोडशदल चक्रेश्वरी त्रिपुरेश्वरीकी वन्दना करता हूँ॥३॥

॥ इति तृतीयावरणम् ॥

चतुर्थावरणम्

।। श्रीगायत्रीब्रह्मविद्यायै नमः ।।

अष्टदल-चक्रस्य निरूपणम्

देदीप्यमानं सुरसैन्यपूज्यं
शुभाष्टपत्राब्जमयं मनोज्ञम्।
बन्धूकपुष्पारुणविग्रहं श्री-
सङ्क्षोभणं चक्रमहं भजामि।।१।।

अष्टदल चक्रका निरूपण

मैं देदीप्यमान, देव सैन्योंके द्वारा पूजित, शुभ अष्टदल कमल-वाले, सुन्दर, बन्धूक पुष्पके समान लाल वर्णके विग्रहवाले संक्षोभण चक्रका भजन करता हूँ।

विमर्श–अब अष्टदल चक्रका निरूपण किया जा रहा है–देदीप्यमानमिति।

देदीप्यमानम्–श्रीचक्रमें चौथा चक्र है–अष्टदल चक्र। अष्टदल चक्र अत्यन्त चमकीला है; उद्दीप्त है।

सुरसैन्यपूज्यम्–अष्टदल चक्र देवोंकी सेनाके द्वारा पूजित होता है; क्योंकि इस चक्रकी उपासनासे प्राप्त शक्तिके द्वारा देवोंकी सेना स्वयं संक्षुब्ध नहीं होती है बल्कि शत्रुओंको संक्षुब्ध करनेके लिए समर्थ हो जाती है।

शुभाष्टपत्राब्जमयम्–अष्टदल चक्र शुभ आठ दलोंवाले कमलके आकारवाला है। 'शुभ' शब्द बोध कराता है कि प्रत्येक शुभ कार्यमें

अष्टदल कमलका प्रयोग करने पर कार्यकी सिद्धि होती है।

मनोज्ञम्—अष्टदल चक्र देखनेमें इतना सुन्दर लगता है कि किसी भी देखनेवालेका मन स्वाभाविक रूपसे आकृष्ट हो जाता है।

बन्धूक-पुष्पारुण-विग्रहम्—बन्धूक पुष्प अत्यन्त चमकीले लाल वर्णका होता है। अष्टदल चक्रका वर्ण भी बन्धूक पुष्पके समान चमकीला लाल है।

श्रीसङ्क्षोभणं चक्रम्—अष्टदल चक्रको 'सर्वसङ्क्षोभण चक्र' भी कहते हैं। अष्टदल चक्रकी उपासनासे सभी प्राणियोंको संक्षुब्ध करनेकी शक्ति प्राप्त हो जाती है। ऐसे भी इस चक्रके आकार-प्रकार तथा रंग-रूपको देखकर कोई भी व्यक्ति अनायास ही संक्षुब्ध हो सकता है। अष्टदल चक्रकी उपासनाका फल भी यही है।

अहं भजामि—मैं पूर्ववर्णित उस अष्टदल चक्रका भजन करता हूँ। 'भज सेवायाम्' धातुका प्रयोग विशिष्ट प्रयोजनसे किया गया है कि अष्टदल चक्रकी हृदयसे सेवा करें; उसकी भक्ति करें॥१॥

पश्चिमादिदक्षिणान्तं वायव्यादिनैर्ऋतान्तश्चाष्टदिक्षु अनङ्गकुसुमादीनामष्टदेवीनां स्वरूपम्

आदावनङ्गकुसुमां स्मरमेखलाम्बां
साक्षादनङ्गमदनां मदनातुराञ्च।
रेखान्तथा मदनवेगिनिकाख्यदेवीं
माराङ्कुशां मदनमालिनिकां समक्षम्॥
इत्थं स्मितास्त्रिनयना नवयौवनाढ्या
बन्धूकपुष्पसदृशारुणरम्यदेहाः।
नीलाब्जनीलमणिपाशसृणीन्दधाना
अष्टौ हि गुप्ततरयोगिनिकाः स्मरामि॥२॥

अष्टदल चक्रमें पश्चिमसे दक्षिण तथा वायव्यसे नैर्ऋत आठों दिशाओंमें अनङ्गकुसुमा आदि आठ देवियोंका स्वरूप

मैं सबसे पहले अनङ्गकुसुमा, माता अनङ्गमेखला, साक्षात् अनङ्गमदना और अनङ्गमदनातुरा, उस प्रकार अनङ्गरेखा, अनङ्गवेगिनी नामकी देवी, अनङ्गाङ्कुशा तथा अनङ्गमालिनी जो सभी विहसित मुखवाली, तीन आँखोंवाली, नवयुवतियाँ हैं; बन्धूक पुष्पके समान लाल वर्णके सुन्दर शरीरवाली हैं; नील-कमल, नील-मणि, पाश तथा अङ्कुशका धारण करनेवाली हैं; इन आठ गुप्ततर योगिनियोंका स्मरण करता हूँ।

विमर्श—अब अष्टदल चक्रमें स्थित अनङ्गकुसुमा आदि आठ अनङ्ग देवियोंके स्वरूपका वर्णन किया जा रहा है—आदाविति।

आदौ—'आदौ'का अर्थ है—प्रारम्भमें। 'आदि' शब्द पूर्ववर्ती अङ्क-का बोध कराता है। अष्टदल चक्रमें अनङ्गकुसुमा आदि सभी आठ अनङ्गदेवियाँ पश्चिमसे दक्षिण तक चार दिशाओंके क्रमसे तथा वायव्यसे नैर्ऋत पर्यन्त चार कोणोंके क्रमसे आठों दिशाओंमें विराजमान हैं। ये सब अनङ्गदेवियाँ कहलाती हैं।

अनङ्गकुसुमाम्—पहली अनङ्गदेवी है—अनङ्गकुसुमा देवी। 'अनङ्ग' कहते हैं—अङ्गहीनको। 'कुसुम' कहते हैं—पुष्पको। कामदेवको अनङ्ग कहते हैं। भगवान शिवके द्वारा भस्मीभूत कामदेवको पत्नी रतिकी प्रार्थना पर जीवन प्राप्त कराया गया है। पुनर्जीवित कामदेव शरीर-हीन है। वह अनङ्ग रूपमें प्रत्येक प्राणीमें विराजमान है। कामदेवको प्रेरित करनेवाली शक्तियाँ कार्यके अनुसार भिन्न-भिन्न रूपमें कार्य करती हैं। कार्यके अनुसार उनका नामकरण भी हुआ है जो कि पूर्णतया सार्थक है। कामदेवके बाणको 'पुष्पबाण' कहते हैं। कामदेव सर्वप्रथम पुष्प-बाणका प्रयोग कर प्राणीके मनमें कामकी भावनाको जागृत करता है। उसी प्रकार यहाँ पर अनङ्गकुसुमा देवी सबसे पहले पुष्पबाणोंके द्वारा प्राणीके मनको संक्षुब्ध कर देती है। पुष्पको कामके प्रथम अस्त्रके रूपमें प्रदर्शित किया गया है। पुष्पकी आकर्षिणी कोमलता ही इस अस्त्रकी विशेषता है। इसलिए यहाँ पर नामानुरूप अनङ्गकुसुमा देवीको अनङ्गदेवियोंमें प्रथम स्थान प्राप्त है।

स्मरमेखलाम्बाम्–'स्मर' कहते हैं–अनङ्गको। दूसरी अनङ्ग देवी है–अनङ्गमेखला देवी। 'मेखला' कहते हैं–वृत्ताकार वलयको। यह अनङ्गदेवी कामकी मेखलाके अन्दर प्राणीको सीमित कर देती है। प्राणी कामके अतिरिक्त कुछ भी नहीं सोच पाता है।

साक्षादनङ्गमदनाम्–तीसरी अनङ्गदेवी है–अनङ्गमदना देवी। जब प्राणी कामकी मेखलाके अन्दर आ जाता है तब अनङ्गमदना देवी उसे कामग्रस्त बना देती है। 'मदन' शब्द कामग्रस्तताका सूचक है। 'साक्षात्' शब्द पूर्णरूपसे एकमात्र कामसे ग्रस्त करानेकी शक्तिका बोध कराता है।

मदनातुरां च–चौथी अनङ्गदेवी है–अनङ्गमदनातुरा देवी। यह अनङ्गमदनातुरा देवी कामग्रस्त प्राणीको कामकी तात्कालिक पूर्तिके लिए आतुर बना देती है।

रेखां तथा–पाँचवी अनङ्गदेवी है–अनङ्गरेखा देवी। 'तथा' शब्द-से पूर्ववत् 'अनङ्ग' शब्दका ग्रहण होता है। यह अनङ्गरेखा देवी कामग्रस्त आतुर प्राणीको कामकी पूर्तिके लिए मेखलासे बाहर कर आगे बढ़नेके लिए रेखाके समान प्रेरित करती है। रेखा जिस प्रकारसे एक दिशामें बढ़ती है उसी प्रकार कामी कामकी पूर्तिको एकमात्र लक्ष्य मानकर अग्रसर होता है।

मदनवेगिनीकाख्यदेवीम्–छठवीं अनङ्गदेवी है–अनङ्गवेगिनी देवी। यह अनङ्गवेगिनी देवी कामीको लक्ष्य प्राप्त करनेकी गतिमें शीघ्रता प्रदान करती है। कामीमें कामका वेग तीव्र हो जाता है।

माराङ्कुशाम्–सातवीं अनङ्गदेवी है–अनङ्गाङ्कुशा देवी। 'मार' कहते हैं–अनङ्गको। यह अनङ्गाङ्कुशा देवी कामीके कामवेगमें अङ्कुश लगाती है। इसके द्वारा कामीके कामवेगका नियंत्रण होता है।

मदनमालिनिकाम्–आठवीं अनङ्गदेवी है–अनङ्गमालिनी देवी। यह अनङ्गमालिनी देवी कामीके कामकी चिन्तनधाराको प्रवाहित करती रहती है। कामी सदैव अनेक प्रकारसे कामकी कल्पना करता रहता

है। अन्तमें वह संक्षुब्ध होकर कामी बन जाता है।

समक्षम्—अनङ्गकुसुमा देवी आदि सभी आठ अनङ्गदेवियाँ सामनेसे वामावर्त क्रमसे विराजमान हैं। पश्चिमसे दक्षिण तथा वायव्यसे नैर्ऋत्य पर्यन्त स्थित हैं। इनकी उपासना इसी क्रमसे की जाती है।

इत्थम्—'इत्थम्' शब्दका अर्थ है—इस प्रकार। यह शब्द पूर्व-वर्णित आठों अनङ्गदेवियोंका सम्बन्ध आगेसे जोड़ता है।

स्मिताः—अनङ्गकुसुमा आदि सभी आठों देवियाँ विहसित मुख-वाली हैं। यहाँ पर 'स्मित' शब्दसे मुखका स्वतः बोध हो जाता है। उनके मुखमें सर्वदा प्रसन्नता झलक रही है।

त्रिनयनाः—सभी अनङ्गकुसुमा आदि आठ देवियाँ तीन आँखों-वाली हैं। वे 'त्रिनेत्रा' कहलाती हैं।

नवयौवनाढ्याः—सभी अनङ्गकुसुमा आदि आठों देवियाँ नव यौवनकी अवस्थासे युक्त हैं। वे सब नवयुवतियाँ हैं।

बन्धूकपुष्पसदृशारुणरम्यदेहाः—बन्धूक पुष्प चमकीले लाल वर्णका होता है; मनको लुभाता है। सभी अनङ्गकुसुमा आदि आठों देवियोंके शरीर बन्धूक पुष्पके समान चटकीले लाल वर्णके हैं और अधिक सुन्दर लग रहे हैं।

नीलाब्ज-नीलमणि-पाश-सृणीन्दधानाः—अनङ्गकुसुमा आदि सभी आठों देवियोंने अपने हाथोंमें नीलकमल, नीलमणि, पाश तथा अंकुशका धारण किया है। वे सब 'चतुर्भुजा' हैं।

अष्टौ हि गुप्ततर-योगिनिकाः—अनङ्गकुसुमा आदि सभी आठों देवियाँ योगिनी कहलाती हैं। ये गुप्ततर योगिनियाँ हैं। 'गुप्त' शब्दसे 'तरप्' प्रत्ययका योग होनेसे संकेत मिलता है कि षोडशदल चक्रमें स्थित कामाकर्षिणी नित्यशक्ति आदि षोलह गुप्त योगिनियोंकी अपेक्षा अनङ्गकुसुमा आदि आठों योगिनियाँ अधिक गुप्त हैं। ये गुप्ततर योगिनियाँ पूर्णरूपसे मानसिक क्षोभको उत्पन्न करनेमें समर्थ हैं।

स्मरामि–मैं पूर्ववर्णित उन अनङ्गकुसुमा आदि आठों देवियोंका स्मरण करता हूँ। 'स्मृ' धातुकी विशेषता है कि यह मानसिक क्रियाकी ही उत्पत्ति करती है। यह क्षोभण क्रिया मानसिक ही तो होती है॥२॥

अष्टदल-चक्रेश्वर्याः त्रिपुरसुन्दर्याः स्वरूपम्

सर्वाकर्षिणिका-सुसिद्धिमहिमा-श्रीगाणपत्यैर्युता
विद्याक्षाभयसद्वराङ्कितकरा नेत्रत्रयोद्भासिता।
ध्येया सा किल सुन्दरी त्रिपुरयुक् व्योमात्मचक्रेश्वरी॥३॥

अष्टदल चक्रेश्वरी त्रिपुरसुन्दरीका स्वरूप

मैं सर्वाकर्षिणी मुद्रा, महिमा सिद्धि तथा गाणपत्य दर्शनकी विशिष्ट शक्तिसे युक्त, पुस्तक, अक्षमाला, अभय मुद्रा तथा वर मुद्रा-से युक्त हाथोंवाली, तीन आँखोंसे सुशोभित, आकाशात्मक अष्ट-दल चक्रकी प्रसिद्ध चक्रेश्वरी उस त्रिपुरसुन्दरीका ध्यान करता हूँ।

विमर्श–अब अष्टदल चक्रेश्वरी त्रिपुरसुन्दरीके स्वरूपका वर्णन किया जा रहा है–सर्वाकर्षिणिकासुसिद्धिमहिमाश्रीगाणपत्यैर्युतेति।

सर्वाकर्षिणिका-सुसिद्धिमहिमाश्रीगाणपत्यैः युता–अष्टदल चक्रेश्वरी त्रिपुरसुन्दरी भी एक मुद्रा, एक सिद्धि तथा एक दर्शनके साथ यहाँ विराजमान है। यहाँ पर मुद्राओंमें सर्वाकर्षिणी मुद्रा, सिद्धियोंमें महिमा सिद्धि तथा दर्शनोंमें गाणपत्य दर्शनका ग्रहण होता है।

विद्याक्षाभयसद्वराङ्कितकरा–'विद्या' कहते हैं–पुस्तकको। अष्टदल चक्रेश्वरीने अपने हाथोंमें पुस्तक, अक्षमाला, अभय मुद्रा तथा वर मुद्राका धारण किया है। वह 'चतुर्भुजा' है।

नेत्रत्रयोद्भासिता–अष्टदल चक्रेश्वरी त्रिपुरसुन्दरीकी तीन आँखें हैं। वह 'त्रिनेत्रा' कहलाती है।

व्योमात्मचक्रेश्वरी–'व्योम' कहते हैं–आकाशको। अष्टदल चक्रको आकाशात्मक चक्र भी कहते हैं। यह अष्टदल चक्र आकाश तत्त्व

प्रधान है।

किल सुन्दरी त्रिपुरयुक्–अष्टदल चक्रकी प्रसिद्ध चक्रेश्वरी त्रिपुरसुन्दरी है। त्रिपुरसुन्दरीके नामसे 'परा शक्ति' यहाँ पर विराजमान है। 'किल' शब्द प्रसिद्धार्थक है।

सा ध्येया–यहाँ पर कर्मवाच्यका प्रयोग किया गया है। 'ध्येय' शब्दका अर्थ है–ध्यानके योग्य; वह मेरे द्वारा ध्यान किये जाने योग्य है; जबकि 'मैं उसका ध्यान करता हूँ' यह कर्तृवाच्य प्रयोग है। यहाँ पर साधक एक ही व्यक्ति है और अहंकर्तृक है। मैं उस पूर्ववर्णित अष्टदल चक्रेश्वरी त्रिपुरसुन्दरीका ध्यान करता हूँ॥३॥

॥ इति चतुर्थावरणम् ॥

पञ्चमावरणम्

॥ श्रीगायत्रीब्रह्मविद्यायै नमः ॥

चतुर्दशार-चक्रस्य निरूपणम्

सिन्दूरवर्णान्वितचक्रमन्यच्
चतुर्दशारैश्च विनिर्मितं च।
सौभाग्यदं देवगणैः सदार्च्यं
स्मरामि भक्त्या मनसा सदैव॥१॥

चतुर्दशार चक्रका निरूपण

मैं अन्य एक चक्र जो कि चतुर्दशारसे विनिर्मित, सिन्दूर वर्णसे युक्त, सौभाग्यको देनेवाला तथा देवगणोंके द्वारा सर्वदा पूज्य है उसका निरन्तर भक्तिपूर्वक मनसे स्मरण करता हूँ।

विमर्श—अब चतुर्दशार चक्रका निरूपण किया जा रहा है—सिन्दूरवर्णान्वितचक्रमिति।

सिन्दूरवर्णान्वितचक्रम्—श्रीचक्रमें पाँचवा चक्र है—चतुर्दशार चक्र। इस चक्रका वर्ण सिन्दूरके समान लाल है।

अन्यत्—'अन्यत्'का अर्थ है—दूसरा। 'अन्यत्' शब्द चतुर्थावरणमें वर्णित वास्तविक अष्टदल चक्रसे सम्बन्धका बोध कराता है। अष्टदल चक्रके बाद चतुर्दशार चक्रका क्रम आता है।

चतुर्दशारैः च विनिर्मितं च—चौदह अराओंसे विशिष्ट रूपसे विनिर्मित होनके कारण यह चक्र 'चतुर्दशार चक्र' कहलाता है।

सौभाग्यदम्—चतुर्दशार चक्रको 'सर्वसौभाग्यदायक चक्र' भी कहते हैं। चतुर्दशार चक्रकी उपासनासे सर्वसौभाग्यकी प्राप्ति होती

है। इस चक्रकी उपासनाका फल भी 'सौभाग्य'की प्राप्ति ही है। सौभाग्यदायक होना इसका माहात्म्य है।

देवगणैः सदार्च्यम्—प्रत्येक व्यक्ति अपने सौभाग्यकी कामना करता है। देवगण भी अपने सौभाग्य की कामना करते हैं अतः यह चक्र देवगणोंके द्वारा सर्वदा पूज्य है।

स्मरामि भक्त्या मनसा सदैव—'भक्त्या' शब्द समर्पण पूर्वक अर्चना करनेका संकेत देता है; क्योंकि देवगणोंके द्वारा भी जो पूज्य है वह सामान्य भाव मात्रसे कैसे प्राप्य हो सकता है? 'मनसा' शब्द भी हृदयसे एकाग्रचित्त होकर स्मरण करने हेतु निर्देश देता है। मैं सदैव भक्तिपूर्वक मनसे उस पूर्ववर्णित चतुर्दशार चक्रका स्मरण करता हूँ॥१॥

पश्चिमादिवामावर्तेन सर्वसङ्क्षोभिण्यादीनां चतुर्दशशक्तीनां स्वरूपम्

सङ्क्षोभिणीं विद्रवणात्मशक्तिं
चाकर्षिणीं चन्द्रविवर्द्धिनीञ्च।
सम्मोहिनीं स्तम्भनकारिणीं तां
विजृम्भिणीं सर्ववशङ्करीञ्च॥
श्रीरञ्जिनीं श्रीमदमादिनीञ्च
ह्यर्थांश्च सर्वांश्च सुसाधिनीं ताम्।
सम्पत्तिपूर्णामथ मन्त्रदेहां
द्वन्द्वक्षयङ्कारिणिकाभिधां च॥
दिक्तुर्यसङ्ख्या इतरा हि रक्ताः
श्रीसम्प्रदायाभिधयोगिनीस्ताः।
पाशाङ्कुशौ दर्पणपानपात्रे
करैर्दधानाः सततं नमामि॥२॥

पश्चिमादि वामावर्त क्रमसे सर्वसंक्षोभिणी आदि चौदह शक्तियोंका स्वरूप

मैं सर्वसंक्षोभिणी, सर्वविद्राविणी, सर्वाकर्षिणी, सर्वाह्लादिनी, सर्वसम्मोहिनी, सर्वस्तम्भिनी, सर्वजृम्भिणी, सर्ववशङ्करी, सर्वरञ्जनी, सर्वोन्मादिनी, सर्वार्थसाधिनी, सर्वसम्पत्तिपूर्णा, सर्वमन्त्रमयी तथा सर्व-द्वन्द्वक्षयङ्कारिणी नामक शक्तियाँ जो कि रक्त वर्णवाली तथा हाथोंसे पाश, अङ्कुश, दर्पण और पानपात्रका धारण करनेवाली हैं, उन चौदह सम्प्रदाय योगिनियोंको निरन्तर नमस्कार करता हूँ।

विमर्श—अब चतुर्दशार चक्रमें स्थित सर्वसंक्षोभिणी आदि चौदह शक्तियोंके स्वरूपका वर्णन किया जा रहा है—सङ्क्षोभिणीमिति।

सङ्क्षोभिणीम्—चतुर्दशार चक्रमें पहली शक्ति है—सर्वसङ्क्षोभिणी शक्ति। यह शक्ति शान्त चित्तवाले सभी व्यक्तियोंको संक्षुब्ध बना देती है।

विद्रवणात्म-शक्तिम्—चतुर्दशार चक्रमें दूसरी शक्ति है—सर्व-विद्राविणी शक्ति। 'विद्रवण' कहते हैं—अपने स्वरूपसे गिर जानेको। सभी व्यक्तियोंका विद्रवण करनेवाली शक्ति सर्वविद्राविणी शक्ति कहलाती है।

आकर्षिणीम्—तीसरी शक्ति है—सर्वाकर्षिणी शक्ति। यह शक्ति सबका आकर्षण करती है।

चन्द्रविवर्द्धिनीं च—चौथी शक्ति है—सर्वाह्लादिनी शक्ति। 'चन्द्र-विवर्द्धिनी' शब्दसे चन्द्रमामें स्थित आह्लादिनी शक्तिका बोध होता है। यह शक्ति सबको आह्लादित करती रहती है।

सम्मोहिनीम्—पाँचवीं शक्ति है—सर्वसम्मोहिनी शक्ति। यह शक्ति सबको मोहित करनमें समर्थ है।

स्तम्भनकारिणीं ताम्—छठवीं शक्ति है—सर्वस्तम्भिनी शक्ति। यह शक्ति सबकी गतिका स्तम्भन करती है; चाहे वह कायिक, वाचिक अथवा मानसिक क्यों न हो।

विजृम्भिणीम्—सातवीं शक्ति है—सर्वविजृम्भिणी शक्ति। 'जृम्भण'

कहते हैं–जम्हाईको। जब शरीरमें आलस्य आता है तो स्वाभाविक रूपसे यह निद्रा आनेकी पूर्वावस्था होती है। निद्रा आनेकी पूर्वावस्था ही जम्हाईका रूप ले लेती है। ऐसी स्थितिमें व्यक्ति अपनेको विचार करनमें असमर्थ पाता है। सर्वजृम्भिणी शक्ति सबको जृम्भित करनेमें समर्थ है।

सर्ववशङ्करीं च–आठवीं शक्ति है–सर्ववशङ्करी शक्ति। यह शक्ति व्यक्तिकी बुद्धिवृत्तिको अपने वश कर लेती है जिससे व्यक्ति स्वतन्त्र रूपसे निर्णय लेनेमें असमर्थ हो जाता है।

श्रीरञ्जिनीम्–नौवीं शक्ति है–सर्वरञ्जिनी शक्ति। 'रञ्जन' कहते हैं–रागको। आसक्ति ही राग है। सर्वरञ्जिनी शक्ति व्यक्तिको इस प्रकारसे रागी बना देती है जिससे व्यक्ति विषयमें आसक्त होकर हिताहितका विचार करनेमें सक्षम नहीं हो पाता है और वह विषयको छोड़नेमें सदैव असमर्थ रहता है।

श्रीमदमादिनीं च–दशवीं शक्ति है–सर्वोन्मादिनी शक्ति। यह शक्ति व्यक्तिके मनको इस प्रकारसे उन्मादित बना देती है कि व्यक्ति अभीष्ट विषयकी प्राप्तिके लिए उन्मादी बन जाता है; कामनाकी पूर्तिके लिए कुछ भी अहित तथा अवैध कार्यको भी करनेमें वह संकोच नहीं करता है।

हि अर्थान् च सर्वान् च सुसाधिनीं ताम्–ग्यारहवीं शक्ति है–सर्वार्थसाधिनी शक्ति। 'अर्थ' कहते हैं–प्रयोजनको। यह शक्ति व्यक्तिके सभी प्रयोजनोंको सिद्ध करती है। 'प्रयोजन' शब्दसे व्यक्तिकी सभी प्रकारकी कामनाओंका संकेत मिलता है। सर्वार्थसाधिनी शक्ति मानसिक प्रयोजनकी सिद्धिका प्रदान करती है।

सम्पत्तिपूर्णाम्–बारहवीं शक्ति है–सर्वसम्पत्तिपूर्णा शक्ति। यह शक्ति व्यक्तिको सभी प्रकारकी भौतिक सम्पत्तियोंका प्रदान करती है। 'सम्पत्ति' शब्दसे भौतिक प्रयोजनकी सिद्धिका ग्रहण होता है।

अथ मन्त्रदेहाम्–तेरहवीं शक्ति है–सर्वमन्त्रमयी शक्ति। यह शक्ति

मन्त्रस्वरूपिणी होनेके कारण सभी प्रकारके मन्त्रोंकी सिद्धि देती है।

द्वन्द्वक्षयङ्कारिणिकाभिधां च—चौदहवीं शक्ति है—सर्वद्वन्द्वक्षयंकरी शक्ति। 'द्वन्द्व' कहते हैं—जोड़ेको। जहाँ दो प्रकारके विचार एक साथ उपस्थित हों और वे दोनों इस प्रकारसे परस्पर मिले हुए हों कि उनका एक दूसरेसे अलग किया जाना सम्भव नहीं है तो ऐसी परिस्थितिमें यह दयामयी सर्वद्वन्द्वक्षयंकरी शक्ति सभी प्रकारके द्वन्द्वोंको समाप्त कर देती है। व्यक्ति सब प्रकारकी शंकाओंसे दूर होकर निर्णय लेनेमें सक्षम हो जाता है।

दिक्तुर्यसङ्ख्याः इतराः हि—'दिक्' कहते हैं—दिशाको। दिशाओंकी संख्या दश है। 'दिक्' शब्दसे दश संख्याका संकेत प्राप्त होता है। 'तुर्य' कहते हैं—चतुर्थको। 'तुर्य' शब्दसे चार संख्याका संकेत मिलता है। इस प्रकारसे दोनों मिलकर चौदह संख्याका बोध कराते हैं। 'इतर' शब्द यहाँ पर अन्यार्थक है और अष्टदल चक्रमें पूर्ववर्णित शक्तियोंसे सम्बन्ध दिखाता है; जिस प्रकार 'अन्यत्' शब्द चतुर्दशार चक्रका सम्बन्ध अष्टदल चक्रसे दिखाता है। 'इतर' शब्द यह भी भेद दिखाता है कि अष्टदल चक्रमें वर्णित शक्तियाँ गुप्ततर योगिनियाँ हैं; जबकि चतुर्दशार चक्रमें वर्णित शक्तियाँ सम्प्रदाय योगिनियाँ हैं। 'हि' शब्द का अर्थ है—क्योंकि। 'हि' शब्द भिन्नार्थकके प्रतिपादनमें हेतुकी आकांक्षाका प्रदर्शन करता है।

श्रीसम्प्रदायाभिधयोगिनीः—चतुर्दशार चक्रमें सर्वसंक्षोभिणी आदि चौदह शक्तियाँ पश्चिमसे वामावर्त क्रमसे विराजमान हैं। ये सभी शक्तियाँ सम्प्रदाय योगिनी कहलाती हैं। 'सम्प्रदाय' कहते हैं—परम्पराको। ये चौदह योगिनियाँ पारम्परिक क्रमसे इस चक्रमें आयी हुई हैं। इनकी उपासना भी पारम्परिक क्रमसे होती है। ये सभी शक्तियाँ पञ्चभूतात्मक होनेके कारण योगिनी कहलाती हैं।

ताः पाशाङ्कुशौ दर्पण-पानपात्रे करैः दधानाः—सर्वसंक्षोभिणी आदि सभी चौदह शक्तियाँ 'चतुर्भुजा' हैं। उनके चारों हाथोंमें पाश, अङ्कुश, दर्पण तथा पानपात्र सुशोभित हो रहे हैं।

सततं नमामि–मैं पूर्ववर्णित सर्वसंक्षोभिणी आदि सभी चौदह शक्तियोंको निरन्तर नमस्कार करता हूँ।।२।।

चतुर्दशार-चक्रेश्वर्याः त्रिपुरवासिन्याः स्वरूपम्

सिन्दूरारुणविग्रहा स्मितमुखी दिव्यैश्चतुर्भिर्भुजैः
विद्यास्फाटिकमालिकाभयवरान् संविभ्रती त्र्यम्बका।
सिद्धीशित्व-वशङ्करी-विविधषण्न्यायादिशास्त्रैर्युता
ध्येया सा त्रिकवासिनी त्रिपुरयुङ् मायात्मचक्रेश्वरी।।३।।

चतुर्दशार चक्रेश्वरी त्रिपुरवासिनीका स्वरूप

मैं सिन्दूरके समान लाल वर्णके शरीरका धारण करनेवाली, विहसित मुखवाली, दिव्य चार भुजाओंसे पुस्तक, स्फाटिक मालिका, अभय मुद्रा तथा वर मुद्राका धारण करनेवाली, तीन आँखोंवाली, ईशिता सिद्धि, सर्ववशङ्करी मुद्रा तथा विविध छह न्याय आदि शास्त्रोंसे युक्त, मायात्मक चक्रकी चक्रेश्वरी उस त्रिपुरवासिनीका ध्यान करता हूँ।

विमर्श–अब चतुर्दशार चक्रेश्वरी त्रिपुरवासिनीके स्वरूपका वर्णन किया जा रहा है–सिन्दूरारुणविग्रहेति।

सिन्दूरारुण-विग्रहा–चतुर्दशार चक्रेश्वरी त्रिपुरवासिनीके शरीरकी कान्ति सिन्दूरके समान लाल वर्णकी है। वह सिन्दूरवर्णा है।

स्मितमुखी–चतुर्दशार चक्रेश्वरी त्रिपुरवासिनी विहसित मुखवाली है। उसके मुखमें प्रसन्नता झलक रही है।

दिव्यैः चतुर्भिः भुजैः विद्यास्फाटिकमालिकाभयवरान् संविभ्रती–चतुर्दशार चक्रेश्वरी त्रिपुरवासिनीके दिव्य चार भुजाएँ हैं। इसलिए वह 'चतुर्भुजा' है। उसके चारों हाथोंमें पुस्तक, स्फाटिक मालिका, अभय मुद्रा तथा वर मुद्रा सुशोभित हो रहे हैं।

त्र्यम्बका–'अम्बक' कहते हैं–नेत्रको। चतुर्दशार चक्रेश्वरी त्रिपुरवासिनी तीन आँखोंवाली है। वह 'त्रिनेत्रा' कहलाती है।

सिद्धीशित्व-वशङ्करी-विविधषण्न्यायादि-शास्त्रैर्युता—चतुर्दशार चक्रेश्वरी त्रिपुरवासिनी एक सिद्धि, एक मुद्रा तथा एक दर्शनसे युक्त है। यहाँ पर सिद्धियोंसे ईशित्व सिद्धि, मुद्राओंसे सर्ववशङ्करी मुद्रा तथा दर्शनोंसे षड्दर्शनोंका ग्रहण होता है। प्रयुक्त 'विविध' शब्दसे दर्शनोंके सिद्धान्तोंमे अनेकताका बोध हो रहा है जो कि छह संख्या-का द्योतक है। न्याय आदि षड्दर्शन हैं—न्याय, वैशेषिक, मीमांसा, सांख्य, योग तथा वेदान्त। इन छह दर्शनोंके छह दार्शनिक आचार्य भी हुए हैं; जैसे—न्यायका गौतम, वैशेषिकका कणाद, मीमांसाका जैमिनी, सांख्यका कपिल, योगका पतञ्जलि तथा वेदान्तका महर्षि व्यास हैं। इस प्रकारसे चक्रेश्वरी त्रिपुरवासिनी ईशित्वसिद्धि, सर्व-वशङ्करी मुद्रा तथा षड्दर्शनोंसे युक्त है।

त्रिकवासिनी त्रिपुरयुक्—'त्रिक' कहते हैं—पर, परापर तथा अपर-को। यह जगत् 'त्रिक' है। इस 'त्रिक'में वास करनेवाली इच्छा-ज्ञान-क्रियात्मिका शक्ति 'त्रिपुरवासिनी' कहलाती है।

मायात्मचक्रेश्वरी—चतुर्दशार चक्र मायात्मक है। 'माया' कहते हैं—माया तत्त्वको। चतुर्दशार चक्र मायातत्त्व प्रधान है। इस चक्रमें रहने-वाली चक्रेश्वरीको 'मायात्म चक्रेश्वरी' कहा गया है। मायाका सम्बन्ध परम्परासे है। इसलिए इस चक्रमें सम्प्रदाय योगिनियाँ रहती हैं। यही रहस्य है।

सा ध्येया—मैं पूर्ववर्णित उस चतुर्दशार चक्रेश्वरी त्रिपुरवासिनीका ध्यान करता हूँ॥३॥

॥ इति पञ्चमावरणम् ॥

षष्ठावरणम्

॥ श्रीगायत्रीब्रह्मविद्यायै नमः ॥

बहिर्दशार-चक्रस्य निरूपणम्

चक्रं चान्यं दाडिमीपुष्पवर्णं
देदीप्ताभं श्रीदशाराङ्किताङ्गम्।
तत्सर्वाढ्यं ह्यर्थसाध्याभिधञ्च
वन्दे जोषं वायुतत्त्वात्मकाढ्यम्॥१॥

बहिर्दशार चक्रका निरूपण

मैं एक अन्य चक्रकी हृदयसे वन्दना करता हूँ; जो कि दाड़िम पुष्पके समान लाल वर्णवाला, दीप्त कान्तिवाला, दश अराओंसे अङ्कित अङ्गवाला, सर्वार्थसाधक तथा वायुतत्त्वात्मक है।

विमर्श–अब बहिर्दशार चक्रका निरूपण किया जा रहा है–चक्रमिति।

चक्रं च अन्यम्–श्रीचक्रमें छठवाँ चक्र है–बहिर्दशार चक्र। चतुर्दशार चक्रके निरूपणके बाद एक दूसरे चक्र 'बहिर्दशार चक्र'का निरूपण किया जा रहा है जो कि इस आवरणमें आगे वर्णित विशेषताओंसे युक्त है।

दाडिमीपुष्पवर्णम्–'दाडिम' कहते हैं-अनारको। बहिर्दशार चक्रका वर्ण दाड़िम पुष्पोंके समान लाल है।

देदीप्ताभम्–'आभा' कहते हैं–कान्तिको। बहिर्दशार चक्रकी कान्ति अत्यन्त दीप्त चमकीली है।

श्रीदशाराङ्कितांङ्गम्–बहिर्दशार चक्रके दश अङ्ग दश अराओंसे विनिर्मित हैं। इसलिए यह 'दशार चक्र' कहलाता है। श्रीचक्रके अन्तर्गत दो दशार चक्र आते हैं। भूपुरसे बिन्दु तकके क्रममें पहले पड़नेवाले चक्रको 'बहिर्दशार चक्र' तथा ठीक् उसके बाद पड़नेवाले चक्रको 'अन्तर्दशार चक्र' कहते हैं। प्रस्तुत चक्र इस क्रममें पहले बाह्य चक्रके रूपमें आनेके कारण इसे 'बहिर्दशार चक्र' कहते हैं।

तत्सर्वाढ्यं हि अर्थसाध्याभिधं च–'तत्' शब्दके प्रयोगसे पूर्वोक्त बहिर्दशार चक्रका ग्रहण होता है। बहिर्दशार चक्रका नाम 'सर्वार्थ-साधक चक्र' भी है; क्योंकि यह चक्र सभी प्रयोजनोंको सिद्ध करता है। इस चक्रका फल भी यही है; क्योंकि इस चक्रमें स्थित शक्तियाँ सभी प्रयोजनोंको सिद्ध करती हैं। इसलिए साधककी मनःकामना पूरी हो जाती है।

वायुतत्त्वात्मकाढ्यम्–बहिर्दशार चक्र वायु तत्त्वात्मक है। इसमें वायु तत्त्वकी प्रधानता रहती है।

जोषं वन्दे–'जोष'का अर्थ है–चुपचाप अर्थात् मानसिक। मनसे किया गया कार्य सदैव सफल होता है। इसलिए मनसे करने हेतु निर्देश दिया गया है। मैं पूर्ववर्णित उस बहिर्दशार चक्रकी वन्दना हृदयसे करता हूँ॥१॥

पश्चिमादिवामावर्तेन सर्वसिद्धिप्रदादीनां दशदेवीनां स्वरूपम्

सिद्धिप्रदां सर्वसम्पत्प्रदाञ्च
प्रियङ्करीं मङ्गलकारिणीञ्च।
कामप्रदां दुःखविमोचिनीं ताम्
अशेषपञ्चत्वविनाशिनीञ्च॥
समस्तदुर्विघ्ननिवारिणीं तां
सर्वाङ्गपूर्वामथ सुन्दरीं च।

समस्तसौभाग्यप्रदाभिधां च
योगिन्य एताः किल कौलरूपाः।।
पाशाङ्कुशाभीतिवरान्दधानाः
रक्ताम्बराः स्मेरमुखाब्जयुक्ताः।
बन्धूकरक्ता धृतचन्द्रलेखा
नमाम्यहं रत्नविभूषिताङ्गीः।।२।।

पश्चिमादि वामावर्त क्रमसे सर्वसिद्धिप्रदा आदि दश देवियोंका स्वरूप

मैं सर्वसिद्धिप्रदा, सर्वसम्पत्प्रदा, सर्वप्रियङ्करी, सर्वमङ्गलकारिणी, सर्व-कामप्रदा, सर्व-दुःखविमोचिनी, सर्व-मृत्युविनाशिनी, सर्व-विघ्न-निवारिणी, सर्वाङ्गसुन्दरी तथा सर्वसौभाग्यदायिनी—इन प्रसिद्ध कुल-योगिनियोंको नमस्कार करता हूँ; जो कि पाश, अङ्कुश, अभय मुद्रा तथा वर मुद्राका धारण की हुई हैं; रक्त वर्णके वस्त्रोंसे युक्त हैं; विहसित मुख कमलवाली हैं; बन्धूक पुष्पके समान रक्त वर्णकी कान्तिवाली हैं; अर्द्धचन्द्रका धारण की हुई हैं तथा रत्नोंसे अलंकृत अङ्गोंवाली हैं।

विमर्श—अब बहिर्दशार चक्रमें स्थित सर्वसिद्धिप्रदा आदि दश देवियोंके स्वरूपका वर्णन किया जा रहा है—सिद्धिप्रदामिति।

सिद्धिप्रदाम्—बहिर्दशार चक्रमें दश देवियाँ पश्चिमसे वामावर्त क्रमसे विराजमान हैं। पहली देवी है—सर्वसिद्धिप्रदा देवी। नामानुरूप यह देवी सभी सिद्धियोंका प्रदान करती है।

सर्वसम्पत्प्रदां च—दूसरी देवी है—सर्व-सम्पत्प्रदा देवी। यह देवी साधकको सकल सम्पदाओंका प्रदान करती है।

प्रियङ्करीम्—तीसरी देवी है—सर्वप्रियङ्करी देवी। यह देवी सबके प्रिय कार्यको करती है।

मङ्गलकारिणीं च—चौथी देवी है—सर्वमङ्गलकारिणी देवी। यह देवी

उन सबका मङ्गल करती है जो इसकी उपासना करते हैं।

कामप्रदाम्–पाँचवीं देवी है–सर्वकामप्रदा देवी। यह देवी सभी अभीष्ट कामनाओंकी पूर्ति करती है।

दुःख-विमोचिनीम्–छठवीं देवी है–सर्व-दुःखविमोचिनी देवी। यह देवी उपासकके सभी दुःखोंका विनाश करती है; सभी दुःखोंसे साधकको उबार लेती है।

ताम् अशेष-पञ्चत्व-विनाशिनीं च–सातवीं देवी है–सर्वमृत्यु-विनाशिनी देवी। 'पञ्चत्व' कहते हैं–मृत्युको। जब व्यक्तिकी मृत्यु हो जाती है तब यह नश्वर स्थूल शरीर पञ्चमहाभूतोंको प्राप्त हो जाता है। यह देवी सबकी मृत्युका विनाश करती है। इसकी उपासनासे साधककी आयुमें वृद्धि होती है। साधक कभी भी अकाल मृत्युको प्राप्त नहीं करता है।

समस्त-दुर्विघ्न-निवारिणीम्–आठवीं देवी है–सर्व-विघ्ननिवारिणी देवी। विघ्न तीन प्रकारके होते हैं–आधिभौतिक, आधिदैविक तथा आध्यात्मिक। सर्वविघ्ननिवारिणी देवी उपासकके सभी प्रकारके विघ्नोंका निवारण करती है जिससे उपासक अपने लक्ष्यको निर्विघ्न प्राप्त कर लेता है।

तां सर्वाङ्ग-पूर्वाम् अथ सुन्दरीं च–नौवीं देवी है–सर्वाङ्गसुन्दरी देवी। यह देवी साधकके सभी अङ्गोंको बलिष्ठ तथा सुन्दर बना देती है। सर्वाङ्गसुन्दरी देवी शारीरिक सौन्दर्यका प्रदान करने वाली देवी है।

समस्त-सौभाग्य-प्रदाभिधां च–दशवीं देवी है–सर्वसौभाग्यदायिनी देवी। यह देवी उपासकको सौभाग्यका प्रदान करती है जिससे उपासकके सभी प्रयोजन सिद्ध हो जाते हैं। इस प्रकारसे इन सभी देवियोंकी उपस्थितिसे साधकके सभी प्रयोजन सिद्ध हो जाते हैं। इसलिए यह बहिर्दशार चक्र 'सर्वार्थसाधक चक्र' कहलता है।

योगिन्यः एताः किल कौलरूपाः–बहिर्दशार चक्रमें स्थित सभी

देवियाँ योगिनी हैं; क्योंकि ये पञ्चमहाभूतात्मक हैं। सर्वसिद्धिप्रदा आदि सभी दश देवियाँ कुलयोगिनी कहलाती हैं। 'कुल' कहते हैं— पराशक्तिको। 'कुल' शब्द वंशार्थक भी है। योगिनी वंशका प्रारम्भ उस पराशक्ति 'कुल'से हुआ है। इसलिए ये योगिनियाँ 'कुलयोगिनी' कहलाती हैं। 'किल' शब्द प्राचीन कथनका बोध कराता है कि बहिर्दशार चक्रमें विराजमान सर्वसिद्धिप्रदा आदि सभी दश देवियाँ पराशक्तिसे उत्पन्न हुई हैं।

पाशाङ्कुशाभीति-वरान् दधानाः—सर्व-सिद्धिप्रदा आदि सभी दश देवियोंके हाथोंमें पाश, अङ्कुश अभय मुद्रा तथा वर मुद्रा सुशोभित हो रहे हैं। ये सभी देवियाँ 'चतुर्भुजा' हैं।

रक्ताम्बराः—सर्वसिद्धिप्रदा आदि सभी दश देवियोंने रक्त वर्णके वस्त्रोंका धारण किया है।

स्मेरमुखाब्जयुक्ताः—सर्वसिद्धिप्रदा आदि सभी दश देवियोंके मुखकमल विहसित हैं। उनके मुखमें प्रसन्नता झलक रही है।

बन्धूकरक्ताः—सर्वसिद्धिप्रदा आदि सभी दश देवियोंके शरीरकी कान्ति बन्धूक पुष्पके समान चमकीले लाल वर्णकी है।

धृतचन्द्रलेखाः—'चन्द्रलेखा' कहते हैं—अर्द्ध चन्द्रको। सर्वसिद्धि-प्रदा आदि सभी दश देवियोंने अपने मस्तक पर अर्द्ध चन्द्रका धारण किया है।

रत्नविभूषिताङ्गीः—सर्वसिद्धिप्रदा आदि सभी दश देवियोंने अपने अङ्गोंमें रत्नोंका धारण किया है।

नमामि अहम्—मैं पूर्ववर्णित सर्वसिद्धिप्रदा आदि सभी दश देवियोंको नमस्कार करता हूँ॥२॥

बहिर्दशार-चक्रेश्वर्याः त्रिपुराश्रियः स्वरूपम्

उत्तप्तहेमरुचिरां त्रिपुराश्रियं तां
मुक्ताक्षपुस्तकवराभयपाणिपद्माम्।

उन्मादिनीनिगमशास्त्रवशित्वयुक्तां
वन्दे सदा पवनचक्रमहाधिराज्ञीम्॥३॥

बहिर्दशार चक्रेश्वरी त्रिपुराश्रीका स्वरूप

मैं अग्निमें तपे हुए सोनेके समान सुन्दर कान्तिवाली उस त्रिपुराश्रीकी सर्वदा वन्दना करता हूँ; जो मुक्ताकी अक्षमाला, पुस्तक, वर मुद्रा तथा अभय मुद्रासे युक्त करकमलोंवाली है; सर्वोन्मादिनी मुद्रा, वैदिक दर्शन तथा वशित्व सिद्धिसे युक्त है; पवनात्मक बहिर्दशार चक्रेश्वरी है।

विमर्श—अब बहिर्दशार चक्रेश्वरी त्रिपुराश्रीके स्वरूपका वर्णन किया जा रहा है—उत्तप्तहेमरुचिरामिति।

उत्तप्तहेमरुचिराम्—'हेम' कहते हैं—सुवर्णको। सोनेको जब आगमें अधिक तपा दिया जाय तो वह विशुद्ध होकर अपने स्वाभाविक चमकीले पीले वर्णका प्रकट करने लगता है। बहिर्दशार चक्रेश्वरी त्रिपुराश्रीके शरीरकी कान्ति तपे हुए सोनेकी कान्तिके समान चमकीले पीले वर्णकी है।

त्रिपुराश्रियं ताम्—पारमेश्वरी भगवती पराशक्ति बहिर्दशार चक्रकी अधिष्ठात्री शक्तिके रूपमें 'त्रिपुराश्री'के नामसे विराजमान है। 'ताम्' शब्द त्रिपुराश्रीके आगे आनेवाले विशेषणोंका संकेत देता है।

मुक्ताक्षपुस्तकवराभयपाणिपद्माम्—'अक्ष' शब्दके प्रयोगसे अक्ष-मालाका बोध होता है। 'मुक्ताक्ष' शब्दसे यहाँ पर मुक्तासे विनिर्मित मालाका ग्रहण होता है। 'पाणिपद्म' कहते हैं—करकमलको। बहिर्दशार चक्रेश्वरी त्रिपुराश्रीने अपने करकमलोंमें मुक्ताकी माला, पुस्तक, वर मुद्रा तथा अभय मुद्राका धारण किया है। वह 'चतुर्भुजा' है।

उन्मादिनी-निगमशास्त्र-वशित्वयुक्ताम्—'निगम' कहते हैं—वेदको। 'उन्मादिनी' शब्दसे सर्वोन्मादिनी मुद्रा, 'निगम-शास्त्र' शब्दसे वैदिक दर्शन तथा 'वशित्व' शब्दसे वशित्व सिद्धिका ग्रहण होता है।

बहिर्दशार चक्रेश्वरी त्रिपुराश्री एक मुद्रा, एक सिद्धि तथा एक दर्शनसे युक्त है।

पवनचक्रमहाधिराज्ञीम्–'अधिराज्ञी' कहते हैं–ईश्वरीको। बहिर्दशार चक्र वायुतत्त्वात्मक है। इसमें वायु तत्त्वकी प्रधानता रहती है। वायुतत्त्वात्मक होनेके कारण इस चक्रको 'पवन चक्र' भी कहते हैं। चक्रेश्वरी त्रिपुराश्री इस पवन चक्रकी अधिष्ठात्री शक्ति है।

वन्दे सदा–मैं पूर्ववर्णित उस बहिर्दशार चक्रेश्वरी त्रिपुराश्रीकी सदैव वन्दना करता हूँ॥३॥

॥ इति षष्ठावरणम् ॥

●

सप्तमावरणम्

॥ श्रीगायत्रीब्रह्मविद्यायै नमः ॥

अन्तर्दशार-चक्रस्य निरूपणम्

अन्यच्चक्रं श्रीजपापुष्पवर्णं
साक्षाच्छ्रीमत्सर्वरक्षाकरं वै।
श्रीदिक्कोणाकारकं तैजसाख्यं
वन्दे दिव्यं सौरशास्त्रात्मरूपम्॥१॥

अन्तर्दशार चक्रका निरूपण

मैं एक दूसरे चक्रकी वन्दना करता हूँ जो कि जपा पुष्पके समान रक्त वर्णवाला, साक्षात् 'श्री'से युक्त, सर्वरक्षाकर, दश कोणाकार, तैजसात्मक, दिव्य तथा सौरसिद्धान्तात्मक है।

विमर्श–अब अन्तर्दशार चक्रका निरूपण किया जा रहा है–अन्यदिति।

अन्यच्चक्रम्–अब एक दूसरे चक्रका निरूपण किया जा रहा है जो कि आगेके विशेषणोंसे युक्त है। 'अन्यत्' शब्द पूर्ववर्णित बहिर्दशार चक्रके बाद आनेवाले अन्तर्दशार चक्रका संकेत करता है।

श्रीदिक्कोणाकारकम्–'दिक्' कहते हैं–दिशाको। दिशाओंकी संख्या दश है। यहाँ पर दश संख्याका संकेत प्राप्त होता है। यह चक्र दश कोणोंके आकारवाला है। इसलिए इसे 'दशार चक्र 'कहते हैं। अन्तर्दशार चक्र दश अराओंसे विनिर्मित है और यह दश-कोणात्मक है। बहिर्दशारकी अपेक्षा आन्तरिक होनेके कारण यह

'अन्तर्दशार चक्र' कहलाता है।

श्रीजपापुष्पवर्णम्–अन्तर्दशार चक्रका वर्ण जपा पुष्पके समान लाल है।

साक्षाच्छ्रीमत्सर्वरक्षाकरं वै–अन्तर्दशार चक्र साक्षात् 'श्री'से युक्त है। इसलिए यह सबकी रक्षा करनेमें समर्थ है। साक्षात् 'श्री' ही सर्वरक्षाकारिणी पराशक्ति है। वह सूक्ष्म रूपसे इस अन्तर्दशार चक्रमें विराजमान है। इसलिए उसकी सर्वरक्षाकारिणी शक्ति यहीं पर स्थित है। इस प्रकारसे अन्तर्दशार चक्र 'सर्वरक्षाकर चक्र'के रूपमें प्रसिद्ध है। 'वै' शब्द निश्चयार्थक है।

तैजसाख्यम्–अन्तर्दशार चक्रमें तेजस् तत्त्वकी प्रधानता है। इसलिए यह चक्र 'तैजसात्मक' कहलाता है। यह चक्र 'तैजस चक्र'के रूपमें जाना जाता है।

दिव्यं सौरशास्त्रात्मरूपम्–अन्तर्दशार चक्र सौरशास्त्रके सिद्धान्तके अनुसार विनिर्मित है। जिस प्रकार प्रातःकालीन सूर्य जपा पुष्पके समान लाल वर्णका एक ज्योतिर्मय गोलाकार पिण्ड होता है ठीक् उसी प्रकार यह अन्तर्दशार चक्र दिखाई पड़ता है। उसकी किरणें दशकोणाकारसे फैल रही हैं। इसलिए यह एक दिव्य पिण्डके रूपमें प्रकाशित है। 'शास्त्र' शब्दसे यहाँ पर सिद्धान्तका ग्रहण होता है। इस प्रकारसे यह अन्तर्दशार चक्र 'सूर्यात्मक' कहलाता है।

वन्दे–मैं पूर्ववर्णित उस अन्तर्दशार चक्रकी वन्दना करता हूँ।।१।।

पश्चिमादिवामावर्तेन सर्वज्ञादीनां दशदेवीनां स्वरूपम्

सर्वज्ञां तां सर्वशक्तिस्वरूपां
सर्वैश्वर्यादिप्रदामन्यशक्तिम्।
भूयः सर्वज्ञानरूपात्मिकां तां
सर्वव्याध्युन्मूलनायोत्सुकाञ्च।।

भूयः सर्वाधारमूर्तिञ्च सर्व-
पापघ्नीमानन्दरूपाख्यशक्तिम्।
शक्तिं श्रीमत्सर्वरक्षास्वरूपां
सद्भक्तानामीप्सितार्थप्रदात्रीम्।।
एताः साक्षाद्दिङ्निगर्भाभिधाख्या
मुक्ताहाराश्चन्द्रचूडास्त्रिनेत्राः।
बालार्काभा ज्ञानमुद्रावराढ्याः
श्रीमट्टङ्काभीतिहस्ता नमामि।।२।।

पश्चिमादि वामावर्त क्रमसे सर्वज्ञा आदि दश शक्तियोंका स्वरूप

मैं सर्वज्ञा शक्ति, उस सर्वशक्तिस्वरूपिणी शक्ति, अन्य शक्ति सर्वैश्वर्यप्रदायिनी, सर्वज्ञानस्वरूपिणी, उस सभी व्याधियोंके उन्मूलनके लिए उत्सुक सर्वव्याधिविनाशिनी देवी, सर्वाधारस्वरूपिणी और सर्व-पाप-विनाशिनी तथा आनन्दरूपा नामक सर्वानन्द-स्वरूपिणी शक्ति, सर्वरक्षास्वरूपिणी तथा सद्भक्तोंको वांछित फलोंका प्रदान करनेवाली सर्वेप्सितार्थ-प्रदायिनीको नमस्कार करता हूँ; जो साक्षात् निगर्भ-योगिनी कहलाती हैं; मुक्ताकी मालाका धारण करनेवाली, मस्तक पर चन्द्रमासे युक्त तीन आँखोंवाली, उगते हुए सूर्यके समान लाल कान्तिवाली हैं; ज्ञान मुद्रा, वर मुद्रा, टङ्क तथा अभय मुद्रासे युक्त हाथोंवाली हैं।

विमर्श—अब अन्तर्दशार चक्रमें स्थित सर्वज्ञा आदि दश शक्तियोंके स्वरूपका वर्णन किया जा रहा है—सर्वज्ञामिति।

सर्वज्ञाम्—अन्तर्दशार चक्रमें सर्वज्ञा आदि सभी दश शक्तियाँ पश्चिमसे वामावर्त क्रमसे विराजमान हैं। सबसे पहली शक्ति है—सर्वज्ञा शक्ति। यह शक्ति सभी पदार्थोंसे सम्बन्धित ज्ञान रखती है।

तां सर्वशक्तिस्वरूपाम्—दूसरी शक्ति है—सर्वशक्तिस्वरूपिणी शक्ति।

यह शक्ति सभी शक्तियोंसे युक्त है।

सर्वैश्वर्यादि-प्रदाम् अन्यशक्तिम्—तीसरी शक्ति है—सर्वैश्वर्यप्रदायिनी शक्ति। यह शक्ति नामानुकूल 'भग' वाचक ऐश्वर्य आदि छः पदार्थोंका प्रदान करती है। इसीलिए यह भगवती भी कहलाती है। 'आदि' शब्दसे 'भग'के सभी तत्त्वोंका ग्रहण होता है। ये तत्त्व हैं—ऐश्वर्य, धर्म, यश, श्री, ज्ञान तथा वैराग्य।

भूयः सर्वज्ञानरूपात्मिकां ताम्—चौथी शक्ति है—सर्वज्ञानस्वरूपिणी शक्ति। यह शक्ति स्वयं ज्ञानस्वरूपा है।

सर्वव्याध्युन्मूलनायोत्सुकां च—पाँचवीं शक्ति है—सर्व-व्याधि-विनाशिनी शक्ति। यह शक्ति सदैव सभी प्रकारकी व्याधियोंको जड़से उखाड़ फेंकनेके लिए तैयार रहती है।

भूयः सर्वाधारमूर्तिं च—छठवीं शक्ति है—सर्वाधारस्वरूपिणी शक्ति। यह शक्ति जगतके आधारके रूपमें स्थित है। बिना आधारके आधेय-की अवस्थिति सम्भव नहीं है।

सर्वपापघ्नीम्—सातवीं शक्ति है—सर्वपाप-विनाशिनी शक्ति। यह शक्ति सभी प्रकारके पापोंका विनाश करनेके लिए समर्थ है। इसकी उपासनासे साधकके समस्त पाप नष्ट हो जाते हैं।

आनन्द-रूपाख्य-शक्तिम्—आठवीं शक्ति है—सर्वानन्द-स्वरूपिणी शक्ति। यह शक्ति आनन्दस्वरूपा होनेके कारण सदैव आनन्द प्रदान करनेके लिए पूर्ण रूपसे सक्षम है।

शक्तिं श्रीमत्सर्वरक्षास्वरूपाम्—नौवीं शक्ति है—सर्वरक्षा-स्वरूपिणी शक्ति। यह शक्ति स्वयं रक्षास्वरूपा है। ध्यान रहे कि रक्षास्वरूपिणी और रक्षाकारिणीमें विशिष्ट अन्तर यह है कि भगवती रक्षास्वरूपिणी स्वयं रक्षा स्वरूपा है जबकि भगवती रक्षाकारिणी सबकी रक्षा करनेवाली शक्ति है।

सद्भक्तानाम् ईप्सितार्थ-प्रदात्रीम्—दशवीं शक्ति है—सर्वेप्सितार्थ-प्रदायिनी शक्ति। 'ईप्सितार्थ' कहते हैं—अभीष्ट प्रयोजनको। यह शक्ति

अपने परम भक्तोंकी सारी मनःकामनाओंकी पूरी करती है अर्थात् समस्त अभीष्ट प्रयोजनोंको सिद्ध करती है।

ध्यान रहे कि सद्भक्तोंकी कामना सदैव पूरी होती है, न कि असद्-भक्तोंकी। 'सद्भक्त' वे ही कहलाते हैं जो सदैव सत् अर्थात् उस परम तत्त्वको प्राप्त करनेके लिए व्यावहारिक अच्छे आचार तथा विचार का पालन करते हैं।

एताः साक्षाद् दिङ् निगर्भाभिधाख्याः–सर्वज्ञा आदि सभी दश शक्तियाँ 'निगर्भ' नामक योगिनी कहलाती हैं। 'निगर्भ' कहते हैं–आन्तरिकको। निगर्भयोगिनियाँ आन्तरिक योगिनियाँ होनेके कारण अन्तर्दशार चक्रमें विराजमान रहती हैं। ये सभी पञ्चभूतात्मक होनेके कारण 'योगिनी' कहलाती हैं। ये सर्वज्ञा आदि सभी योगिनियाँ पराशक्तिके साक्षात् रूप हैं।

मुक्ताहाराः–'मुक्ता कहते हैं–मोतीको। सर्वज्ञा आदि सभी दश शक्तियानें मोतियोंसे विनिर्मित मालाका धारण किया है।

चन्द्रचूडाः–सर्वज्ञा आदि सभी दश शक्तियोंने अपने मस्तक पर चन्द्रमाका धारण किया है।

त्रिनेत्राः–सर्वज्ञा आदि सभी दश शक्तियाँ तीन आँखोंवाली हैं। इसलिए वे 'त्रिनेत्रा' कहलाती हैं।

बालार्काभाः–'आभा' कहते हैं-कान्तिको। सर्वज्ञा आदि सभी दश शक्तियोंके शरीरकी कान्ति उगते हुए बाल सूर्यके समान अरुण वर्णकी है।

ज्ञानमुद्रा-वराढ्याः श्रीमट्टङ्काभीतिहस्ताः–सर्वज्ञा आदि सभी दश शक्तियोंके हाथोंमें ज्ञान मुद्रा, वर मुद्रा, टङ्क तथा अभय मुद्रा सुशोभित हो रहे हैं। 'टङ्क' कहते हैं–कुठारको। इसे 'कुल्हाड़ी' भी कहते हैं। ये सभी शक्तियाँ 'चतुर्भुजा' हैं।

नमामि–मैं पूर्ववर्णित सर्वज्ञा आदि सभी दश शक्तियोंको नमस्कार करता हूँ॥२॥

अन्तर्दशार-चक्रेश्वर्याः त्रिपुरमालिन्याः स्वरूपम्

बालार्कमण्डलनिभां धृतचन्द्रलेखां
स्मेराननामरुणवस्त्रसुरत्नभूषाम्।
सोमाग्निसूर्यनयनत्रयशोभिताञ्च
प्राकाम्यसिद्धिसहितां नवयौवनाढ्याम्।।
श्रीसौरदर्शनयुतां समहाङ्कुशां तां
श्रीतैजसात्मकदशारमहाधिराज्ञीम्।
पाशाङ्कुशाभयकपालवराक्षहस्तां
तत्त्वेश्वरीं त्रिपुरमालिनिकां नमामि।।३।।

अन्तर्दशार चक्रेश्वरी त्रिपुरमालिनीका स्वरूप

मैं उगते हुए सूर्यमण्डलके समान लाल कान्तिवाली, अर्द्ध चन्द्रका धारण करनेवाली, विहसित मुखवाली, लालवर्णके वस्त्र तथा अच्छे रत्नोंका धारण करनेवाली, चन्द्र, वह्नि तथा सूर्यरूपी तीन नेत्रोंसे सुशोभित, प्राकाम्यसिद्धिसे युक्त, नवयुवति, सौरदर्शन तथा सर्वमहाङ्कुशा मुद्रासे युक्त; हाथोंमें पाश, अङ्कुश, अभय मुद्रा, कपाल, वर मुद्रा तथा अक्ष-मालाका धारण करनेवाली उस तैजसात्मक अन्तर्दशार चक्रेश्वरी तत्त्वेश्वरी त्रिपुरमालिनीको नमस्कार करता हूँ।

विमर्श—अब अन्तर्दशार चक्रेश्वरी त्रिपुरमालिनीके स्वरूपका वर्णन किया जा रहा है—बालार्कमण्डलनिभामिति।

बालार्कमण्डलनिभाम्—उगते हुए सूर्यको 'बाल अर्क' कहते हैं। उगते हुए सूर्यके समान अरुण वर्णकी कान्तिवाली है अन्तर्दशार चक्रेश्वरी त्रिपुरमालिनी।

धृत-चन्द्र-लेखाम्—'चन्द्रलेखा' कहते हैं-अर्द्धचन्द्रको। अन्तर्दशार चक्रेश्वरी त्रिपुरमालिनीने अपने मस्तक पर अर्द्ध चन्द्रका धारण किया है। वह 'चन्द्रचूडा' है।

स्मेराननाम्–अन्तर्दशार चक्रेश्वरी त्रिपुरमालिनीका मुख विहसित है। उसके मुखमें सदैव प्रसन्नता छायी हुई है।

अरुण-वस्त्रसुरत्नभूषाम्–अन्तर्दशार चक्रेश्वरी त्रिपुरमालिनीने लाल वर्णके वस्त्र तथा अच्छे रत्नोंका धारण किया है।

सोमाग्नि-सूर्य-नयन-त्रयशोभितां च–'सोम' कहते हैं–चन्द्रमाको। अन्तर्दशार चक्रेश्वरी त्रिपुरमालिनीकी तीन आँखें हैं। तीन आँखोंकी उपमा चन्द्र, अग्नि तथा सूर्यसे दी गयी है। इन तीन आँखोंसे अन्तर्दशार चक्रेश्वरी त्रिपुरमालिनी अत्यन्त सुशोभित हो रही है।

नवयौवनाढ्याम्–अन्तर्दशार चक्रेश्वरी त्रिपुरमालिनी नवयुवति है। वह ऐसे प्रतीत हो रही है मानो तत्काल ही युवावस्थाको उसने प्राप्त की हो।

प्राकाम्यसिद्धिसहिताम्–ग्यारह सिद्धियोंसे एक सिद्धि 'प्राकाम्य सिद्धि'का यहाँ पर ग्रहण होता है। अन्तर्दशार चक्रेश्वरी त्रिपुरमालिनी प्राकाम्य सिद्धिसे युक्त है।

श्रीसौरदर्शनयुताम्–ग्यारह दर्शनोंसे यहाँ पर एक दर्शन 'सौर दर्शन'का ग्रहण होता है। सूर्य द्वारा प्रतिपादित सिद्धान्तको 'सौर सिद्धान्त' कहते हैं। चक्रेश्वरी त्रिपुरमालिनी सौर दर्शनसे युक्त है।

समहाङ्कुशाम्–ग्यारह मुद्राओंसे यहाँ पर एक मुद्रा 'सर्वमहाङ्कुशा मुद्रा'का ग्रहण होता है अन्तर्दशार चक्रेश्वरी त्रिपुरमालिनी सर्वमहाङ्कुशा मुद्रासे युक्त है।

श्रीतैजसात्मक-दशार-महाधिराज्ञीं त्रिपुर-मालिनिकाम्–अन्तर्दशार चक्र तैजस तत्त्वात्मक होता है। इस चक्रमें पराशक्ति 'त्रिपुरमालिनी'-के नामसे अधिष्ठात्री शक्तिके रूपमें विराजमान है।

पाशाङ्कुशाभय-कपाल-वराक्ष-हस्ताम्–अन्तर्दशार चक्रेश्वरी त्रिपुर-मालिनीने अपने हाथोंमें पाश, अङ्कुश, अभय मुद्रा, कपाल, वर मुद्रा तथा अक्षमालाका धारण किया है। इन छह शस्त्रोंसे ज्ञात होता है कि त्रिपुरमालिनी 'षड्भुजा' है।

तत्त्वेश्वरीम्—अन्तर्दशार चक्रकी चक्रेश्वरी त्रिपुरमालिनी सभी तत्त्वोंकी ईश्वरी है। ये सभी तत्त्व यहाँ पर सूक्ष्म तथा आन्तरिक दशामें होते हैं। इसलिए उनको नियन्त्रित करनेवाली शक्ति भी अन्तर्दशार चक्रमें ही रहकर नियन्त्रित कर सकती है। अन्तर्दशार चक्रकी उपासना सूक्ष्म तत्त्वोंकी सिद्धिके लिए भी की जाती है।

तां नमामि—मैं पूर्ववर्णित उस अन्तर्दशार चक्रेश्वरी त्रिपुरमालिनीको नमस्कार करता हूँ॥३॥

॥ इति सप्तमावरणम् ॥

अष्टमावरणम्

॥ श्रीगायत्रीब्रह्मविद्यायै नमः ॥

अष्टार-चक्रस्य निरूपणम्

अन्यं दिव्यं सर्वरोगघ्नचक्रं
रम्यं स्पष्टं ह्यष्टकोणापक्लृप्तम्।
उद्दीप्ताभं पद्मरागप्रभं तद्
वन्दे चाहं श्रीकलात्मस्वरूपम्॥१॥

अष्टकोण चक्रका निरूपण

मैं उस अन्य चक्रकी वन्दना करता हूँ; जो कि अलौकिक रूपवाला, सभी रोगोंका नाश करनेवाला, सुन्दर, स्पष्ट, अष्ट कोणोंसे संयोजित, उद्दीप्त कान्तिवाला, पद्मरागके समान प्रभावाला तथा कलात्मक है।

विमर्श—अब अष्टकोण चक्रका निरूपण किया जा रहा है—अन्यमिति।

अन्यम्—श्रीचक्रमें आठवाँ चक्र है—अष्टकोण चक्र। 'अन्य' शब्द पूर्वोक्त अन्तर्दशार चक्रके बाद आनेवाले वास्तविक अष्टकोण चक्रका सङ्केत कर रहा है।

दिव्यम्—अष्टकोण चक्र 'दिव्य चक्र'के रूपमें संसारमें ख्यात है; क्योंकि इसका रूप अलौकिक है।

सर्व-रोगघ्न-चक्रम्—अष्टकोण चक्र सभी प्रकारके रोगोंका नाश करता है। सभी रोगोंके निवारणके लिए अष्टकोण चक्रकी उपासना

की जाती है। इस चक्रकी यही महिमा है और इसका फल भी यही है। इसी महिमाके कारण अष्टकोण चक्रको 'सर्वरोगहर चक्र' कहते हैं। यहाँ पर प्रश्न उठता है कि अष्टार चक्र ही सर्वरोगहर क्यों? अब हम इस पर विचार करते हैं:–

पहले हमने चतुर्थावरणमें देखा कि वहाँ पर 'अष्टदल' चक्र है जो कि सृष्टिचक्रात्मक है और सर्वसङ्क्षोभणकर है। उस पद्म-दलाकार आस्थानमें विराजमान आठ योगिनियाँ 'गुप्ततर योगिनी' कहलाती हैं और वे सब अनङ्गात्मिका हैं जो कि वैषयिक वासनासे सम्बन्धित अनङ्गात्मक मानसिक क्षोभको उत्पन्न करती रहती हैं किन्तु वे प्राणको सङ्कटमें नहीं ड़ालती हैं। वे क्षोभकारिका तो हैं किन्तु प्राणहारिका नहीं बनती हैं; जबकि यहाँ पर 'अष्टकोण' चक्र है जो कि संहारचक्रात्मक है और यह सर्वरोगहर है। इस अष्टकोणाकार आस्थानमें विराजमान आठ योगिनियाँ 'परापर रहस्य योगिनी' कह-लाती हैं और ये सब 'वाग्देवताम्बा' हैं। जब सृष्टि और स्थितिसे परे शक्ति उठती है तो वह संहृत होकर बीज रूपमें स्थित हो जाती है तथा इसी अवस्थामें वाग्रूपा सूक्ष्मात्मिका वाग्देवताम्बा कहलाती है। यहाँ पर वशिनी आदि आठ वाग्देवताम्बाएँ विराज़मान हैं।

संहार कहते हैं–विनाशको। इसीका संकेत प्राप्त होता है जातककी जन्मकुण्डलीमें। जन्मकुण्डलीमें अष्टम स्थान 'आयु'का होता है। इसलिए 'आठ' अङ्क विनाशके प्रतीकके रूपमें प्रसिद्ध है जो कि संहारात्मक है। शरीर जब रोगग्रस्त हो जाता है तब जातक मृत्युकी ओर अग्रसर होता है। यह कार्य प्राणान्तक अष्टम ग्रह 'राहु' करता है। राहुकी महादशामें यदि राहुकी अन्तर्दशा आती है तो सामान्यतः जातककी मृत्यु होती है अथवा उसे मृत्युतुल्य कष्ट प्राप्त होता है। इसलिए इस अवस्थामें सर्वरोगहरणके लिए उपचार किया जाता है। इस अष्टम आवरणके अन्तर्गत अत्यन्त सूक्ष्म उपचारके लिए बीजरूपा वाग्देवताम्बाओंकी उपासना की जाती है। इनकी उपासनासे अष्टविध रोगोंका निवारण होता है। ऐसे तो आयुर्वेद

शास्त्रमें भी अष्टविध रोगोंके उपचार देखनेको मिलते हैं जिसमें कि समस्त रोगोंको आठ भागोंमें विभक्त करके अष्टांग चिकित्सा की जाती है। अष्टम ग्रह राहु सदैव जातकके उदरका नियन्त्रण करता रहता है और उदर संयमित आहारसे ठीक् रहता है इसलिए आयुर्वेद शास्त्रमें प्रश्नात्मक रूपमें विचार करते हुए कहते हैं:-

कोऽरुक्? अर्थात् कौन निरोगी है? उत्तर देते हैं-'हितभुक्' 'मितभुक्' 'ऋतुभुक्' च। अर्थात् जो हितकारी भोजन करता हो, संयमित भोजन करता हो तथा समय पर भोजन करता हो वही व्यक्ति निरोगी और दीर्घायु है।

इस प्रकारसे हमने देखा कि अष्टम आवरण जातकके लिए अत्यन्त महत्त्वपूर्ण 'जीवेम शरदशतम्' है।

रम्यं स्पष्टं हि अष्टकोणापक्लृप्तम्-अष्टकोण चक्रका इस प्रकारसे निर्माण हुआ है कि वह देखनेमें अत्यन्त सुन्दर लग रहा है। 'अपक्लृप्त' कहते हैं-संयुक्तको। अष्टकोण चक्र आठ कोणोंसे संयुक्त है। इसका निर्माण आठ कोणोंसे हुआ है। 'स्पष्ट' शब्द बोध कराता है कि आठों कोण पूर्ण रूपसे मिश्रित होकर एकत्वको प्राप्त नहीं हुए हैं; बल्कि स्पष्ट रूपसे आठों कोणोंका दर्शन होता है। अष्टकोण चक्रको 'अष्टार चक्र' भी कहते हैं; क्योंकि यह चक्र आठ अराओंसे विनिर्मित है।

उद्दीप्ताभम्-अष्टकोण चक्रकी कान्ति अत्यन्त उद्दीप्त है। यह चक्र चमकीला है।

पद्मराग-प्रभम्-अष्टकोण चक्रकी कान्ति पद्मराग मणिके समान लाल वर्णकी है। 'पद्मराग' एक प्रकारका मणि है। 'राग' कहते हैं-वर्णको। पद्मके समान जिसका वर्ण हो ऐसे मणिको पद्मराग कहते हैं। अष्टकोण चक्रकी कान्ति पद्मके समान लाल वर्णकी है।

श्रीकलात्मस्वरूपम्-अष्टकोण चक्रमें कला तत्त्वकी प्रधानता है। इसलिए यह 'कलात्मक' चक्र कहलाता है।

तत् च अहं वन्दे—मैं पूर्ववर्णित उस अष्टकोण चक्रकी वन्दना करता हूँ॥१॥

पश्चिमादिवामावर्तेन वशिन्यादीनामष्टवाग्देवताम्बानां स्वरूपम्

वाग्देवताम्बां वशिनीति नाम्नीं
कामेश्वरीं वाङ्निलयाधिदेवीम्।
श्रीमोहिनीं तां विमलां तथैव
वाग्देवताम्बामरुणाभिधाञ्च॥
वाग्देवताम्बां जयिनीति नाम्नीं
सर्वेश्वरीं कौलिनिकामिमां वै॥
रक्ताम्बराश्चन्द्रकलावतंसाः
सिन्दूरवर्णान्वितवक्त्रपद्माः।
सदा प्रसन्नाः कुचभारनम्रा
मालाधनुःपुस्तकपाशहस्ताः॥
परापराख्याश्च रहस्ययुक्ता
नमाम्यहं योगिनिकाः सदैव॥२॥

पश्चिमादि वामावर्त क्रमसे वशिनी आदि आठ वाग्देवताम्बाओंका स्वरूप

मैं वशिनी नामकी वाग्देवताम्बा, वाङ्निलयकी अधिष्ठात्री देवी कामेश्वरी वाग्देवताम्बा, उस प्रकार मोहिनी वाग्देवताम्बा तथा विमला वाग्देवताम्बा, अरुणा नामकी वाग्देवताम्बा और जयिनी नामकी वाग्देवताम्बा, सर्वेश्वरी वाग्देवताम्बा तथा उस कौलिनी वाग्देवताम्बाको सदैव नमस्कार करता हूँ; जो कि लाल वस्त्रोंवाली, मस्तक पर अर्द्ध चन्द्रका धारण करनेवाली, सर्वदा प्रसन्न रहनेवाली, स्तनोंके भारसे झुकी हुई हैं तथा हाथोंमें माला, धनुष, पुस्तक तथा पाशका धारण करनेवाली परापर नामक रहस्ययोगिनियाँ हैं।

विमर्श—अब अष्टकोण चक्रमें स्थित वशिनी वाग्देवताम्बा आदि आठ वाग्देवताम्बाओंके स्वरूपका वर्णन किया जा रहा है—वाग्देवताम्बामिति।

वाग्देवताम्बाम्—अष्टकोण चक्रमें वशिनी वाग्देवताम्बा आदि आठ वाग्देवताम्बाएँ पश्चिमसे वामावर्त क्रमसे विराजमान हैं। 'वाक्' कहते हैं—वाणीको। वाणीकी अधिष्ठात्री देवताको 'वाग्देवता' कहते हैं। जीवकी समग्र वाणीको आठ प्रकारोंमें वर्गीकृत किया गया है। यह वर्गीकरण कार्यानुरूप है। प्रत्येक वर्गमें असंख्य वाणीके कार्य अन्तर्भूत हैं। प्रत्येक कार्यकी एक अधिष्ठात्री देवता है।

कार्यमें ही कारण विद्यमान रहता है। प्रत्येक विभागकी कार्य-कारणात्मिका शक्तियोंकी एक सर्वकारणात्मिका देवता होती है जिसे 'अम्बा' पद प्राप्त है। इस प्रकारसे इन आठ विभागोंकी आठ वाग्देवताम्बाएँ हैं। इनकी उपासनासे साधक आठों विभागोंकी वाणियोंकी सिद्धियोंको प्राप्त कर लेता है और ऐसा साधक वाक् सिद्धिको प्राप्त कर संसारमें 'वाक् सिद्ध'के रूपमें प्रसिद्ध हो जाता है। ऐसे साधकके मुखसे निकली वाणी अवश्य अभीष्ट फलोंका प्रदान करती है।

वशिनीति नाम्नीम्—पहली वाग्देवताम्बा है—वशिनी वाग्देवताम्बा। यह वशिनी वाग्देवताम्बा अपने नामानुरूप वशकारिणी वाणीको सिद्ध करती है।

कामेश्वरी-वाङ्निलयाधिदेवीम्—दूसरी वाग्देवताम्बा है—कामेश्वरी वाग्देवताम्बा। यह कामेश्वरी वाग्देवताम्बा कामनासे सम्बन्धित वाणीको सिद्ध करती है। 'निलय' कहते हैं—भवनको। वाणी रूपी भवनमें रहनेवाली अधिष्ठात्री देवी 'वाग्देवताम्बा' कहलाती है।

श्रीमोहिनीं ताम्—तीसरी वाग्देवताम्बा है—मोहिनी वाग्देवताम्बा। यह मोहिनी वाग्देवताम्बा साधकको मोहनात्मक वाणीकी सिद्धिका प्रदान करती है।

विमलां तथैव–चौथी वाग्देवताम्बा है–विमला वाग्देवताम्बा। 'विमल' कहते हैं–पवित्रको। यह विमला वाग्देवताम्बा नामानुरूप वाणीको पवित्र करनेकी सिद्धि देती है जिससे वाणी सत्यनिष्ठा आदि गुणोंके स्वरूपको प्राप्त हो जाय।

वाग्देवताम्बाम् अरुणाभिधां च–पाँचवीं वाग्देवताम्बा है–अरुणा वाग्देवताम्बा। 'अभिधा' कहते हैं–संज्ञाको। 'अरुण' कहते हैं–लालको। 'अरुण' शब्द उदयकालीन सूर्यके वर्णका द्योतक है। अरुण वर्ण रजो गुणका प्रतीक है और रजो गुण क्रियाशीलताको बढ़ाती है। साधकके मुखसे जो भी प्रथम उद्गार होता है उसे क्रियाशील बनानेके लिए अरुणा वाग्देवताम्बा सिद्धिका प्रदान करती है जिससे किसी भी व्यक्तिको किसी भी प्रकारके कार्यको करनेके लिए कहा जाता है तो वह व्यक्ति अवश्य उस कार्यको करता है और उसकी क्रियाशीलता निरन्तर बनी रहती है।

वाग्देवताम्बां जयिनीति नाम्नीम्–छठवीं वाग्देवताम्बा है–जयिनी वाग्देवताम्बा। यह वाग्देवताम्बा सभी कार्योंमें सफलताका प्रदान करती है। साधक सभी क्षेत्रमें जय प्राप्त करता है।

सर्वेश्वरीम्–सातवीं वाग्देवताम्बा है–सर्वेश्वरी वाग्देवताम्बा। यह वाग्देवताम्बा सबको शिष्ट बनानेके लिए सिद्धिका प्रदान करती है। अनुशासनात्मक वाणीकी सिद्धिसे साधक प्रत्येक प्राणीको अनुशासित बनाता रहता है।

कौलिनिकाम् इमां वै–आठवीं वाग्देवताम्बा है–कौलिनी वाग्देवताम्बा। 'कुल' कहते हैं–शक्तिको। शक्तिसे ही सबकी उत्पत्ति होती है। कौलिनी वाग्देवताम्बा सृजनात्मक वाणीकी अधिष्ठात्री शक्ति है। यह वाग्देवताम्बा साधकको सृजनात्मिका वाणीकी सिद्धिका प्रदान करती है जिससे साधकके उच्चारण मात्रसे ही नये पदार्थकी उत्पत्ति हो जाती है। 'वै' शब्द निश्चयार्थक है।

ध्यान रहे कि साधक जब इन सिद्धियोंका प्रयोग लोकरञ्जन

अथवा किसीको हानि पहुँचानेके लिए करता है तो उसकी सारी सिद्धियाँ धीरे-धीरे क्षीण होती जाती हैं।

रक्ताम्बराः—वशिनी वाग्देवताम्बा आदि सभी वाग्देवताम्बाओंने रक्त वर्णके वस्त्रोंका धारण किया है।

चन्द्रकलावतंसाः—वशिनी आदि सभी वाग्देवताम्बाओंने अपने मस्तक पर आभूषणके रूपमें अर्द्ध चन्द्रका धारण किया है।

सिन्दूर-वर्णान्वित-वक्त्रपद्माः—'वक्त्र' कहते हैं—मुखको। वशिनी आदि सभी वाग्देवताम्बाओंके मुखकमल सिन्दूर वर्णसे युक्त हैं। उनके मुखकी कान्ति सिन्दूर वर्णके समान लाल है।

सदा प्रसन्नाः—वशिनी आदि सभी वाग्देवताम्बाएँ प्रसन्न दिखाई पड़ रही हैं। उनके मुख पर सर्वदा प्रसन्नता छायी रहती है।

कुचभारनम्राः—'कुच' कहते हैं—स्तनको। वशिनी आदि सभी वाग्देवताम्बाओंके स्तन इतने पृथुल तथा उन्नत हैं कि उनके भारसे वे झुकी जा रही हैं। यह स्तनयुगलकी महिमा है।

मालाधनुःपुस्तकपाशहस्ताः—वशिनी आदि सभी वाग्देवताम्बाओं-के हाथोंमें अक्षमाला, धनुष, पुस्तक तथा पाश सुशोभित हो रहे हैं। वशिनी आदि सभी वाग्देवताम्बाएँ 'चतुर्भुजा' कहलाती हैं।

परापराख्याः च रहस्ययुक्ताः योगिनिकाः—वशिनी आदि सभी वाग्देवताम्बाएँ 'परापर' नामक रहस्ययोगिनी कहलाती हैं। 'परापर' शब्दसे बोध होता है कि ये योगिनियाँ बड़ेसे बड़े रहस्यसे युक्त हैं। 'रहस्य' कहते हैं—जो सामान्य रूपसे ज्ञात न हो। जैसा हमने देखा कि इससे पूर्वके चक्रोंमें भी वशीकरण आदिसे सम्बन्धित अनेक शक्तियाँ विराजमान हैं। वे सारी शक्तियाँ सामान्य रूपसे ज्ञात हो जाती हैं और उनकी सिद्धि भी हो जाती है; जबकि रहस्योंसे युक्त शक्तियोंका ज्ञान होना आसान नहीं होता है और उनकी सिद्धि होना तो बहुत दूरकी बात है। यह वाग्देवताम्बाओंका विशिष्ट गुण है। 'रहस्य' उसे भी कहते हैं जिसमें एकान्तता है। वशिनी आदि सभी

वाग्देवताम्बाएँ ऐकान्तिक रूपसे उन-उन विषयोंमें एक मात्र शक्तिके रूपमें विराजमान हैं। यही रहस्य है। ये वशिनी वाग्देवताम्बा आदि सभी वाग्देवताम्बाएँ पञ्च महाभूतात्मक होनेके कारण योगिनियाँ कहलाती हैं।

नमामि अहं सदैव–मैं पूर्ववर्णित उन वशिनी आदि सभी वाग्देवताम्बाओंको सर्वदा नमस्कार करता हूँ॥२॥

अष्टार-चक्रेश्वर्याः त्रिपुरासिद्धायाः स्वरूपम्

रोगघ्नकाष्टारकचक्रनाथां
श्रीखेचरीमुद्रिकया समेताम्।
रक्ताम्बराढ्यां शुभभुक्तिसिद्ध्या
समायुतां वैष्णवदर्शनेन॥
श्रीचन्द्रचूडां शरदिन्दुगौरीं
नेत्रत्रयोद्भासितवक्त्रपद्माम्।
पाशाङ्कुशाभीतिकपालहस्तां
नमामि सिद्धां त्रिपुरेति पूर्वाम्॥३॥

अष्टकोण चक्रेश्वरी त्रिपुरा सिद्धाका स्वरूप

मैं सर्वरोगहर अष्टकोण चक्रकी अधिष्ठात्री त्रिपुरासिद्धाको नमस्कार करता हूँ; जो कि खेचरी मुद्राके साथ, रक्त वस्त्रोंसे युक्त, शुभ भुक्ति सिद्धि तथा वैष्णव दर्शनसे युक्त, मस्तक पर चन्द्रमाका धारण करनेवाली, शरत्कालीन चन्द्रमाके समान गौरवर्णवाली, तीन आँखोंसे सुशोभित मुखकमलवाली तथा पाश, अङ्कुश, अभय मुद्रा और कपालसे युक्त हाथोंवाली है।

विमर्श–अब अष्टकोण चक्रेश्वरी त्रिपुरा सिद्धाके स्वरूपका वर्णन किया जा रहा है–रोगघ्नकाष्टारकचक्रनाथामिति।

रोगघ्नकाष्टारकचक्रनाथाम्–अष्टकोण चक्रको 'सर्वरोगहर अष्टा-

रक चक्र' भी कहते हैं; क्योंकि इसकी उपासनासे सभी प्रकारके रोग नष्ट हो जाते हैं। इस अष्टकोण चक्रकी अधिष्ठात्री शक्ति त्रिपुरासिद्धा है। पराशक्ति यहाँ पर 'त्रिपुरासिद्धा'के नामसे जानी जाती है।

श्रीखेचरी-मुद्रिकया समेताम्–ग्यारह मुद्राओंसे एक मुद्रा 'सर्व-खेचरी मुद्रा' यहाँ पर रहती है। चक्रेश्वरी त्रिपुरासिद्धाको यह विशिष्ट शक्ति प्राप्त है। तभी तो साधक जातकको जरा रोग आदिसे मुक्ति मिलती है। 'खेचरी मुद्रा'से साधक सहस्रारके चन्द्रमण्डलसे निकलने-वाले अमृतका पान करके जरा रोगसे मुक्त हो जाता है।

रक्ताम्बराढ्याम्–'अम्बर' कहते हैं–वस्त्रको। अष्टकोण चक्रेश्वरी त्रिपुरासिद्धाने रक्त वस्त्रोंका धारण किया है।

शुभ-भुक्ति-सिद्ध्या–यहाँ पर ग्यारह सिद्धियोंसे एक सिद्धि 'सर्वभुक्ति सिद्धि'की विशिष्ट शक्ति अष्टकोण चक्रेश्वरी त्रिपुरासिद्धाको प्राप्त है।

समायुतां वैष्णव-दर्शनेन–ग्यारह दर्शनोंसे एक दर्शन 'वैष्णव दर्शन'की विशिष्ट शक्ति अष्टकोण चक्रेश्वरी त्रिपुरासिद्धाको प्राप्त है। इस दर्शनमें उस परम प्रकाशको सर्वव्यापक विष्णु मान कर उसकी उपासना करनेके सिद्धान्तका प्रतिपादन किया गया है। इसलिए कहा गया है कि रोगनिवृत्तिके लिए औषधरूपी विष्णुका चिन्तन करें–'औषधे चिन्तयेद् विष्णुम्' इति।

श्रीचन्द्रचूडाम्–अष्टकोण चक्रेश्वरी त्रिपुरासिद्धाने अपने मस्तक पर चन्द्रमाका धारण किया है।

शरदिन्दुगौरीम्–'इन्दु' कहते हैं–चन्द्रमाको। शरत्कालीन चन्द्रमा अत्यन्त निर्मल दिखाई पड़ता है; क्योंकि इस ऋतुमें आकाशमें बादल नहीं होते हैं; आकाश पूर्ण रूपसे स्वच्छ रहता है। निर्मल आकाशमें निर्मल चन्द्रमाका वर्ण अत्यन्त गौर होता है। गौर वर्णको धवल भी कहते हैं। इस प्रकारसे अष्टकोण चक्रेश्वरी त्रिपुरासिद्धाके शरीरकी कान्ति शरत्कालीन चन्द्रमाके समान धवल है।

नेत्रत्रयोद्भासित-वक्त्रपद्माम्—अष्टकोण चक्रकी अधिष्ठात्री शक्ति श्रीत्रिपुरासिद्धाका मुखकमल तीन आँखोंसे युक्त अत्यन्त शोभायमान हो रहा है।

पाशाङ्कुशाभीतिकपालहस्ताम्—अष्टकोण चक्रेश्वरी त्रिपुरासिद्धाके हाथोंमें पाश, अङ्कुश, अभय मुद्रा तथा कपाल सुशोभित हो रहे हैं। अष्टकोण चक्रेश्वरी त्रिपुरासिद्धा 'चतुर्भुजा' है।

सिद्धां त्रिपुरेति पूर्वाम्—अष्टकोण चक्रमें पराशक्ति 'त्रिपुरासिद्धा'के नामसे चक्रेश्वरीके रूपमें विराजमान है।

नमामि—मैं पूर्ववर्णित उस अष्टकोण चक्रेश्वरी त्रिपुरासिद्धाको नमस्कार करता हूँ॥३॥

॥ इत्यष्टमावरणम् ॥

●

नवमावरणम्

॥ श्रीगायत्रीब्रह्मविद्यायै नमः ॥

त्रिकोण-चक्रस्य निरूपणम्

बन्धूकपुष्पारुणदिव्यरूपं
समस्तसिद्धिप्रदनाम चक्रम्।
कोणत्रयेणैकविनिर्मितञ्च
स्मरामि नादात्मकचित्स्वरूपम्॥१॥

त्रिकोण चक्रका निरूपण

मैं बन्धूक पुष्पके समान लाल वर्णसे युक्त दिव्य रूपवाले, तीन कोणोंसे विनिर्मित, नादात्मक, चित्स्वरूप, सर्वसिद्धिप्रद नामक चक्रका स्मरण करता हूँ।

विमर्श—अब त्रिकोण चक्रका निरूपण किया जा रहा है—बन्धूकपुष्पारुणदिव्यरूपमिति।

बन्धूक-पुष्पारुणदिव्यरूपम्—श्रीचक्रमें नौवाँ चक्र है—त्रिकोण चक्र। बन्धूक पुष्प लाल वर्णका अत्यन्त चमकीला होता है। त्रिकोण चक्रका वर्ण बन्धूक पुष्पके समान लाल तथा चमकीला है। त्रिकोण चक्रका रूप अत्यन्त अलौकिक होनेके कारण इसे 'दिव्यरूप' शब्दसे परिभाषित किया गया है।

समस्त-सिद्धिप्रद-नाम चक्रम्—सभी सिद्धियोंका प्रदान करनेवाला होनेके कारण त्रिकोण चक्रको 'सर्वसिद्धिप्रद चक्र' कहा गया है। पदार्थ उसकी महिमासे जाना जाता है। त्रिकोण चक्रकी उपासनाका फल है—सर्वसिद्धिप्राप्ति। व्यक्तिकी इच्छा जब पूर्णताको प्राप्त करती

है तब वह सिद्ध बन जाता है। 'इच्छा' तो मूल रूपसे एकमात्र आनन्दको प्राप्त करनेकी होती है। व्यक्ति अन्यत्र बाह्य पदार्थोंमें उसका अन्वेषण करता रहता है; जबकि स्वयं आनन्दस्वरूप है। आनन्दस्वरूप एकमात्र परम शिव है। इस प्रकारसे 'परम शिव'के पदको प्राप्त करना ही मूल इच्छा है। इसकी सिद्धिको 'सर्वसिद्धि' कहते हैं; क्योंकि इसकी सिद्धि हो जानेसे सिद्ध करनेके लिए कुछ भी शेष नहीं रह जाता है; व्यक्ति पूर्णताको प्राप्त कर लेता है। त्रिकोण चक्र इसी 'सर्वसिद्धि'का प्रदान करता है। इसलिए वह 'सर्व-सिद्धिप्रद चक्र'के रूपमें ख्यात है।

कोणत्रयेणैकविनिर्मितं च—तीन कोणोंसे विशिष्ट प्रकारसे निर्मित होनेके कारण इसे 'त्रिकोण चक्र' कहते हैं। त्रिकोण दो प्रकारके होते हैं—ऊर्ध्वाग्र कोणात्मक तथा अधोऽग्र कोणात्मक। ऊर्ध्वाग्र कोणात्मक त्रिकोणका अग्र पूर्व दिशाकी ओर होता है; जबकि अधोऽग्र कोणात्मक त्रिकोणका अग्र पश्चिम दिशाकी ओर होता है। ऊर्ध्वाग्र कोणात्मक चार त्रिकोणोंको शिव-त्रिकोण तथा अधोऽग्र कोणात्मक पाँच त्रिकोणोंको शक्ति-त्रिकोण कहते हैं। दक्षिणाचार पद्धतिके अनुसार श्रीदक्षिणामूर्ति गुरुके साधकोंके द्वारा श्रीचक्रके अन्तर्गत श्रीगायत्री ब्रह्मविद्या परम्परामें शक्ति-त्रिकोणकी उपासना की जाती है। शक्ति-त्रिकोणका अग्रभाग पश्चिम दिशाकी ओर होता है और दायाँ कोण ईशान तथा वायाँ कोण आग्नेय दिशामें स्थित रहते हैं। यहाँ पर इस परम्पराका विशेष ध्यान रखें। श्रीगायत्री ब्रह्मविद्याका मुख सदैव पश्चिम दिशाकी ओर होता है।

नादात्मकचित्स्वरूपम्—त्रिकोण चक्र नादात्मक है। अर्द्ध चन्द्रको 'नाद' कहते हैं। बिन्दु शिव है तो नाद शक्ति है। शिव चित्स्वरूप है तो उसकी शक्ति भी चिन्मयी है। इसलिए त्रिकोणको नादात्मक तथा चित्स्वरूप कहते हैं।

स्मरामि—मैं पूर्ववर्णित उस नादात्मक चित्स्वरूप त्रिकोण चक्रका स्मरण करता हूँ॥१॥

गुरुसन्ततीनां स्वरूपम्

तस्य त्रिकोणस्य च पूर्वरेखा-
पूर्वे त्रिरेखा ननु चिन्तनीयाः।
तासु स्थिताः श्रीगुरुसन्ततीस्ताः
स्वकल्पमार्गेण सदा स्मरामि॥

गुरुपरम्पराका स्वरूप

मैं उस त्रिकोणकी पूर्वी रेखाके पूर्वमें कल्पित तीन रेखाओंका चिन्तन करता हूँ तथा उनमें स्थित गुरुपरम्पराका अपने कल्पके अनुसार सदैव स्मरण करता हूँ।

विमर्श–अब त्रिकोणकी पूर्व दिशामें कल्पित तीन रेखाओंमें स्थित गुरुपरम्पराके स्वरूपका वर्णन किया जा रहा है–तस्येति।

तस्य त्रिकोणस्य च पूर्वरेखापूर्वे त्रिरेखाः ननु चिन्तनीयाः–पूर्वोक्त त्रिकोणकी पूर्वी रेखाके पूर्वमें तीन रेखाएँ विद्यमान हैं। ये तीनों रेखाएँ कल्पित हैं। इसलिए ये दृश्य रूपमें विराजमान नहीं हैं।

तासु स्थिताः श्रीगुरुसन्ततीः ताः–'सन्तति' कहते हैं–परम्पराको। उन तीनों रेखाओंमें पारम्परिक रूपसे गुरुजन विराजमान हैं।

स्वकल्प-मार्गेण–'कल्प' कहते हैं–शास्त्रको। शास्त्रका आशय है–आचार पद्धति। आचार पद्धतिके अन्तर्गत अपनी शास्त्रीय परम्पराके अनुरूप गुरुपरम्पराका निर्धारण होता है। तदनुसार उन गुरुओंकी उपासना की जाती है।

सदा स्मरामि–मैं पूर्ववर्णित तीन रेखाओंमें स्थित उस गुरु-परम्पराका सदैव स्मरण करता हूँ॥

दिव्यौघ-सिद्धौघ-सुमानवौघ-गुरूणां स्वरूपम्

दिव्यौघ-सिद्धौघ-सुमानवौघान्
रेखाद्यगान् नौमि गुरूंश्च सर्वान्॥

दिव्यौघ, सिद्धौघ तथा सुमानवौघ गुरुजनोंका स्वरूप

मैं प्रथम रेखामें स्थित दिव्यौघ, सिद्धौघ तथा सुमानवौघ सभी गुरुजनोंको नमस्कार करता हूँ।

विमर्श—अब प्रथम रेखामें स्थित दिव्यौघ, सिद्धौघ तथा सुमानवौघ गुरुजनोंके स्वरूपका वर्णन किया जा रहा है—दिव्यौघ-सिद्धौघ-सुमानवौघानिति।

दिव्यौघ-सिद्धौघ-सुमानवौघान्—'ओघ' कहते हैं—समूहको। दिव्य गुरुजनोंके समूहको 'दिव्यौघ' कहते हैं। दिव्य गुरुजनोंकी संख्या बारह है; जैसे—आदिनाथ, आदिनाथकी शक्ति, सदाशिव, सदाशिवकी शक्ति, ईश्वर, ईश्वरकी शक्ति, रुद्र, रुद्रकी शक्ति, विष्णु, विष्णुकी शक्ति, ब्रह्मा तथा ब्रह्माकी शक्ति। 'आदिनाथ, सदाशिव, ईश्वर, रुद्र, विष्णु तथा ब्रह्मा' ये षट् शाम्भव भी कहलाते हैं। इस अवस्थामें इनकी उपासना विना शक्तिकी की जाती है। दिव्य गुरुजनोंकी उपासना उनकी शक्तियोंके साथ की जाती है; क्योंकि इससे शिष्यको दिव्य वात्सल्य प्रेमकी प्राप्ति होती है।

सिद्ध गुरुजनोंके समूहको 'सिद्धौघ' कहते हैं। सिद्ध गुरुजनोंकी संख्या ग्यारह है; जैसे—सनक, सनन्द, सनातन, सनत्कुमार, सनत्सुजात, ऋभुक्षज, दत्तात्रेय, रैवतक. वामदेव. व्यास तथा शुक। इन ग्यारह सिद्ध गुरुजनोंकी उपासना विना शक्तिकी की जाती है।

सुमानव गुरुजनोंके समूहको 'सुमानवौघ' कहते हैं। यहाँ पर 'सु' शब्द उच्च कोटिके मानव गुरु-जनोंका सङ्केत करता है। 'सुमानवौघ'के अन्तर्गत छह सुमानव गुरुजन आते हैं; जैसे—नृसिंह, महेश, भास्कर, महेन्द्र, माधव तथा विष्णु। इन छह सुमानव गुरुजनोंकी उपासना विना शक्तिकी की जाती है।

रेखाद्यगान्—त्रिकोणकी पूर्वी रेखाके पूर्वमें कल्पित तीन रेखाएँ गुरुमण्डलकी हैं। सृष्टि क्रमके अनुसार बाहरसे अन्दरकी ओर चलने पर पहले आनेवाली रेखा प्रथम रेखा कहलाती है। इस प्रथम रेखामें

दिव्यौघ, सिद्धौघ तथा सुमानवौघ गुरुजनोंकी उपासना की जाती है।

गुरून् च सर्वान्–गुरुमण्डलकी रेखामें स्थित सभी व्यक्ति गुरु कहलाते हैं; चाहे वे देवता, सिद्ध अथवा मानव क्यों न हों। यहाँ पर दिव्यौघ, सिद्धौघ तथा सुमानवौघ गुरुजनोंकी उपस्थिति है। वे सभी 'गुरु' पदका धारण करते हैं।

नौमि–मैं पूर्ववर्णित उन सभी दिव्यौघ, सिद्धौघ तथा सुमानवौघ गुरुजनोंको नमस्कार करता हूँ।।

स्व-श्रीगुरुक्रमेण सप्तगुरूणां स्वरूपम्

रेखाद्वितीयस्थितसुप्रसिद्धान्
गुरूँश्च सर्वान् स्वगुरुक्रमेण।
शान्तान् द्विनेत्रान् स्फटिकाभशुभ्रान्
सशक्तिकान् नौमि वराभयाढ्यान्।।

अपनी श्रीगुरु आदि सात गुरुजनोंका स्वरूप

मैं द्वितीय रेखामें स्थित सुप्रसिद्ध, अपने गुरुके क्रमसे सभी गुरुजनोंको नमस्कार करता हूँ; जो कि शान्त स्वभाववाले, दो आँखोंवाले, स्फटिकके समान शुभ्र कान्तिवाले हैं; वर मुद्रा और अभय मुद्राका धारण करनेवाले हैं तथा अपनी शक्तियोंके साथ विराजमान हैं।

विमर्श–अब द्वितीय रेखामें स्थित अपने 'श्रीगुरु' आदि सात गुरुजनोंके स्वरूपका वर्णन किया जा रहा है–रेखाद्वितीयस्थित-सुप्रसिद्धानिति।

रेखाद्वितीयस्थित-सुप्रसिद्धान्–गुरुमण्डलकी मध्य रेखाको द्वितीय रेखा कहते हैं। इस रेखामें साधककी अपनी गुरुपरम्पराकी उपासना की जाती है। 'प्रसिद्ध' शब्दसे सङ्केत प्राप्त होता है कि यहाँ पर पारम्परिक दक्षिणाचार पद्धतिके अन्तर्गत 'श्रीविद्या'का प्रदान करनेवाले गुरुकी उपासना की जाती है और गुरुको भी आचार-विचारसे पवित्र

होना चाहिए।

गुरून् च सर्वान् स्वगुरुक्रमेण–यहाँ पर स्वगुरुके क्रमसे सात पीढ़ियोंका ग्रहण होता है। सात पीढ़ियाँ हैं–श्रीगुरु, परम गुरु, परापर गुरु, परमेष्ठि गुरु, परमाचार्य गुरु, पूर्वसिद्ध गुरु तथा आदिसिद्ध गुरु। यहाँ पर 'पद'का उच्चारण करके सात पीढ़ियोंके अन्तर्गत आनेवाले गुरुजनोंकी उपासना की जाती है।

शान्तान्–'श्रीगुरु' आदि सभी सात गुरुजनोंके शान्त स्वभावकी उपासना करें। जब प्रसन्न स्वरूपकी उपासना करेंगे तो प्रसन्नता ही प्राप्त होगी। जहाँ किसी प्रकारका कोई विक्षोभ नहीं है वहाँ शान्ति है; सारी चित्तकी वृत्तियाँ सजातीय सानुकूल बन कर प्रवाहित होती रहती हैं।

द्विनेत्रान्–'श्रीगुरु' आदि सभी सात गुरुजनोंकी दो-दो आँखें हैं। वे 'द्विनेत्र' कहलाते हैं। 'द्विनेत्र' शब्द सङ्केत देता है कि इस गुरु-परम्परामें अनेक नेत्रोंका धारण करनेवाले गुरुजन भी आते हैं; किन्तु उनके बहुनेत्रधारी स्वरूपकी उपासना न करके उनके द्विनेत्रधारी स्वरूपकी उपासना करें।

स्फटिकाभशुभ्रान्–'श्रीगुरु' आदि सभी सात गुरुजनोंके शरीरकी कान्ति स्फटिकके समान शुभ्र है।

वराभयाढ्यान्–'श्रीगुरु' आदि सभी सात गुरुजनोंकी दो-दो भुजाएँ हैं और इन भुजाओंमें उन्होंने वर मुद्रा तथा अभय मुद्राका धारण किया है। गुरुजन अभय मुद्रासे भयङ्कर संसारसे भयभीत शिष्यको अभय प्रदान करते हैं तथा वर मुद्रासे श्रद्धावान् शिष्यको ज्ञान प्रदान करते हैं।

सशक्तिकान्–'शक्ति' शब्द सङ्केत देता है कि शक्तियोंके साथ 'श्रीगुरु' आदि सभी सात गुरुजनोंकी उपासना करें। शक्ति दो प्रकारकी होती है–राग शक्ति तथा विराग शक्ति। 'शक्ति' कहते हैं–भार्याको। भार्या प्रत्यक्ष शक्ति होती है। भोगकी इच्छा रखनेवाले साधक

साधनाके लिए भार्याको साधिका बना देते हैं। ऐसे साधक 'राग शक्ति'से युक्त होते हैं; जबकि मोक्षकी इच्छा रखनेवाले साधक प्रत्यक्ष भार्यासे वियुक्त रहते हैं और उनकी साधिका 'विरक्ति' कहलाती है। वे 'विराग शक्ति'से युक्त होते हैं। 'भोग और मोक्ष' दोनों पर उनका नियन्त्रण रहता है। प्रत्येक साधककी एक साधिका शक्ति अवश्य होनी चाहिए। इसलिए यहाँ पर 'श्रीगुरु' आदि सभी सात गुरुजनोंकी उपासना उनकी शक्तियोंके साथ की जाती है।

नौमि–मैं पूर्ववर्णित 'श्रीगुरु' आदि सभी सात गुरुजनोंको नमस्कार करता हूँ।।

श्रीदक्षिणामूर्तिगुरोः स्वरूपम्

शान्तं त्रिनेत्रं विधुकान्तिशुभ्रं
संविभ्रतं दोष्कशुभैश्चतुर्भिः।
मुक्ताक्षमालां कलशं सुधायाः
श्रीज्ञानमुद्रामपि पुस्तकञ्च।।
दिव्याम्बरं चन्दनगन्धलेपैः
समुज्ज्वलाङ्गं मणिरत्नकैश्च।
वीरासनस्थञ्च शशाङ्कचूडं
श्रीदक्षिणामूर्तिगुरुं स्मरामि।।२।।

श्रीदक्षिणामूर्ति गुरुका स्वरूप

मैं शान्त स्वरूपवाले, तीन आँखोंवाले, चन्द्रमाके समान शुभ्र कान्तिवाले, चार शुभ भुजाओंसे मोतीकी माला, अमृतका कलश, ज्ञान मुद्रा तथा पुस्तकका धारण करनेवाले, दिव्य वस्त्रोंसे युक्त, चन्दन गन्धके लेपसे तथा मणि-रत्नोंसे उज्ज्वल अङ्गवाले, वीरासन पर बैठे हुए, मस्तक पर चन्द्रमाका धारण करनेवाले श्रीदक्षिणामूर्ति गुरुका स्मरण करता हूँ।

विमर्श–अब तृतीय रेखामें स्थित श्रीदक्षिणामूर्ति गुरुके स्वरूपका वर्णन किया जा रहा है–शान्तमिति।

शान्तम्–गुरुमण्डलकी तृतीय रेखामें श्रीदक्षिणामूर्ति 'शिव' गुरु-की उपासना की जाती है। यहाँ पर जब श्रीदक्षिणामूर्तिके रूपमें उपासित गुरुमूर्ति 'शिव'के शान्त स्वरूपकी उपासना की जाती है तभी प्रसन्नता प्राप्त होती है और साधक क्षोभरहित हो पाता है।

त्रिनेत्रम्–श्रीदक्षिणामूर्ति 'शिव' गुरुकी तीन आँखें हैं। इसलिए वे 'त्रिनेत्र' कहलाते हैं। शिवको ही 'त्रिनेत्र' कहते हैं।

विधु-कान्तिशुभ्रम्–'विधु' कहते हैं–चन्द्रमाको। चन्द्रमाकी कान्ति शुभ्र गौर वर्णकी होती है। श्रीदक्षिणामूर्ति गुरुके शरीरकी कान्ति चन्द्रमाके समान गौर वर्णकी है।

संविभ्रतं दोष्कशुभैः चतुर्भिः मुक्ताक्षमालां कलशं सुधायाः श्रीज्ञानमुद्राम् अपि पुस्तकं च–'दोः' कहते हैं–भुजाको। श्रीदक्षिणामूर्ति गुरु चार भुजाओंसे युक्त हैं। उन्होंने उन चार भुजाओंसे मोतीकी माला, अमृतका कलश, ज्ञान मुद्रा तथा पुस्तकका धारण किया है। श्रीदक्षिणामूर्ति 'शिव' 'चतुर्भुज' हैं।

दिव्याम्बरम्–'दिव्य' कहते हैं–अलौकिकको। 'अम्बर' कहते हैं–वस्त्रको। श्रीदक्षिणामूर्ति गुरुने जिन वस्त्रोंका धारण किया है वे अलौकिक हैं। ये वस्त्र कभी भी अपवित्र नहीं होते हैं और न ही मलिन होते हैं बल्कि सदैव चमकते रहते हैं।

चन्दनगन्धलेपैः समुज्ज्वलाङ्गं मणिरत्नकैः च–श्रीदक्षिणामूर्ति गुरुने अपने अङ्गोंमें सुगन्धित श्वेत चन्दनका लेप किया है तथा मणि-रत्नोंसे निर्मित अलङ्कारोंका धारण किया है। इससे उनके सारे अङ्ग अत्यधिक उज्ज्वल दिखाई दे रहे हैं। 'संशोभिताङ्ग' पाठान्तरसे भी यही बोध होता है कि सुगन्धित चन्दनके लेपोंसे तथा मणिरत्नोंके धारण करनेसे श्रीदक्षिणामूर्ति गुरुके समस्त अङ्ग अत्यन्त शोभित हो रहे हैं।

शशाङ्कचूडम्–'शशाङ्क' कहते हैं–चन्द्रमाको। श्रीदक्षिणामूर्ति गुरुने अपने मस्तक पर चन्द्रमाका धारण किया है। इसलिए वे 'चन्द्रचूड' शिव कहलाते हैं।

वीरासनस्थं च–एक पैरको दूसरे जङ्घे पर रख कर, दूसरे पैरको पीछेकी ओर मोड़ कर बैठनेको 'वीरासन' कहते हैं। वीरोंके द्वारा प्रयुक्त किये जानेवाले योगासनको 'वीरासन'के नामसे अङ्कित किया गया है। श्रीदक्षिणामूर्ति गुरु वीरासन पर आसीन हैं।

श्रीदक्षिणामूर्तिगुरुम्–दक्षिण दिशाकी ओर मुख करके विराजमान होनेवाले शिवको 'श्रीदक्षिणामूर्ति शिव' कहते हैं। श्रीविद्याका साधक जब श्रीचक्रकी उपासना करता है तो उसका मुख पूर्वकी ओर होता है और श्रीचक्रका मुख्य द्वार तथा अधिष्ठात्री श्रीगायत्री ब्रह्मविद्याका मुख पश्चिम दिशाकी ओर होता है। जब श्रीगुरु श्रीविद्याकी दीक्षा श्रीचक्रके सम्मुखमें स्थित शिष्यको देते हैं तो वे दक्षिण दिशाकी ओर मुख करके, शिष्यके वाम भागमें तथा अधिष्ठात्री देवीके दक्षिण भागमें स्थित स्थान पर आसीन होते हैं। यहाँ पर श्रीदक्षिणामूर्ति शिव गुरुके रूपमें उपस्थित हैं और दक्षिणकी ओर मुख करके श्रीचक्रके दक्षिण तथा साधकके वाममें आसीन हैं।

श्रीदक्षिणामूर्ति गुरुकी श्रीगायत्री ब्रह्मविद्या परम्परामें वामाचार पद्धतिका प्रयोग नहीं किया जाता है; बल्कि सदैव दक्षिणाचार पद्धतिका अवलम्बन किया जाता है। सत्त्वगुणसे सम्पन्न उपासना करनेसे मोक्षकी सिद्धि होती है। इसलिए यहाँ पर गौर वर्णवाले श्रीदक्षिणामूर्ति गुरुकी उपासना की जाती है। शास्त्रोंमें अन्धकारको अज्ञान तथा प्रकाशको ज्ञान कहते हैं। अन्धकार कृष्ण है; जबकि प्रकाश शुभ्र है। ज्ञानसे ही मोक्षकी प्राप्ति होती है। इसलिए ज्ञानस्वरूप परम प्रकाश श्रीदक्षिणामूर्ति 'शिव'की गुरुके रूपमें उपासना की जाती है। 'गु'का अर्थ है–अन्धकार। 'रु'का अर्थ है–प्रकाश। अन्धकारसे प्रकाशकी ओर जो ले जाता है उसे 'गुरु' कहते हैं और श्रीदक्षिणामूर्ति शिव यहाँ पर सर्वश्रेष्ठ आदिगुरुके रूपमें

विराजमान हैं।

ध्यान रहे कि जो साधक किसी सद्गुरुसे विधिवत् श्रीगायत्री ब्रह्मविद्या मन्त्रकी दीक्षा नहीं ले पाते हैं, ऐसी स्थितिमें वे *'गायत्री ब्रह्मविद्या'* (सपर्याखण्डम्) में उल्लिखित 'स्व-दीक्षाविधि'से दीक्षित हो सकते हैं। यह विधि 'आदेश क्रम'में प्रस्तुत की गयी है जो कि पूर्णरूपसे उपासनाको सफल बनानेमें समर्थ है। 'साधक अवश्य सिद्धिको प्राप्त करेगा' इसमें कोई सन्देह नहीं है।

स्मरामि–मैं पूर्ववर्णित गुरुमण्डलमें सर्वोच्च पद पर आसीन गुरुमूर्ति श्रीदक्षिणामूर्ति 'शिव'का स्मरण करता हूँ॥२॥

षडङ्गयुवतीनां स्वरूपम्

स्यन्दे त्रिकोणाद्बहिरङ्गदेव्यः
षडङ्गपूर्वा हि युवत्यभिख्याः।
रक्ताः स्वमुद्राङ्कितपाणिपद्माः
प्रत्येककोणयुगलं स्मरामि॥३॥

षडङ्गयुवतियोंका स्वरूप

मैं चक्रमें त्रिकोणके बाहर षडङ्गयुवति नामक अङ्गदेवियोंका स्मरण करता हूँ; जो कि रक्त वर्णवाली हैं; अपनी-अपनी मुद्राओंके चिह्नसे अङ्कित हाथोंवाली हैं तथा प्रत्येक कोणमें युगलात्मक रूपसे स्थित हैं।

विमर्श–अब त्रिकोणके बाहर प्रत्येक कोणमें युगलात्मक रूपसे स्थित षडङ्ग-युवति नामक अङ्गदेवियोंके स्वरूपका वर्णन किया जा रहा है–स्यन्द इति।

स्यन्दे–'स्यन्द' कहते हैं–चक्रको। यहाँ पर 'स्यन्द' शब्दसे त्रिकोण चक्रका ग्रहण होता है।

त्रिकोणाद् बहिः–षडङ्ग-युवतियोंका अवस्थान त्रिकोणके बाहर प्रत्येक कोणमें है।

अङ्गदेव्यः षडङ्गपूर्वाः हि युवत्यभिख्याः–'अभिख्या' कहते हैं– संज्ञाको। त्रिकोण चक्रमें छह अङ्ग देवियोंकी अवस्थिति है। ये छह अङ्ग देवियाँ नव यौवन अवस्थाकी हैं; इसलिए 'षडङ्ग युवति'के नामसे प्रसिद्ध हैं। त्रिकोण चक्रकी अधिष्ठात्री शक्तिकी छह अङ्ग देवियाँ हैं–हृदयदेवी, शिरोदेवी, शिखादेवी, कवचदेवी, नेत्रदेवी तथा अस्त्रदेवी।

प्रत्येक-कोण-युगलम्–हृदयदेवी आदि सभी छह अङ्ग-देवियाँ त्रिकोणके बाहर प्रत्येक कोणमें युगलात्मक रूपसे विराजमान हैं। इनकी अवस्थिति क्रमानुसार त्रिकोणके अग्र कोण, दक्ष कोण तथा वाम कोणके बाहर होती है; जैसे–हृदय-देवी अग्र कोणके दायें, शिरो-देवी दक्ष कोणके वायें, शिखा-देवी वाम कोणके वायें, कवच-देवी अग्र कोणके वायें, नेत्र-देवी दक्ष कोणके दायें तथा अस्त्र-देवी वाम कोणके दायें।

रक्ताः–हृदयदेवी आदि सभी छह अङ्गदेवियोंके शरीरकी कान्ति रक्त वर्णकी है।

स्वमुद्राङ्कित-पाणिपद्माः–हृदयदेवी आदि सभी छह अङ्ग-देवियोंके करकमलोंमें अपनी-अपनी मुद्राके चिह्न अङ्कित हैं। अङ्ग-देवियोंकी अपनी-अपनी मुद्राको 'अङ्गमुद्रा' कहते हैं। अङ्गमुद्रा छह हैं; जैसे– हृदय मुद्रा, शिरो मुद्रा, शिखा मुद्रा, कवच मुद्रा, नेत्र मुद्रा तथा अस्त्र मुद्रा। हृदय-देवीकी अपनी अङ्ग मुद्रा है–हृदय मुद्रा। इसी प्रकार शिरो-देवीकी शिरो मुद्रा, शिखा-देवीकी शिखा मुद्रा, कवच-देवीकी कवच मुद्रा, नेत्र-देवीकी नेत्र मुद्रा तथा अस्त्र-देवीकी अस्त्र मुद्रा है।

स्मरामि–मैं पूर्ववर्णित हृदय-देवी आदि सभी छह अङ्गदेवियोंका स्मरण करता हूँ॥३॥

त्रिकोणाद्बहिः प्रत्येककोणाग्रे षोडशी-तिथिनित्याकलादीनां नित्याकलानां स्वरूपम्

एतत्त्रिकोणाद्बहिरग्रकोणे
नित्याकलां तां हि तिथिस्वरूपाम्।

दक्षे कलां सप्तदशीं च वामे
ह्यष्टादशीं तां सकलाः सुरम्याः।।
सिन्दूरवर्णा धृतचन्द्रचूडाः
प्रोत्फुल्लरक्ताब्जदलत्रिनेत्राः।
पाशं सृणिञ्चापशरान्दधानाः
नित्याकलास्ताः सततं स्मरामि।।४।।

षोडशी तिथि नित्याकला आदि तीन नित्याकलाओंका स्वरूप

मैं इस त्रिकोणके बाहर अग्र कोणमें तिथि स्वरूप उस नित्या कलाका, दक्षमें सप्तदशीका तथा वाममें उस अष्टादशीका निरन्तर स्मरण करता हूँ; जो कि सभी मनका रमण करानेवाली हैं; सिन्दूर वर्णवाली हैं; मस्तक पर चन्द्रमाका धारण की हुई हैं; विकसित लाल कमलके समान तीन आँखोंवाली हैं तथा पाश, अङ्कुश, धनुष और बाणका धारण करनेवाली नित्याकलाएँ हैं।

विमर्श—अब त्रिकोणके बाहर कोणोंमें स्थित षोडशीतिथि नित्याकला आदि तीन नित्याकलाओंके स्वरूपका निरूपण किया जा रहा है—एतत्त्रिकोणाद्बहिरिति।

एतत्त्रिकोणाद् बहिः—त्रिकोणके बाहर प्रत्येक कोणमें एक-एक नित्याकला विराजमान है।

अग्रकोणे नित्याकलां तां हि तिथिस्वरूपाम्—त्रिकोणके बाहर अग्र कोणमें तिथिरूपिणी नित्याकलाका अवस्थान है। पहले हमने देखा कि षोलह तिथियाँ हैं। प्रतिपदासे लेकर पूर्णिमा या अमावास्या तक पन्द्रह तिथियाँ कालके मानके रूपमें प्रचलित हैं तथा षोलहवीं तिथि उन सभी पन्द्रह तिथियोंमें चेतनाके रूपमें विद्यमान है। यहाँ पर तिथि नित्याकला है—षोडशीतिथि नित्याकला। यही षोडशीतिथि नित्या-कला पन्द्रह तिथियोंके प्रतिनिधिके रूपमें यहाँ पर त्रिकोणके बाहर अग्र कोणमें स्थित है जो कि सृष्टिकालिकी सम्पादनकर्त्री है।

दक्षे कलां सप्तदशीं च–त्रिकोणके बाहर दक्ष कोणमें सप्तदशी नित्याकला विराजमान है जो कि स्थितिकालिकी सम्पादनकर्त्री है।

वामे हि अष्टादशीं ताम्–त्रिकोणके वाम कोणमें अष्टादशी नित्या कला विराजमान है जो कि संहारकालिकी सम्पादनकर्त्री है।

सकलाः–'सकल' शब्दसे षोडशीतिथि नित्याकला, सप्तदशी नित्याकला तथा अष्टादशी नित्याकलाका बोध होता है।

सुरम्याः–षोडशीतिथि नित्याकला आदि तीनों नित्याकलाएँ अत्यन्त सुन्दर हैं; मनका हरण कर लेती हैं।

सिन्दूरवर्णाः–षोडशीतिथि नित्याकला आदि तीनों नित्या-कलाओंके शरीरकी कान्ति सिन्दूर वर्णकी है।

धृतचन्द्रचूडाः–षोडशीतिथि नित्याकला आदि तीनों नित्या-कलाओंने अपने-अपने मस्तक पर चन्द्रमाका धारण किया है।

प्रोत्फुल्लरक्ताब्जदलत्रिनेत्राः–'रक्ताब्ज' कहते हैं–लाल कमलको। षोडशीतिथि नित्याकला आदि तीनों नित्याकलाओंकी तीन-तीन आँखें हैं। वे 'त्रिनेत्रा' कहलाती हैं। इन तीनों नेत्रोंकी उपमा पूर्ण रूपसे खिले हुए लाल कमलके दलोंसे दी गयी है। आँखें कमल दलके समान रक्त वर्णकी हैं। 'प्रोत्फुल्ल' शब्दसे बड़ी-बड़ी आँखोंका संकेत प्राप्त होता है। बड़ी-बड़ी आँखें सदैव आकर्षक होती हैं।

पाशं सृणिं चापशरान् दधानाः–षोडशीतिथि नित्याकला आदि तीनों नित्याकलाएँ 'चतुर्भुजा' हैं। उन्होंने अपनी चारों भुजाओंमें पाश, अङ्कुश, धनुष तथा बाणोंका धारण किया है।

नित्याकलाः–परा शक्तिको 'नित्या' शब्दसे भी उल्लिखित किया गया है। कार्यविशेषके अनुसार शक्तिका नामकरण हुआ है।

ध्यान रहे कि त्रिकोण अपराशक्तिरूप इच्छा-ज्ञान-क्रियात्मक चक्र है। त्रिकोणके अग्रमें अपराक्रियात्मिका षोडशीतिथि नित्याकला, दक्षमें ज्ञानात्मिका सप्तदशी नित्याकला तथा वाममें इच्छात्मिका अष्टादशी नित्याकला विराजमान हैं। जब संख्याके रूपमें सृष्टिक्रमसे

गणना की जाती है तब पन्द्रह तिथि नित्याकलाएँ 'पञ्चदशी' तथा उन सबमें रहनेवाली आधारभूता नित्याकला 'षोडशी' कहलाती है और यही षोडशीतिथि नित्याकला त्रिकोणके अग्रमें स्थित है। जब क्रियात्मिकाके रूपमें षोडशीतिथि नित्याकला है तो ज्ञानात्मिका नित्याकला यहाँ पर सप्तदशीके रूपमें जानी जाती है जो कि त्रिकोणके दक्षमें स्थित है। इस प्रकारसे इच्छात्मिका नित्याकलाको अष्टादशी कहते हैं और यह नित्याकला त्रिकोणके वाममें स्थित है।

षोडशीतिथि नित्याकला आदि तीनों नित्याकलाएँ पारमेश्वरी पराशक्तिकी अपराक्रियात्मिका 'परा, परापरा तथा अपरा'के रूपमें भी जानी जाती हैं। क्रियात्मिका षोडशीतिथि नित्याकला 'अपरा' है; ज्ञानात्मिका सप्तदशी नित्याकला 'परापरा' है तथा इच्छात्मिका अष्टादशी नित्याकला 'परा' शक्ति है।

यही अष्टादशी-सप्तदशी-षोडशी नित्याकलाओंके रूपमें परिचित इच्छा-ज्ञान-क्रियात्मिका त्रिपुरा शक्ति एकादश आवरणके अन्तर्गत महानित्याकलाके रूपमें विराजमान है। यही सच्चिदानन्दरूपिणी क्रियात्मिका अपरा-शक्ति पीठशक्ति श्रीगायत्री ब्रह्मविद्याके रूपमें अवस्थित है और यही दशम आवरणमें रति आदि पञ्चदशी देवियोंके रूपमें प्रसिद्ध है; जबकि एकादश आवरणके अन्तर्गत षोडशीके रूपमें विराजित है।

ताः सततं स्मरामि—मैं पूर्ववर्णित उन षोडशीतिथि नित्याकला आदि तीनों नित्याकलाओंका निरन्तर स्मरण करता हूँ।।४।।

जृम्भणबाणशक्त्यादीनां चतुष्कायुधशक्तीनां स्वरूपम्

विचिन्त्य भागञ्च चतुष्कमत्र
तस्मिन् स्थितां जृम्भणबाणशक्तिम्।
सम्मोहिनीं चापशरीरशक्तिं
श्रीपाशशक्तिं वशकारिणीञ्च।।

तां स्तम्भनाख्यां सृणिशक्तिमन्याम्
एताश्चतुष्कायुधशक्तिनाम्न्यः।
सर्वाः स्मितास्यामितमस्तकास्ता
वराभयाढ्या अरुणाः स्मरामि॥५॥

जृम्भण बाणशक्ति आदि चार आयुध शक्तियोंका स्वरूप

मैं यहाँ पर चार भागोंकी कल्पना करके उनमें स्थित जृम्भण करनेवाली बाण शक्ति, सम्मोहन करनेवाली चाप शक्ति, वशीकरण करनेवाली पाश शक्ति तथा स्तम्भन नामक अङ्कुश शक्तिका स्मरण करता हूँ; जो कि 'चार आयुध शक्तियाँ' कहलाती हैं; सभी विहसित मुखोंसे युक्त अनगिनत मस्तकोंवाली, वर मुद्रा तथा अभय मुद्रासे युक्त अरुण वर्णवाली हैं।

विमर्श—अब त्रिकोणके कल्पित चार भागोंमें स्थित जृम्भण बाण शक्ति आदि चार आयुध शक्तियोंके स्वरूपका वर्णन किया जा रहा है—विचिन्त्येति।

विचिन्त्य भागं च चतुष्कम् अत्र—'अत्र' शब्दसे त्रिकोणका ग्रहण होता है। 'विचिन्त्य' शब्दसे कल्पनाका संकेत प्राप्त होता है। त्रिकोणकी चार भागोंमें कल्पना करें। यहाँ पर त्रिकोणका वास्तविक विभाजन नहीं होता है; बल्कि यह विभाजन कल्पित ही है। त्रिकोणका चार भागोंमें विभाजन करते हैं तो प्रथम भागको अग्र भाग, द्वितीय भागको दक्ष भाग, तृतीय भागको वाम भाग तथा चतुर्थ भागको मध्य भाग कहते हैं।

तस्मिन् स्थिताम्—'तस्मिन्' शब्दसे त्रिकोणका ग्रहण होता है। 'स्थिताम्' शब्द प्रत्येक भागकी पृथक् शक्तिका बोध कराता है।

जृम्भण-बाण-शक्तिम्—पहली आयुध शक्ति है—जृम्भण बाण शक्ति। जृम्भण बाण शक्ति शत्रुको जृम्भित कर देती है। शत्रु आलस्य अवस्थाको प्राप्त करके जम्हाई लेता रहता है। उसकी बुद्धि काम

नहीं करती है। यह शक्ति त्रिकोणके अग्र भागमें स्थित है।

सम्मोहिनीं चाप-शरीर-शक्तिम्–दूसरी आयुध शक्ति है–सम्मोहन चाप शक्ति। 'चाप' कहते हैं–धनुषको। सम्मोहन चाप शक्ति शत्रुको सम्मोहित कर देती है। उसके तेजसे शत्रु मूर्छित हो जाता है। यह शक्ति त्रिकोणके दक्ष भागमें स्थित है।

श्रीपाशक्तिं वशकारिणीं च–तीसरी आयुध शक्ति है–वशीकरण पाश शक्ति। वशीकरण पाश शक्ति शत्रुको वशमें कर लेती है। शत्रु पराधीन हो जाता है। वह मानसिक परतन्त्रताको प्राप्त हो जाता है। यह शक्ति त्रिकोणके वाम भागमें स्थित है।

तां स्तम्भनाख्यां सृणि-शक्तिम् अन्याम्–चौथी आयुध शक्ति है–स्तम्भन अङ्कुश शक्ति। स्तम्भन अङ्कुश शक्ति शत्रुकी मानसिक तथा शारीरिक दोनों प्रकारकी गतियों पर अङ्कुश लगाती है। शत्रुकी गति-को स्तम्भित करनेके लिए यह पूर्णरूपसे समर्थ है। यह शक्ति त्रिकोणके मध्य भागमें स्थित है।

एताः चतुष्कायुधशक्तिनाम्न्यः–त्रिकोण चक्रके कल्पित चार भागोंमें स्थित पूर्वोक्त 'जृम्भण बाण शक्ति, सम्मोहन चाप शक्ति, वशीकरण पाश शक्ति तथा स्तम्भन अङ्कुश शक्ति' चार आयुध शक्तियोंके रूपमें ख्यात हैं। ये चार आयुध शक्तियाँ अपने-अपने कार्योंको सम्पादित करनेके लिए पूर्णरूपसे समर्थ हैं।

सर्वाः–'सर्व' शब्दसे यहाँ पर जृम्भण बाण शक्ति आदि चार आयुध शक्तियोंका ग्रहण होता है।

स्मितास्यामित-मस्तकाः–'आस्य' कहते हैं–मुखको। 'अमित' कहते हैं–अनगिनतको। जृम्भण बाण शक्ति आदि चार आयुध शक्तियोंके मुखकमल विहसित हैं। उनके मुखोंमें प्रसन्नता झलक रही है। जृम्भण बाण शक्ति आदि चार आयुध शक्तियाँ अनगिनत मस्तकोंवाली हैं। ये मस्तक विहसित मुखकमलोंसे युक्त हैं। वस्तुतः आयुध शक्तियाँ गिनतीमें तो चार हैं परन्तु वे अनगिनत आयुधोंको

आवश्यकताके अनुसार समय-समय पर उत्पन्न करती रहती हैं।

वराभयाढ्याः–जृम्भण बाण शक्ति आदि चार आयुध शक्तियाँ वर मुद्रा तथा अभय मुद्रासे युक्त हैं। चारों आयुध शक्तियाँ 'द्विभुजा' हैं। उनके एक हाथमें वर मुद्रा तथा दूसरे हाथमें अभय मुद्रा सुशोभित हो रहे हैं। वे आयुधधारीको शत्रुके आयुधोंसे रक्षा करती हैं तथा शत्रु पर आयुध चलानेकी प्रेरणा देती हैं।

अरुणाः–जृम्भण बाण शक्ति आदि चार आयुध शक्तियोंके शरीरकी कान्ति लाल वर्णकी है। इससे ज्ञात होता है कि वे आयुध शक्तियाँ सदैव शत्रुओं पर प्रयुक्त होती रहती हैं और शत्रुसंहारक एवं शुभदायक हैं।

ताः स्मरामि–मैं पूर्ववर्णित उन जृम्भण बाण शक्ति आदि चार आयुध शक्तियोंका स्मरण करता हूँ॥५॥

त्रिकोण-चक्रेश्वर्याः श्रीत्रिपुराम्बिकायाः स्वरूपम्

इच्छासिद्धिसुशाक्तदर्शनमहाबीजाख्यमुद्रायुतां
श्रीनादाभिधसिद्धिहेतुरुचिरे चक्रे स्थितां नायिकाम्।
चन्द्रार्द्धाङ्कितदिव्यरत्नमुकुटां बालार्ककोटिप्रभां
वन्दे श्रीत्रिपुराम्बिकामभयदां विद्यावरस्रक्कराम्॥६॥

त्रिकोण चक्रेश्वरी श्रीत्रिपुराम्बिकाका स्वरूप

मैं नाद नामक सिद्धिके कारणस्वरूप सुन्दर चक्रमें स्थित चक्रेश्वरी श्रीत्रिपुराम्बिकाकी वन्दना करता हूँ जो कि उगते हुए सूर्यकी करोडों किरणोंके समान कान्तिवाली है, अर्द्ध चन्द्राङ्कित दिव्य रत्नोंसे निर्मित मुकुटका धारण करनेवाली है, अभय मुद्रा, पुस्तक, वर मुद्रा तथा अक्षमालासे युक्त हाथोंवाली है, इच्छा सिद्धि, शाक्त दर्शन तथा सर्वबीजा नामक मुद्रासे युक्त है।

विमर्श–अब त्रिकोण चक्रेश्वरी श्रीत्रिपुराम्बिकाके स्वरूपका वर्णन किया जा रहा है–इच्छासिद्धि-सुशाक्तदर्शन-महाबीजाख्यमुद्रायुतामिति।

इच्छासिद्धिसुशाक्तदर्शनमहाबीजाख्यमुद्रायुताम्—त्रिकोण चक्रेश्वरी श्रीत्रिपुराम्बिका यहाँ पर ग्यारह सिद्धियोंसे एक 'इच्छा सिद्धि', ग्यारह दर्शनोंसे एक 'शाक्त दर्शन' तथा ग्यारह मुद्राओंसे एक 'सर्वबीजा मुद्रा'की विशिष्ट शक्तिसे युक्त है। 'महाबीजा' शब्दसे सर्वबीजा मुद्राका ग्रहण होता है।

श्रीनादाभिधसिद्धिहेतुरुचिरे चक्रे स्थितां नायिकाम्—त्रिकोण चक्रको 'नाद चक्र' भी कहते हैं। सभी सिद्धियोंका कारण रूप होनेसे यह 'सर्वसिद्धिप्रद चक्र' कहलाता है। यह चक्र अत्यन्त सुन्दर है; दर्शनीय है। श्रीत्रिपुराम्बिका सर्वसिद्धिप्रद त्रिकोण चक्रमें चक्रेश्वरीके रूपमें विराजमान है।

चन्द्रार्द्धाङ्कित-दिव्यरत्नमुकुटाम्—त्रिकोण चक्रेश्वरी श्रीत्रिपुराम्बिकाने अपने मस्तक पर दिव्य रत्नोंसे निर्मित मुकुटका धारण किया है। मुकुट अर्द्ध चन्द्रसे युक्त है।

बालार्क-कोटिप्रभाम्—त्रिकोण चक्रेश्वरी श्रीत्रिपुराम्बिकाके शरीरकी कान्ति उगते हुए सूर्यके करोडों किरणोंके समान प्रकाशमान है। वह सिन्दूरवर्णा है।

अभयदां विद्या-वर-स्त्रक्कराम्—त्रिकोण चक्रेश्वरी श्रीत्रिपुराम्बिकाके हाथोंमें अभय मुद्रा, पुस्तक, वर मुद्रा तथा अक्षमाला सुशोभित हो रहे हैं। वह 'चतुर्भुजा' है।

श्रीत्रिपुराम्बिकाम्—भगवती श्रीमहात्रिपुरसुन्दरी पराशक्ति त्रिकोण चक्रमें 'श्रीत्रिपुराम्बिका'के नामसे चक्रेश्वरीके रूपमें विराजमान है।

वन्दे—मैं पूर्ववर्णित उस त्रिकोण चक्रेश्वरी श्रीत्रिपुराम्बिकाकी वन्दना करता हूँ॥६॥

॥ इति नवमावरणम् ॥

●

दशमावरणम्

॥ श्रीगायत्रीब्रह्मविद्यायै नमः ॥

बिन्दु-चक्रस्य निरूपणम्

भूयोऽन्यं श्रीबैन्दवाख्यं सुचक्रं
दिव्यं साक्षाच्छ्रीशिवात्माभिधञ्च।
देदीप्ताभं मिश्रबिन्दुस्वरूपं
सर्वानन्दस्वप्रकाशं स्मरामि॥१॥

बिन्दु चक्रका निरूपण

मैं पुनः एक अन्य बिन्दु नामक सुन्दर चक्रका स्मरण करता हूँ जो कि दिव्य रूपवाला है, साक्षात् शिवशक्त्यात्मक है, दीप्त कान्तिवाला है, शुक्ल तथा अरुणके मिश्र वर्णवाला बिन्दु रूप है तथा सर्वानन्दमय है।

विमर्श—त्रिकोण चक्रके निरूपणके बाद अब बिन्दु चक्रका निरूपण किया जा रहा है—भूय इति।

भूयोऽन्यं श्रीबैन्दवाख्यं सुचक्रं दिव्यम्—'भूयोऽन्यम्' शब्दसे त्रिकोण चक्रके निरूपणके बाद अब पुनः एक दूसरे चक्रका निरूपण किये जानेका संकेत दिया जा रहा है जो कि बिन्दु चक्रके नामसे जाना जाता है। श्रीचक्रमें दशवाँ चक्र है—बिन्दु चक्र। बिन्दु चक्रको 'बैन्दव चक्र' भी कहते हैं। 'श्रीबैन्दवाख्यम्' शब्दके प्रयोगसे यहाँ पर 'श्री'से शक्ति तथा 'बिन्दु'से शिवका बोध होता है। बिन्दु शिवमें प्रधानता होनेके कारण यह चक्र 'बिन्दु चक्र'के नामसे जाना जाता है। यह चक्र अलौकिक रूपसम्पन्न है। 'सु' शब्दके संयोजनसे अन्य

चक्रोंकी अपेक्षा बिन्दु चक्रकी महत्ताका संकेत प्राप्त होता है।

साक्षाच्छ्रीशिवात्माभिधं च–बिन्दु चक्रको 'शिवशक्त्यात्मक चक्र' भी कहते हैं; क्योंकि यहाँ पर बिन्दुके रूपमें शिव विराजमान है। इसलिए सदैव 'बिन्दु' शब्दसे साक्षात् शिवका ग्रहण होता है तथा 'श्री' अक्षरसे शक्तिका ग्रहण होता है।

देदीप्ताभम्–बिन्दु चक्र उद्दीप्त कान्तिवाला है। यह अत्यन्त चमकीला है।

मिश्रबिन्दुस्वरूपम्–बिन्दु चक्र श्वेत तथा रक्त वर्णोंके मिश्रणसे युक्त कान्तिवाला है। शिव श्वेत वर्णका प्रतीक है; जबकि शक्ति रक्त वर्णके रूपमें ख्यात है। शिव यहाँ पर शक्तिसे युक्त होकर विराजमान है इसलिए बिन्दु चक्र मिश्र वर्णवाला कहलाता है। शिवकी प्रधानता-के कारण बिन्दु चक्र 'शिवचक्र'के नामसे भी ख्यात है। ऐसे भी बिन्दु 'शिव'का प्रतीक है।

सर्वानन्दस्वप्रकाशम्–बिन्दु चक्रको 'सर्वानन्दमय चक्र' भी कहते हैं; क्योंकि इस चक्रमें स्थित शिव आनन्द स्वरूप है। यहाँ पर 'स्वप्रकाश' कहते हैं–स्वरूपको। सभी प्रकारके आनन्दका प्रदान करनेवाला बिन्दु चक्र सर्वानन्दमय चक्रके रूपमें शास्त्रमें ख्यात है। आनन्दकी प्राप्ति होना बिन्दु चक्रकी उपासनाका फल है। यही इसका माहात्म्य है।

स्मरामि–मैं पूर्ववर्णित उस सर्वानन्दमय बिन्दु चक्रका स्मरण करता हूँ॥१॥

पश्चिमादिवामावर्तेन रत्यादीनां पञ्चदशदेवीनां स्वरूपम्

आदौ रतिं प्रीतिमथो मनोभवां
श्रीद्राविणीं क्षोभणिकां वशीकराम्।
आकर्षिणीं चैव सुमीनकेतनां
भूयोऽन्यदेवीं सुभगां भगां तथा॥

श्रीसर्पिणीं तां भगपूर्वरूपिणीं
भूयश्च शक्तिं भगमालिनीं तथा।
देवीमनङ्गां समनङ्गमेखलां
चानङ्गपूर्वां मदनातुरामिमाः।।
रक्ताः सुपाशाङ्कुशबाणचापकान्
करैर्दधाना मणिमाल्यभूषिताः।
परापरा योगिनिकाः स्मराम्यहम्।।२।।

पश्चिमादि वामावर्त क्रमसे रति आदि पन्द्रह देवियोंका स्वरूप

मैं पहले रति, उसके बाद प्रीति, मनोभवा, द्राविणी, क्षोभिणी, वशीकरिणी, आकर्षिणी तथा सुमीनकेतना, पुनः अन्य देवी सुभगा तथा भगा, उस भगसर्पिणी, पुनः देवी भगमालिनी, उस प्रकार देवी अनङ्गा, अनङ्ग मेखला तथा अनङ्ग मदनातुरा– इन देवियोंका स्मरण करता हूँ जो कि रक्त वर्णकी हैं, मणिकी मालाका धारण की हुई हैं जिन्होंने हाथोंमें पाश, अङ्कुश, बाण तथा धनुषका धारण किया है तथा जो परापर योगिनियाँ कहलाती हैं।

विमर्श–अब सर्वानन्दमय बिन्दु चक्रमें स्थित रति आदि पन्द्रह देवियोंके स्वरूपका वर्णन किया जा रहा है–आदाविति।

आदौ–रति आदि पन्द्रह देवियाँ सर्वानन्दमय बिन्दु चक्रमें पश्चिमादि वामावर्त क्रमसे वृत्ताकार रूपसे विराजमान हैं। 'आदि' शब्दसे सङ्केत मिलता है कि पहली उपासना पश्चिम दिशामें स्थित रतिकी ही होती है।

रतिम्–पहली देवी है–रति देवी। यह रति देवी कामकी मूल अवस्थाकी शक्ति है। प्रत्येक प्राणीमें स्वाभाविक रूपसे रतिकी अवस्थिति होती है। व्यक्तिकी अवस्था वृद्धिके साथ-साथ उसमें इसके प्रभाव भी देखनेको मिलते हैं और युवावस्था तक यह पन्द्रह

अवस्थाओंमें पन्द्रह देवियोंके रूपसे दिखाई देती है। व्यक्तिसे रतिको अलग नहीं किया जा सकता है; क्योंकि यह प्रकृति है। रति देवी स्वाभाविक काम भावनाके प्रतीकके रूपमें ख्यात है।

प्रीतिम्–दूसरी देवी है–प्रीति देवी। यह देवी स्वाभाविक रूपसे प्राणीमें विराजमान है। प्रत्येक प्राणीमें स्वभावतः प्रेम भावनाकी उपस्थिति होती है। किसी पदार्थसे प्रेम करनेकी भावनाको 'प्रीति' कहते हैं। यह प्रीति बिन्दु चक्रमें प्रेम भावनाकी अधिष्ठात्री देवीके रूपमें स्थित है।

अथो मनोभवाम्–तीसरी देवी है–मनोभवा देवी। 'भव' कहते हैं–उत्पन्नको। मनसे उत्पन्न होनेके कारण काम भावनाकी अधिष्ठात्री देवीको 'मनोभवा देवी' कहते हैं। भावनाओंका अङ्कुरण इसी अवस्थामें होता है। यहींसे इसका प्रभाव दिखाई देने लगता है।

श्रीद्राविणीम्–चौथी देवी है–द्राविणी देवी। इस अवस्थामें द्रावणात्मक कार्यका प्रारम्भ हो जाता है। इस देवीको द्रावण करनेकी शक्ति प्राप्त है।

क्षोभणिकाम्–पाँचवीं देवी है–क्षोभिणी देवी। इस अवस्थामें शान्त हृदयमें क्षोभण उत्पन्न होता है। क्षोभिणी देवीको क्षोभण करनेकी शक्ति प्राप्त है।

वशीकराम्–छठवीं देवी है–वशीकरिणी देवी। इस अवस्थामें हृदय अपने वशमें नहीं रहता है। वशीकरिणी देवी सभीको अपने वशमें कर सकती है।

आकर्षिणीम् च एव–सातवीं देवी है–आकर्षिणी देवी। इस अवस्थामें आकर्षणकी शक्तिमें वृद्धि हो जाती है। व्यक्ति आकर्षक बन जाता है। आकर्षिणी देवीको आकर्षण करनेकी शक्ति प्राप्त है।

सुमीनकेतनाम्–आठवीं देवी है–सुमीनकेतना। इस अवस्थामें कामका प्रभाव शारीरिक रूपसे दिखाई पड़ता है। यह अवस्था 'मध्यावस्था' कहलाती है। देवी सुमीनकेतना शारीरिक दशाका

नियन्त्रण करती है। कामका अन्य नाम है—मीनकेतन। उसकी शक्ति मीनकेतना है। मीनकेतनाकी स्वाभाविक दशा रतिसे लेकर आकर्षिणी तक है। आठवीं दशामें दशाकी नायिका स्वयं है। यहाँसे यह शारीरिक दशाकी ओर अग्रसर होती है।

भूयः अन्यदेवीं सुभगाम्—नौवीं देवी है—सुभगा देवी। 'भग' कहते हैं—योनिको। यह शारीरिक विकासकी पूर्वावस्था है। 'सु' शब्द इसी अवस्थाका सङ्केत करता है जो कि शुभ और पवित्रका द्योतक है।

भगाम् तथा—दशवीं देवी है—भगा देवी। यह शारीरिक विकासकी अवस्था है। इस अवस्थामें शारीरिक विकास स्वतः पूर्णताको प्राप्त कर लेता है।

श्रीसर्पिणीं तां भगपूर्वरूपिणीम्—ग्यारहवीं देवी है—भगसर्पिणी देवी। 'सर्प' कहते हैं—गमनको। यह 'सरकना क्रिया'के रूपमें भी जाना जाता है। यहाँ पर भगका सरकना है—अग्रिम अवस्थाको प्राप्त होकर प्रथम पुष्पिणी अवस्थाको प्राप्त होना। यह अवस्था 'प्रथम पुष्पावस्था' कहलाती है।

भूयः च शक्तिं भगमालिनीम्—बारहवीं देवी है—भगमालिनी देवी। इस अवस्थामें शारीरिक पुष्पविकास चरमोत्कर्षको प्राप्त करता है। 'माला' शब्द निरन्तर पुष्पगतिका सङ्केत देता है। यहाँ तक शारीरिक विकासका विवेचन किया गया। अब मानसिक अवस्थाका विवेचन किया जा रहा है।

तथा देवीम् अनङ्गाम्—तेरहवीं देवी है—अनङ्गा देवी। 'अनङ्ग' कहते हैं—कामदेवको। अनङ्गा देवी कामकी शक्ति है। कामका उद्रेक सदैव मानसिक होता है। यदि कामका उद्रेक मनमें न हो तो शारीरिक उपभोग निरस होता है। मानसिक कामकी दशाका नियन्त्रण कामकी शक्ति अनङ्गा देवी करती है। यह अवस्था कामोद्रेककी अवस्था कहलाती है।

समनङ्गमेखलाम्—चौदहवीं देवी है—अनङ्गमेखला देवी। 'मेखला'

कहते हैं–वलयको। एक बार जब कामकी भावनाका उद्रेक होता है तब बार-बार चिन्तन करनेके कारण चिन्तक कामके वशमें होकर कामके वलयके अन्दर नियन्त्रित हो जाता है। यह 'कामदशाग्रस्त'की अवस्था कहलाती है।

च अनङ्गपूर्वा मदनातुराम् तथा–पन्द्रहवीं देवी है–अनङ्गमदनातुरा देवी। इस अवस्थामें कामकी दशासे ग्रस्त व्यक्ति अत्यन्त कामुक बन जाता है और अपने कामके लक्ष्यको प्राप्त करनेके लिए आतुर बन जाता है। यह कामकी तीव्र भावनाकी उत्कर्ष स्थिति है। इस अवस्थामें कामकी मानसिक दशा 'व्यष्टि' ही रूपसे पूर्णताको प्राप्त होती है। कामातुरमें हिताहित विवेचनकी क्षमता नहीं रहती है।

इमाः–बिन्दु चक्रमें पश्चिमादि वामावर्त क्रमसे स्थित रति आदि सभी पन्द्रह देवियाँ पन्द्रह अवस्थाओंकी अधिष्ठात्री शक्तियाँ हैं। ये शक्तियाँ कामदशाकी शक्तियोंके रूपमें जानी जाती हैं। 'इमाः' शब्दसे पूर्ववर्णित रति आदि पन्द्रह देवियोंका ग्रहण होता है।

रक्ताः–बिन्दु चक्रमें स्थित रति आदि सभी पन्द्रह देवियोंके शरीरकी कान्ति रक्त वर्णकी है।

सुपाशाङ्कुशबाणचापकान् करैः दधानाः–बिन्दु चक्रमें स्थित रति आदि सभी पन्द्रह देवियोंने अपने हाथोंमें पाश, अङ्कुश, बाण तथा धनुषका धारण किया है। ये सभी देवियाँ 'चतुर्भुजा' हैं।

मणिमाल्यभूषिताः–बिन्दु चक्रमें स्थित रति आदि सभी पन्द्रह देवियोंने मणियोंसे निर्मित मालाओंका धारण किया है।

परापराः योगिनिकाः–'परा' कहते हैं–शक्तिको। 'पर' कहते हैं–शिवको। सर्वानन्दमय चक्र बैन्दव चक्र, शिवचक्र, शिवशक्त्यात्मक चक्र आदि नामोंसे प्रसिद्ध है। सर्वानन्दमय बिन्दु चक्रमें स्थित रति आदि सभी पन्द्रह देवियाँ 'परापरयोगिनी' कहलाती हैं। ये श्रीचक्रके अन्तर्गत सभी दश चक्रोंकी योगिनियोंकी अपेक्षा सबसे परे तथा शिवसे साक्षात् सम्बन्ध होनेके कारण भी 'परापर' योगिनियोंके रूपमें

ख्यात हैं। ये पञ्चमहाभूतात्मक होनेके कारण 'योगिनी' पदका धारण करती हैं।

ध्यान रहे कि श्रीचक्रमें बिन्दु चक्र 'सर्वानन्दमय' नामक चक्रके रूपमें ख्यात है। 'आनन्दमय' और 'आनन्दस्वरूप' शब्दमें अन्तर यह है कि आनन्दमय वैषयिक विश्व होता है; जबकि आनन्दस्वरूप निर्विषयक एकमात्र परमशिव होता है। इसलिए इस दशम चक्रको आनन्दमय चक्र कहा जाता है और सभी प्रकारके वैषयिक आनन्दको प्राप्त करानेके कारण यह सर्वानन्दमय चक्र कहलाता है। इस चक्रमें वैषयिक आनन्दकी प्राप्तिके लिए रति आदि पन्द्रह देवियोंकी उपासना की जाती है। इसमें कामकी पन्द्रह अवस्थाओंका वर्णन किया गया है। रति आदि पन्द्रह देवियाँ इन पन्द्रह अवस्थाओंकी अधिष्ठात्री शक्तियाँ हैं। कामकी स्वाभाविक, शारीरिक तथा मानसिक दशाके विचार यहाँ पर प्राप्त होते हैं। रति आदि पन्द्रह देवियाँ पन्द्रह अवस्थाओंके द्योतक हैं। इसलिए रति आदि पन्द्रह देवियाँ 'पञ्चदशी'के रूपमें जानी जाती हैं। इस प्रकारसे इनकी 'पञ्चदशी कामकला'के रूपमें भी उपासना की जाती है। षोडशी कामकला तो महाकामेश्वरकी कामशक्ति है। यह षोडशी कामकला इन पञ्चदशी कामकलासे परे है। पञ्चदशी कामकला तो सदैव 'व्यष्टि'रूपिणी होती है; जबकि षोडशी कामकला 'समष्टि'-रूपिणी कहलाती है। इसकी उपासना एकादशावरणमें की जाती है। यही परम रहस्य है।

स्मरामि अहम्—मैं पूर्ववर्णित बिन्दु चक्रमें स्थित रति आदि सभी पन्द्रह देवियोंका स्मरण करता हूँ॥२॥

बिन्दु-चक्रेश्वर्याः त्रिपुरभैरव्याः स्वरूपम्

आदित्यमण्डलनिभां नरमुण्डमालां
सोमाग्निसूर्यनयनां शिवचक्रनाथाम्।
खण्डेन्दुराजमुकुटां नवयौवनाढ्यां
माणिक्यरत्नखचितारुणवस्त्रभूषाम्॥

संलिप्तशोणितकुचद्वययुक्तदेहां
मालास्वभीतिवरपुस्तकपाणिपद्माम्।
बिन्दौ हि लब्धिशुभयोनिसुशैवशास्त्रैः
युक्तां स्मितां त्रिपुरभैरविकां नमामि।।३।।

बिन्दु चक्रेश्वरी त्रिपुरभैरवीका स्वरूप

मैं बिन्दु चक्रेश्वरी त्रिपुरभैरवीको नमस्कार करता हूँ जो कि सूर्यमण्डलके समान रक्त वर्णकी कान्तिवाली नवयुवति है, नर मुण्डोंकी मालासे युक्त है; चन्द्र, सूर्य तथा अग्नि रूपी तीन आँखोंवाली है, मस्तक पर अर्द्ध चन्द्रका धारण की हुई है, माणिक्य रत्नोंसे युक्त लाल वर्णके वस्त्रोंसे अलङ्कृत है, रक्तसे लिप्त स्तन युगलसे युक्त शरीरवाली है; हाथोंमें अक्षमाला, अभय मुद्रा, वर मुद्रा तथा पुस्तकका धारण करनेवाली है; बिन्दु चक्रमें प्राप्ति सिद्धि, योनि मुद्रा तथा शैव दर्शनसे युक्त है तथा विहसित मुखवाली है।

विमर्श–अब सर्वानन्दमय बिन्दु चक्रेश्वरी त्रिपुरभैरवीके स्वरूपका वर्णन किया जा रहा है–आदित्यमण्डलनिभामिति।

आदित्य-मण्डल-निभाम्–'आदित्य' कहते हैं–सूर्यको। 'मण्डल' शब्दसे प्रातःकालीन सूर्यका सङ्केत मिलता है। सर्वानन्दमय बिन्दु चक्रेश्वरी त्रिपुरभैरवीके शरीरकी कान्ति उगते हुए सूर्यके समान लाल वर्णकी है।

नरमुण्डमालाम्–सर्वानन्दमय बिन्दु चक्रेश्वरी त्रिपुरभैरवीने नरमुण्डोंसे निर्मित मालाका धारण किया है।

सोमाग्निसूर्यनयनाम्–सर्वानन्दमय बिन्दु चक्रेश्वरी त्रिपुरभैरवीकी तीन आँखें हैं। इसलिए वह 'त्रिनेत्रा' कहलाती है। 'चन्द्र, सूर्य तथा अग्नि' ये सदैव तीन आँखोंके रूपमें जाने जाते हैं। 'त्रिनयना' होनेके कारण सर्वानन्दमय बिन्दु चक्रेश्वरी त्रिपुरभैरवीकी चन्द्र, सूर्य तथा अग्नि रूपी तीन नेत्र हैं।

शिवचक्रनाथाम्–सर्वानन्दमय बिन्दु चक्रको 'शिवचक्र' भी कहते हैं। बिन्दुको शिवके रूपमें परिभाषित किया गया है। इसलिए सर्वानन्दमय बिन्दु चक्र 'शिवात्मक' कहलाता है। 'नाथा' शब्दसे अधिष्ठात्री शक्तिका ग्रहण होता है। त्रिपुरभैरवी सर्वानन्दमय बिन्दु चक्रकी अधिष्ठात्री शक्ति है।

खण्डेन्दुराज-मुकुटाम्–'खण्डेन्दु' कहते हैं–अर्द्ध चन्द्रको। बिन्दु चक्रेश्वरी त्रिपुरभैरवीने अपने मस्तक पर मुकुटके रूपमें अर्द्ध चन्द्रका धारण किया है।

नवयौवनाढ्याम्–बिन्दु चक्रेश्वरी त्रिपुरभैरवी नवयुवति है। उसकी अवस्था प्रथम यौवनकी अवस्था है।

माणिक्यरत्न-खचितारुण-वस्त्रभूषाम्–बिन्दु चक्रेश्वरी त्रिपुरभैरवीने लाल वर्णके वस्त्रोंका धारण किया है। वे रक्तवस्त्र माणिक्य रत्नोंसे जड़े हुए हैं।

संलिप्त-शोणित-कुचद्वययुक्त-देहाम्–'शोणित' कहते हैं–रक्तको। बिन्दु चक्रेश्वरी त्रिपुरभैरवीने नर मुण्डोंकी मालाका धारण किया है। प्रतीत होता है कि वे नरमुण्ड तत्काल कटे हुए हों। नरमुण्डोंसे रक्तस्राव हो रहा है अतः बिन्दु चक्रेश्वरी त्रिपुरभैरवीका वक्षःस्थल रक्तसे आर्द्र है। उसके दोनों स्तन रक्तसे संलिप्त हैं। ऐसे स्तनयुगलसे युक्त है बिन्दु चक्रेश्वरी त्रिपुरभैरवीका शरीर।

माला-स्वभीति-वर-पुस्तक-पाणि-पद्माम्–बिन्दु चक्रेश्वरी श्रीत्रिपुर-भैरवी 'चतुर्भुजा' है। उसके चारों हाथोंमें अक्षमाला, अभयमुद्रा, वर-मुद्रा तथा पुस्तक सुशोभित हो रहे हैं। 'सु' पूर्णताका द्योतक है।

बिन्दौ हि लब्धि-शुभयोनि-सुशैवशास्त्रैः युक्ताम्–'लब्धि' कहते हैं–प्राप्तिको। बिन्दु चक्रेश्वरी त्रिपुरभैरवीको एक सिद्धि, एक मुद्रा तथा एक दर्शनकी विशिष्ट शक्ति प्राप्त है। यहाँ पर ग्यारह सिद्धियोंसे एक 'प्राप्ति सिद्धि', ग्यारह मुद्राओंसे एक 'योनि मुद्रा' तथा ग्यारह दर्शनोंसे एक 'शैव दर्शन' स्थित हैं।

स्मिताम्–बिन्दु चक्रेश्वरी त्रिपुरभैरवीका मुख विहसित है। उसके मुखमें प्रसन्नता झलक रही है। प्रसन्नस्वरूपा शक्तिकी उपासनासे प्रसन्नताकी प्राप्ति होती है। ऐसे भी बिन्दु चक्र स्वतः 'सर्वानन्दमय चक्र' कहलाता है।

त्रिपुर-भैरविकाम्–परा शक्ति श्रीमहाषोडशी श्रीमहात्रिपुरसुन्दरी सर्वानन्दमय बिन्दु चक्रमें 'त्रिपुरभैरवी'के नामसे ख्यात है। 'त्रिपुर-भैरवी' सर्वानन्दमय बिन्दु चक्रकी अधिष्ठात्री शक्ति चक्रेश्वरीके रूपमें जानी जाती है।

नमामि–मैं उस पूर्ववर्णित सर्वानन्दमय बिन्दु चक्रेश्वरी त्रिपुर-भैरवीको नमस्कार करता हूँ॥३॥

॥ इति दशमावरणम् ॥

एकादशावरणम्

॥ श्रीगायत्रीब्रह्मविद्यायै नमः ॥

बैन्दव-चक्रान्तर्गत-कल्पित-श्रीमहाबैन्दव-चक्रस्य निरूपणम्

श्रीसर्वानन्दाख्यचक्रान्तरस्थं
ह्यन्यं चक्रं श्रीमहाबैन्दवाख्यम्।
सद्रूपं वै श्रीपरब्रह्मतत्त्वं
वन्देऽद्वैतं केवलं स्वप्रकाशम्॥१॥

बिन्दु चक्रान्तर्गत महाबैन्दव चक्रका निरूपण

मैं सर्वानन्दमय चक्रके अन्तर्गत महाबैन्दव नामक एक अन्य चक्रकी वन्दना करता हूँ जो कि परब्रह्म तत्त्वात्मक एकमात्र अद्वैत स्वरूप है।

विमर्श—अब सर्वानन्दमय बिन्दु चक्रके अन्तर्गत कल्पित महाबैन्दव चक्रके स्वरूपका निरूपण किया जा रहा है—श्रीसर्वानन्दाख्यचक्रान्तरस्थमिति।

श्रीसर्वानन्दाख्यचक्रान्तरस्थं हि अन्यं चक्रम्—'अन्यं चक्रम्' शब्दसे सर्वानन्दमय बिन्दु चक्रके बाद एक दूसरे चक्रका निरूपण किया जा रहा है। हमने पहले देखा कि बिन्दु चक्रको सर्वानन्दमय चक्र कहते हैं और यह श्रीचक्रमें दशम चक्रके रूपमें जाना जाता है। उसी सर्वानन्दमय बिन्दु चक्रके अन्तर्गत एक दूसरे चक्रकी कल्पना की गयी है।

श्रीमहाबैन्दवाख्यम्—सर्वानन्दमय बिन्दु चक्रके अन्तर्गत स्थित अन्य चक्रका नाम है—महाबैन्दव चक्र। यह चक्र कल्पित है। 'महा'

शब्द सङ्केत करता है कि इसकी उपासनासे महान् आनन्दकी प्राप्ति होती है। साधक आनन्दस्वरूपको प्राप्त कर लेता है। 'महा' शब्द 'स्वरूप'का बोधक है।

सद्रूपं वै श्रीपरब्रह्मतत्त्वम्–सर्वानन्दमय बिन्दु चक्रके अन्तर्गत कल्पित महाबैन्दव चक्र 'परब्रह्मात्मक चक्र' कहलाता है। परब्रह्म सत्स्वरूप है, आनन्दस्वरूप है। इसकी उपासनासे आनन्दस्वरूपकी अनुभूति होती है। इसे 'सर्वानन्दस्वरूप परब्रह्म चक्र' भी कहते हैं।

अद्वैतं केवलं स्वप्रकाशम्–'अद्वैत' कहते हैं–एकको। जहाँ पर 'एक' है वहाँ द्वित्वका अभाव है। यहाँ पर परब्रह्म और माया अर्थात् पुरुष और प्रकृतिकी अलग-अलग सत्ता नहीं है; क्योंकि सत्ता तो एकमात्र परब्रह्मकी है। परब्रह्म सत्स्वरूप है। इसीमें इच्छा-ज्ञान-क्रियात्मिका शक्ति विश्रान्तिको प्राप्त करती है। 'केवल' शब्द एकमात्र परब्रह्मकी सत्ताका बोध कराता है। 'स्वप्रकाश' शब्दसे स्वरूपका सङ्केत प्राप्त होता है। परब्रह्म अद्वैतस्वरूप है। परब्रह्मकी अवस्थिति होनेके कारण यह महाबैन्दव चक्र 'अद्वैतस्वरूपात्मक' कहलाता है।

वन्दे–मैं पूर्ववर्णित उस सर्वानन्दमय बिन्दु चक्रके अन्तर्गत कल्पित महाबैन्दव चक्रकी वन्दना करता हूँ॥१॥

महाबैन्दव-चक्रेश्वर्याः त्रिपुरसुन्दर्याः स्वरूपम्

साक्षाच्छ्रीकुलकौलदर्शनमहामुद्रात्रिखण्डायुतां
देवीं सर्वसुकामसिद्धिसहितां ब्रह्मात्मचक्रे स्थिताम्।
रक्तां पाशधनुःशराङ्कुशधरां दिव्यां जगन्मोहिनीं
वन्दे त्रैपुरसुन्दरीं समरसाकाराख्यचक्रेश्वरीम्॥२॥

महाबैन्दव चक्रेश्वरी त्रिपुरसुन्दरीका स्वरूप

मैं साक्षात् श्रीशक्तिसे सम्बन्धित कौल दर्शन, त्रिखण्डा महामुद्रा तथा सर्वकाम सिद्धिसे युक्त, रक्त वर्णकी कान्तिवाली; पाश, धनुष, बाण तथा अङ्कुशका धारण करनेवाली, दिव्य रूपवाली, जगतको

मोहित करनेवाली तथा समरसाकार नामक ब्रह्मात्मचक्रमें स्थित देवी त्रिपुरसुन्दरीकी वन्दना करता हूँ।

विमर्श—अब महाबैन्दव चक्रेश्वरी त्रिपुरसुन्दरीके स्वरूपका वर्णन किया जा रहा है—साक्षाच्छ्रीकुल-कौलदर्शन-महामुद्रात्रिखण्डायुतामिति।

साक्षाच्छ्रीकुल-कौलदर्शन-महामुद्रा-त्रिखण्डा-युताम्—महाबैन्दव चक्रेश्वरी त्रिपुरसुन्दरी ग्यारह दर्शनोंसे एक 'कौल दर्शन' तथा ग्यारह मुद्राओंसे एक 'त्रिखण्डा महामुद्रा'से युक्त है। 'कुल' कहते हैं—शक्तिको। यहाँ पर साक्षात् 'श्री' कुल कहलाती है। 'कुल'से सम्बन्धित दर्शन 'कौल दर्शन' ही 'शाक्त दर्शन' कहलाता है। 'त्रिखण्डा महामुद्रा'से त्रिपुराका आह्वान किया जाता है।

सर्वसुकामसिद्धि-सहिताम्—महाबैन्दव चक्रेश्वरी त्रिपुरसुन्दरी ग्यारह सिद्धियोंसे एक 'सर्वकाम सिद्धि'से युक्त है। यहाँ पर 'सु' शब्दके संयोजनसे सङ्केत प्राप्त होता है कि लोक कल्याणकी कामना शीघ्र फलवती होती है। इसलिए सदैव कल्प वृक्षके नीचे रहकर अच्छी कामना करनी चहिए।

देवीम्—महाबैन्दव चक्रेश्वरी त्रिपुरसुन्दरी दिव्य शक्तियोंसे युक्त होनेके कारण 'देवी'के रूपमें प्रसिद्ध है।

रक्ताम्—महाबैन्दव चक्रेश्वरी त्रिपुरसुन्दरीके शरीरकी कान्ति रक्त वर्णकी है। वह 'रक्तवर्णा' कहलाती है।

पाशधनुःशराङ्कुशधराम्—महाबैन्दव चक्रेश्वरी त्रिपुरसुन्दरी चतुर्भुजा है। उसके चारों हाथोंमें पाश, धनुष, बाण तथा अङ्कुश सुशोभित हो रहे हैं।

दिव्यां जगन्मोहिनीं त्रैपुरसुन्दरीम्—सर्वानन्दमय चक्रके अन्तर्गत कल्पित महाबैन्दव चक्रमें त्रिपुरसुन्दरी चक्रेश्वरीके रूपमें विराजमान है। इच्छा-ज्ञान-क्रियात्मिका त्रिपुरा सम्पूर्ण जगतको मोहित करनेमें पूर्णरूपसे समर्थ है; क्योंकि सम्पूर्ण जगत त्रिपुरात्मक है। इस त्रिपुरात्मक जगतमें सीमित लौकिक पदार्थको ही सीमित लौकिक पदार्थ मोहित

करनेमें समर्थ तो हो सकता है, लेकिन असीमित पदार्थको नहीं। सम्पूर्ण जगतको मोहित करनेवाली एकमात्र परमसुन्दरी दिव्यस्वरूपा श्रीत्रिपुरा ही है। इसमें कोई सन्देह नहीं है।

ब्रह्मात्मचक्रे स्थिताम्–महाबैन्दव चक्रेश्वरी त्रिपुरसुन्दरीका अवस्थान सर्वानन्दमय चक्रके अन्तर्गत कल्पित महाबैन्दव चक्रमें है। महाबैन्दव चक्रको ही 'परब्रह्मात्मक चक्र' कहते हैं।

समरसाकाराख्यचक्रेश्वरीम्–सर्वानन्दमय चक्रके अन्तर्गत कल्पित महाबैन्दव चक्रमें 'शिव तथा शक्ति' दोनोंका अवस्थान है। परम प्रकाश शिवको सच्चिदानन्दस्वरूप कहते हैं। इच्छा-ज्ञान-क्रियात्मिका शक्ति उसकी प्रकृति है। सत्स्वरूपका आभासन उसकी इच्छात्मिका शक्तिमें होती है। चित्स्वरूपका आभासन उसकी ज्ञानात्मिका शक्तिमें होती है और आनन्दस्वरूपका आभासन उसकी क्रियात्मिका शक्तिमें होती है। इच्छात्मिका शक्तिको 'परा शक्ति', ज्ञानात्मिका शक्तिको 'परापरा शक्ति' तथा क्रियात्मिका शक्तिको 'अपरा शक्ति' कहते हैं। चेतन एकमात्र 'केवल' है और प्रकाशस्वरूप स्वतन्त्र शिव ही 'चित्स्वरूप' चैतन्य है। चेतनसे भिन्न पदार्थ सदैव चिन्मय परतन्त्र जड़ होता है और चिन्मय जड़ पदार्थ चेतनसे ही आभासित होता है। शिवसे भिन्न शक्ति है और शक्ति सच्चिदानन्दमयी जडात्मिका प्रकृति है। शक्तिकी स्वतन्त्र सत्ता नहीं है। वह सदैव चैतन्यस्वरूप शिव पर आश्रित है। इसलिए वह 'शिवाश्रया' कहलाती है। सच्चिदानन्दस्वरूप शिव 'ब्रह्म'के रूपमें जाना जाता है; जबकि सच्चिदानन्दमयी शक्ति 'त्रिगुणात्मिका माया'के रूपमें जानी जाती है। इसलिए माया 'ब्रह्माश्रया' कहलाती है। इस प्रकारसे सच्चिदानन्दमयी जडात्मिका होनेके कारण शक्ति चैतन्य-स्वरूप शिवसे भिन्न रूपमें तथा नित्याश्रिता होनेके कारण सत्स्वरूप शिवसे अभिन्न रूपमें भासित हो रही है। इस प्रकारसे शिव शक्तिका 'आधार' है और उस पर शक्ति 'आधेय'के रूपमें विराजमान है, किन्तु यहाँ पर स्वतन्त्र सत्तावाले दो पदार्थोंके समान शिव और शक्तिमें 'आधाराधेय'

भावका सम्बन्ध विद्यमान नहीं है।

शक्ति 'शिवजाया' कहलाती है। 'जाया'का अर्थ है—भार्या। जिस प्रकार भार्याकी उत्पत्ति पतिसे नहीं हो सकती उसी प्रकार शक्तिकी उत्पत्ति शिवसे कदापि नहीं हो सकती है। चेतनसे जड़की उत्पत्ति कदापि सम्भव नहीं है। इसलिए चैतन्यस्वरूप शिवसे सच्चिदानन्दमयी जडात्मिका शक्तिकी उत्पत्ति सम्भव नहीं है, किन्तु शक्ति ही एकमात्र ऐसी उपाधि है कि जिसमें चैतन्यस्वरूप शिवका आभासन सम्भव है। शिवके चैतन्यस्वरूपका आभासन उसकी ज्ञानशक्ति 'परापरा'में होती है। इसलिए 'परापरा' शक्ति 'अखिलचेतनारूपिणी' शक्तिके रूपमें जानी जाती है और यह सूक्ष्म रूपसे सर्वत्र विद्यमान रहती है। शिवके सत्स्वरूपका आभासन उसकी इच्छाशक्ति 'परा' शक्तिमें होती है और यह 'परा' शक्ति सर्वत्र कारण रूपसे विद्यमान रहती है। इसलिए 'परा' शक्ति 'अखिलकारणरूपिणी'के रूपमें जानी जाती है; जबकि शिवके आनन्दस्वरूपका आभासन उसकी क्रियाशक्ति 'अपरा' शक्तिमें होती है और यही 'अपरा' शक्ति सर्वत्र स्थूल रूपसे विद्यमान रहती है। इसलिए 'अपरा' शक्ति 'अखिलप्रपञ्चरूपिणी' शक्तिके रूपमें जानी जाती है।

सच्चिदानन्दस्वरूप शिवसे सत्, चित् तथा आनन्दको भिन्न रूपसे देखा नहीं जा सकता है। उसी प्रकार इच्छा-ज्ञान-क्रियात्मिका शक्तिसे इच्छा, ज्ञान और क्रियाको भिन्न रूपसे देखा नहीं जा सकता है। पदार्थका स्वरूप पदार्थसे कदापि भिन्न नहीं होता है; क्योंकि स्वरूपके नष्ट हो जाने पर पदार्थ स्वतः नष्ट हो जाता है। इसलिए सच्चिदानन्दस्वरूप शिव 'महात्रिपुरसुन्दर' तथा 'महाकामेश्वर'के रूपमें जाना जाता है; जबकि सच्चिदानन्दमयी इच्छाज्ञानक्रियात्मिका शक्ति 'महात्रिपुरसुन्दरी' तथा 'महाकामेश्वरी'के रूपमें जानी जाती है।

सर्वानन्दमय चक्रके अन्तर्गत कल्पित महाबैन्दव परब्रह्मात्मक चक्रमें शिव तथा उसकी शक्ति समरसात्मभावसे विराजमान हैं। 'समरसाकार'का अर्थ है—नित्य एक भावमें स्थित रहना। जैसा कि

हमने देखा शिव अपने सच्चिदानन्दस्वरूपसे कदापि च्युत नहीं होता है और न ही सच्चिदानन्दमयी शक्ति अपनी इच्छा-ज्ञान-क्रियात्मिका भावका परित्याग करती है। यही शिव और शक्तिकी समरसता है। इसलिए महाबैन्दव नामक परब्रह्मात्मक चक्रको 'समरसाकार' चक्र कहते हैं। त्रिपुरसुन्दरी इसी समरसाकार चक्रकी चक्रेश्वरी है।

वन्दे—मैं पूर्ववर्णित उस परब्रह्मात्मक महाबैन्दव चक्रेश्वरी त्रिपुर-सुन्दरीकी वन्दना करता हूँ॥२॥

कल्पितषट्कोणके पश्चिमवायव्याग्नेयेशाननैऋत्यपूर्वक्रमेण ब्रह्मादीनां षट्शाम्भवानां स्वरूपम्

षट्कोणकं तत्र पुनर्विचिन्त्य
षट्शाम्भवान् नौमि पुनः क्रमेण॥३॥

कल्पित षट्कोणकमें पश्चिम, वायव्य, आग्नेय, ईशान, नैऋत्य तथा पूर्व क्रमसे ब्रह्मा आदि छह शाम्भवोंका स्वरूप

मैं फिर वहाँ पर षट्कोणककी कल्पना करके फिर क्रमसे छह शाम्भवोंको नमस्कार करता हूँ।

विमर्श—अब कल्पित षट्कोणकमें ब्रह्मा आदि छह शाम्भवोंके स्वरूपका वर्णन किया जा रहा है—षट्कोणकमिति।

षट्कोणकं तत्र पुनः विचिन्त्य—'तत्र' शब्दसे यहाँ पर महाबैन्दव चक्रका ग्रहण होता है। कल्पित त्रिकोणके निरूपणके बाद फिर महाबैन्दव चक्रमें एक षट्कोणककी कल्पना की जाती है। यह षट्कोणक कल्पित है।

पुनः क्रमेण षट्शाम्भवान्—महाबैन्दव चक्रके अन्तर्गत कल्पित षट्कोणकमें छह शाम्भवोंकी उपासना की जाती है। ये छह शाम्भव हैं—ब्रह्मा शाम्भव, विष्णु शाम्भव, रुद्र शाम्भव, ईश्वर शाम्भव, सदाशिव शाम्भव तथा आदिनाथ शाम्भव। कार्य तथा तत्त्वोंके अनुसार महाशम्भुकी ये छह पदवियाँ हैं। छह शाम्भवोंकी अवस्थिति

मूलाधार आदि छह चक्रोंमें है। 'क्रमेण' शब्दसे सृष्टि क्रमके अन्तर्गत मूलाधारसे प्रारम्भ करनेके लिए सङ्केत किया गया है। क्रमका प्रकार है—मूलाधारमें ब्रह्मा शाम्भव, स्वाधिष्ठानमें विष्णु शाम्भव, मणिपुरमें रुद्र शाम्भव, अनाहतमें ईश्वर शाम्भव, विशुद्धिमें सदाशिव शाम्भव तथा आज्ञामें आदिनाथ शाम्भव।

महाबैन्दव चक्रके अन्तर्गत कल्पित षट्कोणकका निर्माण दो त्रिकोणोंके योगसे होता है। वे दो त्रिकोण हैं—एक ऊर्ध्व अग्रवाला तथा दूसरा अधः अग्रवाला। यहाँ पर ऊर्ध्व अग्रवाले त्रिकोणके अग्र कोण पर निर्मित कोण आज्ञा चक्रके अधिष्ठाता आदिनाथ शाम्भव-का स्थान है तथा अधः अग्रवाले त्रिकोणके अग्र कोण पर निर्मित कोण मूलाधार चक्रके अधिष्ठाता ब्रह्मा शाम्भवका स्थान है। ऊर्ध्व अग्रवाले त्रिकोणके वाम कोण पर निर्मित कोण विशुद्धि चक्रके अधिष्ठाता सदाशिव शाम्भवका स्थान है तथा दक्षिण कोण पर निर्मित कोण स्वाधिष्ठान चक्रके अधिष्ठाता विष्णु शाम्भवका स्थान है। इसी प्रकार अधः अग्रवाले त्रिकोणके दक्ष कोण पर निर्मित कोण अनाहत चक्रके अधिष्ठाता रुद्र शाम्भवका स्थान है तथा वाम कोण पर निर्मित कोण मणिपुर चक्रके अधिष्ठाता ईश्वर शाम्भवका स्थान है। षट्कोणकके मध्य केन्द्रमें सहस्रारका अधिष्ठाता साक्षात् श्रीमहा-शाम्भव विराजमान है।

दिशाओंके अनुसार षट्कोणकके पश्चिम दिशामें स्थित कोण मूलाधार चक्रमें ब्रह्मा शाम्भव, वायव्य कोण स्वाधिष्ठान चक्रमें विष्णु शाम्भव, आग्नेय कोण मणिपुर चक्रमें रुद्र शाम्भव, ईशान कोण अनाहत चक्रमें ईश्वर शाम्भव, नैऋत्य कोण विशुद्धि चक्रमें सदाशिव शाम्भव, पूर्व कोण आज्ञा चक्रमें आदिनाथ शाम्भव तथा मध्य सहस्रारमें साक्षात् श्रीमहाशाम्भव विराजमान हैं।

ध्यान रहे कि षट्कोणकके उत्तर तथा दक्षिण दिशामें कोई कोण नहीं होता है।

नौमि—मैं समरसाकार परब्रह्मात्मक चक्रके अन्तर्गत कल्पित

षट्कोणकमें विराजमान पूर्ववर्णित ब्रह्मा शाम्भव आदि छह शाम्भवोंको नमस्कार करता हूँ॥३॥

षट्कोणकस्य मध्ये श्रीमहाशाम्भवस्य स्वरूपम्

मध्ये च साक्षात्स्थितचित्स्वरूपं
षडन्वयेशं हि महेतिपूर्वम्।
षडाननं द्वादशपाणिपद्मं
श्रीशाम्भवं चन्द्रधरं नमामि॥४॥

षट्कोणकके मध्यमें श्रीमहाशाम्भवका स्वरूप

मैं मध्यमें श्रीमहाशाम्भवको नमस्कार करता हूँ जो कि छह शाम्भवोंका ईश है, साक्षात् चैतन्यस्वरूप है, छह मुखोंवाला है, बारह हाथोंवाला है तथा मस्तक पर चन्द्रमाका धारण करनेवाला है।

विमर्श–अब षट्कोणकके मध्यमें श्रीमहाशाम्भवके स्वरूपका वर्णन किया जा रहा है–मध्य इति।

मध्ये च महेतिपूर्वं षडन्वयेशम्–'च' शब्दसे पूर्ववर्णित षट्कोणकका ग्रहण होता है। 'अन्वय' कहते हैं–कुलको। शक्तिको 'कुल' कहते हैं और शम्भु 'कुलेश' कहलाता है। ब्रह्मा आदि छह शाम्भव 'षडन्वयेश' कहलाते हैं; जब कि षट्कोणकके मध्यमें अवस्थित शाम्भव 'महाषडन्वयेश' अर्थात् 'महाकुलेश' कहलाता है। षट्कोणकके मध्यमें सहस्रारकी अवस्थिति है और महाषडन्वयेश 'श्रीशाम्भव' सहस्रारका अधिष्ठाता है।

हि–'हि' शब्दका अर्थ है–क्योंकि। यह शब्द हेतुवाचक है। अब षट्कोणकके मध्यमें अवस्थित शाम्भवको 'महाषडन्वयेश' कहनेके हेतुका निर्देशन करते हुए आगे अन्य विशेषणोंका कथन किया जा रहा है।

साक्षात्स्थितचित्स्वरूपम्–'चित्' कहते हैं–ज्ञानको। 'षट्कोणकके

मध्यमें स्थित श्रीशाम्भव साक्षात् चैतन्यस्वरूप है। इसे ज्ञानस्वरूप भी कहते हैं।

षडाननं द्वादशपाणिपद्मम्–षट्कोणकके मध्यमें स्थित श्रीशाम्भवके छह मुख हैं। वह 'षडानन' कहलाता है। 'पाणिपद्म' कहते हैं–करकमलको। षट्कोणकके मध्यमें विराजमान श्रीशाम्भवके बारह हाथ हैं। वह 'द्वादशभुज' कहलाता है। ब्रह्मादि षट्शाम्भव व्यष्टिरूप हैं इसलिए वे एक मुख तथा दो हाथोंसे युक्त है; जबकि श्रीमहाशाम्भव इन षट्शाम्भवोंका समष्टिरूप है। इसलिए यह छह मुखों तथा बारह हाथोंसे युक्त है।

चन्द्रधरम्–षट्कोणकके मध्यमें स्थित श्रीशाम्भवने अपने मस्तक पर चन्द्रमाका धारण किया है।

श्रीशाम्भवम्–षट्कोणकके मध्यमें स्थित शाम्भवको 'श्रीशाम्भव' कहते हैं। ब्रह्मा आदि छह शाम्भवोंमें श्रेष्ठ होनेके कारण साक्षात् शम्भु 'श्री' शब्दसे जाने जाते हैं और 'महाशाम्भव' कहलाते हैं।

नमामि–मैं परब्रह्मात्मक चक्रके अन्तर्गत कल्पित षट्कोणकके मध्यमें विराजमान पूर्ववर्णित श्रीमहाशाम्भवको नमस्कार करता हूँ।।४।।

अब परब्रह्मात्मक चक्रमें विराजमान श्रीगायत्री ब्रह्मविद्याके स्वरूपका विवेचन किया जा रहा है:–

ब्रह्माण्डके कार्य मुख्यरूपसे दो प्रकारके होते हैं:-आख्य तथा अनाख्य। आख्य कार्य उसे कहते हैं जो 'सृष्टि, स्थिति तथा संहार'से जाना जाता है; जबकि अनाख्य उसे कहते हैं जो 'सृष्टि, स्थिति तथा संहार'से आख्य न हो। इस प्रकारसे अवस्थाएँ भी दो होती हैं:–आख्यावस्था तथा अनाख्यावस्था। आख्यावस्थाके तीन अधिष्ठातृ देव हैं:–सृष्टिकर्ता ब्रह्मा, स्थितिकर्ता विष्णु तथा संहारकर्ता रुद्र। ये तीनों देव 'कामेश्वर'के रूपमें भी ख्यात हैं और अपनी तीन आत्मशक्तियोंके द्वारा अपने-अपने कार्योंका सम्पादन करते हैं। इनकी

तीन आत्मशक्तियाँ 'कामेश्वरी'के रूपमें भी ख्यात हैं। अनाख्यावस्थामें उपर्युक्त तीनों कार्य विश्रान्तिको प्राप्त करते हैं। इस अवस्थाका अधिष्ठातृ देव अनाख्यस्वरूप महाकामेश्वर है जो कि अपनी अनाख्याशक्तिसे युक्त है।

जब पञ्चकृत्य स्वभाववाले शिवके स्वरूपका विवेचन किया जाता है तो ज्ञात होता है कि शिवके पाँच कार्य हैं:-सृष्टि, स्थिति, संहार, निग्रह तथा अनुग्रह। इनमें 'सृष्टि, स्थिति तथा संहार'के कार्य आख्य हैं; जबकि 'निग्रह तथा अनुग्रह'के कार्य अनाख्य हैं। शिवकी निग्रहात्मिका शक्ति 'निर्वाणकला' कहलाती है; जबकि अनुग्रहात्मिका शक्ति 'निर्वाणशक्ति' कहलाती है। ये दोनों शक्तियाँ अनाख्याशक्तिके रूपमें परिचित हैं। इन दोनों शक्तियोंकी उपस्थिति मात्रसे ही कार्योंका स्वतः निग्रहण तथा अनुग्रहण होता रहता है। इनमें कोई क्रिया-शीलता नहीं रहती है।

प्रस्तुत ग्रन्थके नवम आवरणके अन्तर्गत त्रिकोण चक्रमें तीन नित्याकलाओंका विवेचन प्रस्तुत है। तीन नित्यकलाएँ हैं–षोडशीतिथि नित्याकला, सप्तदशी नित्याकला तथा अष्टादशी नित्याकला। ये तीनों नित्याकलाएँ आख्यस्वरूपा हैं; जबकि एकादश आवरणके अन्तर्गत परब्रह्मात्मक चक्रमें महानित्याकला अनाख्यस्वरूपा त्रिगुणात्मिका परमेश्वरी श्रीगायत्री ब्रह्मविद्या पीठशक्तिके रूपमें विराजमान है। इसमें निर्वाण-कला तथा निर्वाण-शक्ति दोनोंका समावेश है।

ध्यान रहे कि निर्वाण-कलाकी उपस्थितिसे व्यष्टिरूपात्मक कार्य सम्पादित होते हैं; जबकि निर्वाण-शक्तिकी उपस्थितिसे समष्टि-रूपात्मक कार्य सम्पादित होते हैं। श्रीगायत्री ब्रह्मविद्या व्यष्टिरूपसे चौबीस वर्ण-मातृकाओंके रूपमें विराजमान है और यही इसकी त्रिगुणात्मिका निर्वाण-कला है; जबकि समष्टिरूपसे वह आकाशादि पञ्चतत्त्व-स्वरूपिणी त्रिगुणात्मिका निर्वाण-शक्तिके रूपमें सर्वोच्च पीठपर आसीन है। व्यष्टि त्रिगुणात्मक 'पिण्ड' और समष्टि त्रिगुणात्मक

'ब्रह्माण्ड' दोनों स्वरूपतः एक हैं।

अब श्रीचक्रमें पिण्डात्मिका व्यष्टिरूपिणी त्रिगुणात्मिका परमेश्वरी श्रीगायत्री ब्रह्मविद्याके स्वरूपका विवेचन किया जा रहा है:–

श्रीचक्रे चतुर्विंशतिगायत्रीवर्णमातृकानां स्वरूपम्

नवत्रिकोणै रचितेषु दिव्य-
स्यन्देषु संस्थाः किल वर्णरूपाः।
विभिन्नमूर्त्तीर्हरिकेशपूज्या
वन्दे चतुर्विंशतिवेदमातृः॥५॥

श्रीचक्रमें चौबीस गायत्री वर्णमातृकाओंका स्वरूप

मैं नौ त्रिकोणोंसे निर्मित दिव्य चक्रोंमें स्थित प्रसिद्ध वर्ण-रूपिणी, अनेक मूर्तियोंवाली, ब्रह्मा, विष्णु तथा रुद्रके द्वारा पूज्य चौबीस गायत्री वर्णमातृकाओंकी वन्दना करता हूँ।

विमर्श–अब श्रीचक्रमें चौबीस गायत्री वर्णमातृकाओंके स्वरूपका वर्णन किया जा रहा है–नवत्रिकोणैरिति।

नवत्रिकोणैः रचितेषु दिव्यस्यन्देषु संस्थाः किल वर्णरूपाः चतुर्विंशतिवेदमातृः–'स्यन्द' कहते हैं–चक्रको। श्रीचक्रका निर्माण नौ त्रिकोणोंके योगसे हुआ है। श्रीचक्रमें ऊर्ध्व अग्रभागवाले त्रिकोणोंकी संख्या चार है; जबकि अधः अग्रभागवाले त्रिकोणोंकी संख्या पाँच है। ऊर्ध्व अग्रभागवाले त्रिकोण शिव-त्रिकोण कहलाते हैं; जबकि अधः अग्रभागवाले त्रिकोणोंको शक्ति-त्रिकोण कहते हैं। इस प्रकारसे नौ त्रिकोणोंसे निर्मित श्रीचक्र शिव-शक्त्यात्मक दस चक्रात्मक है। हमने प्रथमावरणमें 'परा शक्ति'के विनिश्चयात्मक विवरणमें देखा कि शिव ही परम प्रकाश है और शक्ति उसकी प्रकृति है। प्रकृतिको स्वभाव भी कहते हैं। शिवकी अभिव्यक्ति बिन्दुसे होती है। सृष्टिको विसर्ग कहते हैं और शक्ति विसर्गात्मक है। 'बिन्दु और विसर्ग' शिव एवं शक्ति रूपमें स्थित हैं। इस प्रकारसे तीन बिन्दु हमें प्राप्त होते

हैं और तीन बिन्दुओंसे त्रिकोणका निर्माण होता है।

शिवका आन्तरिक स्वभाव ऊर्ध्व अग्रभागवाला त्रिकोण है तथा बाह्य स्वभाव अधः अग्रभागवाला त्रिकोण है। बाह्य स्वभाव सदैव सृष्ट्युन्मुख होता है। इसलिए पुंलिङ्ग 'स्वभाव' शब्दके स्थान पर स्त्रीलिङ्ग 'प्रकृति' शब्दका प्रयोग सृष्टिके लिए किया जाता है जो कि अधः अग्रभागवाले त्रिकोणसे परिलक्षित है। अन्तर्मुख पुंलिङ्ग शब्द 'स्वभाव' संहारात्मक है और यह ऊर्ध्व अग्रभागवाले त्रिकोणके रूपमें परिलक्षित है। इस प्रकारसे सृष्टिरूपात्मक होनेसे शक्ति-त्रिकोणोंकी संख्यामें वृद्धि होती है। शक्ति-त्रिकोणोंकी संख्या पाँच हैं; क्योंकि सृष्टि पञ्चभूतात्मक होती है। शिव-त्रिकोणोंकी संख्या चार हैं; क्योंकि संहारमें संख्याकी कमी होती है और धर्म, अर्थ, काम तथा मोक्षरूपी चार पुरुषार्थोंसे चार शिवत्रिकोणोंकी सिद्धि होती है।

ध्यान रहे कि श्रीचक्रके चक्रोंकी संख्या सदैव दस हैं, न कि नौ त्रिकोणोंके होनेसे चक्रोंकी संख्या भी नौ है और न ही नौ त्रिकोणोंमें नौ चक्रोंका अन्तर्भाव होता है। 'दिव्य' शब्दके प्रयोगसे ज्ञात होता है कि ये समस्त चक्र अलौकिक रूपवाले हैं; क्योंकि जिन चक्रोंमें दिव्य शक्तियोंका अवस्थान है उनमें तो फिर दिव्यताकी अवस्थिति स्वाभाविक ही है।

अब यहाँ पर प्रश्न उठते हैं—"जब प्रथमावरणमें श्रीचक्रका विशिष्ट निर्माणात्मक विवेचन प्रस्तुत किया जा चुका है तो पुनः एकादश आवरणमें इसकी आवश्यकता क्यों है? क्या वैदिक देवताओंकी उपासना श्रीचक्रमें होती है? क्या वेदमाता ब्रह्मगायत्री-की उपासनाका पीठ श्रीचक्र है?" कहते हैं—श्रीचक्र ही एकमात्र परम साधन है जो कि किसी भी प्रकारकी उपासनाको सफल बनाता है। इसका रूपान्तरण ही उस देश-कालस्वरूपिणी त्रिगुणात्मिका पारमेश्वरी शक्तिका रूपान्तरण है जो क्रियावैचित्र्यसे वर्ण-मन्त्र-पदात्मक कालाध्वा तथा मूर्तिवैचित्र्यसे कला-तत्त्व-भुवनात्मक देशाध्वाके रूपमें षडध्वात्मिका विश्वात्मा कहलाती है। यही त्रिगुणात्मिका पारमेश्वरी

शक्ति 'श्रीगायत्री ब्रह्मविद्या'के रूपमें शास्त्रमें प्रसिद्ध है। वैदिक मन्त्रोंका उच्चारण पारम्परिक उदात्त, अनुदात्त तथा स्वरितके नियमसे होता है। ब्रह्म-गायत्री मन्त्र वैदिक है। इसलिए इस वैदिक मन्त्रकी उपासना केवल वैदिक उच्चारण पूर्वक की जानी चाहिए और ऐसी परिस्थितिमें इसका कोई पीठयन्त्र नहीं होना चाहिए! इस आशङ्काको दूर करने हेतु यहाँ पर 'नवत्रिकोणैः रचितेषु दिव्यस्यन्देषु' शब्दोंका प्रयोग कर इस बात पर बल दिया गया है कि वैदिक मन्त्रोंकी उपासना श्रीचक्रमें की जाती है और त्रिगुणात्मिका परमेश्वरी श्रीगायत्री ब्रह्मविद्याकी उपासनाका पीठयन्त्र एकमात्र श्रीचक्र है। इतना ही नहीं बल्कि 'संस्थाः किल वर्णरूपाः चतुर्विंशति-वेदमातृः' शब्दोंका प्रयोग कर इस बात पर भी बल दिया गया है कि श्रीचक्रके सर्वानन्दमय बैन्दव चक्रके अन्तर्गत कल्पित महाबैन्दव चक्रमें कल्पित षट्कोणकके मध्यभाग सहस्रारके पूर्वी मण्डलमें निर्वाणकलात्मिका चौबीस वर्णों-वाली त्रिपदा ब्रह्मगायत्री मन्त्रकी उपासना की जाती है तथा तुरीया गायत्रीकी उपासना उत्तरी मण्डलमें की जाती है।

ध्यान रहे कि नौ त्रिकोणोंसे निर्मित श्रीचक्रके सर्वानन्दमय बैन्दव चक्रके अन्तर्गत कल्पित महाबैन्दव चक्रमें कल्पित षट्कोणकके मध्यभागको सहस्रार कहते हैं। सहस्रारमें श्रीमहाशाम्भव विराजमान हैं। इसी सहस्रारमें निर्वाणकला तथा निर्वाणशक्ति दोनों विराजित हैं। निर्वाणकला त्रिपदा ब्रह्मगायत्रीके रूपमें जानी जाती है; जबकि निर्वाणशक्ति तुरीया ब्रह्मगायत्री कहलाती है।

सहस्रारके दो मण्डल हैं—पूर्वी मण्डल तथा उत्तरी मण्डल। पूर्वी मण्डलको सूर्यमण्डल भी कहते हैं; जबकि उत्तरी मण्डलको चन्द्र-मण्डल कहते हैं। निर्वाणकला जिसे 'अमा कला' भी कहते हैं पूर्वी मण्डलमें स्थित है; जबकि उत्तरी मण्डलमें निर्वाणशक्ति विराजमान है। निर्वाणशक्तिको चन्द्रकला भी कहते हैं। यह शास्त्रमें 'षोडशी'के रूपमें ख्यात है। कुछ साधक लौकिक सूर्यमण्डलमें मन्त्रात्मिका त्रिपदा ब्रह्मगायत्रीकी उपासना करते हैं; जबकि रहस्यको जाननेवाले साधक

सहस्रारके अन्तर्गत सूर्यमण्डलमें निर्वाणकलात्मिका चौबीस वर्णोंवाली मन्त्रात्मिका त्रिपदा ब्रह्मगायत्रीकी उपासना करते हैं। यही परम रहस्य है। श्रीब्रह्मगायत्री वर्णमातृकाएँ चौबीस हैं। ये चौबीस वर्णमातृकाएँ त्रिपदा ब्रह्मगायत्री मन्त्रमें पायी जाती हैं। वैदिक ब्रह्मगायत्री मन्त्र है:–

"ॐ तत् सवितुर्वरेण्यं भर्गोदेवस्य धीमहि।
धियो यो नः प्रचोदयात् परो रजसेऽसावदोम्॥"

यह सम्पूर्ण मन्त्र वैदिक गायत्री छन्दमें है। वैदिक गायत्री छन्दके चार पाद होते हैं। प्रत्येक पादमें आठ वर्ण होते हैं। इस प्रकारसे इसमें कुल बतीस वर्ण हैं। इसमें वर्णोंकी गणना इस प्रकारसे की जाती है–'१–ॐ, २–तत्, ३–स, ४–वि, ५–तुर्, ६–व, ७–रे, ८–ण्यं, ९–भर्, १०–गो, ११–दे, १२–व, १३–स्य, १४–धी, १५–म, १६–हि। १७–धि, १८–यो, १९–यो, २०–नः, २१–प्र, २२–चो, २३–द, २४–यात्, २५–प, २६–रो, २७–र, २८–ज, २९–से, ३०–सा, ३१–व, ३२–दोम्॥'

इसके तीन पादोंके *"ॐ तत् सवितुर्वरेण्यं भर्गोदेवस्य धीमहि। धियो यो नः प्रचोदयात्"* चौबीस वर्ण 'त्रिपदा गायत्री'के रूपमें तथा चौथे पादके *"परो रजसेऽसावदोम्॥"* आठ वर्ण 'चतुष्पदा गायत्री'के रूपमें जाने जाते हैं। अब इस ब्रह्मगायत्री मन्त्रकी व्याख्या विशिष्ट ज्ञानके लिए निम्नलिखित रूपसे संस्कृत भाषामें की जा रही है:–

"ब्रह्मगायत्रीमन्त्रः–

"ॐ तत् सवितुर्वरेण्यं भर्गोदेवस्य धीमहि।
धियो यो नः प्रचोदयात् परो रजसेऽसावदोम्॥"

*पदच्छेदः–*ॐ तत् सवितुः वरेण्यम्। भर्गोदेवस्य धीमहि। धियः यः नः प्रचोदयात्। परः रजसे असौ अत् ओम्।

*अन्वयः–*ॐ, तत् सवितुः वरेण्यम्, भर्गोदेवस्य धीमहि, यः नः धियः प्रचोदयात्। रजसे असौ अत् परः ओम्।

मन्त्रार्थः–ॐ–ॐ प्रणवः परब्रह्मणो वाचको वर्तते। परब्रह्म परप्रकाशकं दिव्यज्योतिस्तत्त्वमस्तीति शेषः। परब्रह्म परप्रकाशकं देश-कालाद्यनवच्छिन्नं सर्वावभासकमस्तीत्यर्थः। *तत्*–परब्रह्म परप्रकाशकं दिव्य-ज्योतिस्तत्त्वम्। *सवितुः*–लौकिक-प्रकाशकस्य, देशकालाद्यव-च्छिन्नस्य ज्योतिस्तत्त्वस्येत्यर्थः। *वरेण्यम्*–प्रधानम्, वर्तत इति शेषः।

भर्गोदेवस्य–तस्य दिव्यज्योतिस्तत्त्वस्य परब्रह्मणः। पूर्वोक्त-प्रणव-रूपस्येत्यर्थः। *धीमहि*–चिन्तनं कुर्याम। वयं ब्रह्म-विष्णु-रुद्रदेवा इति शेषः।

यः–पूर्वोक्तो भर्गोदेवः। *नः*–अस्माकम्। ब्रह्मादीनां देवत्रयाणा-मित्यर्थः। *धियः*–बुद्धीः, ज्ञानेन्द्रियाणीत्यर्थः। *प्रचोदयात्*–प्रेरयेत्। सृष्टि-स्थितिसंहारकार्यसिद्ध्यर्थमिति शेषः। 'येनास्माकं बुद्धयः प्रेरिताः सन्तु' इत्यर्थः। वैखरीवाण्या ब्रह्मविद्यायाः श्रवणं कृत्वा पारस्परिकमन्त्रणा-नन्तरं सृष्टिस्थितिसंहारकार्यसिद्ध्यर्थं ब्रह्मादिभिः त्रिभिः देवैः परब्रह्मणो ध्यानं कृतम्। तदेव ध्यानं त्रिपान्मन्त्रे दृश्यते। एवमेवं त्रिपान्मन्त्रार्थो वर्तते–

''परब्रह्म परप्रकाशकं दिव्यज्योतिस्तत्त्वमस्ति। परब्रह्म परप्रकाशकं दिव्यज्योतिस्तत्त्वं लौकिक-प्रकाशक-ज्योतिस्तत्त्वस्य प्रधानं वर्तते। वयं परब्रह्मणः परप्रकाशस्य दिव्यज्योतिस्तत्त्वस्य चिन्तनं कुर्याम येनास्माकं बुद्धयः सृष्टि-स्थिति-संहार-कार्यसम्पादनाय प्रेरिताः सन्तु।'' इति।

इदानीं चतुर्थपान्मन्त्रार्थः प्रस्तूयते–रजस इति।

रजसे–सृष्टिस्थितिसंहारार्थाय। रजोगुणः क्रियाशीलः सर्जनात्मको वर्तते। अत एवास्य शब्दस्य प्रयोगो दृश्यत इति। अपि च रजः शब्दः देशकालावच्छिन्नस्य ब्रह्माण्डस्य सृष्टिस्थितिसंहारप्रयोजनहेतुश्च स्यादिति ज्ञायते। *असौ*–पूर्वानुभूतो ज्ञातोऽवर्णः। *अत्*–'अ' इति ह्रस्ववर्णः। वर्णमालायाः प्रथमो वर्ण इत्यर्थः। अत्र तपरस्तत्कालस्य बोधको भवति। अतोऽत्र केवलं ह्रस्वरूपस्य 'अ'वर्णस्यैव ग्रहणं भवतीति बोध्यम्। *परः*–कारणात्मक आद्यः। स्यादिति शेषः। तत्र 'अ'वर्णस्य

ह्रस्वरूपः कारणात्मक आद्यो वर्णः स्यादिति भावः। *ओम्*–अस्तीति स्वीकारोक्ति-वचनम्। ओमित्यङ्गीकारात्मकः शब्दो भवति। सृष्टिस्थिति-संहारार्थं कारणात्मको ह्रस्ववर्णरूपः 'अ'कार एव प्रथमोद्भूतो मङ्गल-स्वरूपो मङ्गलार्थको भवतीत्यस्माभिः ब्रह्मादिभिः त्रिभिः देवैरङ्गीक्रियत इति भावः। अत्र पारस्परिक-विमर्शानन्तरं ब्रह्मादीनां त्रयाणां देवाना-मोमित्यनेनाङ्गीकरणं दृश्यते। एवमेवं चतुष्पान्मन्त्रार्थो वर्तते–

"सृष्टि-स्थिति-संहारार्थमसौ कारणात्मकः ह्रस्ववर्णरूपः 'अ'वर्ण आद्यः स्यादित्यस्माभिरङ्गीक्रियते।'' इति।

स्मर्यते यद् वामामूर्तिरूपिण्या शिवया या ब्रह्मविद्या वैखरी-वाण्या सङ्गीता सा ब्रह्मादिभिः त्रिभिर्देवैः श्रुता। तच्छ्रवणानन्तरञ्च तन्मननमपि तैः देवैः सृष्टिस्थितिसंहारात्मकस्वप्रयोजनसिद्ध्यर्थं कृतम्। तन्निदिध्यासनञ्चापि तैः त्रिभिः देवैः कृतम्। तैरिदमनुभूतं यदसौ ब्रह्म-विद्याश्रावयित्री गायत्री देश-कालस्वरूपिणी [१]षडध्वात्मिका वामामूर्ति-रूपिणी शिवैव प्रकृतिर्वर्तते; कारणात्मकः 'अ'कार एवाद्यो वर्णो विद्यते। तत एव जगत्सर्जनं स्यादिति च विज्ञातम्। यतो हि षडध्वात्मिका देशकालस्वरूपिणी 'शिवा' क्रियावैचित्र्यरूपा वर्णमन्त्र-पदात्मक-कालाध्व-रूपिणी मूर्तिवैचित्र्यरूपा कला-तत्त्व-भुवनात्मक-देशाध्वरूपिणी च वर्तत इति। तस्माद् 'अ'कारो वर्णात्मकः कालाध्व-रूप आद्यः स्यादिति निश्चप्रचम्। इत्थमेव श्रवणमनननिदिध्यासनद्वारेण प्राप्तविज्ञानेन ब्रह्मादयः त्रयो देवाः स्व-स्व-प्रयोजनात्मक-सृष्टि-स्थिति-संहारकार्ये निरता जाता इति परम्परा स्यादिति निश्चप्रचम्।''

उपर्युक्त संस्कृत व्याख्याका विशिष्ट विवेचन हिन्दी भाषामें आगे प्रसङ्गानुसार किया जायेगा। अब प्रस्तुत प्रकरणमें त्रिपदा ब्रह्मगायत्रीका निम्नलिखित प्रकारसे विवेचन किया जाता है:–

---

१ *श्रीचक्रनिरूपणम्।* सविमर्श'प्रह्लाद'संस्कृत-हिन्दीव्याख्यासहितम्। ज्ञान-सपर्या-खण्डात्मकम्। लेखकः सम्पादकश्च-गोस्वामी प्रह्लाद गिरि 'वेदान्तकेशरी'। प्राप्तिस्थान–चौखम्बा संस्कृत सीरीज आफिस, वाराणसी–२२१००१

'किल वर्णरूपाः चतुर्शिति-वेदमातृः' शब्दसे बोध होता है कि त्रिपदा ब्रह्मगायत्रीके जो चौबीस वर्ण हैं वे छन्द रचनाके प्रयोजनसे हैं। छन्दके निर्माणमें स्वर 'अ...अः'की षोडश मात्राओंका महत्त्व है। जैसे–ॐ अर्थात् 'ओम्' यहाँ पर छन्दके प्रयोजनसे एक वर्ण माना जाता है; जबकि वर्णमालाके अन्तर्गत स्वर 'ओ' तथा व्यञ्जन 'म्' भिन्न-भिन्न दो वर्णके रूपमें जाने जाते हैं। इस प्रकारसे यहाँ पर वर्णमालाका कोई प्रयोजन नहीं रह जाता है तो क्या 'चौबीस' कोई संकेतात्मक है? हाँ, संकेतात्मक है। 'किल' शब्द प्रख्यात चौबीस तत्त्वोंका बोध कराता है। आगम तथा ज्योतिःशास्त्रके अन्तर्गत स्थान-स्थान पर प्रायः संकेतात्मक शब्दोंका प्रयोग किया जाता है जिससे कि अनधिकारी व्यक्ति इसका दुरुपयोग न कर सके। जैसे–यदि 'चन्द्र' शब्द कहीं पर संकेतके रूपमें प्रयुक्त है तो यह 'एक' संख्याका बोध कराता है न कि अपने पर्याय चन्द्रमा आदि अर्थका। ऐसे तो प्रस्तुत ग्रन्थके संस्कृत भागमें भी अनेक स्थानों पर संकेतात्मक शब्दोंका प्रयोग किया गया है किन्तु हिन्दी भागमें श्रद्धावान् परम जिज्ञासुके लिए उनके रहस्य प्रकटित कर दिये गये हैं।

पहले हमने देखा कि यह व्यष्टिरूप पिण्ड निर्वाणकलात्मक है। व्यष्टि पिण्डका निर्माण चौबीस कलाओंसे हुआ है। वे चौबीस कलाएँ हैं–१–आकाश तत्त्व, २–वायु तत्त्व, ३–अग्नि तत्त्व, ४–जल तत्त्व, ५–पृथिवी तत्त्व, ६–मन, ७–बुद्धि, ८–चित्त, ९–अहङ्कार, १०–श्रोत्र, ११–त्वक्, १२–चक्षु, १३–रसना, १४–घ्राण, १५–वाक्, १६–पाणि, १७–पाद, १८–पायु, १९–उपस्थ, २०–प्राण, २१–अपान, २२–व्यान, २३–उदान तथा २४–समान।

सत्त्व, रज तथा तमोगुणरूप त्रिगुणात्मक सूक्ष्म आकाश आदि पञ्च महाभूतोंसे मन आदि अन्तःकरण चतुष्टय, श्रोत्र आदि पञ्च ज्ञानेन्द्रिय, वाक् आदि पञ्च कर्मेन्द्रिय तथा प्राण आदि पञ्च प्राणोंकी सृष्टि हुई है। इन सूक्ष्म पञ्च महाभूतोंका स्थूलीकरण परिणाम ही स्थूल पिण्ड है। पिण्डकी ये चौबीस कलाएँ हैं। अतः पिण्ड कलात्मक है।

यही संकेत है। अब पञ्च महाभूतोंकी पिण्डीकरण प्रक्रियाका विवेचन किया जा रहा है:–

निर्वाणावस्थामें मायिक देशाध्वाकी तीन अवस्थाएँ होती हैं– कारण, सूक्ष्म तथा स्थूल। कारणको पर भी कहते हैं। कारणावस्थाकी 'कला' पञ्चतन्मात्ररूपिणी त्रिगुणात्मिका मायिक प्रकृति इच्छात्मिका पराशक्ति है और सूक्ष्मावस्थाका अपञ्चीकृत पञ्चमहाभूतात्मक 'तत्त्व' त्रिगुणात्मिका मायिक प्रकृति ज्ञानात्मिका परापराशक्ति है; जबकि स्थूलरूपका पञ्चीकृत पञ्चमहाभूतात्मक 'भुवन' त्रिगुणात्मिका मायिक प्रकृति क्रियात्मिका अपराशक्ति है। देशाध्वा त्रिगुणात्मिका मायिक 'प्रकृति'की समष्टिरूप अवस्था है। तीन गुण हैं–सत्त्वगुण, रजोगुण तथा तमोगुण। पञ्च तन्मात्र हैं–शब्द, स्पर्श, रूप, रस तथा गन्ध। इन कलात्मक तन्मात्रोंके तत्त्वात्मक 'पाँच महाभूत' हैं–शब्द तन्मात्रका आकाश, स्पर्श तन्मात्रका वायु, रूप तन्मात्रका अग्नि, रस तन्मात्रका जल तथा गन्ध तन्मात्रकी पृथिवी। इस प्रकारसे प्रत्येक तत्त्वमें तीनों गुण विद्यमान हैं। मूर्त्तिवैचित्र्यसे कला, तत्त्व तथा भुवन मायिक देशात्मक अध्वा प्रमेय हैं जो कि मूर्त्तरूप है।

क्रियावैचित्र्यसे वर्ण, मन्त्र तथा पद मायिक कालात्मक अध्वा प्रमाता है। कालात्मक अध्वा परा, पश्यन्ती, मध्यमा तथा वैखरी वाणीरूप है। वाणी ही जीवका प्राण है। जीव ही व्यावहारिक क्रिया-सम्पादक प्रमाता है। यही क्रिया करता है। कालमें ही क्रिया होती है इसलिए यह मायिक कालाध्वा है। इस प्रकारसे व्यावहारिक जीव मायिक देशकालाध्वात्मक है। मायिक कालाध्वात्मक कारणावस्थामें 'वर्ण' त्रिगुणात्मिका मायिक प्रकृति इच्छात्मिका पराशक्ति है और सूक्ष्मावस्थामें 'मन्त्र' त्रिगुणात्मिका मायिक प्रकृति ज्ञानात्मिका परापरा-शक्ति है; जबकि स्थूलावस्थामें 'पद' त्रिगुणात्मिका मायिक प्रकृति क्रियात्मिका अपराशक्ति है। इस प्रकारसे प्रमेय-प्रमातारूप देश-कालाध्वात्मक अहमात्मक कर्ता तथा भोक्ता व्यावहारिक प्राणी विश्वकी एक व्यष्टि इकाई है।

समष्टिकी एक इकाई है—व्यष्टि। देशात्मिका मायिक 'प्रकृति'की व्यष्टिरूप अवस्थामें पररूप पाँच तन्मात्रोंके त्रिगुणात्मक मायिक कार्योंका विकास देखनेको मिलता है। पररूप पाँच तन्मात्रोंके त्रिगुणात्मक मायिक कार्योंका विकास अपञ्चीकरण तथा पञ्चीकरण प्रक्रियाके द्वारा होता है। अपञ्चीकरणको सूक्ष्मीकरण तथा पञ्चीकरणको स्थूलीकरण कहते हैं। समष्टिसे व्यष्टिकी उत्पत्ति निम्नलिखित प्रकारसे होती है:—

अपञ्चीकरण प्रक्रिया

पाँच पररूप तन्मात्र हैं—शब्द, स्पर्श, रूप, रस तथा गन्ध। ये त्रिगुणात्मक मायिक हैं। ये 'कला' हैं। इन पाँच तन्मात्रोंसे पाँच सूक्ष्मरूप अपञ्चीकृत 'तत्त्व' पञ्चमहाभूत व्यक्त हुए हैं। पाँच सूक्ष्मरूप अपञ्चीकृत 'तत्त्व' हैं—आकाश, वायु, अग्नि, जल तथा पृथिवी। इन पञ्च तत्त्वोंका स्थूल रूप है—'भुवन'। व्यष्टि पिण्ड तथा समष्टि ब्रह्माण्डको 'भुवन' कहते हैं।

पाँच सूक्ष्मरूप अपञ्चीकृत तत्त्वोंके सात्त्विक अंशसे पाँच ज्ञानेन्द्रियोंकी उत्पत्ति हुई है। पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ हैं—श्रोत्र, त्वक्, चक्षु, जिह्वा तथा घ्राण। आकाशसे श्रोत्र, वायुसे त्वक्, अग्निसे चक्षु, जलसे जिह्वा तथा पृथिवीसे घ्राणकी उत्पत्ति हुई है।

पाँच सूक्ष्म अपञ्चीकृत तत्त्वोंके राजसिक अंशसे पाँच कर्मेन्द्रियोंकी उत्पत्ति हुई है। पाँच कर्मेन्द्रियाँ हैं—वाक्, पाणि, पाद, पायु तथा उपस्थ। आकाशसे वाक्, वायुसे पाणि, अग्निसे पाद, जलसे पायु तथा पृथिवीसे उपस्थकी उत्पत्ति हुई है।

पाँच सूक्ष्म अपञ्चीकृत तत्त्वोंके समष्टिरूप सात्त्विक अंशसे चार अन्तःकरणोंकी उत्पत्ति हुई है। चार अन्तःकरण हैं—मन, बुद्धि, चित्त तथा अहङ्कार।

पाँच सूक्ष्म अपञ्चीकृत तत्त्वोंके समष्टिरूप राजसिक अंशसे पाँच प्राणोंकी उत्पत्ति हुई है। पाँच प्राण हैं—प्राण, अपान, व्यान, उदान

तथा समान।

'पाँच ज्ञानेन्द्रिय, पाँच कर्मेन्द्रिय, चार अन्तःकरण तथा पाँच प्राण' कुल मिलाकर ये ऊन्नीस कलाएँ हैं और ऊन्नीस तत्त्वात्मक 'सूक्ष्म पिण्ड'के रूपमें व्यवस्थित हैं; जबकि 'स्थूल पिण्ड' पञ्चीकृत पञ्च तत्त्वात्मक है। इस प्रकारसे कुल मिलाकर चौबीस तत्त्वोंकी गणना की गयी है। यही चौबीस गायत्री वर्ण-मातृकाएँ हैं जो कि विभिन्न मूर्तियोंके रूपमें विराजमान हैं।

ध्यान रहे कि स्थूलरूपात्मक पिण्ड सदैव पञ्चीकृत पञ्च तत्त्वात्मक होता है; जबकि सूक्ष्मरूपात्मक 'तत्त्व' सदैव अपञ्चीकृत पञ्च तत्त्व ही होते हैं। जगतके समष्टिरूप सूक्ष्म ब्रह्माण्ड तथा व्यष्टिरूप पिण्ड अपञ्चीकृत पञ्च तत्त्वात्मक होते हैं; जबकि स्थूल ब्रह्माण्ड तथा पिण्ड पञ्चीकृत पञ्च तत्त्वात्मक होते हैं।

पञ्चीकरण प्रक्रिया

पाँच सूक्ष्म अपञ्चीकृत तत्त्वोंके तामसिक अंशसे पञ्चीकरण प्रक्रियासे स्थूल ब्रह्माण्ड तथा पिण्डकी उत्पत्ति हुई है। पञ्चीकरण प्रक्रियाको स्थूलीकरण प्रक्रिया भी कहते हैं। स्थूलीकरण प्रक्रिया निम्नलिखित हैः–

पाँचों सूक्ष्म अपञ्चीकृत तत्त्व अपने-अपने तामसिक अंशके आधे भागको अपने पास रख लेते हैं तथा शेष आधे भागको चार भागोंमें बाँटकर एक-एक भाग अन्य चार तत्त्वोंको दे देते हैं। इस प्रकारसे प्रत्येक तत्त्वके पास पुनः तामसिक अंश 'पूर्ण' रहता है। इस पूर्ण अंशमें अपने आधे भागकी प्रधानता रहनेसे तत्त्वके नाममें कोई परिवर्त्तन नहीं होता है। वह तत्त्व अपने मूल नामसे जाना जाता है। इसे निम्नलिखित प्रकारसे भी समझ सकते हैः–

आकाश–अपना आधा आकाश + एक चौथाई वायु + एक चौथाई अग्नि + एक चौथाई जल + एक चौथाई पृथिवी = पूर्ण पञ्चीकृत तामसिक अंश।

वायु—अपना आधा वायु + एक चौथाई आकाश + एक चौथाई अग्नि + एक चौथाई जल + एक चौथाई पृथिवी = पूर्ण पञ्चीकृत तामसिक अंश।

अग्नि—अपना आधा अग्नि + एक चौथाई आकाश + एक चौथाई वायु + एक चौथाई जल + एक चौथाई पृथिवी = पूर्ण पञ्चीकृत तामसिक अंश।

जल—अपना आधा जल + एक चौथाई आकाश + एक चौथाई वायु + एक चौथाई अग्नि + एक चौथाई पृथिवी = पूर्ण पञ्चीकृत तामसिक अंश।

पृथिवी—अपना आधा पृथिवी + एक चौथाई आकाश + एक चौथाई वायु + एक चौथाई अग्नि + एक चौथाई जल = पूर्ण पञ्चीकृत तामसिक अंश।

इस प्रकारसे समष्टिरूप स्थूल ब्रह्माण्ड तथा व्यष्टिरूप स्थूल पिण्डकी उत्पत्ति पञ्चीकृत पञ्च तत्त्वोंसे हुई है। समष्टिरूप ब्रह्माण्ड तथा व्यष्टिरूप पिण्ड दोनों तत्त्वतः एकात्मक हैं। इनका भेद तो समष्टि तथा व्यष्टि उपाधिके कारण है। समष्टिरूप एकात्मक ब्रह्माण्ड एक है; जबकि व्यष्टिरूप स्थूल पिण्डोंकी संख्यामें अनेकता है। इस प्रकारसे एक ही ब्रह्माण्डमें अनेक पिण्ड हैं तथा अनेक पिण्डोंका एक ही ब्रह्माण्ड है।

'वर्णरूपाः' शब्दके प्रयोगसे संकेत मिलता है कि वर्णात्मक संकेतरूप होनेके कारण इनके आकार, रंग, रूप आदिके स्थूल रूप अलगसे प्राप्त नहीं होते हैं। इसलिए केवल वर्णमात्रका ध्यान तथा पूजन किया जाता है। जब ये समष्टि रूपमें परिणत हो जाते हैं तब इनका स्थूल ध्यान होता है। यहाँ पर ग्रन्थके द्वितीय आवरणके अन्तर्गत वृत्तत्रय चक्रमें अवस्थित व्यञ्जन मातृका तथा स्वर मातृकाम्बाओंके समान इनकी उपासना नहीं की जाती है; क्योंकि ये गायत्री वर्णमातृकाएँ चौबीस तत्त्वरूप संख्याका बोध मात्र कराती

हैं न कि वर्णमालिनीरूप वर्णमातृका तथा वर्णमातृकाम्बाओंका। यहाँ पर चौबीस गायत्री वर्णमातृकारूप त्रिपदा ब्रह्मगायत्रीके अर्थका महत्त्व है न कि छान्दस वर्णोंका। यहाँ पर इसी सारभूत तथ्योंका अनुगमन किया जाता है।

'वेदमातृः' शब्दसे गायत्री ब्रह्मविद्याका बोध होता है। गायत्री ब्रह्मविद्या वेदकी जननीके रूपमें शास्त्रमें सम्बोधित है। यही वेदमाता है। यह वेदमाता गायत्री निर्वाणशक्तिके रूपमें समष्टिरूपा है तो निर्वाणकलाके रूपमें व्यष्टिरूपा है। अब गायत्री ब्रह्मविद्याके वेद-मातृत्वके सम्बन्धमें विचार किया जाता है:–

शिव तथा शक्तिका सामरस्य स्वरूप है–अर्द्धनारीश्वर विग्रह। दोनों वाम-दक्षिणात्मक विग्रह एक होनेके कारण उनमें मौन संवाद होता है। एकमात्र मुख होनेके कारण वैखरी वाणीका प्रकटन नहीं हो पाता है। वाणीकी चार अवस्थाएँ हैं–परा, पश्यन्ती, मध्यमा तथा वैखरी। 'परा' अवस्थामें वाणी अस्फुट रहती है और अन्तर्मुखी अहमात्मक रहती है। इसे अनुल्लासकी अवस्था भी कहते हैं। 'पश्यन्ती' बहिरुल्लासकी अवस्था है। इस अवस्थामें वाणी स्फुटास्फुट रहती है। 'मध्यमा' अवस्थामें वाणी स्फुट रहती है किन्तु अपनेमें ही सीमित रहती है। 'वैखरी' अवस्थामें वाणी स्फुट होकर अपनेसे बाहर हो जाती है जिससे कि अन्य व्यक्ति उसे स्पष्ट रूपसे समझ सके। सामरस्य स्वरूप अर्द्धनारीश्वरकी अहमात्मिका 'परा वाणी' जब बहिरुल्लासको प्राप्त करती है तो स्वाभाविक रूपसे अपनेसे भिन्नत्व-की जिज्ञासा होती है कि मैं कौन हूँ और तुम कौन हो? इस अवस्थामें दक्षिणा मूर्ति तथा वामा मूर्तिका भान होता है और दक्षिणामूर्ति 'शिव' तथा वामामूर्ति 'शिवा'के रूपमें अर्द्धनारीश्वर विग्रह परिलक्षित होता है। वामामूर्ति 'शिवा' जिज्ञासु शिष्या है और उसकी जिज्ञासाको शान्त करनेवाले दक्षिणामूर्ति 'शिव' ज्ञानप्रदाता गुरु हैं। शिवाका मौन प्रश्न है तो शिवका मौन उत्तर है। शिव नित्य युवा है तो शिवा अनित्या वृद्धा है। गुरु प्रेमपट्ट तो शिष्या योगपट्ट है।

'पट्ट'के दो प्रकार हैं–'प्रेमपट्ट' तथा 'योगपट्ट'। 'प्रेमपट्ट' प्रेम करनेवाला व्यक्ति 'गुरु' है और उस प्रेमको अपनेमें युक्त करनेवाला व्यक्ति योगपट्ट 'शिष्य' है। यहाँ पर 'शिव' ही परम गुरु 'प्रेमपट्ट' है और 'शिवा' ही परा शिष्या 'योगपट्ट' है। इसलिए इस परम्परामें श्रीदक्षिणामूर्त्ति 'शिव' ही एकमात्र आदिगुरुके रूपमें विराजमान हैं और अन्य सब शिष्य हैं। जब गुरुमूर्त्ति श्रीदक्षिणामूर्त्ति 'शिव' अपने स्वरूपका बोध शिष्यको करा दते हैं तब शिष्य अपने स्वरूपको जान लेता है और शिष्य गुरुके रूपमें प्रतिष्ठित हो जाता है। इसलिए परम पूज्य 'गुरुजी' सदैव कहा करते थे ''मैं गुरुताका प्रदान करता हूँ; शिष्यताका नहीं।''

आदिगुरु श्रीदक्षिणामूर्ति 'शिव'के द्वारा आदिशिष्या श्रीवामामूर्ति 'शिवा'को दिया गया ज्ञान 'ब्रह्मज्ञान' कहलाता है। ज्ञानका पर्याय है 'विद्या'। इसलिए 'ब्रह्मज्ञान' ही 'ब्रह्मविद्या'के रूपमें प्रसिद्ध है। यह ब्रह्मविद्या 'पश्यन्ती वाणी'के रूपमें श्रीदक्षिणामूर्ति 'शिव'से श्रीवामा-मूर्ति 'शिवा'में 'मध्यमा वाणी'के रूपमें रूपान्तरित हुई।

अर्द्धनारीश्वर विग्रहकी वामामूर्तिसे सर्वप्रथम निष्कल देश तथा काल आविर्भूत हुए; क्योंकि वामामूर्ति शिवा देशकालस्वरूपिणी त्रिगुणात्मिका प्रकृति है। देश और काल दोनों निष्कल हैं; क्योंकि इनमें न तो पुंकला और न ही स्त्रीकला स्फुट रहती है।

देशकालात्मक जगतके सृष्टि, स्थिति तथा संहार कार्योंके लिए वामामूर्तिसे सर्वप्रथम पुंकलात्मक सृष्टिकर्ता ब्रह्माकी उत्पत्ति हुई। इस शास्त्रमें ब्रह्मा 'सृष्टिकर्ता कामेश्वर'के रूपमें प्रसिद्ध हैं।

उसी क्रममें वामामूर्तिसे पुंकलात्मक स्थितिकर्ता विष्णुकी उत्पत्ति हुई। इस शास्त्रमें विष्णु 'स्थितिकर्ता कामेश्वर'के रूपमे प्रसिद्ध हैं।

उसी क्रममें वामामूर्तिसे पुंकलात्मक संहारकर्ता रुद्रकी उत्पत्ति हुई। इस शास्त्रमें रुद्र 'संहारकर्ता कामेश्वर'के रूपमें प्रसिद्ध हैं।

समग्रताका बोध करानेवाला साधन है-'वेद'। 'समग्र विद्या'के

अभावमें ब्रह्मा सृष्टिकार्य करने, विष्णु स्थितिकार्य करने तथा रुद्र संहारकार्य करनेके लिए असमर्थ थे। इसलिए इन तीनोंको वामामूर्ति शिवाने 'समग्र विद्या'का प्रदान 'वैखरी वाणी'के रूपमें किया। इस समग्रविद्याका श्रवण कर ब्रह्मादि तीनों देवताओंने पुनः इसका मनन किया जो कि त्रिपदा ब्रह्मगायत्री मन्त्रके रूपमें प्रसिद्ध है और इसके निदिध्यासनसे उन्हें जो अनुभूति हुई वह चतुष्पदा ब्रह्मगायत्रीके नामसे विख्यात है। इस प्रकारसे श्रवण, मनन तथा निदिध्यासनसे अनुभूत विज्ञानसे वे ब्रह्मादि तीनों देवता अपने-अपने सृष्टि-स्थिति-संहारात्मक प्रयोजनकी सिद्धिमें निरन्तर रत हैं।

'समग्र विद्या' कहते हैं–व्यवहार तथा अध्यात्मकी विद्याको। व्यवहार 'धर्म' है; जबकि अध्यात्म 'ब्रह्म'के रूपमें प्रसिद्ध है। वामा-मूर्ति शिवाके द्वारा 'वैखरी वाणी'से जिस 'समग्र विद्या'का गान किया गया है उसे 'वेदविद्या' कहते हैं। सर्वप्रथम 'वेदविद्या'का गान करनेके कारण वामामूर्ति शिवा 'वेदमाता गायत्री'के नामसे विख्यात हुई। गायत्रीके द्वारा उच्चरित 'वैखरी वाणी'को 'मन्त्र' कहते हैं। तत्पश्चात् विशिष्ट स्वरपद्धतिसे गायी गयी यह 'वेदविद्या' प्रबुद्ध ब्रह्माके मुखसे सृष्टिके साथ उद्भासित हुई और कालक्रमसे श्रवण-परम्परासे लोकमें प्रचलित हुई। श्रवण-परम्पराके अन्तर्गत विशिष्ट स्वरपद्धतिसे ही समग्रविद्यास्वरूपिणी वेदविद्या प्राप्त होती है इसलिए वेदविद्याको 'श्रुति' भी कहते हैं।

'वेदविद्या' धर्मविद्या तथा ब्रह्मविद्याके लिए प्रमाण है। इसलिए कहा गया है–'धर्मजिज्ञासमानानां प्रमाणं परमं श्रुतिः।' धर्मको जाननेके इच्छुक व्यक्तिके लिए श्रुति प्रमाण है। उसी प्रकार 'ब्रह्मजिज्ञासमानानां प्रमाणं परमं श्रुतिः।' ब्रह्मको जाननेके इच्छुक व्यक्तिके लिए श्रुति प्रमाण है।

मीमांसाका अर्थ है–विचार। समग्रके विचारको 'वेदमीमांसा' कहते हैं। 'वेदमीमांसा'के अन्तर्गत 'धर्ममीमांसा' तथा 'ब्रह्ममीमांसा' दोनों आती हैं। 'धर्ममीमांसा'को व्यवहारमीमांसा तथा सृष्टि-स्थिति-

संहारात्मिका आख्यमीमांसा भी कहते हैं; जबकि 'ब्रह्ममीमांसा'को अध्यात्ममीमांसा तथा अनाख्यमीमांसा कहते हैं।

'गायत्री'का पर्याय है–'वेदमाता'। 'चतुर्शिंतिवेदमातृः' शब्दसे चौबीस कलात्मिका व्यष्टिरूपमीमांसा तथा धर्ममीमांसाका संकेत प्राप्त होता है। इस व्यष्टिरूपात्मिका विद्याको प्राप्त करनेके लिए त्रिपदा ब्रह्मगायत्रीकी उपासना की जाती है; जबकि चतुष्पदा ब्रह्मगायत्री मन्त्रसे समष्टिरूपमीमांसा तथा ब्रह्ममीमांसाका अनुभूतिरूप संकेत प्राप्त होता है। इस समष्टिरूपात्मिका विद्याकी अनुभूतिको प्राप्त करनेके लिए चतुष्पदा ब्रह्मगायत्रीकी उपासना की जाती है। अब ब्रह्मगायत्री मन्त्रका निम्नलिखित विमर्श प्रस्तुत किया जा रहा है:–

"ॐ तत् सवितुर्वरेण्यं भर्गोदेवस्य धीमहि।

धियो यो नः प्रचोदयात् परो रजसेऽसावदोम्॥"

ॐ–'ॐ' अव्यय शब्द है। यह प्रणवके रूपमें भी प्रसिद्ध है। प्रणव 'परब्रह्म'का वाचक है। परब्रह्म परप्रकाश दिव्यज्योतिस्तत्त्व है; क्योंकि यह देश तथा कालसे परे है; अलौकिक देव है। देश और काल लौकिक हैं। इसलिए देश तथा काल भी परप्रकाशसे प्रकाशित हैं। इसलिए परब्रह्म परप्रकाश सर्वावभासक कहलाता है। 'ॐ'को 'वेदादिः' भी कहते हैं। उपर्युक्त ब्रह्मगायत्री मन्त्र वैदिक मन्त्र है। इस मन्त्रका प्रारम्भ 'ॐ' शब्दसे होता है।

तत्–'तत्' शब्दसे उस पूर्वोक्त परब्रह्म परप्रकाश दिव्यज्योतिस्तत्त्वका ग्रहण होता है।

सवितुः–'सविता' कहते हैं–प्रकाशको। यह प्रकाश लौकिक देश-कालरूप व्यावहारिक ज्योतिस्तत्त्वके रूपमें प्रसिद्ध है। यह व्यष्टिरूप पिण्डमें अन्तःप्रकाशक तथा समष्टिरूप ब्रह्माण्डमें बहिःप्रकाशक कहलाता है। यह प्रकाश लोकको प्रकाशित करनेके कारण 'सूर्य'के नामसे भी विख्यात है। 'सविता'को उत्पादक भी कहते हैं; क्योंकि इसके कारण देशकालात्मक ब्रह्माण्डकी उत्पत्ति होती है।

वरेण्यम्–'वरेण्य' कहते हैं–प्रधानको। परब्रह्म परप्रकाश सर्वावभासक है तथा स्वतन्त्र है। इसे प्रकाशित होनेके लिए किसी अन्य प्रकाशकी आवश्यकता नहीं है। यह स्वयंप्रकाश है। व्यावहारिक प्रकाशको प्रकाशित होनेके लिए परप्रकाशकी आवश्यकता है। इसलिए व्यावहारिक प्रकाशरूप सविताका प्रधान है–परब्रह्म परप्रकाश दिव्यज्योतिस्तत्त्व। यह तो 'ज्योतिषां ज्योतिः'के रूपमें शास्त्रमें प्रसिद्ध है। वस्तुतः परप्रकाश लौकिक 'सूर्य, चन्द्र तथा अग्नि'के समान प्रकाशक नहीं है बल्कि यह चित्स्वरूप है; बोधस्वरूप है। उसकी उपस्थितिसे पदार्थका बोध होता है। इस प्रकारसे उपर्युक्त प्रथम पादका अर्थ है:–

"परब्रह्म परप्रकाश दिव्यज्योतिस्तत्त्व है। वह लौकिक ज्योतिस्तत्त्वका प्रधान है।"

भर्गोदेवस्य–'भर्गः' कहते हैं–ज्योतिस्तत्त्वको। यह ज्योतिस्तत्त्व अलौकिक होनेके कारण दिव्यज्योतिः कहलाता है। 'देव' शब्दके प्रयोगसे लौकिक ज्योतिस्तत्त्व 'सविता'का निरास होता है। यह दिव्यज्योतिः परम प्रकाशक परब्रह्म प्रणवात्मक देव है। यहाँ पर 'तत्' कर्तृक सर्वनाम षष्ठीविभक्तिकका अध्याहार होता है। इसका अर्थ है–उस परब्रह्म परप्रकाश दिव्यज्योतिस्तत्त्वका।

धीमहि–'धीमहि' शब्द चिन्तन करनेके अर्थमें प्रयुक्त है। यह उत्तम पुरुष बहुवचनान्त क्रियारूप है। यहाँ पर 'वयम्' कर्तृत्वका अध्याहार होता है जिससे 'वयं धीमहि' शब्दका अर्थ होता है–हम चिन्तन करें। 'हम' शब्दसे 'ब्रह्मा, विष्णु तथा रुद्र' इन तीनों देवताओंका ग्रहण होता है। इस प्रकारसे अर्थ होता है–हम उस दिव्यज्योतिः परम प्रकाश परब्रह्म प्रणवात्मक देवका चिन्तन करें। इस प्रकारसे उपर्युक्त द्वितीय पादका अर्थ है:–

"हम उस परब्रह्म परप्रकाश दिव्यज्योतिस्तत्त्वका चिन्तन करें।"

अब भर्गोदेवके चिन्तन करनेका कारण दर्शाया जा रहा है:–

यः–'यः' शब्द 'यत्' शब्दका प्रथमाविभक्तिक एकवचनान्त सर्वनाम कर्ता है। यह शब्द पूर्वोक्त प्रणवात्मक भर्गोदेवकी सर्वनाम संज्ञा है। 'प्रणव' शब्द पुंल्लिङ्ग है। इस प्रकारसे इसका अर्थ है–जो पूर्वोक्त प्रणवात्मक भर्गोदेव।

नः–'नः' शब्द 'अस्मद्' शब्दका षष्ठीविभक्तिक बहुवचनान्त सम्बन्ध है, जिसका अर्थ है–हमारी। 'हमारी' हिन्दी शब्द स्त्रीलिङ्ग है; क्योंकि इसका सम्बन्ध स्त्रीलिङ्ग 'बुद्धि' शब्दसे है। 'नः' शब्दसे 'ब्रह्मा, विष्णु तथा रुद्र' इन तीन देवताओंका ग्रहण होता है; क्योंकि ये तीनों देव यहाँ पर चिन्तक हैं।

धियः–'धी' कहते हैं–बुद्धिको। यह 'धी' शब्द ज्ञानेन्द्रियका भी पर्याय है। यहाँ पर द्वितीयाविभक्तिक बहुवचनान्त शब्दका प्रयोग हुआ है, जिसका अर्थ है–बुद्धियोंको। 'बुद्धि' निर्णयात्मिका वृत्ति है। यह अपनी प्रधानताके कारण शरीरके मन आदि अन्य अङ्गोंका संचालन करती है। इसकी स्वस्थतासे शरीर स्वस्थ रहता है।

प्रचोदयात्–प्रेरणार्थक 'चुद' धातुसे वैदिक 'प्रचोदयात्' शब्दकी निष्पत्ति हुई है, जिसका अर्थ है–प्रेरित करे। इस प्रकारसे उपर्युक्त तृतीय पादका अर्थ है:–

"जो हमारी बुद्धियोंको प्रेरित करे।"

दिव्यज्योतिः परम प्रकाश परब्रह्म व्यष्टिरूप पिण्डमें अन्तर्यामीके रूपमें विराजमान है। यहाँ पर यह प्रश्न उठता है–क्या परब्रह्म परप्रकाश बुद्धि आदि इन्द्रियोंका 'प्रेरक' है? इसका उत्तर है–परब्रह्म परप्रकाश 'प्रेरक' नहीं है। उसकी उपस्थिति मात्रसे ही बुद्धि आदि इन्द्रिय स्वतः क्रियाशील होते हैं जिस प्रकार लोकमें सूर्यके उदय होने पर स्वतः प्राणी अपने-अपने दैनन्दिन क्रियाकलापमें प्रवृत्त हो जाते हैं। इन्हें सूर्य कभी भी प्रेरित नहीं करता है। इसलिए सूर्य 'प्रेरक' नहीं है। सूर्यकी उपस्थिति मात्रसे ही इनकी स्वतः प्रवृत्ति है। परब्रह्म परप्रकाश कभी भी किसीको प्रेरित नहीं करता है और न

ही अन्तर्यमन करता है। इसलिए वह न तो 'प्रेरक' है और न ही 'अन्तर्यामी' है।

अब यहाँ पर यह प्रश्न उठता है कि यदि परब्रह्म परप्रकाश 'प्रेरक' नहीं है तो फिर ब्रह्मा आदि तीनों देवताओंने प्रेरणाके लिए क्यों परब्रह्म परप्रकाशका चिन्तन किया? कहते हैं–कोई व्यक्ति जब किसी विशिष्ट कार्यको करना चाहता है किन्तु उसे उस कार्यको किस प्रकारसे किया जाय इसकी जानकारी नहीं है तो ऐसी परिस्थितिमें वह किसी विशेषज्ञसे परामर्श लेता है। यदि कोई ऐसा विशेषज्ञ नहीं मिलता है तो वह किसी अदृष्ट व्यक्तिका चिन्तन हृदयमें करता है; इसे कहते हैं 'उपासना'। उपासनासे जब अन्तःकरण शुद्ध हो जाता है तथा चित्तकी एकाग्रता होती है तब अज्ञान दूर हो जाता है और उसे उस कार्यको करनेकी विधि ज्ञात हो जाती है।

व्यष्टिरूप व्यक्ति भी सर्वज्ञ तथा सर्वशक्तिमान है; क्योंकि वह स्वयं परब्रह्म परप्रकाश है। किन्तु उसे यह ज्ञान नहीं रहता है कि 'परब्रह्म परप्रकाश एक है और वह उससे भिन्न नहीं है'। यह ज्ञान तभी उसे प्राप्त हो सकता है जब उसका अन्तःकरण शुद्ध हो तथा चित्तकी एकाग्रता हो। इसलिए ब्रह्मा आदि तीनों देवताओंने अपने-अपने प्रयोजनकी सिद्धिके लिए बुद्धिको प्रेरित करने हेतु परब्रह्म पर-प्रकाशका चिन्तन किया। उन तीनोंके प्रयोजन हैं–सृष्टि, स्थिति तथा संहारके कार्यको सम्पादित करना। ब्रह्मा आदि तीनों देवताओंका आविर्भाव इसी प्रयोजनोंकी सिद्धिके लिए ही हुआ है। इसलिए वे प्रणवात्मक परमप्रकाश परब्रह्म परज्योतिस्तत्त्व भर्गोदेवका चिन्तन करते हैं।

अब यहाँ पर यह प्रश्न उठता है–क्या 'ॐ...प्रचोदयात्' यह त्रिपदा ब्रह्मगायत्री मन्त्र ब्रह्मा आदि तीनों देवताओंके द्वारा प्रणवात्मक परप्रकाश परब्रह्म परज्योतिस्तत्त्व भर्गोदेवकी की गयी स्तुतिके रूपमें है अथवा उनके द्वारा स्वप्रयोजन सिद्धिहेतु प्रणवात्मक परप्रकाश परब्रह्म परज्योतिस्तत्त्व भर्गोदेवके चिन्तनके लिए किया गया

पारस्परिक परामर्शके रूपमें है? अब इस प्रश्नके उत्तरक्रममें प्रसङ्गानुसार स्तुति वाक्य, सिद्धान्त वाक्य तथा परामर्श वाक्यके सम्बन्धमें निम्नलिखित विचार प्रस्तुत किये जाते हैं:-

स्तुति किसी व्यक्तिकी प्रसन्नताके लिए की जाती है। किसी व्यक्तिकी जब स्तुति की जाती है तो उसकी महिमाका गान किया जाता है और इसमें कुछ अतिशयोक्ति भी हो सकती है। इसलिए स्तुति वाक्यको कभी-कभी कल्पित महिमासे मण्डित मान लिया जाता है; जबकि सिद्धान्त वाक्य यथार्थ पर सदैव आधारित होता है। सिद्धान्त अटल होता है। इसका कोई अपवाद नहीं होता है। परामर्श वाक्य उसे कहते हैं जिसमें किसी दूसरे व्यक्तिके साथ किया गया पारस्परिक विचार विमर्श विद्यमान हो।

'ॐ...प्रचोदयात्' इस त्रिपदा ब्रह्मगायत्री मन्त्रमें ब्रह्मा आदि तीनों देवताओंके द्वारा प्रणवात्मक परप्रकाश परब्रह्म परज्योतिस्तत्त्व भर्गोदेवकी महिमाका गान किया गया है; किन्तु यह महिमा अतिशयोक्तिसे मण्डित नहीं है; बल्कि यह सिद्धान्तरूप है; यथार्थ पर आधारित है। इसलिए इसे स्तुति वाक्य मात्र नहीं कहा जा सकता है; बल्कि यह मन्त्र परब्रह्म परप्रकाशकी कार्यसिद्धिरूप महिमाको देखते हुए ब्रह्मा आदि तीनों देवताओंके द्वारा चिन्तन करने हेतु किया गया पारस्परिक परामर्श मात्र है; क्योंकि इसमें प्रयुक्त 'धीमहि', 'नः' तथा 'धियः' शब्दोंसे ज्ञात होता है कि ये तीनों शब्द 'अस्मद्' शब्दसे सम्बन्धित और बहुवचनान्त हैं। 'मन्त्र'का अर्थ है–मन्त्रणा; विचार-विमर्श करना। यहाँ पर मन्त्रार्थकी महत्ता है। ऐसी परिस्थितिमें मन्त्रार्थके चिन्तनसे ही अभीष्ट फलकी प्राप्ति होती है।

इस प्रकारसे ब्रह्मा आदि तीनों देवताओंने पारस्परिक विचार-विमर्श कर निश्चय किया कि प्रयोजनोंकी सिद्धिके लिए त्रिपदा ब्रह्मगायत्री मन्त्रके अर्थका चिन्तन किया जाना श्रेयस्कर है और तदनुसार उन्होंने मन्त्रार्थका चिन्तन किया। परिणामस्वरूप उन्हें मन्त्रके चतुर्थ पादमें वर्णित फल प्राप्त हुए। इस प्रकारसे उपर्युक्त तीनों पादोंका

अर्थ है:–

"परब्रह्म परप्रकाश दिव्यज्योतिस्तत्त्व है। वह लौकिक ज्योतिस्तत्त्वका प्रधान है। हम उस परब्रह्म परप्रकाश दिव्यज्योतिस्तत्त्वका चिन्तन करें जिससे हमारी बुद्धियाँ प्रेरित हों।"

अब मन्त्रके चतुर्थ पादका विवेचन प्रस्तुत किया जा रहा है– रजस इति।

रजसे–'रजस्' कहते रजोगुणको। रजोगुण क्रियाशीलताका परिचायक है। सृष्टि-स्थिति-संहारात्मक 'आख्य' कार्य क्रियात्मक होते हैं। 'रजसे' यह चतुर्थीविभक्तिक शब्द है और क्रियात्मक 'आख्य' कार्यका परिचायक है। 'रजस्'का अर्थ अन्धकार भी है। प्रकाश तो एकमात्र परब्रह्म है। इससे भिन्न 'आख्य' कार्य अन्धकारके परिचायक हैं। इस प्रकारसे 'रजसे'का अर्थ है–सृष्टि-स्थिति-संहारात्मक 'आख्य' कार्यके लिए।

असौ–'अदस्' शब्द पुंलिङ्ग है और 'असौ' प्रथमाविभक्तिक एकवचनान्त शब्द है। यह पुरोवर्ति उस विषयका संकेत कराता है जो कि ज्ञाताके लिए ज्ञात हो। इसके प्रयोगसे किसी संज्ञाके अस्तित्वका बोध होता है; क्योंकि यह सर्वनाम शब्द है। यह संज्ञा है–ह्रस्ववर्णरूप देशकालात्मक 'अ' वर्ण। वामामूर्तिरूपिणी शिवासे ब्रह्मा आदि तीनों देवताओंने 'ब्रह्मविद्या'का श्रवण वैखरी वाणीके रूपमें किया था। यही वामामूर्तिरूपिणी शिवा 'ब्रह्मगायत्री'के रूपमें इनमें विख्यात हुई। यही देशकालस्वरूपिणी निमित्तकारणात्मिका प्रकृति है। इसी प्रकृतिसे 'अ' वर्णात्मक उपादान कारणसे ब्रह्माण्डकी सृष्टि होती है।

अत्–'तपरस्तत्कालस्य' इस नियमके अनुसार 'अत्' शब्दसे केवल ह्रस्व 'अ'का ग्रहण होता है। यदि 'अ'के बाद 'त्' नहीं लगाया जाता तो ऐसी परिस्थितिमें 'अ'के ह्रस्व-दीर्घ-प्लुतात्मक अनुनासिक तथा निरनुनासिक रूप अठारह भेदोंका ग्रहण करना पड़ता।

परः–'पर' कहते हैं–कारणको। जिससे कार्यकी उत्पत्ति होती है

वहीं 'कारण' कहलाता है। जो कारण है वही आद्य है। वर्णमालामें 'अ'का स्थान सबसे पहला है। यही आद्य कारणात्मक वर्ण है। इसीके बाद अन्य वर्णोंकी सृष्टि हुई है। षडध्वात्मिका वामामूर्ति 'शिवा' वर्ण-मन्त्र-पदात्मक कालाध्वाके तथा कला-तत्त्व-भुवनात्मक देशाध्वाके रूपमें शास्त्रमें जानी जाती है। वर्णात्मक कालाध्वरूप यह 'अ' वर्ण आद्य पररूप है; क्योंकि कालाध्वाके अन्तर्गत 'वर्ण' पररूपसे, 'मन्त्र' सूक्ष्मरूपसे तथा 'पद' स्थूलरूपसे रहते हैं। उसी प्रकारसे देशाध्वाके अन्तर्गत 'कला' पररूपसे, 'तत्त्व' सूक्ष्मरूपसे तथा 'भुवन' स्थूलरूपसे रहते हैं। 'काल'से कर्तृत्व तथा 'देश'से विषयत्वका बोध होता है। व्यक्ति भी देशकालावच्छिन्न है। देशकालात्मक 'अ' अभिन्ननिमित्तो-पादान कारण है। यह 'अ' जब ह्रस्वादि मात्रात्मकताको प्राप्त करता है तब वर्णाध्वा तथा कलाध्वा कहलाता है।

परसूक्ष्मस्थूलात्मक अध्वा ही व्यक्तिका परसूक्ष्मस्थूलात्मक शरीर-त्रय है। जब वामामूर्ति शिवाको वाणीके रूपमें उल्लेख किया जाता है तब भी उसकी परा, पश्यन्ती, मध्यमा तथा वैखरीमें कर्तृत्वके साथ विषयत्व भी विद्यमान रहता है; क्योंकि जहाँ कर्तृत्व है वहाँ विषयत्व है। इन दोनोंमें युगपत् सम्बन्ध विद्यमान है। कर्तृत्व तथा विषयत्व युगपत् रूपसे समग्रताका बोध कराते हैं। कर्तामें निमित्त कारणत्व रहता है तो विषयमें उपादान कारणत्व। इस लिए सर्वकारणात्मिका त्रिगुणात्मिका मायिक प्रकृति वामामूर्ति शिवामें अभिन्ननिमित्तोपादान कारणत्व विद्यमान है। इस प्रकारसे 'अ' वर्णमें कर्तृत्वके साथ कलाका विषयत्व भी निहित है। त्रिगुणात्मिका मायिक प्रकृति परप्रकाशरूपी अधिष्ठान पर आश्रित होकर प्रमाता-प्रमेयका काम करती है।

ओम्—'ओम्' यह ब्रह्मगायत्री मन्त्रका अन्तिम वर्ण है और अङ्गीकारात्मक शब्द है। ब्रह्मा आदि तीनों देवताओंने निदिध्यासनसे अनुभूत कर स्वीकार किया कि यह ब्रह्मविद्याका श्रवण करानेवाली ब्रह्मगायत्री वामामूर्ति शिवा ही कारणात्मिका त्रिगुणात्मिका मायिक

प्रकृति है और देशकालरूप निमित्तोपादानकारणभूत 'अ' ही आद्य वर्ण है और यह सृष्टि, स्थिति तथा संहाररूप 'आख्य' कार्यको सम्पादित करनेके लिए प्रथमतः उपयुक्त है और इसी कारणात्मक 'अ'से 'आख्य' कार्य प्रारम्भ होते हैं। इसके बाद ही 'अ'के अठारह भेद प्रयुक्त होते हैं इसलिए 'अ' मङ्गलार्थकके रूपमें विख्यात है। इस प्रकारसे उपर्युक्त चतुर्थ पादका अर्थ है:-

"सृष्टि, स्थिति तथा संहार कार्यके लिए यह कारणात्मक 'अ'वर्ण आद्य है। स्वीकार है।"

ध्यान रहे कि ब्रह्मा आदि तीनों देवताओंको वेदविद्याकी प्राप्ति न होनेके कारण वे सृष्टि, स्थिति तथा संहाररूप 'आख्य' कार्यको सम्पादित करनेके लिए समर्थ नहीं थे इसलिए उन्होंने ब्रह्मगायत्रीसे वेदविद्याका श्रवण किया और पारस्परिक विचार-विमर्शके पश्चात् उन्होंने उस ज्ञानका मनन किया जो कि त्रिपदा ब्रह्मगायत्री मन्त्रके रूपमें ख्यात है। उस त्रिपदा ब्रह्मगायत्री मन्त्रार्थके चिन्तनसे उनमें स्थित विपरीत शंकाएँ तो दूर हुईं किन्तु उसकी अनुभूति नहीं हुई इसलिए उन्होंने उसका निदिध्यासन किया। उसके बाद निदिध्यासनसे उसकी जो अनुभूति हुई वह चतुर्थ पादके मन्त्रार्थके रूपमें वर्णित है। श्रवण, मनन तथा निदिध्यासनके द्वारा ही सदैव वस्तुतत्त्वकी प्राप्ति होती है। इस प्रकारसे ब्रह्मा आदि तीनों देवताओंने अपने-अपने प्रयोजन-सृष्टि, स्थिति तथा संहाररूप 'आख्य' कार्योंको सम्पादित करनेके लिए विचार-विमर्शके बाद सर्वसम्मतिसे निमित्तोपादानकारणभूत 'अ' वर्णको आद्य माना तथा उसीसे कार्यका प्रारम्भ किया।

सकारात्मक भावमें सार्थकता है; जबकि नकारात्म निरर्थकताका प्रदान करती है। ब्रह्मगायत्री मन्त्रका आद्य वर्ण 'ॐ' है और अन्तिम वर्ण भी 'ॐ'। प्रारम्भमें 'ॐ'के अस्तित्वका सकारात्मक भाव है तो अन्तमें भी 'ॐ'की सत्ताके स्वीकरणका सकारात्मक भाव प्रदर्शित है। यहाँ नकारात्मक भावका कोई स्थान नहीं है। इसलिए व्यक्तिको

सदैव सकारात्मक दृष्टिकोण अपनाना चाहिए।

इस प्रकारसे हमने देखा कि ब्रह्मगायत्री मन्त्र चतुष्पदात्मक है तथा इसके चारों पाद 'श्रवण, मनन तथा निदिध्यासन'की प्रक्रियासे पारस्परिक रूपसे संश्लिष्ट हैं। इसलिए इसकी उपासना सम्पूर्णताके रूपमें की जाती है। सम्पूर्ण ब्रह्मगायत्री मन्त्रका अर्थ है:–

"परब्रह्म परप्रकाश दिव्यज्योतिस्तत्त्व है। वह लौकिक ज्योतिस्तत्त्वका प्रधान है। हम उस परब्रह्म परप्रकाश दिव्यज्योतिस्तत्त्वका चिन्तन करें जिससे हमारी बुद्धियाँ प्रेरित हों। सृष्टि-स्थिति-संहारके लिए यह कारणात्मक 'अ'वर्ण आद्य है। स्वीकार है।"

अब यहाँ पर यह प्रश्न उठता है–सम्पूर्ण ब्रह्मगायत्री मन्त्रकी उपासना त्रिपदा ब्रह्मगायत्री तथा चतुष्पदा ब्रह्मगायत्रीके रूपमें भिन्नतासे क्यों की जाती है? कहते हैं:–

हमने पहले देखा कि वस्तुतत्त्वकी प्राप्ति श्रवण, मनन तथा निदिध्यासनकी प्रक्रियासे होती है। जब वस्तुका ज्ञान व्यक्तिको नहीं हो पाता है तब वह उससे सम्बन्धित किसी विशेषज्ञसे प्रश्नोत्तरकी प्रक्रियासे उपदेशका श्रवण करता है। श्रवण करनेसे सामान्यरूपसे ज्ञान तो हो जाता है किन्तु विशिष्ट ज्ञान नहीं हो पाता है; क्योंकि व्यक्तिके चित्तमें अनेक प्रकारकी शंकाएँ तथा विपरीत शंकाएँ रहती हैं और ये शंकाएँ तब दूर होती हैं जब तत्सम्बन्धित चिन्तन बार-बार किया जाता है। व्यक्ति जितना अधिक चिन्तन करता है उतनी शंकाएँ दूर होती हैं और अन्तःकरणकी शुद्धि तथा चित्तकी एकाग्रता उतनी होती है। चित्त एकाग्र हो जाने पर वस्तुतत्त्वके ज्ञानमें दृढ़ता आती है तथा व्यक्ति वस्तुतत्त्वका ज्ञाता कहलाता है।

ब्रह्मा आदि तीनों देवताओंके द्वारा किये गये श्रवणके पश्चात् होनेवाला मननका विषय है–त्रिपदा ब्रह्मगायत्री मन्त्रका अर्थ। इस मन्त्रार्थके चिन्तनका अभ्यास बार-बार करना पड़ता है और इसमें समय लगता है। इसलिए त्रिपदा ब्रह्मगायत्री मन्त्रके अर्थका चिन्तन पूर्ववर्तीके रूपमें किया जाता है और इसकी उपासना भी प्रारम्भिक-

रूपसे की जाती है; जबकि मननसे वस्तुतत्त्वका ज्ञान होने पर भी उसकी अनुभूति नहीं हो पाती है। ऐसी परिस्थितिमें बार-बार उसका निदिध्यासन करना पड़ता है और निदिध्यासनसे ही वस्तुतत्त्वकी अनुभूति होती है। वस्तुतत्त्वकी अनुभूति प्राप्त करना ही व्यक्तिका परम लक्ष्य है। यही अपरोक्षानुभूति है और प्रयोजनकी सिद्धि है। ब्रह्मा आदि तीनों देवताओंके द्वारा किये गये निदिध्यासनके पश्चात् होनेवाली अनुभूतिका विषय है–चतुष्पदा ब्रह्मगायत्री मन्त्रका अर्थ। इसीसे उनके सृष्टि, स्थिति तथा संहाररूपी प्रयोजनोंकी सिद्धि होती है। इसलिए चतुष्पदा ब्रह्मगायत्री मन्त्रकी उपासना उत्तरवर्तीके रूपमें की जाती है। यही परम रहस्य है।

ज्ञान दो प्रकारके होते हैं–परोक्ष ज्ञान तथा अपरोक्ष ज्ञान। 'अक्ष'का अर्थ है–इन्द्रिय। 'परः'का अर्थ है–अन्य। जो ज्ञान अन्यके माध्यमसे प्राप्त होता है उसे परोक्ष ज्ञान कहते हैं। परोक्ष ज्ञान श्रवण तथा पठनसे प्राप्त होता है जिसे कि अन्य व्यक्तिके द्वारा सुनाया गया अथवा पढ़ाया गया है। ब्रह्मगायत्रीके द्वारा ब्रह्मा आदि तीनों देवताओंको सुनाया गया ज्ञान परोक्ष ज्ञान है। त्रिपदा ब्रह्मगायत्री मन्त्र परोक्ष ज्ञानसे सम्बन्धित है। अपरोक्ष ज्ञान उसे कहते हैं जो परोक्ष न हो अर्थात् जिसे व्यक्ति स्वयं अपने इन्द्रियोंसे अनुभूत करता है। चतुष्पदा ब्रह्मगायत्री मन्त्र अपरोक्ष ज्ञानसे सम्बन्धित है।

अब यहाँ पर यह भी प्रश्न उठता है–क्या वैदिक ब्रह्मगायत्री मन्त्र और ब्रह्मगायत्री बीज मन्त्रमें कोई अन्तर है? कहते हैं:–

मुख्यरूपसे 'मन्त्र' दो प्रकारके होते हैं:–स्तुतिपरक तथा कारण-परक। स्तुतिपरक मन्त्र उसे कहते हैं जिसमें दूसरेकी प्रसन्नताके लिए उसकी प्रार्थना की जाती है अथवा महिमाका गान किया जाता है। कारणपरक मन्त्र उसे कहते हैं जिससे कारणत्वका बोध होता है। इससे मूलतत्त्वका ज्ञान होता है। कारणका पर्याय है–बीज। वृक्षकी उत्पत्ति बीजसे ही होती है। वृक्ष कार्य है तो बीज कारण है। वृक्षके अङ्ग, प्रत्यङ्ग, पत्र, पुष्प तथा फल आदिकी प्रशंसा करना ही उसकी

महिमाका गान करना है। उसी प्रकार 'ॐ नमः शिवाय' मन्त्रमें 'ॐ' कारणपरक है तो 'नमः शिवाय' स्तुतिपरक है। इसलिए यहाँ पर 'ॐ' कारणात्मक एकाक्षरी बीजमन्त्र है; जबकि 'नमः शिवाय' कार्यात्मक पञ्चाक्षरी स्तुतिमन्त्र है। 'ॐ' वेदका आदि तथा आधार है। इसे 'वेदादिः' भी कहते हैं। यह प्रणव कहलाता है तथा परब्रह्मका वाचक है जो कि सर्वप्रकाशक तथा सर्वाधार है। इसलिए यह सभी प्रकारके मन्त्रोंके प्रारम्भमें प्रयुक्त होता है।

ब्रह्मगायत्री मन्त्र वैदिक वाक्य है। वेदके वाक्योंको 'मन्त्र' संज्ञा दी गयी है। इसलिए ब्रह्मगायत्री मन्त्र 'वैदिक मन्त्र' कहलाता है और यह 'स्तुतिपरक मन्त्र' है। पहले भी विचार किया जा चुका है कि ब्रह्मगायत्री मन्त्र स्तुतिपरक सैद्धान्तिक परामर्श वाक्य है।

अब ब्रह्मगायत्रीके कारणपरक मन्त्रका विवेचन किया जाता है:– ब्रह्मगायत्रीका कारणपरक मन्त्र है–'ॐ ह्रीं श्रीं'। 'ॐ' परब्रह्मका वाचक है। यह सर्वप्रकाशक तथा सर्वाधार है। 'ह्रीं' बीज देशकाल-स्वरूपिणी त्रिगुणात्मिका प्रकृति नियति माया शक्तिका बोधक है। इसलिए 'ह्रीं'को 'माया बीज' कहते हैं। यह पराशक्तिका भी बोध कराता है। इसकी यह 'परावस्था' है। 'पर' कहते हैं–कारणको। 'परावस्था' कहते हैं–कारणावस्थाको।

कारण दो प्रकारके होते हैं–निमित्त कारण तथा उपादान कारण। कारणसे कार्यकी उत्पित्ति होती है। घट कार्य है। घटको बनानेके लिए मृत्तिका तथा निर्माता दोनों आवश्यक हैं। मृत्तिका उपादान कारण है; जबकि निर्माता निमित्त कारण है। निमित्त कारणमें कर्तृत्व विद्यमान है तो उपादान कारणमें विषयत्व। यहाँ तो कारणावस्थामें कर्तृत्व तथा विषयत्व दोनों अभिन्नरूपसे एक ही 'ह्रीङ्कारी शक्ति'में स्थित हैं। मकड़ी अपने जालका निर्माण अपने मुखसे निर्गत लाररूपी सूत्रसे करती है। जालके निर्माणमें लार उपादान कारण है तो वह स्वयं निमित्त कारण है। इस प्रकारसे मकड़ी अपने जालका अभिन्न निमित्तोपादान कारण है। उसी प्रकारसे ह्रीङ्कारी शक्ति ब्रह्माण्डकी

अभिन्ननिमित्तोपादानकारणभूता त्रिगुणात्मिका मायिक प्रकृति नियतिके रूपमें शास्त्रमें जानी जाती है। परम प्रकाश सच्चिदानन्दस्वरूप है तो उसकी सत्ता त्रिगुणात्मिका चिदानन्दमयी मायिक प्रकृति है। परम प्रकाशके अधिष्ठान पर आश्रित कारणरूपिणी त्रिगुणात्मिका प्रकृतिसे कार्यात्मक जगतका आविर्भाव तथा तिरोभाव होता है। जगतके प्रत्येक पदार्थमें सत्, चित्, आनन्द, नाम तथा रूप ये पाँच स्थित हैं। सत्, चित् तथा आनन्द ये तीन परम प्रकाशके हैं; जबकि नाम तथा रूप ये दो जगतके हैं। सत्, चित् तथा आनन्द ये तीनों अभिन्न एवं अविकारी हैं; जबकि नाम तथा रूप ये दोनों भिन्न एवं विकारी हैं। यही विवर्त है।

प्रकृतिकी दो अवस्थाएँ होती हैं–अव्याकृत तथा व्याकृत। 'ह्रीं' अव्याकृता प्रकृतिका वाचक है; जबकि 'श्रीं' व्याकृता प्रकृतिका वाचक है। ब्रह्माण्ड इसी व्याकृता प्रकृतिका परिवर्तित रूप है। 'श्रीं' भी कारण है। यदि 'ह्रीं'को निमित्त कारण के रूपमें जानते हैं तो 'श्रीं' उपादान कारण होगी। ह्रीङ्कारी ही श्रीङ्कारी है। इन दोनोंमें कोई भेद नहीं है। ह्रीङ्कारी अनुग्रहकर्त्री मोक्षदायिनी शक्ति है तो श्रीङ्कारी भोगदा भोगस्वरूपा है। उपर्युक्त त्र्यक्षरी मूल मन्त्र 'ॐ ह्रीं श्रीं' ही ब्रह्मगायत्री बीजमन्त्र है। यही 'त्रिबीजा ब्रह्मगायत्री' कहलाती है। त्रिपदा ब्रह्मगायत्रीके प्रथम पादका बीज है–ॐ। इसके द्वितीय पादका बीज है–ह्रीं। इसप्रकार तृतीय पादका बीज है–श्रीं। इसी सर्वपाप-प्रणाशनी त्रिबीजा ब्रह्मगायत्रीके मन्त्रका जप करना चाहिए। इसके निरन्तर जपसे साधकको तुरीया 'अहं'विमर्शात्मिका ब्रह्मगायत्रीकी अनुभूति होती है।

तुरीया ब्रह्मगायत्री ही 'अहं'विमर्शात्मिका परावाग्रूपा परम धाममें विश्रान्तिको प्राप्त करनेवाली अनाख्या शक्ति परब्रह्मकी सत्ता है। यही 'नियति' है। 'ॐ' परब्रह्म 'सत्' है तो 'ह्रीं' उसकी नियति 'सत्ता' है। 'सत्' और उसकी 'सत्ता' ये दो तत्त्व भिन्न प्रतीत होते हैं। इसप्रकारकी भिन्नप्रतीति ही 'माया' कहलाती है। जबकि 'सत्'में

'सत्ता' स्वरूपसम्बन्धसे विद्यमान है। यही 'सत्ता' ही परमेश्वरकी पारमेश्वरी अहंविमर्शात्मिका स्वातन्त्र्य शक्ति, अनुग्रहकर्त्री महामाया, इच्छाशक्ति, नियति, परा शक्ति, अनाख्या, सर्वकारणभूता माया, त्रिगुणात्मिका प्रकृति, देशकालस्वरूपिणी, विश्वात्मिका भैरवीके रूपमें शास्त्रोंमें जानी जाती है।

'त्रिपदा ब्रह्मगायत्री' स्तुतिपरक मन्त्र है; जबकि 'त्रिबीजा ब्रह्मगायत्री' कारणपरक मन्त्र है। 'त्रिपदा ब्रह्मगायत्री' मन्त्रके अर्थका चिन्तन किया जाता है; जबकि 'त्रिबीजा ब्रह्मगायत्री' मन्त्रका जप किया जाता है। जप तीन प्रकारसे किये जाते हैं। जैसे—

वाचिक जप—'वाचिक' 'जप उसे कहते हैं जिसमें जिह्वाका स्फुरण होता है तथा मन्त्रकी ध्वनि जपकर्ताके मुखसे बाहर जाती है। इसे अन्य व्यक्ति आसानीसे सुन सकता है। यह 'वैखरी वाणी'की अवस्था है।

उपांशु जप—'उपांशु' जप उसे कहते हैं जिसमें जिह्वाका स्फुरण होता है परन्तु मन्त्रकी ध्वनि जपकर्ताके मुखसे बाहर नहीं जाती है। यह 'मध्यमा वाणी'की अवस्था है।

मानसिक जप—'मानसिक' जप उसे कहते हैं जिसमें जिह्वाका स्फुरण नहीं होता है। इसमें मन्त्रका मानसिक जप होता है। यह 'पश्यन्ती वाणी'की अवस्था है।

उपर्युक्त तीन प्रकारके जपोंमें मानसिक जप श्रेष्ठ है; क्योंकि दश बार वाचिक जप करने पर जो फल प्राप्त होता है वही फल एक बारके उपांशु जपसे प्राप्त होता है तथा दश बार उपांशु जप करने पर जो फल प्राप्त होता है वही फल एक बारके मानसिक जपसे प्राप्त होता है।

यहाँ पर यह प्रश्न उठता है कि क्या वाचिक तथा उपांशु जपोंको छोड़ कर केवल मानसिक जप करना चाहिए?

कहते हैं—नहीं; क्योंकि मन स्वाभाविक रूपसे बहिर्मुखी होता

है और इसे बिना अन्तर्मुखी किये मानसिक जप स्थिर नहीं हो सकता है। इसलिए जपका प्रारम्भ वाचिक, उपांशु तथा मानसिक क्रमसे करना चाहिए। इस क्रमसे जप करने पर मन स्वतः अन्तर्मुखी बन जाता है। इसके लिए अलगसे कोई प्रयास नहीं करना पड़ता है। यह एक वैज्ञानिक पद्धति है।

ध्यान रहे कि 'परा वाणी'की अवस्थामें कोई जप नहीं होता है। इस अवस्थामें एकमात्र 'अहंता'की अनुभूति होती है। यही तुरीया अवस्था है।

विभिन्नमूर्त्तीः–यहाँ पर पूर्वोक्त चौबीस तत्त्वस्वरूपा ब्रह्मगायत्री वर्णमातृकाएँ भिन्न-भिन्न मूर्तियोंके रूपमें व्यष्टिरूपसे विराजमान हैं।

हरिकेशपूज्याः–'हरि' कहते हैं–विष्णुको। 'क' कहते हैं–ब्रह्माको। 'ईश' कहते हैं–रुद्रको। त्रिपदा ब्रह्मगायत्री वर्णमातृकाएँ ब्रह्मा, विष्णु तथा रुद्रके द्वारा पूजित हैं; क्योंकि ये त्रिदेव व्यष्टिरूप हैं; इनके कार्य भी व्यष्टिरूप हैं तथा इन्होंने व्यष्टिरूपसे त्रिपदा ब्रह्मगायत्रीका चिन्तन अपने-अपने प्रयोजनकी सिद्धिके लिए किया।

त्रिपदा ब्रह्मगायत्रीके चिन्तनसे त्रिदेवोंको अपनी-अपनी आत्म-शक्तिका बोध हुआ और इन त्रिदेवोंने अपनी-अपनी आत्मशक्तिसे अपने-अपने सृष्टि, स्थिति तथा संहार कार्योंका सम्पादन किया। शास्त्रमें ब्रह्माकी आत्मशक्ति 'ब्रह्माणी'के रूपमें, विष्णुकी आत्मशक्ति 'वैष्णवी'के रूपमें तथा रुद्रकी आत्मशक्ति 'रुद्राणी'के रूपमें ख्यात हैं। त्रिदेवोंकी ये तीनों आत्मशक्तियाँ प्रस्तुत इस शास्त्रमें आख्यस्वरूपा 'सृष्टिसत्ता कामेश्वरी, स्थितिसत्ता कामेश्वरी तथा संहारसत्ता कामेश्वरी'के रूपमें जानी जाती हैं; जबकि ब्रह्माको सृष्टिकर्ता कामेश्वर, विष्णुको स्थितिकर्ता कामेश्वर तथा रुद्रको संहारकर्ता कामेश्वर कहते हैं। ये तीनों कामेश्वर आख्यस्वरूप हैं।

वन्दे–मैं पूर्वोक्त व्यष्टिरूप उन चौबीस त्रिपदा ब्रह्मगायत्री वर्ण-मातृकाओंकी वन्दना करता हूँ॥५॥

वर्णसमष्टिरूपिण्यास्तुरीयाब्रह्मगायत्रीवेदमातृकायाः स्वरूपम्

स्यन्दे स्थिता मनुमयी रुचिरान्यभागे
पूर्वोक्तवेदजननी सुसमष्टिरूपा।
मुक्ताभविद्रुमसुकाञ्चननीलशुक्ल-
तत्त्वात्मवर्णयुतपञ्चमुखाब्जयुक्ता॥
पाशाङ्कुशाब्जयुगलाभयपात्रशङ्ख-
श्रीमद्रथाङ्गवरसूत्रकरा स्मितास्या।
सङ्गीयते च मुखरैः परमेश्वरी या
तां वै नमामि सततं निगमादिरूपाम्॥६॥

वर्णसमष्टिरूपिणी तुरीया ब्रह्मगायत्री वेदमाताका स्वरूप

मैं श्रीचक्रके दूसरे भागमें स्थित मन्त्रमयी, सुन्दर क्रान्तिवाली, पूर्वोक्त वेदमाता, वर्णसमष्टिरूपा; मुक्ताकी आभा, मूँगाके रँग, विशुद्ध स्वर्णकी कान्ति, नील तथा शुक्ल—इन तत्त्वोंके अपने रँगोंसे युक्त पाँच मुखकमलोंवाली; पाश, अंकुश, दो कमल, अभय मुद्रा, पात्र, शंख, चक्र, वर मुद्रा तथा सूत्रसे युक्त हाथोंवाली; मुस्कानसे युक्त मुखोंवाली तथा जो ध्वनिपूर्वक गायी जाती है उस वेदकारणात्मिका परमेश्वरीको निरन्तर नमस्कार करता हूँ।

विमर्श—अब त्रिगुणात्मिका परमेश्वरी वर्णसमष्टिरूपिणी तुरीया ब्रह्मगायत्रीके स्वरूपका वर्णन किया जा रहा है—स्यन्द इति।

अन्यभागे स्यन्दे स्थिता—'स्यन्दे स्थिता' शब्दसे पूर्वोक्त नौ त्रिकोणोंसे निर्मित श्रीचक्रका बोध होता है। 'अन्यभागे' शब्दसे नौ त्रिकोणोंसे निर्मित श्रीचक्रके सर्वानन्दमय बैन्दव चक्रके अन्तर्गत कल्पित महाबैन्दव चक्रमें कल्पित षट्कोणकके मध्यभाग सहस्रारमें स्थित उत्तरी मण्डलका बोध होता है।

मनुमयी पूर्वोक्तवेदजननी सुसमष्टिरूपा—'मनु' कहते हैं—मन्त्रको। पूर्व श्लोककी व्याख्याके प्रसङ्गमें विचार किया जा चुका है कि

ब्रह्मविद्या तुरीया गायत्री वेदकी कारणभूता पारमेश्वरी शक्ति है इसलिए वह वेदमाताके रूपमें ख्यात है। ब्रह्मविद्या गायत्री व्यष्टिरूपा चौबीस वर्णोंवाली मन्त्रात्मिका त्रिपदा ब्रह्मगायत्री शक्ति कहलाती है; जबकि वह वर्णसमष्टिरूपिणी मन्त्रात्मिका चतुष्पदा ब्रह्मगायत्री शक्ति भी है। यहाँ पर 'पूर्वोक्तवेदजननी' शब्दके प्रयोगसे व्यष्टिरूपा चौबीस वर्णों-वाली मन्त्रात्मिका त्रिपदा ब्रह्मगायत्री शक्तिका बोध होता है।

ध्यान रहे कि यहाँ पर चौबीस वर्णोंवाली मन्त्रात्मिका त्रिपदा ब्रह्मगायत्री व्यष्टिरूपा चौबीस तत्त्वरूपिणी कलात्मिका शक्ति है। इनके समष्टिरूपका बोध चतुष्पदा ब्रह्मगायत्री *'परो रजसेऽसावदोम्'* मन्त्रसे होता है। इसकी विस्तृत व्याख्या पूर्वश्लोकके प्रसङ्गमें की गयी है। इस चतुष्पान्मन्त्रमें 'असौ' शब्दसे तुरीया शक्ति श्रीगायत्री ब्रह्मविद्याका देश-काल-स्वरूपिणी अभिन्ननिमित्तोपादानभूता त्रिगुणात्मिका परम-प्रकाशाश्रिता 'प्रकृति'के रूपमें सङ्केत किया गया है। श्रीगायत्री ब्रह्मविद्या व्यष्टिरूपमें चौबीस तत्त्वोंवाली सूर्यमण्डलकी निर्वाणकला त्रिपदा ब्रह्मगायत्री है तो समष्टिरूपमें प्रकृतिरूपिणी चन्द्रमण्डलकी निर्वाणशक्ति तुरीया ब्रह्मगायत्री 'षोड़शी' है।

'परो रजसेऽसावदोम्' चतुष्पदा ब्रह्मगायत्री मन्त्रमें प्रयुक्त *'रजसे'*, *'अत्'* तथा *'परः'* शब्दोंसे ज्ञात होता है कि यहाँ पर वर्णसमष्टिरूपा तुरीया शक्ति श्रीगायत्री ब्रह्मविद्या इच्छाज्ञानक्रियात्मिका श्रीमहात्रिपुर-सुन्दरी पराशक्तिकी अपराक्रियाशक्तिकी कार्यावस्थामें विराजमान हैं; क्योंकि ब्रह्मा आदि त्रिदेवोंके प्रयोजन हैं—क्रियात्मक सृष्टि, स्थिति तथा संहाररूपी आख्य कार्योंको सिद्ध करना। ब्रह्मा आदि त्रिदेवोंने श्रवण, मनन तथा निदिध्यासनके क्रमसे यही जाना कि कालदेश-स्वरूपिणी त्रिगुणात्मिका प्रकृतिका क्रियात्मक परिवर्तित रूप ही वर्ण-मन्त्र-पदात्मक तथा कला-तत्त्व-भुवनात्मक ब्रह्माण्ड होगा और इसमें प्राणनात्मक कारणरूप *'अ'* वर्ण ही आद्य है और इसीसे सृष्टि, स्थिति तथा संहारका कार्य होना चाहिए। इसी बातका समर्थन ब्रह्मा आदि तीनों देवोंने *'ओम्'* शब्दके उच्चारणसे किया और उन्होंने तदनुसार

इस क्रियाशक्तिसे कार्यका प्रारम्भ किया।

"ॐ तत् सवितुर्वरेण्यं भर्गोदेवस्य धीमहि।
धियो यो नः प्रचोदयात् ... . ॥"

यह वैदिक त्रिपदा ब्रह्मगायत्री मन्त्र है जिसके अर्थका चिन्तन किया जाता है; जबकि *'ॐ ह्रीं श्रीं'* यह त्रिबीजा ब्रह्मगायत्री मन्त्र है और इसका जप किया जाता है। त्रिपदा ब्रह्मगायत्री मन्त्रके अर्थके चिन्तनसे शङ्काएँ दूर होती हैं और ज्ञानमें दृढ़ता आती है; जबकि त्रिबीजा ब्रह्मगायत्री मन्त्रके जपसे साधक 'आख्य' कार्यको सिद्ध करनेके लिए स्वयं तो समर्थ होता ही है तथा दूसरेको भी समर्थ बना देता है और 'अनाख्य' अवस्थामें पहुँच जाता है।

"... ... ... , ...।
... ... , *परो रजसेऽसावदोम्॥"*

यह वैदिक चतुष्पदा ब्रह्मगायत्री मन्त्र है। इसे तुरीया ब्रह्मगायत्री मन्त्र भी कहते हैं। इसके अर्थका निदिध्यासन किया जाता है; जबकि *'अहम्'* यह तुरीयबीजा ब्रह्मगायत्री मन्त्र है और इसका निदिध्यासन स्वात्मसत्स्वरूपसे किया जाता है। इसलिए इसकी बाह्य दीक्षाका विधान श्रीदक्षिणामूर्ति गुरुकी परम्परामें नहीं है। तुरीया ब्रह्मगायत्री मन्त्रके अर्थका निदिध्यासन करनेसे प्रकृतिकी स्वात्मस्वरूपसे अनुभूति होती है; जबकि तुरीयबीजा ब्रह्मगायत्री मन्त्रके अहमार्थक सद्भावके निदिध्यासनसे अहमात्मिका वृत्ति साधकको सत्स्वरूप परब्रह्मकी अनुभूति स्वात्मरूपसे करा देती है तथा स्वयं भी स्वतः विलीन हो जाती है जैसा कि स्वच्छ करनेवाला निर्मली चूर्ण जलको स्वच्छ करनेके बाद अपनी सत्ताको स्वाभाविक रूपसे समाप्त कर देता है।

ध्यान रहे कि *'अहम्'* यह तुरीयबीजा ब्रह्मगायत्री मन्त्र देश-कालाध्वरूपिणी विमर्शात्मिका परावाक्स्वरूपा शक्तिका बोधक है। 'अहम्' यह मन्त्र वर्णमालाके आद्य 'अ' वर्ण तथा अन्तिम 'ह' वर्णके संयोगसे उद्भूत है और बिन्दुमातृकाकी उपस्थितिसे 'अहम्' रूपताको

प्राप्त करता है। इसके गर्भमें वर्णमालाके समस्त वर्ण कारणरूपसे समाहित हैं। इसलिए यह कालाध्वाका बोधक है। इतना ही नहीं बल्कि इसमें पञ्च महाभूत कारणरूपसे विद्यमान हैं इसलिए यह देशाध्वाका भी बोधक है। *'अ'* वर्ण प्राणनात्मक होनेके कारण प्रमाता कहलाता है; जबकि यह सकल वस्तुजातके कारणके रूपमें प्रमेय कहलाता है। इसप्रकारसे 'अ' वर्ण ही शास्त्रमें प्रमाता तथा प्रमेयके रूपमें षडध्वात्मक विश्व कहलाता है। यह समग्रताका बोधक है। यह विभिन्न शास्त्रोंमें प्रायः मङ्गलवाचकके रूपमें प्रयुक्त होता रहता है। यही रहस्य है।

रुचिरा–'रुचिः' कहते हैं–कान्तिको। वर्णसमष्टिरूपिणी वेदमाता तुरीया शक्ति श्रीगायत्री ब्रह्मविद्या अत्यन्त सुन्दर कान्तिवाली है।

मुक्ताभविद्रुमसुकाञ्चननीलशुक्लतत्त्वात्मवर्णयुत-पञ्चमुखाब्जयुक्ता– 'मुक्ता' कहते हैं–मोतीको। मोतीका रँग 'धूम्र' होता है। 'आभा' कहते हैं–कान्तिको। 'विद्रुम' कहते हैं–मूँगाको। मूँगाका रँग 'लाल' होता है। 'काञ्चन' कहते हैं–स्वर्णको। स्वर्णका रँग 'पीला' होता है। 'सु'के संयोजनसे विशुद्ध स्वर्णका ग्रहण होता है। पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु तथा आकाश–ये पञ्चतत्त्व कहलाते हैं। इन पञ्चतत्त्वोंके अपने-अपने स्वाभाविक रँग होते हैं; जैसे–पृथ्वीका पीला रँग, जलका सफेद रँग, अग्निका लाल रँग, वायुका धूसर रँग तथा आकाशका नीला रँग। इन पञ्चतत्त्वोंके प्रतीकरूप वर्णसमष्टिरूपिणी वेदमाता तुरीया ब्रह्म-गायत्रीके पाँच मुख हैं और पाँचो मुख उपर्युक्त पाँचो तत्त्वोंके रँगोंसे युक्त हैं। इस प्रकारसे वर्णसमष्टिरूपिणी वेदमाता तुरीया ब्रह्मगायत्री यहाँ पर पञ्चतत्त्वस्वरूपिणी 'पञ्चमुखी' है।

पाशाङ्कुशाब्जयुगलाभय-पात्र-शङ्ख-श्रीमद्रथाङ्ग-वर-सूत्रकरा– 'अब्ज' कहते हैं–कमलको। 'रथाङ्ग' कहते हैं–चक्रको। 'श्रीमत्' शब्दसे चक्रकी अव्यर्थताका सङ्केत प्राप्त होता है। 'सूत्र' कहते हैं–धागेको। 'सूत्र' शब्दसे यहाँ पर यज्ञोपवीतका बोध होता है। इसी यज्ञोपवीतको 'सावित्री' भी कहते हैं। वर्णसमष्टिरूपिणी वेदमाता तुरीया गायत्रीका

'सूत्र' सर्वश्रेष्ठ शस्त्रके रूपमें ख्यात है। यह सूत्र अर्थात् यज्ञोपवीत जो कि सावित्रीके नामसे ख्यात है, एक सात्त्विक शस्त्र है। सात्त्विक शस्त्र सर्वदा अव्यर्थ सिद्ध होते हैं। वर्णसमष्टिरूपिणी वेदमाता तुरीया ब्रह्मगायत्रीके दस शस्त्र हैं; जैसे–पाश, अंकुश, कमल-द्वय, अभय मुद्रा, पात्र, शंख, चक्र, वर मुद्रा तथा सूत्र। 'अब्ज-युगल' शब्दसे ज्ञात होता है कि वर्णसमष्टिरूपिणी वेदमाता तुरीया ब्रह्मगायत्रीके दो हाथोंमें एक-एक कमल स्थित हैं। इस प्रकारसे वर्णसमष्टिरूपिणी वेदमाता तुरीया ब्रह्मगायत्रीने अपने दस हाथोंमें दस शस्त्रोंका धारण किया है। इसलिए यहाँ पर वर्णसमष्टिरूपिणी वेदमाता तुरीया ब्रह्मगायत्री 'दशभुजा' कहलाती है।

स्मितास्या–वर्णसमष्टिरूपिणी वेदमाता तुरीया ब्रह्मगायत्रीके पाँचो मुखकमल विहसित हैं। यहाँ पर स्मित मुखोंवाली वर्णसमष्टिरूपिणी वेदमाता तुरीया ब्रह्मगायत्रीकी उपासनासे सूक्ष्म शक्तिकी अनुभूति होती है तथा प्रसन्नताकी प्राप्ति होती है।

सङ्गीयते च मुखरैः परमेश्वरी या–'परमेश्वरी' शब्दसे यह बोध होता है कि वर्णसमष्टिरूपिणी वेदमाता गायत्री ही ब्रह्मगायत्री है। यही श्रीमत्तुरीया ब्रह्मगायत्रीके रूपसे ख्यात भी है। 'मुखरैः' शब्दसे यहाँ पर परमेश्वरीकी 'वैखरी वाक्'की अवस्थाका सङ्केत प्राप्त होता है।

वाक्स्वरूपा तुरीया ब्रह्मगायत्रीकी चार अवस्थाएँ हैं–परा, पश्यन्ती, मध्यमा तथा वैखरी। वैखरी अवस्थामें वाणी ध्वनिरूपा होती है। 'सङ्गीयते' शब्दसे वेदका गान ध्वनिपूर्वक करनेका सङ्केत प्राप्त होता है इसलिए वेदका उच्चारण ध्वनिपूर्वक होता है और उसका श्रवणके द्वारा ज्ञान होता है। इसलिए वेद 'श्रुति'के रूपमें प्रसिद्ध हैं। वेद ध्वन्यात्मक वैखरीवाक्स्वरूप है और ब्रह्मगायत्रीके रूपमें परिचित हैं; क्योंकि परमेश्वरी ब्रह्मविद्या ब्रह्मगायत्रीका वाग्रूपान्तरण ही वेद है।

निगमादिरूपाम्–'निगम' कहते हैं–वेदको। प्रणवको 'वेदादिरूपः' परमेश्वर कहते हैं। इसलिए परमेश्वरकी शक्तिको 'वेदादिरूपा' पारमेश्वरी

शक्ति कहते हैं। परमेश्वरी तुरीया ब्रह्मगायत्री वेदकी उत्पत्तिके पहलेसे ही विराजमान है। इसलिए वह वेदकी कारणात्मिका जननी है। वह परमेश्वरी तुरीया ब्रह्मगायत्री 'वेदकारणीभूता शक्ति' कहलाती है। जो उत्पन्न है उसे कार्य कहते हैं। जिससे उत्पत्ति हुई है उसे कारण कहते हैं। वेद उत्पन्न कार्य रूप है और परमेश्वरी तुरीया ब्रह्मगायत्री उत्पादिका कारणरूपा है। इसलिए वह वेदमाता कहलाती है।

ध्यान रहे कि *'गायत्री ब्रह्मविद्या'* ग्रन्थके नवम आवरणके अन्तर्गत त्रिकोण चक्रमें 'षोडशीतिथि नित्याकला, सप्तदशी नित्याकला तथा अष्टादशी नित्याकला'का विवेचन प्रस्तुत किया गया है। यहाँ भगवती श्रीमहात्रिपुरसुन्दरी परा शक्तिकी अपरा क्रियाशक्ति कार्यावस्थामें होनेके कारण *'गायत्री ब्रह्मविद्या'*की उपासनामें क्रियात्मिका सृष्टि-स्थिति-संहार-कालिकी व्यवस्थापनाका सम्पादन उपर्युक्त तीन नित्याकलाएँ करती हैं। जैसे:–

१. षोडशीतिथि नित्याकला – क्रियात्मिका सृष्टि-कालिकी व्यवस्थापनाका सम्पादन करनेवाली आख्या शक्ति।

२. सप्तदशी नित्याकला – क्रियात्मिका स्थिति-कालिकी व्यवस्थापनाका सम्पादन करनेवाली आख्या शक्ति।

३. अष्टादशी नित्याकला – क्रियात्मिका संहार-कालिकी व्यवस्थापनाका सम्पादन करनेवाली आख्या शक्ति।

४. महानित्याकला – क्रियात्मिका सृष्टि-स्थिति-संहार-कालिकी व्यवस्थापनात्मिका आख्यासे परे 'अनाख्या' शक्ति।

उपर्युक्त तीन नित्याकलाओंको शक्ति प्रदान करनेवाली चौथी महानित्याकला अपरा शक्ति है–एकादश आवरणकी अधिष्ठात्री पीठ-शक्ति। यहाँ पर 'सृष्टि-स्थिति-संहारात्मिका आख्या'से परे अनाख्या शक्ति 'श्रीगायत्री ब्रह्मविद्या' अधिष्ठात्री पीठशक्ति है और यही तुरीया-वस्थाकी तुरीया ब्रह्मगायत्री शक्ति है।

ध्यान रहे कि एकादशावरणमें परब्रह्मात्मक चक्रका वर्णन किया

गया है। सर्वानन्दमय बैन्दव चक्रके अन्तर्गत कल्पित महाबैन्दव चक्रको परब्रह्मात्मक चक्र कहते हैं। यह चक्र कल्पित है और व्यवहारसे परे है। इस चक्रमें प्रकाश, देव, पीठ, नाथ, अवस्था तथा शक्तिकी उपासना की जाती है। अब हम निम्नलिखित प्रकारसे इनका विवेचन करते हैं:–

प्रकाश

श्रीचक्रमें नवम चक्रके रूपमें त्रिकोण चक्रकी अवस्थिति है। त्रिकोण चक्र पूर्णरूपसे व्यावहारिक है। व्यावहारिक जगतमें प्रकाश प्रदान करनेवाले तीन व्यावहारिक प्रकाश तत्त्व हैं–अग्नि, सूर्य तथा चन्द्र। ये व्यावहारिक त्रिकोण चक्रमें विद्यमान हैं। सर्वानन्दमय बैन्दव चक्रके अन्तर्गत कल्पित महाबैन्दव चक्र व्यवहारसे परे है। महाबैन्दव चक्रको परब्रह्मात्मक चक्र कहते हैं; क्योंकि इस चक्रमें परब्रह्मकी सत्ता है। चित्स्वरूप परब्रह्म ही परम प्रकाश है; क्योंकि इसी चित्स्वरूप परम प्रकाशसे व्यावहारिक चिन्मय प्रकाशक अग्नि, सूर्य तथा चन्द्र प्रकाशित होकर अन्य पदार्थोंको प्रकाशित करते हैं। इसलिए चित्स्वरूप परब्रह्म परम प्रकाशको 'सर्वावभासक' कहते हैं। 'चित्स्वरूप'का अर्थ है–ज्ञानस्वरूप। 'चिन्मय'का अर्थ है–ज्ञानमय। जगत ज्ञानमय है। ज्ञानमय जगतका अधिष्ठान है–ज्ञानस्वरूप परम प्रकाश। जगत नाम-रूपात्मक है तो परम प्रकाश सच्चिदानन्दस्वरूप है। इसप्रकारसे हम कह सकते हैं कि जगतका प्रत्येक पदार्थ सच्चिदानन्दनामरूपात्मक है अर्थात् प्रत्येक पदार्थमें सत्, चित्, आनन्द, नाम तथा रूप–ये पाँच तत्त्व विद्यमान हैं। इनमें सच्चिदानन्दस्वरूप परम प्रकाश सर्वाधार अधिष्ठान है तो नामरूपात्मक जगत विवर्त आधेय है।

देव

श्रीचक्रके अन्तर्गत चार देव होते हैं। चार देव हैं:-ब्रह्मदेव, विष्णुदेव, रुद्रदेव तथा निर्वाणदेव। व्यावहारिक जगतके तीन कार्य हैं–सृष्टि, स्थिति तथा संहार। इन तीन व्यावहारिक कार्योंका सम्पादन

करनेवाले तीन देव हैं–ब्रह्मा, विष्णु तथा रुद्र। व्यावहारिक त्रिकोण चक्रमें इन तीन देवोंका अवस्थान है। सर्वानन्दमय बैन्दव चक्रके अन्तर्गत कल्पित महाबैन्दव चक्र व्यावहारिक चक्रसे परे है। सर्वानन्दमय बैन्दव चक्रके अन्तर्गत कल्पित महाबैन्दव चक्रमें परब्रह्मकी सत्ता है। सृष्टि, स्थिति तथा संहारसे आख्य न होनेके कारण ब्रह्म 'अनाख्य' कहलाता है। ब्रह्मकी स्थिति किसीके भी उत्तरमें नहीं है। इसलिए इसे 'अनुत्तर' कहते हैं। इसे दिव्यतत्त्वोंमें सर्वोच्च स्थानको प्राप्त है इसलिए 'परदेव'के रूपमें भी यह जाना जाता है। यह परदेव ही निर्वाणदेवके रूपमें परिचित हैं।

पीठ

श्रीचक्रके अन्तर्गत चार पीठ होते हैं। चार पीठ हैं:-ब्रह्मपीठ, विष्णुपीठ, रुद्रपीठ तथा निर्वाणपीठ। व्यावहारिक त्रिकोण चक्रमें तीन पीठोंकी अवस्थिति है। तीन पीठ हैं:-ब्रह्मपीठ, विष्णुपीठ तथा रुद्रपीठ। सर्वानन्दमय बैन्दव चक्रके अन्तर्गत कल्पित महाबैन्दव चक्र व्यावहारिक पीठत्रयसे परे है। इसी परब्रह्मात्मक महाबैन्दव चक्रमें 'निर्वाणपीठ'की अवस्थिति है।

नाथ

श्रीचक्रके अन्तर्गत चार नाथ होते हैं। चार नाथ हैं:-ब्रह्मनाथ, विष्णुनाथ, रुद्रनाथ तथा निर्वाणनाथ। व्यावहारिक त्रिकोण चक्रमें 'नाथत्रय'का अवस्थान है। नाथत्रय हैं–ब्रह्मनाथ, विष्णुनाथ तथा रुद्रनाथ। सर्वानन्दमय बैन्दव चक्रके अन्तर्गत कल्पित महाबैन्दव चक्र व्यावहारिक नाथत्रयसे परे है। इसी परब्रह्मात्मक महाबैन्दव चक्रके अन्तर्गत निर्वाणपीठमें 'निर्वाणनाथ' पीठदेवके रूपमें विराजमान है।

अवस्था

श्रीचक्रके अन्तर्गत चार अवस्थाएँ होती हैं। चार अवस्थाएँ हैं:-जाग्रदवस्था, स्वप्नावस्था, सुषप्त्यवस्था तथा तुरीयावस्था। व्यावहारिक त्रिकोण चक्रमें 'अवस्थात्रय'का अवस्थान है। अवस्थात्रय हैं–जाग्रत्,

स्वप्न तथा सुषुप्ति। सर्वानन्दमय बैन्दव चक्रके अन्तर्गत कल्पित महाबैन्दव चक्र जाग्रत्, स्वप्न, तथा सुषुप्ति रूप व्यावहारिक अवस्था-त्रयसे परे है। इस महाबैन्दव चक्रमें स्थित अवस्थाको 'तुरीयावस्था' कहते हैं। यही तुरीयावस्था तीनों अवस्थाओंसे परे अन्तिम चतुर्थावस्थाके रूपमें भी ख्यात है।

श्रीगायत्री ब्रह्मविद्या पीठशक्ति

श्रीचक्रके अन्तर्गत चार पीठशक्तियाँ होती हैं। चार पीठशक्तियाँ हैं:-षोडशीतिथि नित्याकला पीठशक्ति, सप्तदशी नित्याकला पीठ-शक्ति, अष्टादशी नित्याकला पीठशक्ति तथा महानित्याकला पीठ-शक्ति। व्यावहारिक त्रिकोण चक्रके कल्पित तीनों भागोंमें तीन पीठ-शक्तियाँ स्थित हैं। ये तीन पीठशक्तियाँ हैं—षोडशीतिथि नित्याकला पीठशक्ति, सप्तदशी नित्याकला पीठशक्ति तथा अष्टादशी नित्याकला पीठशक्ति। सर्वानन्दमय बैन्दव चक्रके अन्तर्गत कल्पित महाबैन्दव चक्रमें विराजित महानित्याकला पीठशक्ति व्यावहारिक पीठशक्तित्रयसे परे है। इसी परब्रह्मात्मक महाबैन्दव चक्रमें महानित्याकला 'श्रीगायत्री ब्रह्मविद्या' पीठशक्तिके रूपमें विराजित है। यही शक्ति तुरीया दशाकी अधिष्ठात्री पीठशक्ति तुरीया ब्रह्मगायत्री कहलाती है।

तां वै नमामि सततम्—मैं पूर्ववर्णित सर्वानन्दमय बैन्दव चक्रके अन्तर्गत कल्पित महाबैन्दव चक्रके निर्वाणपीठमें विराजित पीठशक्ति श्रीमत्तुरीया दशाकी अधिष्ठात्री परमेश्वरी श्रीगायत्री ब्रह्मविद्याको निरन्तर नमस्कार करता हूँ॥६॥

॥ इत्येकादशावरणम् ॥

॥ इति ज्ञानखण्डम् ॥

॥श्रीः॥

श्रीविद्यान्तर्गता

गायत्री ब्रह्मविद्या

सविमर्श-'प्रह्लाद'हिन्दीव्याख्यासहिता

(सपर्याखण्डम्)

❖❖❖

उपक्रमः

श्रीगायत्री ब्रह्मविद्याकी सर्वपापप्रणाशिनी श्रीचक्रात्मक उपासना-का सर्वश्रेष्ठ साधन है—श्रीयन्त्र। श्रीयन्त्र दश चक्रोंका समूहात्मक रूप है। दश चक्र हैं—चतुरस्र, त्रिवृत्तक, षोडशदल, अष्टदल, चतुर्दशार, बहिर्दशार, अन्तर्दशार, अष्टकोण, त्रिकोण तथा बिन्दु चक्र।

श्रीगायत्री ब्रह्मविद्या परम्पराके अन्तर्गत श्रीयन्त्रके 'चतुरस्र'से लेकर 'बिन्दु' पर्यन्तका क्रम स्थूलसे सूक्ष्मकी ओर है। इसलिए इस परम्परामें उपासना सृष्टिक्रम 'स्थूल'से संहारक्रम 'पर'की ओर की जाती है।

दो प्रकारकी उपासनाएँ हैं—सकाम तथा निष्काम। सकाम उपासनासे दश चक्रोंके दश महाफल प्राप्त होते हैं। जैसे क्रमसे— त्रैलोक्यमोहन, त्रैवर्गसाधन, सर्वाशापूरण, सर्वसङ्क्षोभण, सर्वसौभाग्य, सर्वार्थसाधन, सर्वरक्षा, सर्वरोगहरण, सर्वसिद्धि तथा सर्वानन्दकी प्राप्ति होती है। निष्काम उपासनासे चित्तशुद्धिके द्वारा मोक्ष तथा भोगकी प्राप्ति होती है।

श्रीगायत्री ब्रह्मविद्याकी उपासनामें 'भाव'का सबसे बड़ा महत्त्व है। आगम शास्त्रमें कहा गया है:—

'भावेन लभ्यते योगो भावेन भाव्यते शिवः।
भावेन शक्तिमाप्नोति तस्माद्भावं समाश्रयेत्॥'

'भाव'से ही शिवकी भावना की जाती है तथा भावसे ही शक्तिकी प्राप्ति होती है। इसलिए 'भाव'का आश्रय लें।

इस प्रकारसे 'श्रीचक्र'की उपासनासे भोग तथा मोक्षकी प्राप्ति होती है। इसलिए आगम शास्त्रोंमें यह सर्वश्रेष्ठ उपासनाके रूपमें वर्णित है। श्रीगायत्री ब्रह्मविद्याकी परम्परामें 'दीक्षा'का बड़ा महत्त्व है।

आगम शास्त्रमें कहा गया है:–

'शक्तिपातानुसारेण शिष्योऽनुग्रहमर्हति।
यत्र पतति नो शक्तिस्तत्र सिद्धिर्न जायते।।'

शक्तिपातके अनुसारसे शिष्य अनुग्रहका अधिकारी है; क्योंकि जहाँ पर शक्तिपात नहीं होता है वहाँ पर सिद्धिकी प्राप्ति नहीं होती है। इसलिए सपर्याखण्डके अन्तर्गत सबसे पहले 'दीक्षात्मक सपर्या-खण्ड'को स्थान प्राप्त है।

सपर्याखण्डके अन्तर्गत तीन खण्ड हैं–दीक्षात्मक सपर्याखण्ड, पूजात्मक सपर्याखण्ड तथा वन्दनात्मक सपर्याखण्ड। सपर्याखण्डके अन्तर्गत 'स्थूल, सूक्ष्म तथा पर' तीन प्रकारकी उपासना विधि निरूपित हैं।

'दीक्षात्मक सपर्याखण्ड'में जो साधक श्रीगायत्री ब्रह्मविद्याकी दीक्षाके अन्तर्गत श्रीगायत्री ब्रह्मविद्याके मन्त्रसे दीक्षित नहीं हुए हैं उनके लिए अपने आप दीक्षित होनेकी विधिका निरूपण किया गया हैं। इसमें 'स्थूल, सूक्ष्म तथा पर' तीन प्रकारकी उपासनाएँ होती हैं। 'स्थूल' रूपसे पूजन सामग्री, 'सूक्ष्म' रूपसे ध्यान तथा 'पर' रूपसे चिन्तन भावका प्रयोग दीक्षामें होता है।

'पूजात्मक सपर्याखण्ड'में 'श्रीगायत्री ब्रह्मविद्याचक्र'के आवरणों-की पूजाविधिका निरूपण हुआ है। श्रीगायत्री ब्रह्मविद्याकी 'स्थूल, सूक्ष्म तथा पर' तीन प्रकारकी उपासनाएँ होती हैं। इसमें 'स्थूल' रूपसे पूजन सामग्री, 'सूक्ष्म' रूपसे ध्यान तथा 'पर' रूपसे चिन्तन भावका प्रयोग होता है।

'वन्दनात्मक सपर्याखण्ड'के अन्तर्गत 'श्रीगायत्री ब्रह्मविद्याचक्र'के आवरणोंकी वन्दनाका निरूपण हुआ है। इसमें श्रीगायत्री ब्रह्मविद्याकी 'स्थूल, सूक्ष्म तथा पर' तीन प्रकारकी उपासनाएँ होती हैं। वन्दनाके अन्तर्गत 'स्थूल' उपासनामें आवरणोंकी वन्दना वाचिक रूपसे की जाती है तथा 'सूक्ष्म' रूपसे ध्यान किया जाता है; जबकि 'पर'

रूपसे स्वात्मस्वरूपसे चिन्तन किया जाता है।

इस प्रकारसे 'सपर्याखण्ड'के अन्तर्गत श्रीगायत्री ब्रह्मविद्याकी उपासना 'स्थूल, सूक्ष्म तथा पर' रूपसे की जाती है और इस उपासनासे साधक भोग तथा मोक्षको प्राप्त कर लेता है।

ध्यान रहे कि साधक यदि सबसे पहले 'ज्ञानखण्ड'का अध्ययन कर लेता है तो 'सपर्याखण्ड'के अन्तर्गत स्थान-स्थान पर विद्यमान गुप्त रहस्योंके ज्ञान अनायास प्राप्त हो जाते हैं और उसकी साधना तीव्र फलदायिनी बन जाती है। इसलिए कहा गया है–'देवो भूत्वा देवं यजेत्।' देवता बनकर देवताकी उपासना करें। इति शिवम्।।

नवसंवत्सरः विदुषां वशंवदः

वि. संवत् २०७४ *गोस्वामी प्रह्लाद गिरि*

वाराणसी। 'वेदान्तकेशरी'

।। श्रीगायत्रीब्रह्मविद्यायन्त्रम् ।।

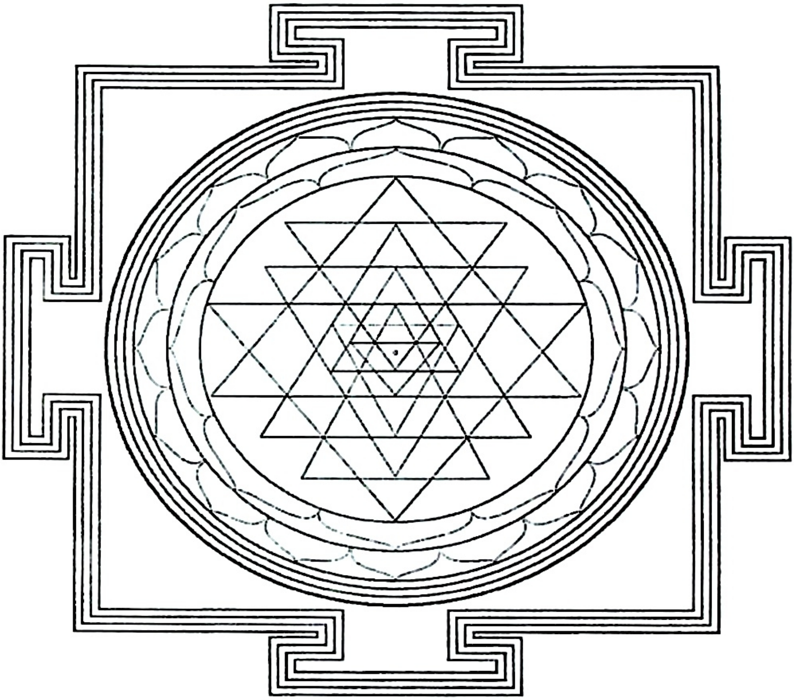

'चतुरस्रं त्रिवृत्तञ्च पत्रषोडशकन्तथा।
अष्टदलञ्च मन्वस्रं दशारञ्च दशारकम्।।१।।
अष्टारकं त्रिकोणञ्च बैन्दवं चार्चयेत्क्रमात्।
गायत्रीब्रह्मविद्याया यन्त्रमेतत्कुलेश्वरि।।२।।'

❖❖❖

।।श्रीः।।

श्रीविद्यान्तर्गता

गायत्री ब्रह्मविद्या

सविमर्श-'प्रह्लाद'हिन्दीव्याख्यासहिता

(दीक्षात्मकं सपर्याखण्डम्)

।। श्रीगायत्रीब्रह्मविद्यायै नमः ।।

श्रीगायत्रीब्रह्मविद्यापरम्परा

गायत्री ब्रह्मविद्या (सपर्याखण्डम्)—श्रीविद्याके अन्तर्गत 'गायत्री ब्रह्मविद्या'की उपासनाका विवेचन किया गया है। 'गायत्री ब्रह्मविद्या' यह ग्रन्थ दो खण्डोंमें प्रस्तुत है। प्रथम खण्ड है–'ज्ञानखण्डम्' तथा द्वितीय खण्ड है–'सपर्याखण्डम्'। 'सपर्याखण्डम्' दीक्षात्मक, पूजात्मक तथा वन्दनात्मक है। प्रस्तुत 'दीक्षात्मक सपर्याखण्ड'में श्रीगायत्री ब्रह्मविद्या परम्पराके अन्तर्गत जो साधक सद्गुरुओंके दर्शनकी दुर्लभताके कारण श्रीगायत्री ब्रह्मविद्याके मन्त्रकी दीक्षासे दीक्षित नहीं हुए हैं उनके लिए 'आदेश' क्रममें यह 'दीक्षात्मक सपर्याखण्ड' प्रस्तुत है जिससे वे स्वयं इस दीक्षाविधिसे दीक्षित हो सकें। इस दीक्षाविधिसे उनकी उपासना अवश्य सफल होगी इसमें कोई सन्देह नहीं है।

श्रीगायत्री ब्रह्मविद्या परम्परा—पारमेश्वरी भगवती परा शक्ति श्रीमहात्रिपुरसुन्दरी परदेवता 'श्री'के रूपमें विख्यात है। 'विद्या' कहते हैं–ज्ञानको। 'श्री'के ज्ञानको 'श्रीविद्या' कहते हैं। 'श्रीविद्या'से साधक भोग और मोक्षको प्राप्त कर लेता है। भोगको 'शक्ति' तथा मोक्षको 'शिव' कहते हैं। श्रीमहात्रिपुरसुन्दरीकी त्रिबीजा ब्रह्मगायत्री तथा तुरीया ब्रह्मगायत्रीकी मन्त्रावस्था ही श्रीगायत्री ब्रह्मविद्या है।

श्रीगायत्री-ब्रह्मविद्या-यन्त्र-परम्परा—

'गायत्रीब्रह्मविद्यायाः पीठं श्रीयन्त्ररूपकम्।
वक्ष्यामि तत्स्वरूपञ्च शृणुष्व परमेश्वरि॥१॥
चतुरस्त्रं त्रिवृत्तञ्च पत्रषोडशकं तथा।
अष्टदलञ्च मन्वस्त्रं दशारञ्च दशारकम्॥२॥
अष्टारकं त्रिकोणञ्च बैन्दवं चार्चयेत्क्रमात्।
गायत्रीब्रह्मविद्याया यन्त्रमेतत्कुलेश्वरि॥३॥'

'चतुरस्त्रम्, त्रिवृत्तम्, षोडशदलम्, अष्टदलम्, चतुर्दशारम्, बहिर्दशारम्, अन्तर्दशारम्, अष्टकोणम्, त्रिकोणम्, बिन्दुचक्रञ्च।' इत्येवमत्र दशचक्रात्मकस्य श्रीगायत्री-ब्रह्मविद्या-यन्त्रस्य पूजनं स्यादिति परम्परा।

श्रीगायत्री-ब्रह्मविद्या-मन्त्र-परम्परा—

'गायत्रीब्रह्मविद्याया मन्त्रौ वक्ष्ये सनातनौ।
ययोः स्मरणमात्रेण भुक्तिमुक्तिफलं लभेत्॥१॥
आदौ तारस्ततो माया रमा च तदनन्तरम्।
त्रिबीजाब्रह्मगायत्र्या मन्त्रोऽयं कथितः प्रिये॥२॥
अहं विमर्शरूपोऽयं मन्त्रराजः सनातनः।
तुरीयाब्रह्मगायत्र्या विज्ञेयः परमेश्वरि॥३॥
गायत्रीब्रह्मविद्याया मन्त्रौ तु कथितौ प्रिये।
ययोर्विज्ञानमात्रेण भोक्ता मुक्तो भवेन्नरः॥४॥'

श्रीगायत्री ब्रह्मविद्या यन्त्रपरम्परा–श्रीगायत्री ब्रह्मविद्याके यन्त्रको 'श्रीचक्रात्मक श्रीयन्त्र' कहते हैं। 'श्रीचक्र' दशचक्रात्मक चक्रराजके रूपमें विख्यात है। दश चक्र हैं–चतुरस्त्र, त्रिवृत्तक, षोडशदल, अष्टदल, चतुर्दशार, बहिर्दशार, अन्तर्दशार, अष्टकोण, त्रिकोण तथा बिन्दु चक्र।' श्रीगायत्री ब्रह्मविद्याकी उपासनाके लिए श्रीयन्त्र सर्वश्रेष्ठ साधन है। इस परम्परामें दशों चक्रोंकी पूजा की जाती है।

श्रीगायत्री ब्रह्मविद्या मन्त्रपरम्परा–श्रीगायत्री ब्रह्मविद्याके मन्त्र हैं–त्रिबीजा

श्रीगायत्रीब्रह्मविद्यामन्त्रपरम्परायां द्वौ मन्त्रौ स्तः। तत्रैकः त्रिबीजा-ब्रह्मगायत्रीमन्त्रः—'ॐ ह्रीं श्रीं।' अपरश्च तुरीयाब्रह्मगायत्रीमन्त्रः—'अहम्।' इति। तुरीयाब्रह्मगायत्रीमन्त्रस्य बाह्यदीक्षा नैव भवतीति परम्परा स्यादिति निश्चप्रचम्।

श्रीगायत्री-ब्रह्मविद्या- गुरु-परम्परा—

॥ श्रीदक्षिणामूर्तिगुरवे नमः ॥

'शान्तं त्रिनेत्रं विधुकान्तिशुभ्रं
संविभ्रतं दोष्कशुभैश्चतुर्भिः।
मुक्ताक्षमालां कलशं सुधायाः
श्रीज्ञानमुद्रामपि पुस्तकञ्च॥१॥
दिव्याम्बरं चन्दनगन्धलेपैः
समुज्ज्वलाङ्गं मणिरत्नकैश्च।
वीरासनस्थञ्च शशाङ्कचूडं
श्रीदक्षिणामूर्तिगुरुं स्मरामि॥२॥'

अत्र शान्तः, त्रिनेत्रः, चन्द्रकान्तिशुभ्रः, चतुर्भुजः, मुक्ताक्षमाला-सुधाकलश-ज्ञानमुद्रा-पुस्तकाढ्यः, दिव्यवस्त्रालङ्कृतः, चन्दन-गन्ध-लेपैः मणिरत्नकैश्च समुज्ज्वलाङ्गः, वीरासनस्थः, चन्द्रशेखरः, श्रीदक्षिणामूर्तिः

ब्रह्मगायत्री तथा तुरीया ब्रह्मगायत्री। 'त्रिबीजा ब्रह्मगायत्री' है—'ॐ ह्रीं श्रीं'। 'तुरीया ब्रह्मगायत्री' है—'अहम्'। तुरीया ब्रह्मगायत्री मन्त्रकी बाह्य दीक्षा नहीं होती है। यही परम्परा है।

श्रीगायत्री ब्रह्मविद्या गुरुपरम्परा—श्रीगायत्री ब्रह्मविद्याकी गुरुपरम्पराके अन्तर्गत श्रीगुरुदेवके रूपमें श्रीदक्षिणामूर्ति 'शिव' ही आदिगुरुके रूपमें विराजमान हैं। श्रीदक्षिणामूर्ति गुरु शान्त हैं तथा त्रिनेत्रधारी हैं। उनके 'चन्द्र, सूर्य तथा वह्नि' ये तीन ज्योतिःस्वरूप नेत्र हैं। उनके शरीरकी कान्ति चन्द्रमाके समान उज्ज्वल शुभ्र है। उनके चार हाथ हैं। उन चारों हाथोंमें मुक्ताकी अक्षमाला, अमृतका कलश, ज्ञान मुद्रा तथा पुस्तक सुशोभित हो रहे हैं। चन्दन-गन्धके लेपनसे तथा मणि-रत्नोंसे उनके

शिव एव गुरुः स्यादिति निश्चप्रचम्।

श्रीगायत्री-ब्रह्मविद्या- गुरुपादुका-परम्परा—

'होत्राग्नि-हौत्राग्नि-हविष्य-होतृ-
होमादि-सर्वाकृति-भासमानम्।
यद्ब्रह्मतद्बोधवितारिणीभ्यां
नमो नमः श्रीगुरुपादुकाभ्याम्।।'

श्रीगायत्री-ब्रह्मविद्या-परम्परायां श्रीदक्षिणामूर्तिगुरोः पादुकैव सर्वत्र श्रीपादुकारूपेण पूजनीया वर्तत इति परम्परा स्यादिति निश्चप्रचम्। इति शिवम्।।

अङ्ग समुज्ज्वल प्रतीत हो रहे हैं। वीरासन पर आसीन श्रीदक्षिणामूर्ति 'शिव' ही गुरुके रूपमें विराजमान हैं। यही परम्परा है।

श्रीगायत्री ब्रह्मविद्या गुरुपादुका परम्परा—ब्रह्मज्ञानका वितरण करनेवाली शक्ति श्रीगुरुपादुका ही है। श्रीगायत्री ब्रह्मविद्याकी परम्परामें 'श्रीदक्षिणामूर्ति गुरुपादुका ही श्रीपादुकाके रूपमें सर्वत्र पूजनीया है' ऐसी परम्परा है।।

मन्त्रदीक्षाविधिः

श्रीगायत्री-ब्रह्मविद्या-मन्त्रदीक्षाग्रहणं विना श्रीगायत्री-ब्रह्मविद्याया मन्त्रोपासना साफल्यं नैव भजत इति परम्परा स्यात्। श्रीगायत्री-ब्रह्मविद्या-मन्त्र-दीक्षा-प्रदातृ-सद्गुरूणामपि दर्शनं दुर्लभं स्यादिति चेत्तर्हि तदुपासना कथं सम्भवेत! इत्याशङ्काया निर्मूलनाय दीक्षाविहीनानां साधकानां श्रीगायत्रीब्रह्मविद्यामन्त्रसिद्ध्यर्थञ्चादेशक्रमेण 'श्रीगायत्री-ब्रह्म-विद्या-मन्त्रदीक्षाविधिः' प्रस्तूयते। तद्यथा–कस्मिंश्चित् शुक्लपक्षे शुभ-वासरे, उत्साहे तु कस्मिंश्चिदपि गुरुवासरे वा श्रीगायत्री-ब्रह्मविद्या-मन्त्रदीक्षाविहीनः साधकः स्वयं श्रीदक्षिणामूर्तिं स्वगुरुं मन्यमानः श्रीगायत्री-ब्रह्मविद्यामन्त्रस्य दीक्षाग्रहणं कुर्यात्। साधकः श्रीदक्षिणामूर्ति-गुरुपूजनपूर्वकं श्रीगायत्री-ब्रह्मविद्यामन्त्रग्रहणं कृत्वा पुनरादिष्ट-विधिना तत्पादुकापूजनं कुर्यादिति।

अनुष्ठातृपुरुषशुद्धिः

कृतनित्यक्रियः पुरुषोऽनुष्ठानं समारभेत्। *आचमनम्*–'ॐ विष्णुः।

श्रीगायत्री ब्रह्मविद्या मन्त्रकी दीक्षाविधि–'श्रीगायत्री ब्रह्मविद्या मन्त्रकी दीक्षाके विना उसकी उपासना सफलताको नहीं प्राप्त कर सकती है' यही परम्परा है। श्रीगायत्री ब्रह्मविद्याके मन्त्रकी दीक्षाका प्रदान करनेवाले सद्गुरुओंका दर्शन भी दुर्लभ है तो फिर उसकी उपासना कैसे सम्भव हो! इस आशङ्काके निर्मूलनके लिए तथा साधकोंके श्रीगायत्री ब्रह्मविद्याके मन्त्रकी सिद्धिके लिए सबसे पहले 'आदेश' क्रमसे श्रीगायत्री ब्रह्मविद्याके मन्त्रकी दीक्षाविधिको प्रस्तुत करते हैं। जैसे:–किसी शुक्ल पक्षके शुभ दिनमें अथवा उत्साहमें किसी भी गुरुवारके दिनमें श्रीगायत्री ब्रह्मविद्याके मन्त्रकी दीक्षासे विहीन साधक स्वयं श्रीदक्षिणामूर्तिको अपना गुरु मानता हुआ श्रीगायत्री ब्रह्मविद्याके मन्त्रका दीक्षाग्रहण करे। साधक श्रीदक्षिणामूर्तिका पूजन करके श्रीगायत्री ब्रह्मविद्याके मन्त्रका ग्रहण करके फिर 'आदिष्ट' विधिसे उनकी पादुकाका पूजन करे।

अनुष्ठान करनेवाले साधककी शुद्धि–नित्यक्रिया करके साधक अनुष्ठानका

ॐ विष्णुः। ॐ विष्णुः।' *शिखाबन्धनम्*–'ॐ'। *प्राणायामः*–'ॐ' इति मन्त्रेण वामनासया वायुमापूर्य, कुम्भके चतुर्वारं मन्त्रं पठित्वा, द्विवारं मन्त्रमुच्चरन् दक्षनासया रेचयेत्। *सेकः*–'ॐ अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थाङ्गतोऽपि वा। यः स्मरेत् पुण्डरीकाक्षं स बाह्याभ्यन्तरः शुचिः।। इति सर्वं शुचि।'

सङ्कल्पः

'ॐ श्रीगणेशाय नमः। गजाननम्भूतगणादिसेवितं कपित्थ-जम्बू-फलचारुभक्षणम्। उमासुतं शोकविनाशकारकं नमामि विघ्नेश्वर-पाद-पङ्कजम्।। श्रीमन्महागणाधिपतये नमः।। शुक्लाम्बरधरं विष्णुं शशिवर्णं चतुर्भुजम्। प्रसन्नवदनं ध्यायेत् सर्वविघ्नोपशान्तये।। ॐ विष्णवे नमः। ॐ विष्णवे नमः। ॐ विष्णवे नमः। ॐ अद्य ब्रह्मणोऽह्नि द्वितीय-परार्धे श्रीश्वेतवाराह-कल्पे वैवस्वत-मन्वन्तरेऽष्टाविंशतितमे कलियुगे कलिप्रथमचरणे बौद्धावतारे भूर्लोके जम्बूद्वीपे भरतखण्डे भारतवर्षे----नामकक्षेत्रे ----नामकसंवत्सरे ----मासे ----पक्षे ----तिथौ ----वासरे ----काले ----गोत्रीयः/गोत्रीया ----अहम् श्रीदक्षिणामूर्ति-गुरोः शिष्य/शिष्यारूपेण श्रीदक्षिणामूर्तिगुरु-प्रीत्यर्थं श्रीदक्षिणामूर्ति-गुरुपादुकापूजनं करिष्ये।'

पृथ्वीशोधनम्

कल्पितासनाधो जलादिना त्रिकोणं विलिखेत्। *विनियोगः*–'ॐ

प्रारम्भ करें। *आचमन*–'ॐ...विष्णुः।'का उच्चारण करके आचमन करें। *शिखा-बन्धन*–'ॐ'का उच्चारण करके शिखाका बन्धन करें। *प्राणायाम*–'ॐ'का मानसिक उच्चारण करते हुए वायें नाकके छिद्रसे वायुको भर कर, कुम्भकमें चार वार मन्त्रको पढ़कर, दो वार मन्त्रका उच्चारण करते हुए दायें नाकके छिद्रसे छोड़ें। *सेक*–'ॐ...शुचि।'का उच्चारण करते हुए अपने ऊपर जल छिड़कें।

सङ्कल्प–'ॐ...करिष्ये।'का उच्चारण करके सङ्कल्प करें।

पृथ्वीशोधन–कल्पित आसनके नीचे जल आदि पदार्थसे एक त्रिकोणका विलेखन करें। *विनियोग*–'ॐ...विनियोगः।'का उच्चारण करके विनियोग करें। *ध्यान*–'ॐ चतुर्भुजां...प्रधारिणीम्।।'का उच्चारण करके देवी पृथ्वीका ध्यान करें। *आवाहन*–

पृथ्वि त्वया धृता लोका देवि त्वं विष्णुनोद्धृता। त्वं च धारय मां नित्यं पवित्रं कुरु चासनम्।। इतिमन्त्रस्य मेरुपृष्ठः ऋषिः, सुतलं छन्दः, कूर्मो देवता, आसने विनियोगः।' *ध्यानम्*–'ॐ चतुर्भुजां शुक्लवर्णां कूर्मपृष्ठोपरि स्थिताम्। प्रसन्नवदनां चक्रशूलशङ्खं प्रधारिणीम्।।' *आवाहनम्*–'ॐ आगच्छ सर्वकल्याणि वसुधे लोकधारिणि। पृथिवि लोकदत्तासि काश्यपेनाभिवन्दिते।। ॐ आधारशक्तिकमलासनाय नमः। ॐ पृथिव्यै नमः।' *पृथ्वीस्पर्शनम्*–'ॐ पृथ्वि त्वया धृता लोका देवि त्वं विष्णुनोद्धृता। त्वं च धारय मां नित्यं पवित्रं कुरु चासनम्।।' इति गन्धादिभिः सम्पूजयेत्। *प्रणमनम्*–'ॐ उद्धृतासि वराहेण कृष्णेन शतबाहुना। दंष्ट्राग्रैर्लीलया देवि यज्ञार्थं प्रणमाम्यहम्।।'

स्थलशुद्धिः

चतुर्दिक्षु अक्षतक्षेपणम्–'ॐ अपसर्पन्तु ते भूता ये भूता भुवि संस्थिताः। ये भूता विघ्नकर्तारस्ते नश्यन्तु शिवाज्ञया।। अपक्रामन्तु भूतानि पिशाचाः सर्वतो दिशम्। सर्वेषामविरोधेन पूजाकर्म समारभेत्।।'

दीपस्थापनम्

कर्मसाक्षित्वेन दीपस्थापनं कुर्यात्। 'ॐ' इति प्रणवेनाचमनं कृत्वा, प्राणानायम्य प्रणवेन पूरकं (३२) द्वात्रिंशद्धा, कुम्भकं (६४) चतुषष्ट्या, रेचकं क्रमात् (१६) षोडशसङ्ख्यया कुर्यात्। तत्र दीपाधार-यन्त्रं गन्धेन स्वाग्रतस्त्रिकोणं विलिख्य, 'ॐ दीपाधारयन्त्राय नमः।' इति मन्त्रेण सम्पूज्य, तदुपरि घृतदीपं संस्थाप्य, गन्धादिना सम्पूज्य

'ॐ आगच्छ ... नमः।'का उच्चारण करके देवी पृथ्वीका आवाहन करें। *पृथ्वीस्पर्शन*–'ॐ पृथ्वि...चासनम्।।'का उच्चारण करके पृथ्वीका स्पर्श करके गन्ध आदि पदार्थोंसे देवी पृथ्वीका पूजन करें। *प्रणमन*–'ॐ ... प्रणमाम्यहम्।।'का उच्चारण करके देवी पृथ्वीको प्रणाम करें।

स्थलशुद्धि–'ॐ अपसर्पन्तु...समारभेत्।।'का उच्चारण करते हुए चारों दिशाओंमें अक्षत फेंके।

दीपस्थापन–कर्मके साक्षीके रूपमें दीपका स्थापन करें। 'ॐ' इस प्रणवसे आचमन करके, प्राणायाम करके 'ॐ'का बत्तीस वार चिन्तन करते हुए पूरक करें;

प्रार्थयेत्। *प्रार्थना*–'भो दीप देवीरूपस्त्वं कर्मसाक्षी ह्यविघ्नकृत्। यावत्कर्मसमाप्तिः स्यात् तावत् त्वं सुस्थिरो भव।।'

मालापूजनम्

'ॐ माले माले महामाले सर्वतत्त्वस्वरूपिणि। चतुर्वर्गस्त्वयि न्यस्तस्तस्मान्मे सिद्धिदा भव।। ॐ ह्रीं मालायै नमः।' इत्यनेन मालां दक्षिणकरे निधाय, हृत्प्रदेशे समानीय, शिरसि धृत्वा, ततः पात्रे धृत्वा 'ॐ ह्रीं सिद्ध्यै नमः।' इतिमन्त्रेण मालां गन्धादिभिः सम्पूज्य प्रार्थयेत्। *प्रार्थना*–'त्वं माले सर्वभूतानां सर्वलोकप्रिया मता। शिवं कुरुष्व मे भद्रे यशो वीर्यं च देहि मे।।'

विघ्नोत्सारणमात्मरक्षणञ्च

'ॐ' इति प्रणवमुच्चार्य, दिव्य-दृष्ट्यावलोकनेन दिव्यान् विघ्नान् उत्सारयामि। 'ॐ फट्' इति प्रोक्षणेनान्तरिक्षान् विघ्नान् उत्सारयामि। 'ॐ फट्' इति वामपादपार्ष्णिघातेन भौमान् विघ्नान् उत्सारयामि। 'ॐ अस्त्राय फट्' इति तालत्रयेण दिग्बन्धनं करोमि।'

चौंषठ वार चिन्तन कुम्भकमें तथा षोलह वार रेचकमें करें। अपने सम्मुख गन्धसे त्रिकोणाकार दीपाधारयन्त्रका विलेखन करके 'ॐ...नमः।' इस मन्त्रसे उसका पूजन करके उस पर घीके दीपकको स्थापित करके गन्ध आदि पदार्थोंसे उसका पूजन कर प्रार्थना करें। *प्रार्थना*–'ॐ...भव।।'का उच्चारण करते हुए दीपककी प्रार्थना करें।

मालापूजन–'ॐ माले...नमः।'का उच्चारण करते हुए मालाको दायें हाथमें रखकर, हृदय प्रदेशमें लाकर, शिर पर रखकर उसके बाद पात्रमें रखकर 'ॐ...नमः।' इस मन्त्रसे गन्ध आदि पदार्थोंसे मालाका पूजन करके प्रार्थना करें। *प्रार्थना*–'त्वं...देहि मे।।'का उच्चारण करके मालाकी प्रार्थना करें।

विघ्नोत्सारण तथा आत्मरक्षण–'ॐ दिव्यदृष्ट्यावलोकनेन दिव्यान् विघ्नान् उत्सारयामि।'का उच्चारण करते हुए 'मैं दिव्यदृष्टिके द्वारा अवलोकनमात्रसे ही दिव्य विघ्नोंका उत्सारण करता हूँ।' इस प्रकारसे चिन्तन करें। ''ॐ फट्' इति प्रोक्षणेनान्तरिक्षान् विघ्नान् उत्सारयामि।''का उच्चारण करते हुए 'मैं प्रोक्षणके द्वारा अन्तरिक्ष विघ्नोंका उत्सारण करता हूँ।' इस प्रकारसे चिन्तन करें। ''ॐ फट्' इति वामपादपार्ष्णिघातेन भौमान् विघ्नान् उत्सारयामि।''का उच्चारण करते हुए 'मैं वाम पादके पार्ष्णिघातसे भौम विघ्नोंका उत्सारण करता हूँ।' इस प्रकारसे चिन्तन करें।

अन्तर्मातृकान्यासः

विनियोगः—'ॐ अस्य अन्तर्मातृकान्यासस्य ब्रह्मा ऋषिः, गायत्री छन्दः, मातृकासरस्वती देवता, हलो बीजानि, स्वराः शक्तयः, लं कीलकम्, मातृकान्यासे विनियोगः। ॐ अं नमः। ॐ आं नमः। ॐ इं नमः। ॐ ईं नमः। ॐ उं नमः। ॐ ऊं नमः। ॐ ऋं नमः। ॐ ॠं नमः। ॐ ऌं नमः। ॐ ॡं नमः। ॐ एं नमः। ॐ ऐं नमः। ॐ ओं नमः। ॐ औं नमः। ॐ अं नमः। ॐ अः नमः। ॐ कं नमः। ॐ खं नमः। ॐ गं नमः। ॐ घं नमः। ॐ ङं नमः। ॐ चं नमः। ॐ छं नमः। ॐ जं नमः। ॐ झं नमः। ॐ ञं नमः। ॐ टं नमः। ॐ ठं नमः। ॐ डं नमः। ॐ ढं नमः। ॐ णं नमः। ॐ तं नमः। ॐ थं नमः। ॐ दं नमः। ॐ धं नमः। ॐ नं नमः। ॐ पं नमः। ॐ फं नमः। ॐ बं नमः। ॐ भं नमः। ॐ मं नमः। ॐ यं नमः। ॐ रं नमः। ॐ लं नमः। ॐ वं नमः। ॐ शं नमः। ॐ षं नमः। ॐ सं नमः। ॐ हं नमः। ॐ क्षं नमः।'

भूतशुद्धिः

पृथिवी-तत्त्वम्—पादादि-जानुपर्यन्तं पृथिवीस्थानम्, चतुरस्रं चतुर्दिक्षु लाञ्छितम्, तन्मध्ये पीतवर्णं लंबीजयुक्तं ध्यायेत्। 'लं भूम्यै नमः।' *जल-तत्त्वम्*—जान्वादि-नाभिपर्यन्तमपां स्थानम्, धनुराकार-

---

"'ॐ अस्त्राय फट्' इति तालत्रयेण दिग्बन्धनं करोमि।'का उच्चारण करते हुए 'मैं तीन वार ताल बजाकर दिशाओंका बन्धन करता हूँ।' इस प्रकारसे चिन्तन करें।

अन्तर्मातृकान्यास—विनियोग करके अन्तर्मातृकान्यास करें। *विनियोग*—'अन्तर्मातृकान्यासस्य...ॐ क्षं नमः।'का उच्चारण करके विनियोग करें।

भूतशुद्धि—पञ्च महाभूतोंसे निर्मित अपने शरीरके विशिष्ट स्थानों पर पञ्च महाभूतोंकी क्रमसे शुद्धि करें। *पृथिवी-तत्त्व*—पाद आदिसे जानु पर्यन्त पृथिवीका स्थान, चतुरस्राकार, चारों दिशाओंसे चिह्नित है। उसके मध्यमें 'लं' बीजसे युक्त पीतवर्ण पृथिवी तत्त्वका ध्यान करें। 'लं भूम्यै नमः।'का उच्चारण करते हुए पूर्वोक्त प्रकारसे पृथिवी तत्त्वका ध्यान करें। *जल-तत्त्व*—जानु आदिसे नाभि पर्यन्त जलका

मुभयोः कोट्योः श्वेतपद्मलाञ्छितम्, तन्मध्ये श्वेतवर्णं वंबीजयुक्तं ध्यायेत्। 'वं अद्भ्यो नमः।' *अग्नि-तत्त्वम्*–नाभ्यादि-हृदय-पर्यन्तमग्नि-स्थानम्, त्रिकोणं स्वस्तिक-लाञ्छितम्, तन्मध्ये रक्तवर्णं रंबीज-युक्तं ध्यायेत्। 'रं अग्नये नमः।' *वायु-तत्त्वम्*–हृदयादि-भ्रूमध्य-पर्यन्तं वायु-स्थानम्, षट्कोणं षड्-बिन्दु-लाञ्छितम्, तन्मध्ये धूम्रवर्णं यं-बीजयुक्तं ध्यायेत्। 'यं वायवे नमः।' *आकाशतत्त्वम्*–भ्रूमध्यादि-ब्रह्मरन्ध्र-पर्यन्त-माकाशस्थानम्, वृत्ताकारं ध्वज-लाञ्छितम्, तन्मध्ये नीलवर्णं हंबीज-युक्तं ध्यायेत्। 'हं आकाशाय नमः।'

प्रविलापनम्–'पृथिवीं पञ्चगुणां लंबीजेन षडुद्घातप्रयोगेण अप्सु प्रविलापयामि। लं लं लं लं लं लं। चतुर्गुणा अपः वंबीजेन पञ्चोद्घातप्रयोगेण अग्नौ प्रविलापयामि। वं वं वं वं वं। त्रिगुणं वह्निं रंबीजेन चतुरुद्घातप्रयोगेण वायौ प्रविलापयामि। रं रं रं रं। द्विगुणं

स्थान, धनुषाकार, दोनों कोटियोंके श्वेत पद्मसे चिह्नित है। उसके मध्यमें 'वं' बीजसे युक्त श्वेतवर्ण जल तत्त्वका ध्यान करें। 'वं अद्भ्यो नमः।'का उच्चारण करते हुए पूर्वोक्त प्रकारसे जल तत्त्वका ध्यान करें। *अग्नि-तत्त्व*–नाभि आदिसे हृदय पर्यन्त अग्निका स्थान, त्रिकोणाकार, स्वस्तिक चिह्नसे चिह्नित है। उसके मध्यमें 'रं' बीजसे युक्त रक्तवर्ण अग्नि तत्त्वका ध्यान करें। 'रं अग्नये नमः।'का उच्चारण करते हुए पूर्वोक्त प्रकारसे अग्नि तत्त्वका ध्यान करें। *वायु-तत्त्व*–हृदय आदिसे भ्रूमध्य पर्यन्त वायुका स्थान, षट्कोणाकार, षट् बिन्दुओंसे चिह्नित है। उसके मध्यमें 'यं' बीजसे युक्त धूम्रवर्ण वायु तत्त्वका ध्यान करें। 'यं वायवे नमः।'का उच्चारण करते हुए पूर्वोक्त प्रकारसे वायु तत्त्वका ध्यान करें। *आकाश-तत्त्व*–भ्रूमध्य आदिसे ब्रह्मरन्ध्र पर्यन्त आकाशका स्थान, वृत्ताकार, ध्वजसे चिह्नित है। उसके मध्यमें 'हं' बीजसे युक्त नीलवर्ण आकाश तत्त्वका ध्यान करें। 'हं आकाशाय नमः।'का उच्चारण करते हुए पूर्वोक्त प्रकारसे आकाश तत्त्वका ध्यान करें।

प्रविलापन–'पृथिवीं...लं।'का उच्चारण करते हुए 'मैं पाँच गुणोंवाले पृथ्वी-तत्त्वका 'लं' बीजके द्वारा छह उद्घातके प्रयोगसे जल-तत्त्वमें प्रविलापन करता हूँ।' इस प्रकार चिन्तन करके छह वार 'लं' बीजका उच्चारण करें। 'चतुर्गुणा अपः...वं।'का उच्चारण करते हुए 'मैं चार गुणोंवाले जल-तत्त्वका 'वं' बीजके द्वारा पाँच उद्घातके प्रयोगसे अग्नि-तत्त्वमें प्रविलापन करता हूँ।' इस प्रकार चिन्तन करके पाँच वार 'वं' बीजका उच्चारण करें। 'त्रिगुणं...रं।'का उच्चारण करते हुए 'मैं तीन

वायुं यंबीजेन त्रिरुद्घात-प्रयोगेण आकाशे प्रविलापयामि। यं यं यं। एकगुणमाकाशं हंबीजेन द्विरुद्घातप्रयोगेण अहङ्कारे प्रविलापयामि। हं हं। तमहङ्कारं महत्तत्त्वे प्रविलापयामि। तन्महत्तत्त्वं प्रकृतौ प्रविलापयामि। तां प्रकृतिं परब्रह्मणि प्रविलापयामि।' इति प्रविलाप्य, 'शुद्धोऽहम्, मुक्तोऽहम्, सच्चिदानन्द-स्वरूपोऽहम्, ब्रह्माहमस्मि।' इति चिरं भावयेत्। 'तस्मात्सर्वज्ञात्सर्वशक्तेः परब्रह्मणः सकाशात्प्रकृतिः, प्रकृते-र्महान्, महतोऽहङ्कारः, अहङ्कारादाकाशः, आकाशाद् वायुः, वायो-रग्निः, अग्नेरापः, अद्भ्यः पृथिवी, पृथिव्या ओषधयः, ओषधिभ्यो-ऽन्नम्, अन्नाद् रेतः, रेतसः पुरुषः, स वा एष पुरुषोऽन्नरसमयः।' इति देहोत्पत्तिं विभाव्य पुनर्जीवात्मानं 'हंसः' इति मन्त्रेणाङ्कुशमुद्रया सुषुम्ना-नाडीमार्गेण ब्रह्मरन्ध्रादानीय हृदि प्रतिष्ठापयेत्। 'हंसः सोऽहम्' इति।

गुणोंवाले अग्नि-तत्त्वका 'रं' बीजके द्वारा चार उद्घातके प्रयोगसे वायु-तत्त्वमें प्रविलापन करता हूँ।' इस प्रकार चिन्तन करके चार वार 'रं' बीजका उच्चारण करें। 'द्विगुणं...यं।'का उच्चारण करते हुए 'मैं दो गुणोंवाले वायु-तत्त्वका 'यं' बीजके द्वारा तीन उद्घातके प्रयोगसे आकाश-तत्त्वमें प्रविलापन करता हूँ।' इस प्रकार चिन्तन करके तीन वार 'यं' बीजका उच्चारण करें। 'एकगुण...हं।'का उच्चारण करते हुए 'मैं एक गुणवाले आकाश-तत्त्वका 'हं' बीजके द्वारा दो उद्घातके प्रयोगसे अहङ्कार-तत्त्वमें प्रविलापन करता हूँ।' इस प्रकार चिन्तन करके दो वार 'हं' बीजका उच्चारण करें। 'तम् अहङ्कारं...प्रविलापयामि।'का उच्चारण करते हुए 'मैं उस अहङ्कार-तत्त्वका महत्-तत्त्वमें प्रविलापन करता हूँ।' इस प्रकार चिन्तन करें। 'तन्...प्रविलापयामि'का उच्चारण करते हुए 'मैं उस महत्-तत्त्वका प्रकृति-तत्त्वमें प्रविलापन करता हूँ।' इस प्रकार चिन्तन करें। 'तां...प्रविलापयामि।'का उच्चारण करते हुए 'मैं उस प्रकृति-तत्त्वका परब्रह्ममें प्रविलापन करता हूँ।' इस प्रकार चिन्तन करें। इस प्रकार प्रविलापन करके 'शुद्धो...ब्रह्माहमस्मि।'का उच्चारण करते हुए 'मैं शुद्ध हूँ, मैं मुक्त हूँ, मैं सच्चिदानन्द-स्वरूप हूँ, मैं ब्रह्म हूँ।' इस प्रकार देर तक चिन्तन करें। 'तस्मात्...रसमयः।'का उच्चारण करते हुए 'उस सर्वज्ञ सर्वशक्तिमान् परब्रह्मसे उसकी प्रकृति, प्रकृतिसे महान्, महान्से अहङ्कार, अहङ्कारसे आकाश, आकाशसे वायु, वायुसे अग्नि, अग्निसे जल, जलसे पृथिवी, पृथिवीसे ओषधियाँ, ओषधियोंसे अन्न, अन्नसे रेतस्, रेतस्से पुरुष, वह या यह पुरुष अन्नरसमय है।' इस प्रकार देहकी उत्पत्तिका विचार करके फिर जीवात्माको 'हंसः' इस मन्त्रसे अङ्कुश-मुद्रासे सुषुम्ना

श्रीदक्षिणामूर्तिगुरुपादुकास्थापनम्

वेदिकायामष्टदलं विलिख्य तन्मध्ये कलशं संस्थाप्य तस्मिन् गन्ध-पुष्प-फल-सर्वौषधि-दूर्वा-पञ्चपल्लव-सप्तमृत्तिका निक्षिप्य वस्त्र-द्वयेनावेष्ट्य तदुपरि पूर्णपात्रं निधाय कलशे वरुणादिदेवता आवाह्य पूजयेत्।

कलशपूजनम्–'ॐ अपां पतये वरुणाय नमः। अस्मिन् कलशे वरुणं साङ्गं सपरिवारं सायुधं सशक्तिकमावाहयामि। कलशस्य मुखे विष्णुः कण्ठे रुद्रः समाश्रितः। मूले त्वस्य स्थितो ब्रह्मा मध्ये मातृगणाः स्मृताः।। कुक्षौ तु सागराः सर्वे सप्तद्वीपा वसुन्धरा। ऋग्वेदोऽथ यजुर्वेदः सामवेदो ह्यथर्वणः। अङ्गैश्च सहिताः सर्वे कलशं तु समाश्रिताः।। अत्र गायत्री सावित्री शान्ति-पुष्टिकरी तथा। आयान्तु देवपूजार्थं दुरितक्षय-कारकाः।। गङ्गे च यमुने चैव गोदावरि सरस्वति। नर्मदे सिन्धुकावेरि जलेऽस्मिन् सन्निधिं कुरु।। सर्वे समुद्राः सरितः तीर्थानि जलदा नदाः। आयान्तु मम शान्त्यर्थं दुरितक्षयकारकाः।। ॐ वरुणाद्यावाहित-देवताभ्यो नमः। कलशे वरुणाद्यावाहितदेवताः स्थाप-यामि।' 'ॐ वरुणाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः।' इति मन्त्रेण गन्धादिना पञ्चोपचारेण पूजयेत्। *प्रार्थना*–'देव-दानवसंवादे मथ्यमाने महोदधौ। उत्पन्नोऽसि तदा कुम्भ विधृतो विष्णुना स्वयम्।। त्वत्तोये सर्वतीर्थानि

नाडीके मार्गसे ब्रह्मरन्ध्रसे लाकर हृदयमें प्रतिष्ठित करें। 'हंसः सोऽहम्'का उच्चारण करते हुए इसका चिन्तन करें।

श्रीदक्षिणामूर्ति गुरुकी पादुकाका स्थापन

वेदिकामें अष्टदल कमलका अङ्कन करके उसके मध्यमें जलपूर्ण कलशकी स्थापना करके उसमें गन्ध, पुष्प, फल, सर्वौषधि, दूर्वा, पञ्च पल्लव तथा सप्त मृत्तिका अथवा जो भी पदार्थ उपलब्ध हों उन्हें ड़ाल कर, उसको दो वस्त्रोंसे ढँक कर, उसके ऊपर पूर्णपात्रकी स्थापना करके कलशमें वरुण आदि देवताओंका आवाहन करके उनका पूजन करें।

कलशपूजन–'ॐ अपां पतये...स्थापयामि।'का उच्चारण करके कलशमें वरुण आदि आवाहित देवताओंकी स्थापना करें। 'ॐ वरुणाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः।' इस

देवाः सर्वे त्वयि स्थिताः। त्वयि तिष्ठन्ति भूतानि त्वयि प्राणाः प्रतिष्ठिताः।। शिवः स्वयं त्वमेवासि विष्णुस्त्वं च प्रजापतिः। आदित्या वसवो रुद्रा विश्वेदेवाः सपैतृकाः।। त्वयि तिष्ठन्ति सर्वेऽपि यतः कामफलप्रदाः। त्वत्प्रसादादिमां पूजां कर्तुमिहे जलोद्भव। सान्निध्यं कुरु मे देव प्रसन्नो भव सर्वदा।।' ततः कलशस्य पूर्वस्यां दिशि पीठकं सिंहासनं वा संस्थाप्य, तस्योपरि काष्ठेन, पाषाणेन, ताम्रेण, रौप्येण, स्वर्णेन वा विनिर्मितां गुरुपादुकां प्रतिष्ठाप्य, श्रीदक्षिणामूर्तिगुरोः ध्यानपूर्वकं पञ्चो-पचारेण पूजनं कुर्यादिति।

श्रीदक्षिणामूर्तिगुरुपूजनम्

आदौ हस्ते पुष्पं गृहीत्वा श्रीदक्षिणामूर्तिगुरोर्ध्यानं कुर्यात्।

ध्यानम्–

'शान्तं त्रिनेत्रं विधुकान्तिशुभ्रं
संविभ्रतं दोष्कशुभैश्चतुर्भिः।
मुक्ताक्षमालां कलशं सुधायाः
श्रीज्ञानमुद्रामपि पुस्तकञ्च।।१।।
दिव्याम्बरं चन्दनगन्धलेपैः
समुज्ज्वलाङ्गं मणिरत्नकैश्च।
वीरासनस्थञ्च शशाङ्कचूडं
श्रीदक्षिणामूर्तिगुरुं स्मरामि।।२।।'

एवं ध्यानं कृत्वा श्रीदक्षिणामूर्तिगुरुपादुकायां गृहीतं पुष्पमर्पयेत्।

मन्त्रका उच्चारण कर गन्ध आदि पञ्चोपचारसे वरुण आदि आवाहित देवताओंका पूजन करें। *प्रार्थना*–'देवदानव-संवादे...भव सर्वदा।।'का उच्चारण करके कलशकी प्रार्थना करें। उसके बाद कलशकी पूर्व दिशामें पीठ अथवा सिंहासनकी स्थापना करके उस पर लकड़ी, पाषाण, ताम्र, रौप्य अथवा स्वर्णसे विनिर्मित गुरुपादुकाकी स्थापना करके श्रीदक्षिणामूर्ति गुरुका ध्यानपूर्वक पञ्चोपचारसे पूजन करें।

श्रीदक्षिणामूर्ति गुरुका पूजन–पहले हाथमें पुष्प लेकर श्रीदक्षिणामूर्ति गुरुका

गन्धम्–'ॐ श्रीदक्षिणामूर्तिगुरवे नमः। श्रीदक्षिणामूर्तिगुरु-प्रीत्यर्थं गन्धं समर्पयामि।'

पुष्पम्–'ॐ श्रीदक्षिणामूर्तिगुरवे नमः। श्रीदक्षिणामूर्तिगुरु-प्रीत्यर्थं पुष्पं समर्पयामि।'

धूपः–'ॐ श्रीदक्षिणामूर्तिगुरवे नमः। श्रीदक्षिणामूर्तिगुरु-प्रीत्यर्थं धूपमाघ्रापयामि।'

दीपः–'ॐ श्रीदक्षिणामूर्तिगुरवे नमः। श्रीदक्षिणामूर्तिगुरु-प्रीत्यर्थं दीपं दर्शयामि।'

नैवेद्यम्–'ॐ श्रीदक्षिणामूर्तिगुरवे नमः। श्रीदक्षिणामूर्तिगुरु-प्रीत्यर्थं नैवेद्यं निवेदयामि। मध्ये पानीयमुत्तरापोऽशनार्थं मुखप्रक्षालनार्थञ्च जलं समर्पयामि।'

पुष्पाञ्जलिः–'ॐ श्रीदक्षिणामूर्तिगुरवे नमः। श्रीदक्षिणामूर्तिगुरु-प्रीत्यर्थं मन्त्र-पुष्पं समर्पयामि।'

त्रिबीजागायत्रीब्रह्मविद्यामन्त्रदीक्षा

त्रिखण्डामुद्रया हस्ते पुष्पं गृहित्वा, ''श्रीदक्षिणामूर्तिगुरुमुखादागतः

ध्यान करें। *ध्यान*–'शान्तं...श्रीदक्षिणामूर्तिगुरुं स्मरामि॥२॥'का उच्चारण करके इस प्रकारसे ध्यान करके श्रीदक्षिणामूर्ति गुरुपादुका पर लिये हुए पुष्पका अर्पण करें।

गन्ध–'ॐ...समर्पयामि।'का उच्चारण कर गुरुपादुका पर गन्धका अर्पण करें। *पुष्प*–'ॐ...समर्पयामि।'का उच्चारण कर गुरुपादुका पर पुष्पका अर्पण करें। *धूप*–'ॐ...समर्पयामि।'का उच्चारण कर गुरुपादुकाको धूपका आघ्राण करावें। *दीप*–'ॐ...समर्पयामि।'का उच्चारण कर गुरुपादुकाको दीपका दर्शन करावें। *नैवेद्य*–'ॐ...समर्पयामि।'का उच्चारण कर गुरुपादुकाको नैवेद्यका निवेदन करें। बीचमें पानीय, बादमें पीने हेतु तथा मुख प्रक्षालनके लिए जलका समर्पण करें। *पुष्पाञ्जलि*–'ॐ...समर्पयामि।'का उच्चारण कर गुरुपादुका पर पुष्पोंका अर्पण करें।

श्रीत्रिबीजा गायत्री ब्रह्मविद्या मन्त्रकी दीक्षाविधि

त्रिखण्डा मुद्रासे हाथमें पुष्प लेकर, ''श्रीदक्षिणामूर्ति गुरुके मुखसे आया हुआ 'ॐ ह्रीं श्रीं' यह त्रिबीजा श्रीगायत्री ब्रह्मविद्याका मन्त्र मेरे कर्णमें प्रविष्ट हुआ और

'ॐ ह्रीं श्रीं' इति श्रीत्रिबीजागायत्रीब्रह्मविद्यामन्त्रो मत्कर्णे प्रविष्टो मया च हृदि धृतः'' एवं भावनां कृत्वा, गृहीतं पुष्पं स्वहृदि क्षणं संस्थाप्य, श्रीगायत्रीब्रह्मविद्यायाः स्वाभिन्नतया चिन्तनं कुर्यादिति।

न्यासः

विनियोगः–'ॐ अस्य श्रीत्रिबीजा-गायत्रीब्रह्मविद्या-मन्त्रस्य श्री-दक्षिणामूर्तिः ऋषिः, पङ्क्तिः छन्दः, श्रीगायत्रीब्रह्मविद्या देवता, ॐ बीजम्, ह्रीं शक्तिः, श्रीं कीलकम्, श्रीगायत्रीब्रह्मविद्या-प्रीत्यर्थं न्यासे विनियोगः।'

ऋष्यादिन्यासः–'श्रीदक्षिणामूर्तये ऋषये नमः' शिरसि। 'पङ्क्ति-च्छन्दसे नमः' मुखे। 'श्रीगायत्रीब्रह्मविद्यादेवतायै नमः' हृदि। 'ॐ बीजाय नमः' गुह्ये। 'ह्रीं शक्तये नमः' पादयोः। 'श्रीं कीलकाय नमः' नाभौ।

करन्यासः–'ॐ अङ्गुष्ठाभ्यां नमः। ह्रीं तर्जनीभ्यां नमः। श्रीं मध्यमाभ्यां नमः। ॐ अनामिकाभ्यां नमः। ह्रीं कनिष्ठिकाभ्यां नमः। श्रीं करतल-करपृष्ठाभ्यां नमः।'

हृदयादिन्यासः–'ॐ हृदयाय नमः। ह्रीं शिरसे स्वाहा। श्रीं

इसका मैंने हृदयमें धारण किया'' इस प्रकार भावना करके हाथमें लिये हुए पुष्पको अपने हृदयमें क्षणभर रख कर, श्रीगायत्री ब्रह्मविद्याका अभिन्न रूपसे चिन्तन करें।

न्यास

विनियोग–'ॐ अस्य...न्यासे विनियोगः।'का उच्चारण करके विनियोग करें।

ऋष्यादिन्यास–'श्रीदक्षिणामूर्तये ऋषये नमः'का उच्चारण कर शिर पर स्पर्श करनेकी भावना करें। इसी प्रकार नाभिस्थान पर्यन्त स्पर्श करनेकी भावना करें।

करन्यास–'ॐ अङ्गुष्ठाभ्यां नमः।'का उच्चारण करते हुए दोनों हाथोंकी अङ्गुष्ठाओंका अपनी-अपनी तर्जनी अङ्गुलियोंसे स्पर्श करें। इसी प्रकार अङ्गुष्ठाओंसे अपनी-अपनी अङ्गुलियोंका स्पर्श करते हुए करन्यास करें।

हृदयादिन्यास–'ॐ हृदयाय नमः'का उच्चारण कर हृदयका स्पर्श करें। 'ह्रीं शिरसे स्वाहा'का उच्चारण कर शिरका स्पर्श करें। 'श्रीं शिखायै वषट्'का उच्चारण

शिखायै वषट्। ॐ कवचाय हुम्। ह्रीं नेत्रत्रयाय वौषट्। श्रीं अस्त्राय फट्।'

अक्षरन्यासः–'ॐ नमः' पादादिनाभ्यन्तम्। 'ह्रीं नमः' नाभ्यादि-कण्ठान्तम्। 'श्रीं नमः' कण्ठादि-ब्रह्मरन्ध्रान्तम्।

एवं न्यासं कृत्वा पुनः निम्नलिखितविधिना श्रीदक्षिणामूर्तिगुरोः पूजनं कुर्यात्।

श्रीदक्षिणामूर्तिगुरुपूजनम्

आदौ हस्ते पुष्पं गृहीत्वा श्रीदक्षिणामूर्तिगुरोर्ध्यानं कुर्यात्।

ध्यानम्–

'शान्तं त्रिनेत्रं विधुकान्तिशुभ्रं
संविभ्रतं दोष्कशुभैश्चतुर्भिः।
मुक्ताक्षमालां कलशं सुधायाः
श्रीज्ञानमुद्रामपि पुस्तकञ्च।।१।।

कर शिखाका स्पर्श करें। 'ॐ कवचाय हुम्'का उच्चारण कर हाथोंसे कवच अर्थात् परस्पर एक दूसरे बाहुओंका स्पर्श करें। 'ह्रीं नेत्रत्रयाय वौषट्'का उच्चारण कर बीचकी तीन अङ्गुलियोंसे एक साथ दोनों नेत्र तथा भ्रूमध्यका स्पर्श करें। 'श्रीं अस्त्राय फट्'का उच्चारण कर बीचकी तीन अङ्गुलियोंको शिरके चारों ओर घूमा कर उनसे दूसरी हथेली पर ताड़न करें।

अक्षरन्यास–'ॐ नमः'का उच्चारण कर पैरसे लेकर नाभि तकके स्थानोंका स्पर्श करनेकी भावना करें। 'ह्रीं नमः'का उच्चारण करते हुए नाभिसे लेकर कण्ठ तकके स्थानोंका स्पर्श करनेकी भावना करें। 'श्रीं नमः'का उच्चारण करते हुए कण्ठसे लेकर ब्रह्मरन्ध्र तकके स्थानोंका स्पर्श करनेकी भावना करें।

इस प्रकारसे न्यास करके फिर निम्नलिखित विधिसे श्रीदक्षिणामूर्ति गुरुका पूजन करें।

श्रीदक्षिणामूर्ति गुरुका पूजन

पहले हाथमें पुष्प लेकर श्रीदक्षिणामूर्ति गुरुका ध्यान करें। *ध्यान*–'शान्तं...श्रीदक्षिणामूर्तिगुरुं स्मरामि।।२।।'का उच्चारण करके इस प्रकारसे ध्यान करके

दिव्याम्बरं चन्दनगन्धलेपैः
समुज्ज्वलाङ्गं मणिरत्नकैश्च।
वीरासनस्थञ्च शशाङ्कचूडं
श्रीदक्षिणामूर्तिगुरुं स्मरामि॥२॥'

एवं ध्यानं कृत्वा श्रीदक्षिणामूर्तिगुरुपादुकायां हस्तगृहीतं पुष्पमर्पयेत्।

गन्धम्–'ॐ ह्रीं श्रीं श्रीदक्षिणामूर्तिगुरवे नमः। श्रीदक्षिणामूर्तिगुरु-प्रीत्यर्थं गन्धं समर्पयामि।'

पुष्पम्–'ॐ ह्रीं श्रीं श्रीदक्षिणामूर्तिगुरवे नमः। श्रीदक्षिणामूर्ति-गुरु-प्रीत्यर्थं पुष्पं समर्पयामि।'

धूपः–'ॐ ह्रीं श्रीं श्रीदक्षिणामूर्तिगुरवे नमः। श्रीदक्षिणामूर्ति-गुरु-प्रीत्यर्थं धूपमाघ्रापयामि।'

दीपः–'ॐ ह्रीं श्रीं श्रीदक्षिणामूर्तिगुरवे नमः। श्रीदक्षिणामूर्ति-गुरु-प्रीत्यर्थं दीपं दर्शयामि।'

नैवेद्यम्–'ॐ ह्रीं श्रीं श्रीदक्षिणामूर्तिगुरवे नमः। श्रीदक्षिणामूर्तिगुरु-प्रीत्यर्थं नैवेद्यं निवेदयामि। मध्ये पानीयमुत्तरापोऽशनार्थं मुखप्रक्षालनार्थञ्च जलं समर्पयामि।'

जपविधिः

श्रीदक्षिणामूर्ति गुरुकी पादुका पर हाथमें लिये हुए पुष्पका अर्पण करें।

गन्ध–'ॐ ह्रीं श्रीं ... समर्पयामि।'का उच्चारण कर गुरुपादुका पर गन्धका अर्पण करें। *पुष्प*–'ॐ ह्रीं श्रीं ... समर्पयामि।'का उच्चारण कर गुरुपादुका पर पुष्पका अर्पण करें। *धूप*–'ॐ ह्रीं श्रीं ... समर्पयामि।'का उच्चारण कर गुरुपादुकाको धूपका आघ्राण करावें। *दीप*–'ॐ ह्रीं श्रीं ... समर्पयामि।'का उच्चारण कर गुरुपादुकाको दीपका दर्शन करावें। *नैवेद्य*–'ॐ ह्रीं श्रीं ... समर्पयामि।'का उच्चारण कर गुरुपादुकाको नैवेद्यका निवेदन करें। बीचमें पानीय, बादमें पीने हेतु तथा मुख प्रक्षालनके लिए जलका समर्पण करें।

जपविधि

विनियोगः–'ॐ अस्य श्रीगायत्रीब्रह्मविद्यामन्त्रस्य श्रीदक्षिणामूर्तिः ऋषिः, पङ्क्तिः छन्दः, श्रीगायत्रीब्रह्मविद्या देवता, ॐ बीजम्, ह्रीं शक्तिः, श्रीं कीलकम्, श्रीगायत्रीब्रह्मविद्या-प्रीत्यर्थं जपे विनियोगः।'

ऋष्यादिन्यासः–'श्रीदक्षिणामूर्तये ऋषये नमः' शिरसि। 'पङ्क्ति-च्छन्दसे नमः' मुखे। 'श्रीगायत्रीब्रह्मविद्यादेवतायै नमः' हृदि। 'ॐ बीजाय नमः' गुह्ये। 'ह्रीं शक्तये नमः' पादयोः। 'श्रीं कीलकाय नमः' नाभौ।

करन्यासः–'ॐ अङ्गुष्ठाभ्यां नमः। ह्रीं तर्जनीभ्यां नमः। श्रीं मध्यमाभ्यां नमः। ॐ अनामिकाभ्यां नमः। ह्रीं कनिष्ठिकाभ्यां नमः। श्रीं करतल-करपृष्ठाभ्यां नमः।'

हृदयादिन्यासः–'ॐ हृदयाय नमः। ह्रीं शिरसे स्वाहा। श्रीं शिखायै वषट्। ॐ कवचाय हुम्। ह्रीं नेत्रत्रयाय वौषट्। श्रीं अस्त्राय फट्।'

अक्षरन्यासः–'ॐ नमः' पादादिनाभ्यन्तम्। 'ह्रीं नमः' नाभ्यादि-

विनियोग–'ॐ अस्य...जपे विनियोगः।'का उच्चारण करके विनियोग करें।

ऋष्यादिन्यास–'श्रीदक्षिणामूर्तये ऋषये नमः'का उच्चारण कर शिर पर स्पर्श करनेकी भावना करें। इसी प्रकार नाभिस्थान पर्यन्त स्पर्श करनेकी भावना करें।

करन्यास–'ॐ अङ्गुष्ठाभ्यां नमः।'का उच्चारण करते हुए दोनों हाथोंकी अङ्गुष्ठाओंका अपनी-अपनी तर्जनी अङ्गुलियोंसे स्पर्श करें। इसी प्रकार अङ्गुष्ठाओंसे अपनी-अपनी अङ्गुलियोंका स्पर्श करते हुए करन्यास करें।

हृदयादिन्यास–'ॐ हृदयाय नमः'का उच्चारण कर हृदयका स्पर्श करें। 'ह्रीं शिरसे स्वाहा'का उच्चारण कर शिरका स्पर्श करें। 'श्रीं शिखायै वषट्'का उच्चारण कर शिखाका स्पर्श करें। 'ॐ कवचाय हुम्'का उच्चारण कर हाथोंसे कवच अर्थात् परस्पर एक दूसरे बाहुओंका स्पर्श करें। 'ह्रीं नेत्रत्रयाय वौषट्'का उच्चारण कर बीचकी तीन अङ्गुलियोंसे एक साथ दोनों नेत्र तथा भ्रूमध्यका स्पर्श करें। 'श्रीं अस्त्राय फट्'का उच्चारण कर बीचकी तीन अङ्गुलियोंको शिरके चारों ओर घूमा कर उनसे दूसरी हथेली पर ताड़न करें।

अक्षरन्यास–'ॐ नमः'का उच्चारण कर पैरसे लेकर नाभि तकके स्थानोंका

कण्ठान्तम्। 'श्रीं नमः' कण्ठादि-ब्रह्मरन्ध्रान्तम्।

जपादौ मालापूजनम्

पूजनम्–'ॐ माले माले महामाले सर्वतत्त्वस्वरूपिणि। चतुर्वर्गः त्वयि न्यस्तः तस्मान्मे सिद्धिदा भव।। ॐ ह्रीं मालायै नमः।' इत्यनेन मालां दक्षिणकरे निधाय, हृत्प्रदेशे समानीय, शिरसि धृत्वा, ततः पात्रे धृत्वा, 'ॐ ह्रीं सिद्ध्यै नमः।' इतिमन्त्रेण मालां गन्धादिभिः सम्पूज्य प्रार्थयेत्। *प्रार्थना*–'त्वं माले सर्वभूतानां सर्वलोकप्रिया मता। शिवं कुरुष्व मे भद्रे यशो वीर्यं च देहि मे।।'

जपः

'ॐ ह्रीं श्रीं' इति त्रिबीजात्मकं श्रीगायत्रीब्रह्मविद्या-मन्त्रमष्टोत्तरशत-सङ्ख्याकं (१०८) जपेत्।

जपान्ते मालापूजनम्

पूजनम्–'ॐ ह्रीं मालायै नमः।' इतिमन्त्रेण मालां गन्धादिभिः

स्पर्श करनेकी भावना करें। 'ह्रीं नमः'का उच्चारण करते हुए नाभिसे लेकर कण्ठ तकके स्थानोंका स्पर्श करनेकी भावना करें। 'श्रीं नमः'का उच्चारण करते हुए कण्ठसे लेकर ब्रह्मरन्ध्र तकके स्थानोंका स्पर्श करनेकी भावना करें।

जपके प्रारम्भमें मालापूजन

पूजनम्–'ॐ माले...नमः।'का उच्चारण करते हुए मालाको दायें हाथमें रखकर, हृदय प्रदेशमें लाकर, शिर पर रखकर उसके बाद पात्रमें रखकर 'ॐ ह्रीं सिद्ध्यै नमः।' इस मन्त्रसे गन्ध आदि पदार्थोंसे मालाका पूजन करके प्रार्थना करें। *प्रार्थना*–'त्वं...देहि मे।।'का उच्चारण करके मालाकी प्रार्थना करें।

जप

'ॐ ह्रीं श्रीं' इस त्रिबीजात्मक श्रीगायत्री ब्रह्मविद्या मन्त्रका एक सौ आठ बार जप करें।

जपके अन्तमें मालापूजन

पूजनम्–'ॐ ह्रीं मालायै नमः।' इस मन्त्रसे गन्ध आदि पदार्थोंसे मालाका पूजन करके प्रार्थना करें। *प्रार्थना*–'त्वं माले ... सुरेश्वरि।।'का उच्चारण करके मालाकी

सम्पूज्य प्रार्थयेत्।

प्रार्थना–'त्वं माले सर्वदेवानां सर्वसिद्धिप्रदा मता। तेन सत्येन मे सिद्धिं देहि मातर्नमोऽस्तु ते।। गुह्यातिगुह्यगोप्त्री त्वं गृहाणास्मत्कृतं जपम्। सिद्धिर्भवतु मे देवि त्वत्प्रसादात् सुरेश्वरि।।'

कर्पूरार्तिक्यम्

'ॐ ह्रीं श्रीं श्रीदक्षिणामूर्तिगुरवे नमः। श्रीदक्षिणामूर्तिगुरु-प्रीत्यर्थं कर्पूरार्तिक्यं दीपं दर्शयामि।'

पुष्पाञ्जलिः

'।। ॐ ह्रीं श्रीं श्रीदक्षिणामूर्तिगुरवे नमः ।।

होत्राग्नि-हौत्राग्नि-हविष्य-होतृ-

होमादि-सर्वाकृति-भासमानम्।

यद्ब्रह्मतद्बोधवितारिणीभ्यां

नमो नमः श्रीगुरुपादुकाभ्याम्।।'

इति मन्त्रेण श्रीदक्षिणामूर्तिगुरुपादुकायां पुष्पाञ्जलिमर्पयेत्।

देवगणप्रत्यागमनम्

पूजनान्ते श्रीदक्षिणामूर्तिगुरुपादुकां विहाय सर्वेषां देवगणानां

प्रार्थना करें।

कर्पूरकी आरती

'ॐ ... दीपं दर्शयामि।'का उच्चारण करके श्रीदक्षिणामूर्ति गुरुकी प्रसन्नताके लिए कर्पूरकी आरती करें।

पुष्पाञ्जलि

'ॐ ह्रीं श्रीं ... श्रीगुरुपादुकाभ्याम्।।'का उच्चारण करके श्रीदक्षिणामूर्ति गुरुकी पादुका पर पुष्पाञ्जलिका अर्पण करें।

देवगणका प्रत्यागमन

पूजाके अन्तमें श्रीदक्षिणामूर्ति गुरुकी पादुकाको छोड़कर सभी देवगणोंका

प्रत्यागमनं यथास्थानं कारयेत्।

अक्षतक्षेपणम्–'यान्तु देवगणाः सर्वे पूजामादाय पार्थिवीम्। इष्टकामसमृद्ध्यर्थं पुनरागमनाय च।।' इति मन्त्रेणाक्षतक्षेपणेन सर्वदेवानां प्रत्यागमनं कारयेत्। इति शिवम्।।

।। दीक्षात्मकं सपर्याखण्डं सम्पूर्णम् ।।

प्रत्यागमन यथास्थान करावें।

अक्षतक्षेपण–'यान्तु देवगणाः...पुनरागमनाय च।।'का उच्चारण करके देवगणों पर अक्षत छोड़ते हुए सभी देवगणोंका प्रत्यागमन करावें।। इति शिवम्।।

।। दीक्षात्मक सपर्याखण्ड सम्पूर्ण ।।

।।श्रीः।।

श्रीविद्यान्तर्गता

गायत्री ब्रह्मविद्या

सविमर्श-'प्रह्लाद'हिन्दीव्याख्यासहिता

(पूजात्मकं सपर्याखण्डम्)

❖❖❖

चक्रपूजाविधिः

अनुष्ठातृपुरुषशुद्धिः

गायत्री ब्रह्मविद्या (सपर्याखण्डम्)—श्रीविद्याके अन्तर्गत श्रीगायत्री ब्रह्मविद्याका निरूपण किया गया है। यह ग्रन्थ दो खण्डोंमें प्रस्तुत है। प्रथम खण्ड है– 'ज्ञानखण्डम्' तथा द्वितीय खण्ड है–'सपर्याखण्डम्'। 'सपर्याखण्डम्' दीक्षात्मक, पूजात्मक तथा वन्दनात्मक है। प्रस्तुत खण्ड 'पूजात्मक सपर्याखण्ड'के रूपमें जाना जाता है। पूजात्मक सपर्याखण्डमें श्रीगायत्री ब्रह्मविद्या परम्पराके अन्तर्गत जो साधक सद्गुरुओंके द्वारा श्रीगायत्री ब्रह्मविद्या मन्त्रसे दीक्षित हैं अथवा 'दीक्षात्मक सपर्याखण्ड'में निर्दिष्ट दीक्षाविधिसे दीक्षित हुए हैं उनके लिए श्रीगायत्री ब्रह्मविद्या चक्रके पूजनका उल्लेख किया गया है।

चक्रपूजाविधि

परमेश्वरकी पारमेश्वरी भगवती श्रीगायत्री ब्रह्मविद्याके पूजनका सर्वश्रेष्ठ साधन श्रीयन्त्र है। श्रीचक्रात्मक श्रीयन्त्रके माध्यमसे श्रीगायत्री ब्रह्मविद्या चक्रका पूजन किया जाता है। श्रीचक्र दशचक्रात्मक है। श्रीगायत्री ब्रह्मविद्या मन्त्रकी उपासनाकी परम्परामें ग्यारह आवरणोंकी पूजा श्रीचक्रमें की जाती है।

अनुष्ठान करनेवाले साधककी शुद्धि–नित्यक्रिया करके साधक अनुष्ठानका

कृतनित्यक्रियः पुरुषोऽनुष्ठानं समारभेत्। *आचमनम्*–'ॐ विष्णुः। ॐ विष्णुः। ॐ विष्णुः।' *शिखाबन्धनम्*–'ॐ ह्रीं'। *प्राणायामः*–'ॐ ह्रीं श्रीं' इति मन्त्रेण वामनासया वायुमापूर्य, कुम्भके वारचतुष्टयं मन्त्रं पठित्वा, वारद्वयं मन्त्रमुच्चरन् दक्षनासया रेचयेत्। *सेकः*–'ॐ अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थाङ्गतोऽपि वा। यः स्मरेत् पुण्डरीकाक्षं स बाह्याभ्यन्तरः शुचिः।। इति सर्वं शुचि।'

सङ्कल्पः

'ॐ श्रीगणेशाय नमः। गजाननम्भूतगणादिसेवितं कपित्थ-जम्बू-फलचारुभक्षणम्। उमासुतं शोकविनाशकारकं नमामि विघ्नेश्वर-पाद-पङ्कजम्।। श्रीमन्महागणाधिपतये नमः।। शुक्लाम्बरधरं विष्णुं शशिवर्णं चतुर्भुजम्। प्रसन्नवदनं ध्यायेत् सर्वविघ्नोपशान्तये।। ॐ विष्णवे नमः। ॐ विष्णवे नमः। ॐ विष्णवे नमः। ॐ अद्य ब्रह्मणोऽह्नि द्वितीय-परार्धे श्रीश्वेतवाराहकल्पे वैवस्वतमन्वन्तरेऽष्टाविंशतितमे कलियुगे कलिप्रथमचरणे बौद्धावतारे भूर्लोके जम्बूद्वीपे भरतखण्डे भारतवर्षे ... नामकक्षेत्रे ... नामकसंवत्सरे ... मासे ... पक्षे ... तिथौ ... वासरे ... काले ... गोत्रीयः/गोत्रीया ... अहं श्रीगायत्रीब्रह्मविद्या-प्रीत्यर्थं श्रीगायत्री-ब्रह्मविद्या-चक्रपूजनं करिष्ये।'

पृथ्वीशोधनम्

प्रारम्भ करें। *आचमन*–'ॐ...विष्णुः।'का उच्चारण कर आचमन करें। *शिखाबन्धन*–'ॐ ह्रीं'का उच्चारण कर शिखाका बन्धन करें। *प्राणायाम*–श्रीत्रिबीजा गायत्री ब्रह्मविद्या मन्त्र 'ॐ ह्रीं श्रीं'का मानसिक उच्चारण करते हुए वायें नाकके छिद्रसे वायुको भर कर, कुम्भकमें चार वार मन्त्रको पढकर, दो वार मन्त्रका उच्चारण करते हुए दायें नाकके छिद्रसे छोडें। *सेक*–'ॐ...शुचि।'का उच्चारण करते हुए अपने ऊपर जल छिड़कें।

सङ्कल्प

'ॐ श्रीगणेशाय ... करिष्ये।'का उच्चारण करके सङ्कल्प करें।

पृथ्वीशोधन

कल्पितासनाधो जलादिना त्रिकोणं विलिखेत्। *विनियोगः*–'ॐ पृथ्वि त्वया धृता लोका देवि त्वं विष्णुनोद्धृता। त्वं च धारय मां नित्यं पवित्रं कुरु चासनम्।। इतिमन्त्रस्य मेरुपृष्ठः ऋषिः, सुतलं छन्दः, कूर्मो देवता, आसने विनियोगः।' *ध्यानम्*–'ॐ चतुर्भुजां शुक्लवर्णां कूर्मपृष्ठोपरि स्थिताम्। प्रसन्नवदनां चक्रशूलशङ्खं प्रधारिणीम्।।' *आवाहनम्*–'ॐ आगच्छ सर्वकल्याणि वसुधे लोकधारिणि। पृथिवि लोकदत्तासि काश्यपेनाभिवन्दिते।। ॐ ह्रीं आधार-शक्तिकमलासनाय नमः। ॐ पृथिव्यै नमः।' *पृथ्वीस्पर्शनम्*–'ॐ पृथ्वि त्वया धृता लोका देवि त्वं विष्णुनोद्धृता। त्वं च धारय मां नित्यं पवित्रं कुरु चासनम्।।' इति गन्धादिभिः सम्पूजयेत्। *प्रणमनम्*–'ॐ उद्धृतासि वराहेण कृष्णेन शतबाहुना। दंष्ट्राग्रैर्लीलया देवि यज्ञार्थं प्रणमाम्यहम्।।'

स्थलशुद्धिः

चतुर्दिक्षु अक्षतक्षेपणम्–'ॐ अपसर्पन्तु ते भूता ये भूता भुवि संस्थिताः। ये भूता विघ्नकर्तारस्ते नश्यन्तु शिवाज्ञया।। अपक्रामन्तु भूतानि पिशाचाः सर्वतो दिशम्। सर्वेषामविरोधेन पूजाकर्म समारभेत्।।'

दीपस्थापनम्

कर्मसाक्षित्वेन दीपस्थापनं कुर्यात्। दीपविधानं यथाः–घृतदीपो

कल्पित आसनके नीचे जल आदि पदार्थोंसे एक त्रिकोणका विलेखन करें। *विनियोग*–'ॐ ... विनियोगः।'का उच्चारण कर विनियोग करें। *ध्यान*–'ॐ चतुर्भुजां...प्रधारिणीम्।।'का उच्चारण कर देवी पृथ्वीका ध्यान करें। *आवाहन*–'ॐ आगच्छ...नमः।'का उच्चारण कर देवी पृथ्वीका आवाहन करें। *पृथ्वीस्पर्शन*–'ॐ पृथ्वि...चासनम्।।'का उच्चारण कर पृथ्वीका स्पर्श करके गन्ध आदि पदार्थोंसे देवी पृथ्वीका पूजन करें। *प्रणमन*–'ॐ...प्रणमाम्यहम्।।'का उच्चारण करके देवी पृथ्वीको प्रणाम करें।

स्थलशुद्धि

'ॐ अपसर्पन्तु...समारभेत्।।'का उच्चारण करते हुए चारों दिशाओंमें अक्षत फेंके।

दीपस्थापन

भवेद् दक्षे तैलदीपस्तु वामतः। सितवर्तिर्भवेद् दक्षे रक्तवर्तिस्तु वामतः।। इति। *प्राणायामः*–'ॐ ह्रीं श्रीं' इति मन्त्रेणाचम्य, प्राणानायम्य प्रणवेन पूरकं (३२) द्वात्रिंशद्धा, कुम्भकं (६४) चतुःषष्ट्या, रेचकं क्रमात् (१६) षोडश-सङ्ख्यया कुर्यात्। तत्र दीपाधारयन्त्रं गन्धेन देवीदक्षिणतः त्रिकोणं विलिख्य, 'ॐ दीपाधारयन्त्राय नमः।' इति मन्त्रेण सम्पूज्य, तदुपरि घृतदीपं संस्थाप्य, गन्धादिना सम्पूज्य प्रार्थयेत्। *प्रार्थना*–'ॐ भो दीप देवीरूपस्त्वं कर्मसाक्षी ह्यविघ्नकृत्। यावत्कर्मसमाप्तिः स्यात् तावत् त्वं सुस्थिरो भव।।'

मालापूजनम्

'ॐ माले माले महामाले सर्वतत्त्वस्वरूपिणि। चतुर्वर्गः त्वयि न्यस्तः तस्मान्मे सिद्धिदा भव।। ॐ ह्रीं मालायै नमः।' इत्यनेन मालां दक्षिणकरे निधाय, हृत्प्रदेशे समानीय, शिरसि धृत्वा, ततः पात्रे धृत्वा, 'ॐ ह्रीं सिद्ध्यै नमः।' इतिमन्त्रेण मालां गन्धादिभिः सम्पूज्य प्रार्थयेत्। *प्रार्थना*–'त्वं माले सर्वभूतानां सर्वलोकप्रिया मता। शिवं कुरुष्व मे भद्रे यशो वीर्यं च देहि मे।।'

कर्मके साक्षीके रूपमें दीपका स्थापन करें। देवीके दायें घीके दीपकमें सफेद वती तथा वायें तेलके दीपकमें लाल वती डालकर जलावें। *प्राणायाम*–'ॐ ह्रीं श्रीं'का उच्चारण कर आचमन तथा प्राणायाम करके 'ॐ'का बत्तीस वार उच्चारण करते हुए पूरक करें, चौंषठ वार उच्चारण कुम्भकमें तथा षोलह वार रेचकमें करें। देवीके दायें गन्धसे त्रिकोणाकार दीपाधार-यन्त्रका विलेखन करके 'ॐ दीपाधार-यन्त्राय नमः।' इस मन्त्रसे उसका पूजन करके उस पर घीके दीपको स्थापित करके गन्ध आदि पदार्थोंसे उसकी पूजा कर प्रार्थना करें। *प्रार्थना*–'ॐ...भव।।'का उच्चारण करते हुए दीपकी प्रार्थना करें।

मालापूजन

'ॐ माले...नमः।'का उच्चारण करते हुए मालाको दायें हाथमें रखकर, हृदय प्रदेशमें लाकर, शिर पर रखकर उसके बाद पात्रमें रखकर 'ॐ...नमः।' इस मन्त्रसे गन्ध आदि पदार्थोंसे मालाका पूजन कर प्रार्थना करें। *प्रार्थना*–'त्वं...देहि मे।।'का उच्चारण करके मालाकी प्रार्थना करें।

विघ्नोत्सारणमात्मरक्षणञ्च

"ॐ ह्रीं श्रीं' इति दिव्य-दृष्ट्यावलोकनेन दिव्यान् विघ्नान् उत्सारयामि। 'ॐ फट्' इति प्रोक्षणेनान्तरिक्षान् विघ्नान् उत्सारयामि। 'ॐ फट्' इति वामपादपार्ष्णिघातेन भौमान् विघ्नान् उत्सारयामि। 'ॐ अस्त्राय फट्' इति तालत्रयेण दिग्बन्धनं करोमि।"

अन्तर्मातृकान्यासः

विनियोगः–'ॐ अस्य अन्तर्मातृकान्यासस्य ब्रह्मा ऋषिः, गायत्री छन्दः, मातृकासरस्वती देवता, हलो बीजानि, स्वराः शक्तयः, लं कीलकम्, मातृकान्यासे विनियोगः। ॐ अं नमः। ॐ आं नमः। ॐ इं नमः। ॐ ईं नमः। ॐ उं नमः। ॐ ऊं नमः। ॐ ऋं नमः। ॐ ॠं नमः। ॐ ऌं नमः। ॐ ॡं नमः। ॐ एं नमः। ॐ ऐं नमः। ॐ ओं नमः। ॐ औं नमः। ॐ अं नमः। ॐ अः नमः। ॐ कं नमः। ॐ खं नमः। ॐ गं नमः। ॐ घं नमः। ॐ ङं नमः। ॐ चं नमः। ॐ छं नमः। ॐ जं नमः। ॐ झं नमः। ॐ ञं नमः। ॐ टं नमः। ॐ ठं नमः। ॐ डं नमः। ॐ ढं नमः। ॐ णं नमः। ॐ तं नमः। ॐ थं नमः। ॐ दं

विघ्नोत्सारण तथा आत्मरक्षण

"ॐ ह्रीं श्रीं' इति दिव्यदृष्ट्यावलोकनेन दिव्यान् विघ्नान् उत्सारयामि।'का उच्चारण करते हुए 'मैं दिव्यदृष्टिके द्वारा अवलोकनमात्रसे ही दिव्य विघ्नोंका उत्सारण करता हूँ।' इस प्रकारसे चिन्तन करें। "ॐ फट्' इति प्रोक्षणेनान्तरिक्षान् विघ्नान् उत्सारयामि।"का उच्चारण करते हुए 'मैं प्रोक्षणके द्वारा अन्तरिक्ष विघ्नोंका उत्सारण करता हूँ।' इस प्रकारसे चिन्तन करें। "ॐ फट्' इति वामपाद-पार्ष्णिघातेन भौमान् विघ्नान् उत्सारयामि।"का उच्चारण करते हुए 'मैं वाम पादके पार्ष्णिघातसे भौम विघ्नोंका उत्सारण करता हूँ।' इस प्रकारसे चिन्तन करें। "ॐ अस्त्राय फट्' इति तालत्रयेण दिग्बन्धनं करोमि।'का उच्चारण करते हुए 'मैं तीन वार ताल बजाकर दिशाओंका बन्धन कता हूँ।' इस प्रकारसे चिन्तन करें।

अन्तर्मातृकान्यास

विनियोग–'ॐ अस्य ... ॐ क्षं नमः।'का उच्चारण करके विनियोग करें।

नमः। ॐ धं नमः। ॐ नं नमः। ॐ पं नमः। ॐ फं नमः। ॐ बं नमः। ॐ भं नमः। ॐ मं नमः। ॐ यं नमः। ॐ रं नमः। ॐ लं नमः। ॐ वं नमः। ॐ शं नमः। ॐ षं नमः। ॐ सं नमः। ॐ हं नमः। ॐ क्षं नमः।'

भूतशुद्धिः

पृथिवीतत्त्वम्—पादादिजानुपर्यन्तं पृथिवीस्थानम्, चतुरस्रं चतुर्दिक्षु लाञ्छितम्, तन्मध्ये पीतवर्णं लंबीजयुक्तं ध्यायेत्। 'लं भूम्यै नमः।'

जलतत्त्वम्—जान्वादि-नाभिपर्यन्तमपां स्थानम्, धनुराकारमुभयोः कोट्योः श्वेतपद्मलाञ्छितम्, तन्मध्ये श्वेतवर्णं वंबीजयुक्तं ध्यायेत्। 'वं अद्भ्यो नमः।'

अग्नितत्त्वम्—नाभ्यादि-हृदयपर्यन्तमग्निस्थानम्, त्रिकोणं स्वस्तिक-लाञ्छितम्, तन्मध्ये रक्तवर्णं रंबीजयुक्तं ध्यायेत्। 'रं अग्नये नमः।'

वायुतत्त्वम्—हृदयादि-भ्रूमध्यपर्यन्तं वायुस्थानम्, षट्कोणं षड्-बिन्दु-लाञ्छितम्, तन्मध्ये धूम्रवर्णं यंबीजयुक्तं ध्यायेत्। 'यं वायवे

भूतशुद्धि

पञ्च महाभूतोंसे निर्मित अपने शरीरके विशिष्ट स्थानों पर पञ्च महाभूतोंकी क्रमसे शुद्धि करें।

पृथिवीतत्त्व—पाद आदिसे जानु पर्यन्त पृथिवीका स्थान, चतुरस्राकार, चारों दिशाओंसे चिह्नित है। उसके मध्यमें 'लं' बीजसे युक्त पीतवर्ण पृथिवी तत्त्वका ध्यान करें। 'लं भूम्यै नमः।'का उच्चारण कर पृथिवी तत्त्वका ध्यान करें।

जलतत्त्व—जानु आदिसे नाभि पर्यन्त जलका स्थान, धनुषाकार, दोनों कोटियाँ श्वेत पद्मसे चिह्नित हैं। उसके मध्यमें 'वं' बीजसे युक्त श्वेतवर्ण जल तत्त्वका ध्यान करें। 'वं अद्भ्यो नमः।'का उच्चारण कर जल तत्त्वका ध्यान करें।

अग्नितत्त्व—नाभि आदिसे हृदय पर्यन्त अग्निका स्थान, त्रिकोणाकार, स्वस्तिक चिह्नसे चिह्नित है। उसके मध्यमें 'रं' बीजसे युक्त रक्तवर्ण अग्नि तत्त्वका ध्यान करें। 'रं अग्नये नमः।'का उच्चारण कर अग्नि तत्त्वका ध्यान करें।

वायुतत्त्व—हृदय आदिसे भ्रूमध्य पर्यन्त वायुका स्थान, षट्कोणाकार, षट्

नमः।'

आकाशतत्त्वम्–भ्रूमध्यादि-ब्रह्मरन्ध्रपर्यन्तमाकाशस्थानम्, वृत्ताकारं ध्वजलाञ्छितम्, तन्मध्ये नीलवर्णं हंबीजयुक्तं ध्यायेत्। 'हं आकाशाय नमः।'

प्रविलापनम्

'पृथिवीं पञ्चगुणां लंबीजेन षडुद्घातप्रयोगेण अप्सु प्रविलापयामि। लं लं लं लं लं लं। चतुर्गुणा अपः वंबीजेन पञ्चोद्घातप्रयोगेण अग्नौ प्रविलापयामि। वं वं वं वं वं। त्रिगुणं वह्निं रंबीजेन चतुरुद्घातप्रयोगेण वायौ प्रविलापयामि। रं रं रं रं। द्विगुणं वायुं यंबीजेन त्रिरुद्घात-प्रयोगेण आकाशे प्रविलापयामि। यं यं यं। एकगुणमाकाशं हंबीजेन द्विरुद्घातप्रयोगेण अहङ्कारे प्रविलापयामि। हं हं। तमहङ्कारं महत्तत्त्वे

बिन्दुओंसे चिह्नित है। उसके मध्यमें 'यं' बीजसे युक्त धूम्रवर्ण वायु तत्त्वका ध्यान करें। 'यं वायवे नमः।'का उच्चारण कर वायु तत्त्वका ध्यान करें।

आकाशतत्त्व–भ्रूमध्य आदिसे ब्रह्मरन्ध्र पर्यन्त आकाशका स्थान, वृत्ताकार, ध्वजसे चिह्नित है। उसके मध्यमें 'हं' बीजसे युक्त नीलवर्ण आकाश तत्त्वका ध्यान करें। 'हं आकाशाय नमः।'का उच्चारण कर आकाश तत्त्वका ध्यान करें।

प्रविलापन

'पृथिवीं...लं।'का उच्चारण करते हुए 'मैं पाँच गुणवाले पृथ्वी-तत्त्वका 'लं' बीजके द्वारा छह उद्घातके प्रयोगसे जल-तत्त्वमें प्रविलापन करता हूँ।' इस प्रकार चिन्तन करके छह वार 'लं' बीजका उच्चारण करें। 'चतुर्गुणा अपः...वं।'का उच्चारण करते हुए 'मैं चार गुणवाले जल-तत्त्वका 'वं' बीजके द्वारा पाँच उद्घातके प्रयोगसे अग्नि-तत्त्वमें प्रविलापन करता हूँ।' इस प्रकार चिन्तन करके पाँच वार 'वं' बीजका उच्चारण करें। 'त्रिगुणं...रं।'का उच्चारण करते हुए 'मैं तीन गुणवाले अग्नि-तत्त्वका 'रं' बीजके द्वारा चार उद्घातके प्रयोगसे वायु-तत्त्वमें प्रविलापन करता हूँ।' इस प्रकार चिन्तन करके चार वार 'रं' बीजका उच्चारण करें। 'द्विगुणं...यं।'का उच्चारण करते हुए 'मैं दो गुणवाले वायु-तत्त्वका 'यं' बीजके द्वारा तीन उद्घातके प्रयोगसे आकाश-तत्त्वमें प्रविलापन करता हूँ।' इस प्रकार चिन्तन करके तीन वार 'यं' बीजका उच्चारण करें। 'एकगुण...हं।'का उच्चारण करते हुए 'मैं एक गुणवाले आकाश-तत्त्वका 'हं' बीजके द्वारा दो उद्घातके प्रयोगसे अहङ्कार-तत्त्वमें प्रविलापन करता

प्रविलापयामि। तन्महत्तत्त्वं प्रकृतौ प्रविलापयामि। तां प्रकृतिं परब्रह्मणि प्रविलापयामि।' इति प्रविलाप्य, 'शुद्धोऽहम्, मुक्तोऽहम्, सच्चिदानन्द-स्वरूपोऽहम्, ब्रह्माहमस्मि।' इति चिरं भावयेत्। 'तस्मात् सर्वज्ञात् सर्वशक्तेः परब्रह्मणः सकाशात् प्रकृतिः, प्रकृतेर्महान्, महतोऽहङ्कारः, अहङ्कारादाकाशः, आकाशाद् वायुः, वायोरग्निः, अग्नेरापः, अद्भ्यः पृथिवी, पृथिव्या ओषधयः, ओषधिभ्योऽन्नम्, अन्नाद् रेतः, रेतसः पुरुषः, स वा एष पुरुषोऽन्नरसमयः।' इति देहोत्पत्तिं विभाव्य पुनः जीवात्मानं 'हंसः' इति मन्त्रेण अङ्कुशमुद्रया सुषुम्नानाडीमार्गेण ब्रह्म-रन्ध्रादानीय हृदि प्रतिष्ठापयेत्। 'हंसः सोऽहम्।' इति।

न्यासः

विनियोगः–'ॐ अस्य श्रीत्रिबीजा-गायत्रीब्रह्मविद्यामन्त्रस्य श्री-दक्षिणामूर्तिः ऋषिः, पङ्क्तिः छन्दः, श्रीगायत्रीब्रह्मविद्या देवता, ॐ बीजम्, ह्रीं शक्तिः, श्रीं कीलकम्, श्रीगायत्रीब्रह्मविद्या-प्रीत्यर्थं न्यासे

हूँ।' इस प्रकार चिन्तन करके दो वार 'हं' बीजका उच्चारण करें। 'तम् अहङ्कारं...प्रविलापयामि।'का उच्चारण करते हुए 'मैं उस अहङ्कार-तत्त्वका महत्-तत्त्वमें प्रविलापन करता हूँ।' इस प्रकार चिन्तन करें। 'तन्...प्रविलापयामि'का उच्चारण करते हुए 'मैं उस महत्-तत्त्वका प्रकृति-तत्त्वमें प्रविलापन करता हूँ।' इस प्रकार चिन्तन करें। 'तां...प्रविलापयामि।'का उच्चारण करते हुए 'मैं उस प्रकृति-तत्त्वका परब्रह्ममें प्रविलापन करता हूँ।' इस प्रकार चिन्तन करें। इस प्रकार प्रविलापन करके 'शुद्धो ...ब्रह्माहमस्मि।'का उच्चारण करते हुए 'मैं शुद्ध हूँ, मैं मुक्त हूँ, मैं सच्चिदानन्दस्वरूप हूँ, मैं ब्रह्म हूँ।' इस प्रकार देर तक चिन्तन करें। 'तस्मात् ... रसमयः।'का उच्चारण करते हुए 'उस सर्वज्ञ सर्वशक्तिमान् परब्रह्मसे उसकी प्रकृति, प्रकृतिसे महान्, महान्‌से अहङ्कार, अहङ्कारसे आकाश, आकाशसे वायु, वायुसे अग्नि, अग्निसे जल, जलसे पृथिवी, पृथिवीसे ओषधियाँ, ओषधियोंसे अन्न, अन्नसे रेतस्, रेतस्‌से पुरुष, वह या यह पुरुष अन्नरसमय है।' इस प्रकार देहकी उत्पत्तिका विचार करके फिर जीवात्माको 'हंसः' इस मन्त्रसे अङ्कुश-मुद्रासे सुषुम्ना नाड़ीके मार्गसे ब्रह्मरन्ध्रसे लाकर हृदयमें प्रतिष्ठित करें। 'हंसः सोऽहम्।'का उच्चारण करते हुए इसका चिन्तन करें।

न्यास

विनियोग–'ॐ अस्य...न्यासे विनियोगः।'का उच्चारण करके विनियोग करें।

विनियोगः।'

ऋष्यादिन्यासः–'श्रीदक्षिणामूर्तये ऋषये नमः' शिरसि। 'पङ्क्तिच्छन्दसे नमः' मुखे। 'श्रीगायत्रीब्रह्मविद्यादेवतायै नमः' हृदि। 'ॐ बीजाय नमः' गुह्ये। 'ह्रीं शक्तये नमः' पादयोः। 'श्रीं कीलकाय नमः' नाभौ।

करन्यासः–'ॐ अङ्गुष्ठाभ्यां नमः। ह्रीं तर्जनीभ्यां नमः। श्रीं मध्यमाभ्यां नमः। ॐ अनामिकाभ्यां नमः। ह्रीं कनिष्ठिकाभ्यां नमः। श्रीं करतल-करपृष्ठाभ्यां नमः।'

हृदयादिन्यासः–'ॐ हृदयाय नमः। ह्रीं शिरसे स्वाहा। श्रीं शिखायै वषट्। ॐ कवचाय हुम्। ह्रीं नेत्रत्रयाय वौषट्। श्रीं अस्त्राय फट्।'

अक्षरन्यासः–'ॐ नमः' पादादिनाभ्यन्तम्। 'ह्रीं नमः' नाभ्यादिकण्ठान्तम्। 'श्रीं नमः' कण्ठादि-ब्रह्मरन्ध्रान्तम्।

ऋष्यादिन्यास–'श्रीदक्षिणामूर्तये ऋषये नमः'का उच्चारण कर शिर पर स्पर्श करनेकी भावना करें। इसी प्रकार नाभिस्थान पर्यन्त स्पर्श करनेकी भावना करें।

करन्यास–'ॐ अङ्गुष्ठाभ्यां नमः।'का उच्चारण करते हुए दोनों हाथोंकी अङ्गुष्ठाओंका अपनी-अपनी तर्जनी अङ्गुलियोंसे स्पर्श करें। इसी प्रकार अङ्गुष्ठाओंसे अपनी-अपनी अङ्गुलियोंका स्पर्श करते हुए करन्यास करें।

हृदयादिन्यास–'ॐ हृदयाय नमः'का उच्चारण कर हृदयका स्पर्श करें। 'ह्रीं शिरसे स्वाहा'का उच्चारण कर शिरका स्पर्श करें। 'श्रीं शिखायै वषट्'का उच्चारण कर शिखाका स्पर्श करें। 'ॐ कवचाय हुम्'का उच्चारण कर हाथोंसे कवच अर्थात् परस्पर एक दूसरे बाहुओंका स्पर्श करें। 'ह्रीं नेत्रत्रयाय वौषट्'का उच्चारण कर बीचकी तीन अङ्गुलियोंसे एक साथ दोनों नेत्र तथा भ्रूमध्यका स्पर्श करें। 'श्रीं अस्त्राय फट्'का उच्चारण कर बीचकी तीन अङ्गुलियोंको शिरके चारों ओर घूमा कर उनसे दूसरी हथेली पर ताड़न करें।

अक्षरन्यास–'ॐ नमः'का उच्चारण कर पैरसे लेकर नाभि तकके स्थानोंका स्पर्श करनेकी भावना करें। 'ह्रीं नमः'का उच्चारण करते हुए नाभिसे लेकर कण्ठ तकके स्थानोंका स्पर्श करनेकी भावना करें। 'श्रीं नमः'का उच्चारण करते हुए कण्ठसे

श्रीयन्त्रस्थापनम्

वेदिकायामष्टदलं विलिख्य तन्मध्ये कलशं संस्थाप्य तस्मिन् गन्ध-पुष्प-फल-सर्वौषधि-दूर्वा-पञ्चपल्लव-सप्तमृत्तिका निक्षिप्य वस्त्र-द्वयेन आवेष्ट्य तदुपरि पूर्णपात्रं निधाय कलशे वरुणादिदेवता आवाह्य पूजयेत्।

कलशपूजनम्–'ॐ अपां पतये वरुणाय नमः। अस्मिन् कलशे वरुणं साङ्गं सपरिवारं सायुधं सशक्तिकमावाहयामि। कलशस्य मुखे विष्णुः कण्ठे रुद्रः समाश्रितः। मूले त्वस्य स्थितो ब्रह्मा मध्ये मातृगणाः स्मृताः।। कुक्षौ तु सागराः सर्वे सप्तद्वीपा वसुन्धरा। ऋग्वेदोऽथ यजुर्वेदः सामवेदो ह्यथर्वणः। अङ्गैश्च सहिताः सर्वे कलशं तु समाश्रिताः।। अत्र गायत्री सावित्री शान्ति-पुष्टिकरी तथा। आयान्तु देवपूजार्थं दुरितक्षयकारकाः।। गङ्गे च यमुने चैव गोदावरि सरस्वति। नर्मदे सिन्धुकावेरि जलेऽस्मिन् सन्निधिं कुरु।। सर्वे समुद्राः सरित-स्तीर्थानि जलदा नदाः। आयान्तु मम शान्त्यर्थं दुरितक्षयकारकाः।। ॐ वरुणाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः। कलशे वरुणाद्यावाहितदेवताः स्थापयामि।' 'ॐ वरुणाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः।' इति मन्त्रेण गन्धादिना पञ्चोपचारेण पूजयेत्। *प्रार्थना*–'देव-दानवसंवादे मथ्यमाने महोदधौ। उत्पन्नोऽसि तदा कुम्भ विधृतो विष्णुना स्वयम्।। त्वत्तोये सर्वतीर्थानि देवाः सर्वे त्वयि स्थिताः। त्वयि तिष्ठन्ति भूतानि त्वयि प्राणाः प्रतिष्ठिताः।। शिवः स्वयं त्वमेवासि विष्णुस्त्वं च प्रजापतिः। आदित्या वसवो रुद्रा विश्वेदेवाः सपैतृकाः।। त्वयि तिष्ठन्ति सर्वेऽपि

लेकर ब्रह्मरन्ध्र तकके स्थानोंका स्पर्श करनेकी भावना करें।

श्रीयन्त्रस्थापन

वेदिकामें अष्टदल कमलका अङ्कन करके उसके मध्यमें जलपूर्ण कलशकी स्थापना करके उसमें गन्ध, पुष्प, फल, सर्वौषधि, दूर्वा, पञ्च पल्लव तथा सप्त मृत्तिका अथवा जो भी पदार्थ उपलब्ध हो ड़ाल कर, उसको दो वस्त्रोंसे ढ़ँक कर, उसके ऊपर पूर्णपात्रकी स्थापना करके कलशमें वरुण आदि देवताओंका आवाहन करके उनका पूजन करें।

यतः कामफलप्रदाः। त्वत्प्रसादादिमां पूजां कर्तुमिहे जलोद्भव। सान्निध्यं कुरु मे देव प्रसन्नो भव सर्वदा॥'

ततः कलशोपरिस्थ-पूर्णपात्रे वस्त्रोपरि कुङ्कुमेन श्रीयन्त्रं विलिखेद् अथवा स्फटिकादिविनिर्मितस्य श्रीयन्त्रस्य प्रतिष्ठापनं कुर्यात्।

(कनकनिर्मितस्य श्रीयन्त्रस्य पूजनं प्राशस्त्यं स्यात्। यतो हि तस्य प्राणप्रतिष्ठा स्वत एव भवति। अस्योपलब्धिः सर्वत्र नैव विद्यते। स्फटिकनिर्मितस्य श्रीयन्त्रस्य प्रायेण सर्वत्रोपलब्धिः स्यात्। अस्यापि कालक्रमेण स्वत एव प्राणप्रतिष्ठा स्यादिति परम्परा। नित्यपूजायान्तु कलशस्थापनस्य आवश्यकता नास्ति। पीठके सिंहासने वा यन्त्रराजं संस्थाप्य पूजयेत्। नापि प्राणप्रतिष्ठाया आवश्यकता वर्तते; यतो हि श्रीपरदेवतायाः श्रीयन्त्रस्य च विनिर्दिष्टरीत्या विशिष्टस्मरणादेव स्वत एव प्राणप्रतिष्ठा स्यादिति निश्चयम्। इति शिवम्।)

ततः त्रिखण्डामुद्रया पुष्पं गृहित्वा श्रीपरदेवतायाः श्रीपरयन्त्र-राजस्य च ध्यानं कुर्यात्।

कलशपूजन–'ॐ अपां...स्थापयामि।'का उच्चारण करके कलशमें वरुण आदि आवाहित देवताओंकी स्थापना करें। 'ॐ वरुणाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः।' इस मन्त्रसे गन्ध आदि पञ्चोपचारसे वरुण आदि आवाहित देवताओंका पूजन करें। *प्रार्थना*–'देवदानवसंवादे...भव सर्वदा॥'का उच्चारण कर कलशकी प्रार्थना करें।

उसके बाद कलश पर स्थित पूर्णपात्रमें वस्त्रके ऊपर कुङ्कुमसे श्रीयन्त्रका विलेखन करें अथवा स्फटिक आदिसे विनिर्मित श्रीयन्त्रकी स्थापना करें।

(स्वर्णसे निर्मित श्रीयन्त्रका पूजन सर्वोत्तम है; क्योंकि उसकी प्राणप्रतिष्ठा अपने आप हो जाती है। स्वर्णनिर्मित श्रीयन्त्रकी उपलब्धि सभी स्थान पर नहीं होती है। स्फटिकनिर्मित श्रीयन्त्रकी उपलब्धि प्रायः सभी स्थान पर हो जाती है। इस श्रीयन्त्रकी भी प्राणप्रतिष्ठा अपने आप कालक्रमसे हो जाती है, ऐसी परम्परा है। नित्य पूजामें कलशस्थापन आवश्यक नहीं है। पीठक अथवा सिंहासन पर श्रीयन्त्रकी स्थापना कर पूजन करें। न ही प्राणप्रतिष्ठा आवश्यक है; क्योंकि श्रीपरदेवता तथा श्रीयन्त्रके विनिर्दिष्ट विशिष्ट स्मरणसे ही स्वतः प्राणप्रतिष्ठा हो जाती है, ऐसा विनिश्चय है।)

उसके बाद त्रिखण्डा मुद्रासे हाथमें पुष्प लेकर श्रीपरदेवता तथा श्रीपर-यन्त्रराजका ध्यान करें। *ध्यान*–'दिव्यां परा सुधवलारुणचक्रताप्तां ... पर-यन्त्रराजम्॥२॥'का उच्चारण करते हुए श्रीपरदेवता तथा श्रीपरयन्त्रराजका ध्यान करें।

ध्यानम्–

'दिव्यां परां सुधवलारुणचक्रताप्तां
मूलादिबिन्दुपरिपूर्णकलात्मरूपाम्।
स्थित्यात्मिकां शरधनुःसृणिपाशहस्तां
श्रीचक्रतां परिणतां सततं नमामि॥१॥

भूःपूस्त्रिवृत्तकमथेन्दुकलारविन्दम्
अष्टारकं च मनुकोणमथो दशारम्।
दिक्कोणकं च गजकोणमथ त्रिकोणं
वन्दे च बिन्दुसहितं परयन्त्रराजम्॥२॥'

एवं ध्यात्वा हस्तगृहितं पुष्पं श्रीयन्त्रोपरि समर्पयेत्। ततः श्रीयन्त्रे श्रीपरदेवतायाः पूजनं पञ्चोपचारेण कुर्यात्। तद्यथा–

गन्धम्–'ॐ ह्रीं श्रीं श्रीपरदेवतायै नमः। श्रीपरदेवता-प्रीत्यर्थं लं पृथिव्यात्मकं गन्धं समर्पयामि।'

पुष्पम्–'ॐ ह्रीं श्रीं श्रीपरदेवतायै नमः। श्रीपरदेवता-प्रीत्यर्थं हं आकाशात्मकं पुष्पं समर्पयामि।'

धूपः–'ॐ ह्रीं श्रीं श्रीपरदेवतायै नमः। श्रीपरदेवता-प्रीत्यर्थं यं वाय्वात्मकं धूपमाघ्रापयामि।'

इस प्रकारसे ध्यान कर हाथमें लिये हुए पुष्पको श्रीयन्त्र पर अर्पण करके श्रीयन्त्रमें श्रीपरदेवताका पूजन पञ्चोपचारसे करें।

गन्ध–'ॐ ह्रीं श्रीं श्रीपरदेवतायै नमः। श्रीपरदेवता-प्रीत्यर्थं लं पृथिव्यात्मकं गन्धं समर्पयामि।'का उच्चारण कर श्रीपरदेवताकी प्रसन्नताके लिए गन्धका अर्पण करें।

पुष्प–'ॐ ह्रीं श्रीं श्रीपरदेवतायै नमः। श्रीपरदेवता-प्रीत्यर्थं हं आकाशात्मकं पुष्पं समर्पयामि।'का उच्चारण कर श्रीपरदेवताकी प्रसन्नताके लिए पुष्पका अर्पण करें।

धूप–'ॐ ह्रीं श्रीं श्रीपरदेवतायै नमः। श्रीपरदेवता-प्रीत्यर्थं यं वाय्वात्मकं धूपम् आघ्रापयामि।'का उच्चारण कर श्रीपरदेवताकी प्रसन्नताके लिए धूपका आघ्राण करावें।

दीपः–'ॐ ह्रीं श्रीं श्रीपरदेवतायै नमः। श्रीपरदेवता-प्रीत्यर्थं रं वह्न्यात्मकं दीपं दर्शयामि।'

नैवेद्यम्–'ॐ ह्रीं श्रीं श्रीपरदेवतायै नमः। श्रीपरदेवता-प्रीत्यर्थं वं जलात्मकं नैवेद्यं निवेदयामि। मध्ये पानीयम्, उत्तरापोऽशनार्थं मुख-प्रक्षालनार्थञ्च जलं समर्पयामि।'

एवं श्रीपरदेवतायाः पञ्चोपचारेण पूजनं कृत्वा पुनरावरणपूजनं निर्देशानुसारं कुयात्। इति शिवम्।।

दीप–'ॐ ह्रीं श्रीं श्रीपरदेवतायै नमः। श्रीपरदेवता-प्रीत्यर्थं रं वह्न्यात्मकं दीपं दर्शयामि।'का उच्चारण कर श्रीपरदेवताकी प्रसन्नताके लिए दीपका दर्शन करावें।

नैवेद्य–'ॐ ह्रीं श्रीं श्रीपरदेवतायै नमः। श्रीपरदेवता-प्रीत्यर्थं वं जलात्मकं नैवेद्यं निवेदयामि। मध्ये पानीयम्, उत्तरापोऽशनार्थं मुखप्रक्षालनार्थञ्च जलं समर्पयामि।'का उच्चारण कर श्रीपरदेवताकी प्रसन्नताके लिए नैवेद्यका निवेदन करें। मध्यमें पानीय, बादमें पीनेके लिए तथा मुख प्रक्षालनके लिए जलका अर्पण करें।

इस प्रकारसे श्रीपरदेवताका पूजन पञ्चोपचारसे करके पुनः निर्देशानुसार आवरणपूजन करें। इति शिवम्।।

प्रथमावरणपूजनम्

॥ श्रीगायत्रीब्रह्मविद्यायै नमः ॥

श्रीपरदेवतायाः पूजनम्

ध्यानम्–

'दिव्यां परां सुधवलारुणचक्रताप्तां
मूलादिबिन्दुपरिपूर्णकलात्मरूपाम्।
स्थित्यात्मिकां शरधनुःसृणिपाशहस्तां
श्रीचक्रतां परिणतां सततं नमामि॥१॥'

पूजनम्–

श्रीपरदेवता–'ॐ ह्रीं श्रीं श्रीपरदेवतायै नमः। श्रीपरदेवता-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि॥१॥'

श्रीपरयन्त्रराजस्य पूजनम्

ध्यानम्–

'भूःपूस्त्रिवृत्तकमथेन्दुकलारविन्दम्
अष्टारकं च मनुकोणमथो दशारम्।

श्रीचक्रमें परदेवताका पूजन–श्रीचक्रमें श्रीपरदेवताका ध्यानपूर्वक पूजन करें। *ध्यान*–'दिव्यां...सततं नमामि॥१॥'का उच्चारण करते हुए श्रीचक्रमें श्रीपरदेवताका ध्यान करें। *पूजन*–'ॐ...नमस्करोमि॥१॥'का उच्चारण करके श्रीपरदेवताकी श्रीपादुकाका पूजन, तर्पण तथा नमन करें॥१॥

श्रीपरयन्त्रराजका पूजन–श्रीपरयन्त्रराजका ध्यानपूर्वक पूजन करें। *ध्यान*–

दिक्कोणकं च गजकोणमथ त्रिकोणं
वन्दे च बिन्दुसहितं परयन्त्रराजम्॥२॥'

पूजनम्–

श्रीपरयन्त्रराजः–'ॐ ह्रीं श्रीं श्रीपरयन्त्रराजाय नमः। श्रीपरयन्त्रराज-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि॥२॥'

भूपुर्बहिः क्रमेण पूर्वाग्नेयदक्षिणनैर्ऋत्यपश्चिमवायव्योत्तरेशानेषु, ईशानपूर्वयोर्मध्ये नैर्ऋत्यपश्चिमयोर्मध्ये चेन्द्रादीनां दशदिक्पालानां पूजनम्

ध्यानम्–

'देवेन्द्रं तं वज्रहस्तं सुपीतं
रक्ताभं वैश्वानरं शक्तिहस्तम्।
श्रीमत्सौरिं दण्डहस्तञ्च कृष्णं
बन्धूकाभं नैर्ऋतं खड्गहस्तम्॥
पाशाढ्यं श्रीपाशिनं श्वेतवर्णं
वायुं सृण्याढ्यं हरिद्वर्णदेहम्।
पौलस्त्यं वै शुक्लवर्णं गदाढ्यम्
ईशानं श्रीशूलहस्तञ्च शुभ्रम्॥
ब्रह्माणं तं पद्महस्तं सुपीतं
रम्यं श्यामं चक्रहस्तं ह्यनन्तम्।

'भूपू...परयन्त्रराजम्॥२॥'का उच्चारण करते हुए श्रीपरयन्त्रराजका ध्यान करें। *पूजन–* 'ॐ...नमस्करोमि॥२॥'का उच्चारण करके श्रीपरयन्त्रराजकी श्रीपादुकाका पूजन, तर्पण तथा नमन करें॥२॥

*भूपुरके बाहर क्रमसे पूर्व, आग्नेय, दक्षिण, नैर्ऋत्य, पश्चिम, वायव्य, उत्तर, ईशान, ईशान-पूर्व तथा नैर्ऋत्य-पश्चिममें इन्द्र आदि दश दिक्पालोंका पूजन–*भूपुरके बाहर क्रमसे पूर्व, आग्नेय, दक्षिण, नैर्ऋत्य, पश्चिम, वायव्य, उत्तर, ईशान, ईशान-

सर्वान् देवान् नौमि भूपुर्बहिस्थान्
पूर्वादारभ्याभिवर्त्तक्रमेण॥३॥'

पूजनम्–

१.*इन्द्रः*–'ॐ ह्रीं श्रीं इन्द्राय नमः। इन्द्र-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

२.*अग्निः*–'ॐ ह्रीं श्रीं अग्नये नमः। अग्नि-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

३.*यमः*–'ॐ ह्रीं श्रीं यमाय नमः। यम-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

४.*नैर्ऋतः*–'ॐ ह्रीं श्रीं नैर्ऋताय नमः। नैर्ऋत-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

५.*वरुणः*–'ॐ ह्रीं श्रीं वरुणाय नमः। वरुण-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

६.*वायुः*–'ॐ ह्रीं श्रीं वायवे नमः। वायु-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

७.*कुवेरः*–'ॐ ह्रीं श्रीं कुवेराय नमः। कुवेर-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

८.*ईशानः*–'ॐ ह्रीं श्रीं ईशानाय नमः। ईशान-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

९.*ब्रह्मा*–'ॐ ह्रीं श्रीं ब्रह्मणे नमः। ब्रह्म-श्रीपादुकां पूजयामि

पूर्व तथा नैर्ऋत्य-पश्चिममें 'इन्द्र, अग्नि, यम, नैर्ऋत, वरुण, वायु, कुवेर, ईशान, ब्रह्मा तथा अनन्त' इन दश दिक्पालोंका ध्यानपूर्वक पूजन करें। *ध्यान*–'देवेन्द्रं...वर्त्तक्रमेण॥३॥'का उच्चारण करते हुए एकसाथ इन्द्र आदि दश दिक्पालोंका ध्यान करें। *पूजन*–'ॐ ह्रीं श्रीं इन्द्राय नमः। इन्द्र-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'का उच्चारण करके इन्द्रकी श्रीपादुकाका पूजन, तर्पण तथा नमन करें। इसी प्रकार अलग-अलग अन्य दिक्पालोंकी श्रीपादुकाका पूजन, तर्पण तथा नमन

तर्पयामि नमस्करोमि।'

१०.अनन्तः–'ॐ ह्रीं श्रीं अनन्ताय नमः। अनन्त-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।।३।।'

भूपुरस्य पूजनम्

ध्यानम्–

'रेखात्रयैर्धवलरक्तसुकृष्णवर्णैः
सन्निर्मितं कृतमुखं वसुधाख्यचक्रम्।
रम्यं महाप्रकटयोगिनिकासमेतं
त्रैलोक्यमोहनकरं सततं नमामि।।४।।'

पूजनम्–

भूपुरचक्रम्–'ॐ ह्रीं श्रीं भूपुरचक्राय नमः। भूपुरचक्र-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।।४।।'

पश्चिमद्वारे द्वारपालरूप-सर्वयोगिनीस्वरूप-सर्वभूतानां पूजनम्

ध्यानम्–

'नानायुधाढ्याः सकलमनोज्ञा
नानाम्बराढ्या विविधाकृतीश्च।

करें।।३।।

भूपुर चक्रका पूजन–भूपुर चक्रका ध्यानपूर्वक पूजन करें। *ध्यान*–'रेखात्रयै...सततं नमामि।।४।।'का उच्चारण करते हुए भूपुर चक्रका ध्यान करें। *पूजन*–'ॐ...नमस्करोमि।।४।।'का उच्चारण करके भूपुर चक्रकी श्रीपादुकाका पूजन, तर्पण तथा नमन करें।।४।।

पश्चिम द्वारमें द्वारपालरूप सर्वयोगिनीस्वरूप सर्वभूतोंका पूजन–श्रीचक्रके पश्चिम द्वारमें द्वारपालके रूपमें स्थित सर्वयोगिनीस्वरूप सर्वभूतोंका ध्यानपूर्वक पूजन करें। *ध्यान*–'नानायुधाढ्या... पश्चिमस्थान्।।५।।'का उच्चारण करते हुए सर्वयोगिनी स्वरूप सर्वभूतोंका ध्यान करें। *पूजन*–'ॐ...नमस्करोमि।।५।।'का उच्चारण करके सर्वयोगिनी

योगिन्य एता अपि सर्वभूतान्
नानास्वरूपानतिभीमरूपान्॥
अनेकशस्त्राङ्कितहस्तयुक्तान्
अनेकवक्त्रान्वितघोरवक्त्रान्।
स्मराम्यहं तान् सकलान् प्रसन्नान्
श्रीद्वारपालान् किल पश्चिमस्थान्॥५॥'

पूजनम्–

सर्वयोगिनीस्वरूप-सर्वभूताः–'ॐ ह्रीं श्रीं सर्वयोगिनी-स्वरूप-सर्वभूतेभ्यो नमः। सर्वयोगिनीस्वरूप-सर्वभूत-श्रीपादुकाः पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि॥५॥'

पूर्वद्वारे द्वारपालरूप-क्षेत्रपतेः पूजनम्

ध्यानम्–

'नीलाञ्जनाभं परमं त्रिनेत्रं
चञ्चत्कृपाणं नृकपालपात्रम्।
श्रीशूलकं सड्डमरुं च मुद्रां
दण्डं दधानं रसपाणिपद्मैः॥
श्रीद्वारपालं किल पूर्वसंस्थं
स्मराम्यहं क्षेत्रपतिं प्रसन्नम्॥६॥'

पूजनम्–

क्षेत्रपतिः–'ॐ ह्रीं श्रीं क्षेत्रपतये नमः। क्षेत्रपति-श्रीपादुकां

स्वरूप सर्वभूतोंकी श्रीपादुकाओंका पूजन, तर्पण तथा नमन करें॥५॥

*पूर्वद्वारमें द्वारपालरूप क्षेत्रपतिका पूजन–*श्रीचक्रके पूर्वद्वारमें स्थित द्वारपाल क्षेत्रपतिका ध्यानपूर्वक पूजन करें। *ध्यान–*'नीलाञ्जनाभं ... क्षेत्रपतिं प्रसन्नम्॥६॥'का

पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि॥६॥'

दक्षिणद्वारे द्वारपालरूप-गणनायकस्य पूजनम्

ध्यानम्–

'लम्बोदरं नीलतनुं गजास्यं
पाशाङ्कुशौ चैव कपालशूले।
करैर्वहन्तं गणनायकं तं
श्रीद्वारपं नौमि च दक्षिणस्थम्॥७॥'

पूजनम्–

गणनायकः–'ॐ ह्रीं श्रीं गणनायकाय नमः। गणनायक-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि॥७॥'

उत्तरद्वारे द्वारपालरूप-वटुकभैरवस्य पूजनम्

ध्यानम्–

'बालं विशुद्धस्फटिकप्रभास्यं
श्रीशूलदण्डौ दधतं त्रिनेत्रम्।
देवीसुतं श्रीवटुकाभिधानं
श्रीद्वारपं नौमि सदोत्तरस्थम्॥८॥'

पूजनम्–

उच्चारण करते हुए क्षेत्रपतिका ध्यान करें। *पूजन*–'ॐ ... नमस्करोमि॥६॥'का उच्चारण करके क्षेत्रपतिकी श्रीपादुकाका पूजन, तर्पण तथा नमन करें॥६॥

दक्षिणद्वारमें द्वारपाल गणनायकका पूजन–श्रीचक्रके दक्षिण द्वारमें स्थित द्वार-पाल गणनायकका ध्यानपूर्वक पूजन करें। *ध्यान*–'लम्बोदरं...दक्षिणस्थम्॥७॥'का उच्चारण करते हुए गणनायकका ध्यान करें। *पूजन*–'ॐ...नमस्करोमि॥७॥'का उच्चारण करके गणनायककी श्रीपादुकाका पूजन, तर्पण तथा नमन करें॥७॥

उत्तर द्वारमें द्वारपालरूप वटुक भैरवका पूजन–श्रीचक्रके उत्तरद्वारमें स्थित द्वारपाल वटुक भैरवका ध्यानपूर्वक पूजन करें। *ध्यान*–'बालं...सदोत्तरस्थम्॥८॥'का

वटुकभैरवः–'ॐ ह्रीं श्रीं वटुकभैरवाय नमः। वटुकभैरव-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि॥८॥'

भूसदने नैर्ऋत्ये तिरस्कर्याः पूजनम्

ध्यानम्–

'श्यामाननाब्जामरुणत्रिनेत्रां
कृष्णाम्बरां नीलहयाधिरूढाम्।
गदां च खड्गं दधतीं कराभ्याम्
अधस्कराभ्यां मधुपूर्णकुम्भम्॥
तां दर्शयन्तीं निजरम्ययोनिं
विमोहयन्तीं पशुवर्गकांश्च।
तिरस्करीं चारुमुखीं मनोज्ञां
नैर्ऋत्यसंस्थां मनसा स्मरामि॥९॥'

पूजनम्–

तिरस्करी–'ॐ ह्रीं श्रीं तिरस्कर्यै नमः। तिरस्करी-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि॥९॥'

आग्नेये वनदुर्गायाः पूजनम्

ध्यानम्–

उच्चारण करते हुए वटुक भैरवका ध्यान करें। *पूजन–*'ॐ...नमस्करोमि॥८॥'का उच्चारण करके वटुक भैरवकी श्रीपादुकाका पूजन, तर्पण तथा नमन करें॥८॥

*नैर्ऋत्यमें तिरस्करीका पूजन–*श्रीचक्रके नैर्ऋत्यमें तिरस्करी देवीका ध्यानपूर्वक पूजन करें। *ध्यान–*'श्यामाननाब्जा...स्मरामि॥९॥'का उच्चारण करते हुए देवी तिरस्करीका ध्यान करें। *पूजन–*'ॐ...नमस्करोमि॥९॥'का उच्चारण करके देवी तिरस्करीकी श्रीपादुकाका पूजन, तर्पण तथा नमन करें॥९॥

*आग्नेयमें वनदुर्गाका पूजन–*श्रीचक्रके आग्नेयमें देवी वनदुर्गाका ध्यानपूर्वक पूजन करें। *ध्यान–*'श्रीश्यामलाङ्गीं...स्मरामि॥१०॥'का उच्चारण करते हुए देवी वनदुर्गाका

'श्रीश्यामलाङ्गीं धृतचन्द्रचूडां
शङ्खं रथाङ्गं करवालबाणान्।
सत्तर्जनीं चर्म च खेटकाख्यं
चापं भुजाब्जैर्ननु धारयन्तीम्॥
स्मेराननाब्जां मणिरत्नभूषां
रक्ताम्बराढ्यां वनपूर्वदुर्गाम्।
आग्नेयसंस्थां मनसा स्मरामि॥१०॥'

पूजनम्–

वनदुर्गा–'ॐ ह्रीं श्रीं वनदुर्गायै नमः। वनदुर्गा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि॥१०॥'

ईशाने कामदेवस्य पूजनम्

ध्यानम्–

'बन्धूकखट्वाङ्गधरं मनोज्ञं
पुष्पेक्षुकोदण्डधरं द्विहस्तम्।
ईशानसंस्थं कुसुमादिभूष्यं
रत्यान्वितं काममहं स्मरामि॥११॥'

पूजनम्–

कामदेवः–'ॐ ह्रीं श्रीं कामदेवाय नमः। कामदेव-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि॥११॥'

ध्यान करें। *पूजन–*'ॐ...नमस्करोमि॥१०॥'का उच्चारण करके देवी वनदुर्गाकी श्रीपादुकाका पूजन, तर्पण तथा नमन करें॥१०॥

*ईशानमें कामदेवका पूजन–*श्रीचक्रके ईशानमें कामदेवका ध्यानपूर्वक पूजन करें। *ध्यान–*'बन्धूक...स्मरामि॥११॥'का उच्चारण करते हुए कामदेवका ध्यान करें। *पूजन–*'ॐ...नमस्करोमि॥११॥'का उच्चारण करके कामदेवकी श्रीपादुकाका पूजन,

वायव्ये वसन्तस्य पूजनम्

ध्यानम्–

'स्मेराननाढ्यं शरदिन्दुगौरं
प्रीत्या युतं श्रीऋतुराजराजम्।
रत्नादिभूषं ललितं वसन्तं
वायव्यसंस्थं सततं नमामि॥१२॥'

पूजनम्–

वसन्तः–'ॐ ह्रीं श्रीं वसन्ताय नमः। वसन्त-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि॥१२॥'

भूसदन-पार्श्वयोः शङ्खनिधेः पद्मनिधेश्च पूजनम्

ध्यानम्–

'श्रीपद्ममालाङ्कितदिव्यदेहौ
स्मेराननाब्जौ वरदाभयाढ्यौ।
श्रीपार्श्वसंस्थौ ललितौ प्रसन्नौ
तौ शङ्खपद्माख्यनिधी स्मरामि॥१३॥'

पूजनम्–

तर्पण तथा नमन करें॥११॥

*वायव्यमें वसन्तका पूजन–*श्रीचक्रके वायव्यमें वसन्तका ध्यानपूर्वक पूजन करें। *ध्यान–*'स्मेराननाढ्यं...सततं नमामि॥१२॥'का उच्चारण करते हुए वसन्तका ध्यान करें। *पूजन–*'ॐ...नमस्करोमि॥१२॥'का उच्चारण करके वसन्तकी श्रीपादुकाका पूजन, तर्पण तथा नमन करें॥१२॥

*भूपुरके दोनों पार्श्वोंमें शङ्खनिधि तथा पद्मनिधिका पूजन–*श्रीचक्रके पश्चिम द्वारके दोनों पार्श्वमें शङ्खनिधि तथा पद्मनिधिका ध्यानपूर्वक पूजन करें। *ध्यान–*'श्रीपद्म-माला...स्मरामि॥१३॥'का उच्चारण करते हुए शङ्खनिधि तथा पद्मनिधिका ध्यान करें। *पूजन–*'ॐ...नमस्करोमि।'का उच्चारण करके शङ्खनिधिकी श्रीपादुकाका पूजन, तर्पण

१.शङ्खनिधिः–'ॐ ह्रीं श्रीं शङ्खनिधये नमः। शङ्खनिधि-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

२.पद्मनिधिः–'ॐ ह्रीं श्रीं पद्मनिधये नमः। पद्मनिधि-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि॥१३॥'

पश्चिमद्वारे द्वारनायिकारूपिण्याः कुब्जकेश्याः पूजनम्

ध्यानम्–

'देवीं खण्डेन्दुचूडां मदमुदितमुखां बर्बराकेशभाराम्
उद्यद्बालार्कभासां कुचभरनमितां सर्वभूषाभिरामाम्।
सिंहस्कन्धाधिरूढामभयवरकरामेकवक्त्रां त्रिनेत्रां
श्रीद्वारेशीं प्रतीच्यां कुलजननमितां कुब्जकेशीं नमामि॥१४॥'

पूजनम्–

कुब्जकेशी–'ॐ ह्रीं श्रीं कुब्जकेश्यै नमः। कुब्जकेशी-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि॥१४॥'

उत्तरद्वारे द्वारनायिकारूपिण्याः सिद्धलक्ष्म्याः पूजनम्

ध्यानम्–

'सत्खट्वाङ्गत्रिशूलाभयवरनृशिरःपाशकुम्भाङ्कुशासि-
पात्राढ्यां सुप्रसन्नां ललितदशभुजां श्रीशरच्चन्द्रगौरीम्।

तथा नमन करें। 'ॐ...नमस्करोमि॥१३॥'का उच्चारण कर पद्मनिधिकी श्रीपादुकाका पूजन, तर्पण तथा नमन करें॥१३॥

पश्चिम द्वारमें द्वारनायिका कुब्जकेशीका पूजन–श्रीचक्रके पश्चिम द्वारमें द्वारनायिकाके रूपमें स्थित देवी कुब्जकेशीका ध्यानपूर्वक पूजन करें। *ध्यान*–'देवीं...कुब्जकेशीं नमामि॥१४॥'का उच्चारण कर देवी कुब्जकेशीका ध्यान करें। *पूजन*–'ॐ...नमस्करोमि॥१४॥'का उच्चारण करके देवी कुब्जकेशीकी श्रीपादुकाका पूजन, तर्पण तथा नमन करें॥१४॥

उत्तर द्वारमें द्वारनायिका सिद्धलक्ष्मीका पूजन–श्रीचक्रके उत्तर द्वारमें द्वार-

रुद्रस्कन्धाधिरूढामभिनवयुवतिं पञ्चवक्त्राभिरामां
श्रीद्वारेशीमुदीच्यां स्मितमुखकमलां सिद्धलक्ष्मीं स्मरामि॥१५॥'

पूजनम्–

सिद्धलक्ष्मीः–'ॐ ह्रीं श्रीं सिद्धलक्ष्म्यै नमः। सिद्धलक्ष्मी-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि॥१५॥'

पूर्वद्वारे द्वारनायिकारूपिण्या उन्मन्याः पूजनम्

ध्यानम्–

'उद्यद्भास्वत्समाभां सुललितवदनामिन्दुचूडां त्रिनेत्राम्
अम्बां पाशाङ्कुशेष्टाभयकरकमलां चारुहासां प्रसन्नाम्।
द्यौस्तन्माणिक्यरत्नैर्ज्वलितसुललितालङ्कृतां रक्तवस्त्रां
श्रीद्वारेशीं हि पूर्वेऽरुणकमलगतामुन्मनीं तां नमामि॥१६॥'

पूजनम्–

उन्मनी–'ॐ ह्रीं श्रीं उन्मन्यै नमः। उन्मनी-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि॥१६॥'

दक्षिणद्वारे द्वारनायिकारूपिण्या दक्षिणकालिकायाः पूजनम्

नायिकाके रूपमें स्थित देवी सिद्धलक्ष्मीका ध्यानपूर्वक पूजन करें। *ध्यान–*'सत्खट्वाङ्ग...सिद्धलक्ष्मीं स्मरामि॥१५॥'का उच्चारण करते हुए देवी सिद्धलक्ष्मीका ध्यान करें। *पूजन–*'ॐ ... नमस्करोमि॥१५॥'का उच्चारण करके देवी सिद्धलक्ष्मीकी श्रीपादुकाका पूजन, तर्पण तथा नमन करें॥१५॥

*पूर्व द्वारमें द्वारनायिका उन्मनीका पूजन–*श्रीचक्रके पूर्व द्वारमें द्वारनायिकाके रूपमें स्थित देवी उन्मनीका ध्यानपूर्वक पूजन करें। *ध्यान–*'उद्यद्...नमामि॥१६॥'का उच्चारण करते हुए देवी उन्मनीका ध्यान करें। *पूजन–*'ॐ...नमस्करोमि॥१६॥'का उच्चारण करके देवी उन्मनीकी श्रीपादुकाका पूजन, तर्पण तथा नमन करें॥१६॥

*दक्षिणद्वारमें द्वारनायिका दक्षिणकालिकाका पूजन–*श्रीचक्रके दक्षिणद्वारमें द्वार-नायिका देवी दक्षिणकालिकाका ध्यानपूर्वक पूजन करें। *ध्यान–*'दण्डं...पञ्च-

ध्यानम्–

'दण्डं चक्रं कपालाभयवरडमरून् तर्जनीखेटखड्गान्
खट्वाङ्गं पाशकुण्डीसुसृणिशरधनुर्मुण्डकान् धारयन्तीम्।
निश्शेषीं मुक्तकेशीं शशिशकलधरां व्याघ्रचर्माम्बराढ्यां
द्वारेशीं दक्षिणे तां तरुणरविनिभां नौम्यहं पञ्चवक्त्राम्।।१७।।'

पूजनम्–

दक्षिणकालिका–'ॐ ह्रीं श्रीं दक्षिणकालिकायै नमः। दक्षिण-कालिका-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।।१७।।'

प्रथमरेखायां पूर्वदक्षिणपश्चिमोत्तरेषु, आग्नेयनैर्ऋत्यवायव्येशानेषु, पूर्वेशानयोर्मध्ये नैर्ऋत्यदक्षिणयोर्मध्ये नैर्ऋत्यपश्चिमयोर्मध्ये चाणिमादीनामेकादशसिद्धीनां पूजनम्

ध्यानम्–

'पूर्णाणिमाञ्च गरिमां लघिमाख्यसिद्धिं
सिद्धिञ्च तां सुमहिमां सकलप्रसिद्धाम्।
ईशित्वसिद्धिमथ शुद्धवशित्वसिद्धिं
प्राकाम्यकां निखिलभुक्तिकरीं स्पृहाख्याम्।।
प्राप्त्याख्यसिद्धिमथ तां सकलार्थसिद्धिम्।।
रेखाद्यगाश्च सकलाः प्रकटादिसिद्धीः
बालेन्दुमौलिमुकुटा निधिवाहनस्थाः।

वक्त्राम्।।१७।।'का उच्चारण करते हुए देवी दक्षिणकालिकाका ध्यान करें। *पूजन–* 'ॐ...नमस्करोमि।।१७।।'का उच्चारण करके देवी दक्षिणकालिकाकी श्रीपादुकाका पूजन, तर्पण तथा नमन करें।।१७।।

*प्रथम रेखामें पूर्व, दक्षिण, पश्चिम, उत्तर, आग्नेय, नैर्ऋत्य, वायव्य, ईशान पर्यन्त, पूर्व और ईशानके मध्य, नैर्ऋत्य और दक्षिणके मध्य तथा नैर्ऋत्य और पश्चिमके मध्यमें अणिमा आदि ग्यारह सिद्धियोंका पूजन–*भूपुर चक्रकी प्रथम रेखामें

पाशाङ्कुशाब्जयुगयुक्तकरास्त्रिनेत्रा
रक्ताम्बरा अरुणकान्तियुताः स्मरामि॥१८॥'

पूजनम्–

१. अणिमा-सिद्धिः–'ॐ ह्रीं श्रीं अणिमासिद्ध्यै नमः। अणिमा-सिद्धि-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

२. गरिमा-सिद्धिः–'ॐ ह्रीं श्रीं गरिमासिद्ध्यै नमः। गरिमासिद्धि-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

३. लघिमा-सिद्धिः–'ॐ ह्रीं श्रीं लघिमासिद्ध्यै नमः। लघिमा-सिद्धि-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

४. महिमा-सिद्धिः–'ॐ ह्रीं श्रीं महिमासिद्ध्यै नमः। महिमासिद्धि-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

५. ईशिता-सिद्धिः–'ॐ ह्रीं श्रीं ईशिता-सिद्ध्यै नमः। ईशिता-सिद्धि-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

६. वशिता-सिद्धिः–'ॐ ह्रीं श्रीं वशितासिद्ध्यै नमः। वशिता-सिद्धि-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

७. प्राकाम्यका-सिद्धिः–'ॐ ह्रीं श्रीं प्राकाम्यकासिद्ध्यै नमः। प्राकाम्यका-सिद्धि-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

८. सर्वभुक्तिकरी-सिद्धिः–'ॐ ह्रीं श्रीं सर्वभुक्तिकरीसिद्ध्यै नमः। सर्वभुक्तिकरी-सिद्धि-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

९. इच्छा-सिद्धिः–'ॐ ह्रीं श्रीं इच्छासिद्ध्यै नमः। इच्छा-सिद्धि-

---

पूर्व, दक्षिण, पश्चिम, उत्तर, आग्नेय, नैर्ऋत्य, वायव्य, ईशान, पूर्व और ईशानके मध्य, नैर्ऋत्य और दक्षिणके मध्य तथा नैर्ऋत्य और पश्चिमके मध्यमें 'अणिमा, गरिमा, लघिमा, महिमा, ईशिता, वशिता, प्राकाम्यका, सर्वभुक्तिकरी, इच्छा, प्राप्ति तथा सर्वार्थ सिद्धि' इन ग्यारह सिद्धियोंका ध्यानपूर्वक पूजन करें। *ध्यान*–'पूर्णाणिमाद्यं...स्मरामि॥१८॥'का उच्चारण करते हुए अणिमा आदि ग्यारह सिद्धियोंका एकसाथ ध्यान करें। *पूजन*–'ॐ ह्रीं श्रीं अणिमासिद्ध्यै नमः।

श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

१०.प्राप्ति-सिद्धिः–'ॐ ह्रीं श्रीं प्राप्तिसिद्ध्यै नमः। प्राप्ति-सिद्धि-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

११.सर्वार्थ-सिद्धिः–'ॐ ह्रीं श्रीं सर्वार्थसिद्ध्यै नमः। सर्वार्थ-सिद्धि-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।।१८।।'

द्वितीयरेखायां पूर्वदक्षिणपश्चिमोत्तरेषु, आग्नेयनैर्ऋत्यवायव्येशानेषु च ब्राह्म्यादीनामष्टमातृकानां पूजनम्

ध्यानम्–

'ब्राह्मीमथावरणरूपधरां तथैव
माहेश्वरीमथ कुमारवरस्य सत्ताम्।
श्रीवैष्णवीं विटमुखीं सुरराजशक्तिं
चामुण्डिकामपि महापदयुक्तलक्ष्मीम्।।
अष्टा इमा अरुणपद्मकपालहस्ता
नीलाम्बुजन्मसुषमारुचिरास्त्रिनेत्राः।
वन्दे सदा ह्यरुणवस्त्रसुरत्नभूषाः
रेखारुणे परिगताः प्रकटादिकाम्बाः।।१९।।'

पूजनम्–

१.ब्राह्मी-मातृका–'ॐ ह्रीं श्रीं ब्राह्मीमातृकायै नमः। ब्राह्मी-मातृका-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

२.माहेश्वरी-मातृका–'ॐ ह्रीं श्रीं माहेश्वरीमातृकायै नमः।

अणिमासिद्धि-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'का उच्चारण करते हुए अणिमा सिद्धिकी श्रीपादुकाका पूजन, तर्पण तथा नमन करें। इसी प्रकार अलग-अलग अन्य सिद्धियोंकी श्रीपादुकाका पूजन, तर्पण तथा नमन करें।।१८।।

द्वितीय रेखामें पूर्व, दक्षिण, पश्चिम, उत्तर, आग्नेय, नैर्ऋत्य, वायव्य, ईशान

माहेश्वरीमातृका-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

३. *कौमारी-मातृका*–'ॐ ह्रीं श्रीं कौमारीमातृकायै नमः। कौमारी-मातृका-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

४. *वैष्णवी-मातृका*–'ॐ ह्रीं श्रीं वैष्णवीमातृकायै नमः। वैष्णवी-मातृका-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

५. *वाराही-मातृका*–'ॐ ह्रीं श्रीं वाराहीमातृकायै नमः। वाराही-मातृका-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

६. *माहेन्द्री-मातृका*–'ॐ ह्रीं श्रीं माहेन्द्री-मातृकायै नमः। माहेन्द्रीमातृका-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

७. *चामुण्डा-मातृका*–'ॐ ह्रीं श्रीं चामुण्डामातृकायै नमः। चामुण्डामातृका-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

८. *महालक्ष्मी-मातृका*–'ॐ ह्रीं श्रीं महालक्ष्मीमातृकायै नमः। महालक्ष्मीमातृका-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि॥१९॥'

तृतीयरेखायां पूर्वदक्षिणपश्चिमोत्तरेषु, आग्नेयनैर्ऋत्यवायव्येशानेषु, पूर्वेशानयोर्मध्ये नैर्ऋत्यदक्षिणयोर्मध्ये नैर्ऋत्यपश्चिमयोर्मध्ये च सर्वसङ्क्षोभिण्यादीनामेकादशमुद्राणां पूजनम्

ध्यानम्–

पर्यन्त ब्राह्मी आदि आठ मातृकाओंका पूजन–भूपुर चक्रकी द्वितीय रेखामें पूर्व, दक्षिण, पश्चिम, उत्तर, आग्नेय, नैर्ऋत्य, वायव्य, ईशान पर्यन्त 'ब्राह्मी, माहेश्वरी, कौमारी, वैष्णवी, वाराही, माहेन्द्री, चामुण्डा तथा महालक्ष्मी' इन आठ मातृकाओंका ध्यानपूर्वक पूजन करें। *ध्यान*–'ब्राह्मी...प्रकटादिकाम्बाः॥१९॥'का उच्चारण करते हुए ब्राह्मी आदि आठ मातृकाओंका एकसाथ ध्यान करे। *पूजन*–'ॐ ह्रीं श्रीं उच्चारण करके ब्राह्मी मातृकाकी श्रीपादुकाका पूजन, तर्पण तथा नमन करें।

इसी प्रकार अलग-अलग अन्य मातृकाओंकी श्रीपादुकाका पूजन, तर्पण तथा नमन करें॥१९॥

तृतीय रेखामें पूर्व, दक्षिण, पश्चिम, उत्तर, आग्नेय, नैर्ऋत्य, वायव्य, ईशान पर्यन्त, पूर्व और ईशानके मध्य, नैर्ऋत्य और दक्षिणके मध्य तथा नैर्ऋत्य और

'सङ्क्षोभिणीं सकलविद्रवणात्मरूपाम्
आकर्षिणीं वशकरीं निखिलोन्मदाख्याम्।
श्रेष्ठाङ्कुशामपि च तां सकलत्रिखण्डां
बीजामथो नभचरीञ्च समस्तयोनिम्।।
पाशाङ्कुशाढ्यनिजमुद्रितदोश्चतुष्का
नेत्रत्रयैर्विकसिताननपङ्कजाढ्याः।
रेखातृतीयगमिताः प्रकटादिमुद्रा
नानातिरम्यमणिरत्नधराः स्मरामि।।२०।।'

पूजनम्–

१. सर्वसङ्क्षोभिणी-मुद्रा–'ॐ ह्रीं श्रीं सर्वसङ्क्षोभिणीमुद्रायै नमः। सर्वसङ्क्षोभिणीमुद्रा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

२. महायोनि-मुद्रा–'ॐ ह्रीं श्रीं महायोनिमुद्रायै नमः। महा-योनिमुद्रा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

३. सर्वविद्राविणी-मुद्रा–'ॐ ह्रीं श्रीं सर्वविद्राविणीमुद्रायै नमः। सर्वविद्राविणीमुद्रा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

४. सर्वाकर्षिणी-मुद्रा–'ॐ ह्रीं श्रीं सर्वाकर्षिणीमुद्रायै नमः। सर्वाकर्षिणीमुद्रा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

---

*पश्चिमके मध्यमें सर्वसङ्क्षोभिणी आदि ग्यारह मुद्राओंका पूजन–*भूपुर-चक्रकी तृतीय रेखामें पूर्व, दक्षिण, पश्चिम, उत्तर, आग्नेय, नैर्ऋत्य, वायव्य, ईशान, पूर्व-ईशान, दक्षिण-नैर्ऋत्य तथा नैर्ऋत्य-पश्चिममें 'सर्वसङ्क्षोभिणी, महायोनि, सर्वविद्राविणी, सर्वाकर्षिणी, सर्ववशङ्करी, सर्वोन्मादिनी, सर्वमहाङ्कुशा, सर्वखेचरी, सर्वबीजा, सर्वयोनि तथा सर्वत्रिखण्डा मुद्रा' इन ग्यारह मुद्राओंका ध्यानपूर्वक पूजन करें। *ध्यान–*'सङ्क्षोभिणी...स्मरामि।।२०।।'का उच्चारण करते हुए सर्वसङ्क्षोभिणी आदि ग्यारह मुद्राओंका एकसाथ ध्यान करें। *पूजन–*'ॐ ह्रीं श्रीं सर्वसङ्क्षोभिणीमुद्रायै नमः। सर्व-सङ्क्षोभिणीमुद्रा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'का उच्चारण करके

५.*सर्ववशङ्करी-मुद्रा*–ॐ ह्रीं श्रीं सर्ववशङ्करीमुद्रायै नमः। सर्ववशङ्करीमुद्रा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

६.*सर्वोन्मादिनी-मुद्रा*–'ॐ ह्रीं श्रीं सर्वोन्मादिनीमुद्रायै नमः। सर्वोन्मादिनीमुद्रा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

७.*सर्वमहाङ्कुशा-मुद्रा*–'ॐ ह्रीं श्रीं सर्वमहाङ्कुशामुद्रायै नमः। सर्वमहाङ्कुशामुद्रा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

८.*सर्वखेचरी-मुद्रा*–'ॐ ह्रीं श्रीं सर्वखेचरीमुद्रायै नमः। सर्वखेचरीमुद्रा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

९.*सर्वबीजा-मुद्रा*–'ॐ ह्रीं श्रीं सर्वबीजामुद्रायै नमः। सर्वबीजामुद्रा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

१०.*सर्वयोनि-मुद्रा*–'ॐ ह्रीं श्रीं सर्वयोनिमुद्रायै नमः। सर्वयोनिमुद्रा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

११.*सर्वत्रिखण्डा-मुद्रा*–'ॐ ह्रीं श्रीं सर्वत्रिखण्डामुद्रायै नमः। सर्वत्रिखण्डामुद्रा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि॥२०॥'

भूपुरचक्रेश्वर्याः श्रीत्रिपुरायाः पूजनम्

ध्यानम्–

'बिम्बौष्ठीं शरदिन्दुगौरवदनां रत्नादिभूषोज्ज्वलां
विद्याक्षाब्जयुगाङ्कितैर्भुजवरैः संशोभितां त्र्यम्बकाम्।
श्रीसङ्क्षोभणिकाणिमाख्यसहितां चार्वाकिशास्त्रैर्युतां
साक्षाच्छ्रीत्रिपुरां नमामि धरणीचक्रेश्वरीं मोहिनीम्॥२१॥'

सर्वसङ्क्षोभिणी मुद्राकी श्रीपादुकाका पूजन, तर्पण तथा नमन करें।

इसी प्रकार अलग-अलग अन्य मुद्राओंकी श्रीपादुकाका पूजन, तर्पण तथा नमन करें॥२०॥

भूपुरचक्रेश्वरी श्रीत्रिपुराका पूजन–भूपुर चक्रेश्वरी श्रीत्रिपुराका ध्यानपूर्वक पूजन

पूजनम्–

श्रीत्रिपुरा–'ॐ ह्रीं श्रीं भूपुरचक्रेश्वरी-श्रीत्रिपुरायै नमः। भूपुर-चक्रेश्वरी-श्रीत्रिपुरा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि॥२१॥'

॥ इति प्रथमावरणपूजनम् ॥

करें। *ध्यान*–'बिम्बोष्ठीं शरदिन्दुगौरवदनां...मोहिनीम्॥२१॥'का उच्चारण करते हुए श्रीत्रिपुराका ध्यान करें। *पूजन*–'ॐ...नमस्करोमि॥२१॥'का उच्चारण करके श्रीत्रिपुरा-की श्रीपादुकाका पूजन, तर्पण तथा नमन करें॥२१॥

॥ इति प्रथमावरणपूजनम् ॥

द्वितीयावरणपूजनम्

॥ श्रीगायत्रीब्रह्मविद्यायै नमः ॥

वृत्तत्रय-चक्रस्य पूजनम्

ध्यानम्–

'वृत्तत्रयैः सुधवलारुणकृष्णवर्णैः
सन्निर्मितं परममातृकयोगिनीभिः।
त्रैवर्गसाधनकरं भुवि दुर्लभं च
वृत्तत्रयाख्यमपरं प्रणमामि चक्रम्॥१॥'

पूजनम्–

वृत्तत्रय-चक्रम्–'ॐ ह्रीं श्रीं वृत्तत्रयचक्राय नमः। वृत्तत्रय-चक्र-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि॥१॥'

प्रथमवृत्ते पूर्वादिदक्षिणावर्तेन कालरात्र्यादीनामेकोनत्रिंशन्मातृकानां पूजनम्

ध्यानम्–

'श्रीकालरात्रीमथ खातिताम्बां
गात्रीञ्च घण्टां विधृताम्बिकाञ्च।

---

*वृत्तत्रय-चक्रका पूजन–*वृत्तत्रय चक्रका ध्यानपूर्वक पूजन करें। *ध्यान–*'वृत्तत्रयैः...चक्रम्॥१॥'का उच्चारण करते हुए वृत्तत्रय चक्रका ध्यान करें। *पूजन–*'ॐ...नमस्करोमि॥१॥'का उच्चारण करके वृत्तत्रय चक्रकी श्रीपादुकाका पूजन, तर्पण तथा नमन करें॥१॥

प्रथम वृत्तमें पूर्वादि दक्षिणावर्त क्रमसे कालरात्री आदि ऊनतीस मातृकाओंका

ङार्णात्मिकां भीषणरूपचण्डां
श्रीछात्मिकाञ्चैव जयाख्यमूर्तिम्॥
झङ्कारिणीं ज्ञानशरीरिणीञ्च
श्रीटङ्कहस्तामतिदिव्यरूपाम्।
ठङ्कारिणीं चैव डकारिणीञ्च
ढङ्कारिणीञ्चैव णकारिणीं ताम्॥
तकारिणीं थाणिकमूर्तिरूपां
दाक्षायणीञ्चैव तथा च धात्रीम्।
नादामथो पर्वतराजकन्यां
फेट्कारिणीं बन्धिनिकां तथा ताम्॥
श्रीभद्रकालीमथ विष्णुमायां
श्रियञ्च षण्ढाञ्च सरस्वतीञ्च।
पुनश्च तां हंसवतीं समस्ता
एकोनत्रिंशच्छुभमातृकास्ताः॥
अमूः स्मितास्याः सृणिपाशहस्ताः
समुद्यदादित्यनिभास्त्रिनेत्राः।
रक्ताम्बराश्चन्द्रकलावतंसा
आद्ये च वृत्ते सततं नमामि॥२॥'

पूजनम्–

१. कालरात्री-मातृका–'ॐ ह्रीं श्रीं कालरात्रीमातृकायै नमः।

---

*पूजन–*प्रथम वृत्तमें पूर्वादि दक्षिणावर्त क्रमसे 'कालरात्री, खातिता, गात्री, घण्टा,

कालरात्री-मातृका-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

२. *खातिता-मातृका*–'ॐ ह्रीं श्रीं खातितामातृकायै नमः। खातिता-मातृका-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

३. *गात्री-मातृका*–'ॐ ह्रीं श्रीं गात्रीमातृकायै नमः। गात्री-मातृका-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

४. *घण्टा-मातृका*–'ॐ ह्रीं श्रीं घण्टामातृकायै नमः। घण्टा-मातृका-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

५. *ङार्णात्मिका-मातृका*–'ॐ ह्रीं श्रीं ङार्णात्मिकामातृकायै नमः। ङार्णात्मिका-मातृका-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

६. *चण्डा-मातृका*–'ॐ ह्रीं श्रीं चण्डामातृकायै नमः। चण्डा-मातृका-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

७. *छात्मिका-मातृका*–'ॐ ह्रीं श्रीं छात्मिकामातृकायै नमः। छात्मिका-मातृका-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

८. *जया-मातृका*–'ॐ ह्रीं श्रीं जयामातृकायै नमः। जया-मातृका-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

९. *झङ्कारिणी-मातृका*–'ॐ ह्रीं श्रीं झङ्कारिणीमातृकायै नमः। झङ्कारिणी-मातृका-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

१०. *ज्ञानरूपा-मातृका*–'ॐ ह्रीं · श्रीं ज्ञानरूपामातृकायै नमः। ज्ञानरूपा-मातृका-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

११. *टङ्कहस्ता-मातृका*–'ॐ ह्रीं श्रीं टङ्कहस्तामातृकायै नमः। टङ्कहस्तामातृका-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

१२. *ठङ्कारिणी-मातृका*–'ॐ ह्रीं श्रीं ठङ्कारिणीमातृकायै नमः। ठङ्कारिणी-मातृका-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

१३. *डकारिणी-मातृका*–'ॐ ह्रीं श्रीं डकारिणीमातृकायै नमः।

ङार्णात्मिका, चण्डा, छात्मिका, जया, झङ्कारिणी, ज्ञानरूपा, टङ्कहस्ता, ठङ्कारिणी,

डकारिणी-मातृका-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

१४. *ढङ्कारिणी-मातृका*–'ॐ ह्रीं श्रीं ढङ्कारिणीमातृकायै नमः। ढङ्कारिणी-मातृका-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

१५. *णकारिणी-मातृका*–'ॐ ह्रीं श्रीं णकारिणीमातृकायै नमः। णकारिणी-मातृका-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

१६. *तकारिणी-मातृका*–'ॐ ह्रीं श्रीं तकारिणीमातृकायै नमः। तकारिणी-मातृका-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

१७. *थाणी-मातृका*–'ॐ ह्रीं श्रीं थाणीमातृकायै नमः। थाणी-मातृका-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

१८. *दाक्षायणी-मातृका*–'ॐ ह्रीं श्रीं दाक्षायणीमातृकायै नमः। दाक्षायणी-मातृका-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

१९. *धात्री-मातृका*–'ॐ ह्रीं श्रीं धात्रीमातृकायै नमः। धात्री-मातृका-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

२०. *नादा-मातृका*–'ॐ ह्रीं श्रीं नादामातृकायै नमः। नादा-मातृका-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

२१. *पार्वती-मातृका*–'ॐ ह्रीं श्रीं पार्वतीमातृकायै नमः। पार्वती-मातृका-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

२२. *फेट्कारिणी-मातृका*–'ॐ ह्रीं श्रीं फेट्कारिणीमातृकायै नमः। फेट्कारिणी-मातृका-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

२३. *बन्धिनी-मातृका*–'ॐ ह्रीं श्रीं बन्धिनीमातृकायै नमः। बन्धिनी-मातृका-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

२४. *भद्रकाली-मातृका*–'ॐ ह्रीं श्रीं भद्रकालीमातृकायै नमः। भद्रकाली-मातृका-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

२५. *माया-मातृका*–'ॐ ह्रीं श्रीं मायामातृकायै नमः। माया-

डकारिणी, ढङ्कारिणी, णकारिणी, तकारिणी, थाणी, दाक्षायणी, धात्री, नादा, पार्वती,

मातृका-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

२६.*श्री-मातृका*–'ॐ ह्रीं श्रीं श्रीमातृकायै नमः। श्री-मातृका-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

२७.*षण्ढ-मातृका*–'ॐ ह्रीं श्रीं षण्ढमातृकायै नमः। षण्ढ-मातृका-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

२८.*सरस्वती-मातृका*–'ॐ ह्रीं श्रीं सरस्वतीमातृकायै नमः। सरस्वती-मातृका-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

२९.*हंस-मातृका*–'ॐ ह्रीं श्रीं हंसमातृकायै नमः। हंस-मातृका-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि॥२॥'

द्वितीयवृत्ते पूर्वादिदक्षिणावर्तेनाऽमृतादीनां षोडशमातृकाम्बानां पूजनम्

ध्यानम्–

'अथोऽमृतां मात्रभिधाम्बिकां ताम्
आकर्षिणीञ्चैव महेन्द्रशक्तिम्।
ईशानिकां शक्तिमुमाख्यशक्तिं
महोर्ध्वकेशीं तत ऋद्धिरात्रीम्॥

फेट्कारिणी, बन्धिनी, भद्रकाली, माया, श्री, षण्ढा, सरस्वती तथा हंसवती' इन ऊनतीस मातृकाओंका ध्यानपूर्वक पूजन करें। *ध्यान*–'श्रीकालरात्री ... नमामि॥२॥'का उच्चारण करते हुए एकसाथ कालरात्री आदि ऊनतीस मातृकाओंका ध्यान करें। *पूजन*–'ॐ ह्रीं श्रीं कालरात्रीमातृकायै नमः। कालरात्रीमातृका-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'का उच्चारण करके कालरात्री मातृकाकी श्रीपादुकाका पूजन, तर्पण तथा नमन करें।

इसी प्रकार अलग-अलग अन्य मातृकाओंकी श्रीपादुकाका पूजन, तर्पण तथा नमन करें॥२॥

द्वितीय वृत्तमें पूर्वादि दक्षिणावर्त क्रमसे अमृता आदि षोलह मातृकाम्बाओंका पूजन–द्वितीय वृत्तमें पूर्वादि दक्षिणावर्त क्रमसे 'अमृता, आकर्षिणी, इन्द्राणी, ईशानी,

ऋद्धीश्वरीञ्चैव लृतां लृकाञ्च
तामेकपादाभिधमातृकाम्बाम्।
ऐश्वर्यिकां तां प्रणवात्मिकां तां
महौषधाञ्चैव महाम्बिकाञ्च।।
वर्णात्मिकाः षोडश मातृकाम्बा
एता हि रक्ताः शरचापहस्ताः।
स्मिताननां इन्दुधरास्त्रिनेत्रा
मध्यस्थवृत्ते सततं नमामि।।३।।'

पूजनम्–

१.अमृता-मातृकाम्बा–'ॐ ह्रीं श्रीं अमृतामातृकाम्बायै नमः। अमृता-मातृकाम्बा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

२.आकर्षिणी-मातृकाम्बा–'ॐ ह्रीं श्रीं आकर्षिणीमातृकाम्बायै नमः। आकर्षिणीमातृकाम्बा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

३.इन्द्राणी-मातृकाम्बा–'ॐ ह्रीं श्रीं इन्द्राणीमातृकाम्बायै नमः। इन्द्राणी-मातृकाम्बा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

४.ईशानी-मातृकाम्बा–'ॐ ह्रीं श्रीं ईशानीमातृकाम्बायै नमः। ईशानी-मातृकाम्बा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

५.उमा-मातृकाम्बा–'ॐ ह्रीं श्रीं उमामातृकाम्बायै नमः। उमा-मातृकाम्बा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

६.ऊर्ध्वकेशी-मातृकाम्बा–'ॐ ह्रीं श्रीं ऊर्ध्वकेशीमातृकाम्बायै नमः। ऊर्ध्वकेशीमातृकाम्बा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

७.ऋद्धिरात्री-मातृकाम्बा–'ॐ ह्रीं श्रीं ऋद्धिरात्रीमातृकाम्बायै

उमा, ऊर्ध्वकेशी, ऋद्धिरात्री, ऋद्धीश्वरी, लृता, लृका, एकपादा, ऐश्वर्यिका,

नमः। ऋद्धिरात्रीमातृकाम्बा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

८.ऋद्धीश्वरी-मातृकाम्बा–'ॐ ह्रीं श्रीं ऋद्धीश्वरीमातृकाम्बायै नमः। ऋद्धीश्वरी-मातृकाम्बा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

९.लृता-मातृकाम्बा–'ॐ ह्रीं श्रीं लृतामातृकाम्बायै नमः। लृता-मातृकाम्बा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

१०.लृका-मातृकाम्बा–'ॐ ह्रीं श्रीं लृका-मातृकाम्बायै नमः। लृका-मातृकाम्बा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

११.एकपादा-मातृकाम्बा–'ॐ ह्रीं श्रीं एकपादामातृकाम्बायै नमः। एकपादा-मातृकाम्बा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

१२.ऐश्वर्यिका-मातृकाम्बा–'ॐ ह्रीं श्रीं ऐश्वर्यिकामातृकाम्बायै नमः। ऐश्वर्यिका-मातृकाम्बा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

१३.ओङ्कारात्मिका-मातृकाम्बा–'ॐ ह्रीं श्रीं ओङ्कारात्मिका-मातृकाम्बायै नमः। ओङ्कारात्मिका-मातृकाम्बा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

१४.औषधा-मातृकाम्बा–'ॐ ह्रीं श्रीं औषधामातृकाम्बायै नमः। औषधा-मातृकाम्बा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

१५.अम्बिका-मातृकाम्बा–'ॐ ह्रीं श्रीं अम्बिकामातृकाम्बायै नमः। अम्बिका-मातृकाम्बा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

१६.अक्षरात्मिका-मातृकाम्बा–'ॐ ह्रीं श्रीं अक्षरात्मिका-मातृकाम्बायै नमः। अक्षरात्मिका-मातृकाम्बाश्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।।३।।'

ओङ्कारात्मिका, औषधा, अम्बिका तथा अक्षरात्मिका' इन षोलह मातृकाम्बाओंका ध्यान पूर्वक पूजन करें। *ध्यान*–'अथोऽमृतां...सततं नमामि।।३।।'का उच्चारण करते हुए एकसाथ अमृता आदि षोलह मातृकाम्बाओंका ध्यान करें। *पूजन*–'ॐ ह्रीं श्रीं अमृतामातृकाम्बायै ... नमस्करोमि।'का उच्चारण करके अमृता मातृकाम्बाकी श्रीपादुकाका पूजन, तर्पण तथा नमन करें। इसी प्रकार अलग-अलग अन्य

तृतीयवृत्ते पूर्वादिदक्षिणावर्तेन कामेश्वर्यादीनां षोडशनित्याकलानां पूजनम्

ध्यानम्–

'कामेश्वरीं श्रीभगमालिनीञ्च
क्लिन्नाञ्च भेरुण्डकलां हुतस्थाम्।
वज्रेश्वरीं श्रीशिवदूतिकाम्बां
श्रीसत्वराम्बां कुलसुन्दरीञ्च।।
ततश्च श्रीमद्विमलाञ्च नील-
पताकिनीं श्रीविजयात्मिकाञ्च।
श्रीमङ्गलां ज्वालशिखां विचित्रां
श्रीसुन्दरीं षोडश नित्यरूपाः।।
एता हि साक्षात्तिथिमातृकाम्बाः
पाशाङ्कुशौ चापशरान्दधानाः।
चतुर्भुजा बालरविप्रभास्याः
तार्तीयवृत्ते सततं स्मरामि।।४।।'

पूजनम्–

१.कामेश्वरी-नित्याकला–'ॐ ह्रीं श्रीं कामेश्वरीनित्याकलायै नमः। कामेश्वरी-नित्याकला-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

२.भगमालिनी-नित्याकला–'ॐ ह्रीं श्रीं भगमालिनी-नित्याकलायै नमः। भगमालिनी-नित्याकला-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

३.नित्यक्लिन्ना-नित्याकला–'ॐ ह्रीं श्रीं नित्यक्लिन्ना-नित्या-

---

मातृकाम्बाओंकी श्रीपादुकाका पूजन, तर्पण तथा नमन करें।।३।।

तृतीय वृत्तमें पूर्वादि दक्षिणावर्त क्रमसे कामेश्वरी आदि षोलह नित्या-कलाओंका

कलायै नमः। नित्यक्लिन्ना-नित्याकला-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

४.*भेरुण्डा-नित्याकला*–'ॐ ह्रीं श्रीं भेरुण्डा-नित्याकलायै नमः। भेरुण्डा-नित्याकला-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

५.*वह्निवासिनी-नित्याकला*–'ॐ ह्रीं श्रीं वह्निवासिनी-नित्याकलायै नमः। वह्निवासिनी-नित्याकला-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

६.*वज्रेश्वरी-नित्याकला*–'ॐ ह्रीं श्रीं वज्रेश्वरीनित्याकलायै नमः। वज्रेश्वरी-नित्याकला-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

७.*शिवदूती-नित्याकला*–'ॐ ह्रीं श्रीं शिवदूतीनित्याकलायै नमः। शिवदूती-नित्याकला-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

८.*त्वरिता-नित्याकला*–'ॐ ह्रीं श्रीं त्वरितानित्याकलायै नमः। त्वरिता-नित्याकला-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

९.*कुलसुन्दरी-नित्याकला*–'ॐ ह्रीं श्रीं कुलसुन्दरीनित्याकलायै नमः। कुलसुन्दरीनित्याकला-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

१०.*विमला-नित्याकला*–'ॐ ह्रीं श्रीं विमलानित्याकलायै नमः। विमला-नित्याकला-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

११.*नीलपताका-नित्याकला*–'ॐ ह्रीं श्रीं नीलपताका-नित्याकलायै नमः। नीलपताका-नित्याकला-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

१२.*विजया-नित्याकला*–'ॐ ह्रीं श्रीं विजयानित्याकलायै नमः। विजया-नित्याकला-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

पूजन–तृतीय वृत्तमें पूर्वादि दक्षिणावर्त क्रमसे 'कामेश्वरी, भगमालिनी, नित्यक्लिन्ना, भेरुण्डा, वह्निवासिनी, वज्रेश्वरी, शिवदूती, त्वरिता, कुलसुन्दरी, विमला, नीलपताका, विजया, सर्वमङ्गला, ज्वालामालिनी, विचित्रा तथा श्रीसुन्दरी' इन षोलह नित्या कलाओंका ध्यान पूर्वक पूजन करें। *ध्यान*–'कामेश्वरीं...सततं स्मरामि॥४॥'का

१३. *सर्वमङ्गला-नित्याकला*–'ॐ ह्रीं श्रीं सर्वमङ्गला-नित्याकलायै नमः। सर्वमङ्गला-नित्याकला-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

१४. *ज्वालामालिनी-नित्याकला*–'ॐ ह्रीं श्रीं ज्वालामालिनी-नित्याकलायै नमः। ज्वालामालिनी-नित्याकला-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

१५. *विचित्रा-नित्याकला*–'ॐ ह्रीं श्रीं विचित्रानित्याकलायै नमः। विचित्रा-नित्याकला-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

१६. *श्रीसुन्दरी-नित्याकला*–'ॐ ह्रीं श्रीं श्रीसुन्दरीनित्याकलायै नमः। श्रीसुन्दरी-नित्याकला-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि॥४॥'

वृत्तत्रय-चक्रेश्वर्याः त्रिपुरेशिन्याः पूजनम्

ध्यानम्–

'तप्तस्वर्णनिभां स्मितास्यकमलां विद्यामभीतिं वरं
चाक्षस्रग्दधतीं चतुर्भुजधरां चन्द्रार्द्धचूडामणिम्।
शास्त्रस्मार्तमहासुयोनिगरिमासिद्धित्रयैः संयुतां
वृत्ताख्ये त्रिपुरेशिनीं भगवतीं चक्रेश्वरीं नौम्यहम्॥५॥'

पूजनम्–

उच्चारण करते हुए एकसाथ कामेश्वरी आदि षोलह मातृकाम्बाओंका ध्यान करें।

पूजन–'ॐ ह्रीं श्रीं कामेश्वरीनित्याकलायै नमः। कामेश्वरी-नित्याकला-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'का उच्चारण करके कामेश्वरी नित्याकलाकी श्रीपादुकाका पूजन, तर्पण तथा नमन करें।

इसी प्रकार अलग-अलग अन्य नित्याकलाओंकी श्रीपादुकाका पूजन, तर्पण तथा नमन करें॥४॥

वृत्तत्रय चक्रेश्वरी त्रिपुरेशिनीका पूजन–वृत्तत्रय चक्रेश्वरी त्रिपुरेशिनीका ध्यानपूर्वक

त्रिपुरेशिनी–'ॐ ह्रीं श्रीं वृत्तत्रयचक्रेश्वरी-त्रिपुरेशिन्यै नमः। वृत्तत्रय-चक्रेश्वरी-त्रिपुरेशिनी-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि॥५॥'

॥ इति द्वितीयावरणपूजनम् ॥

पूजन करें। *ध्यान*–'तप्तस्वर्णनिभां...चक्रेश्वरीं नौम्यहम्॥५॥'का उच्चारण करते हुए वृत्तत्रय चक्रेश्वरी त्रिपुरेशिनीका ध्यान करें। *पूजन*–'ॐ...नमस्करोमि॥५॥'का उच्चारण करके वृत्तत्रय चक्रेश्वरी त्रिपुरेशिनीकी श्रीपादुकाका पूजन, तर्पण तथा नमन करें॥५॥

॥ इति द्वितीयावरणपूजनम् ॥

तृतीयावरणपूजनम्

॥ श्रीगायत्रीब्रह्मविद्यायै नमः ॥

षोडशदल-चक्रस्य पूजनम्

ध्यानम्–

'श्रीसर्वाशापूरकं पद्मरूपं
दिव्यं शुद्धं श्रीनिशानाथतुल्यम्।
रम्यैः पत्रैरिन्दुभिः शोभमानं
वन्दे चक्रं श्रीसुधावर्षकं हि॥१॥'

पूजनम्–

षोडशदल-चक्रम्–'ॐ ह्रीं श्रीं षोडशदलचक्राय नमः। षोडश-दल-चक्र-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि॥१॥'

स्वाग्रतो वामावर्तेन कामाकर्षिण्यादीनां षोडशनित्यशक्तीनां पूजनम्

ध्यानम्–

'आदौ कामाकर्षिणीं नित्यशक्तिं
श्रीमद्बुद्ध्याकर्षिणीं नित्यशक्तिम्।

---

*षोडशदल चक्रका पूजन–*षोडशदल चक्रका ध्यानपूर्वक पूजन करें। *ध्यान–* 'श्रीसर्वाशापूरकं...श्रीसुधावर्षकं हि॥१॥'का उच्चारण करते हुए षोडशदल चक्रका ध्यान करें। *पूजन–*'ॐ...नमस्करोमि॥१॥'का उच्चारण करके षोडशदल चक्रकी श्रीपादुकाका पूजन, तर्पण तथा नमन करें॥१॥

*अपने सम्मुखसे वामावर्त क्रमसे कामाकर्षिणी आदि षोलह नित्य-शक्तियोंका पूजन–*अपने सम्मुखसे वामावर्त क्रमसे 'कामाकर्षिणी, बुद्ध्याकर्षिणी, अहङ्कारा-

चाहङ्कारकर्षिणीं नित्यशक्तिं
भूयः शब्दाकर्षिणीं नित्यशक्तिम्।।
देवीं स्पर्शाकर्षिणीं नित्यशक्तिं
चान्यां रूपाकर्षिणीं नित्यशक्तिम्।
साक्षान्नित्यां श्रीरसाकर्षिणीं तां
भूयो गन्धाकर्षिणीं नित्यशक्तिम्।।
देवीं चित्ताकर्षिणीं नित्यशक्तिं
श्रीमद्धैर्याकर्षिणीं नित्यशक्तिम्।
श्रीमत्स्मृत्याकर्षिणीं नित्यशक्तिं
श्रीमन्नामाकर्षिणीं नित्यशक्तिम्।।
भूयो बीजाकर्षिणीं नित्यशक्तिं
साक्षादात्माकर्षिणीं नित्यशक्तिम्।
नित्यां शक्तिञ्चामृतकर्षिणीं तां
पश्चाद्देहाकर्षिणीं नित्यशक्तिम्।।
वन्दे श्रीमद्गुप्तयोगिन्य एताः
शुभ्रास्त्र्यक्षाः श्रीनिशानाथभूषाः।
हस्तैः पाशं चाङ्कुशं स्फाटिकञ्च
पूर्णं पात्रं सद्वरं सन्दधानाः।।२।।'

पूजनम्–

१.कामाकर्षिणी-नित्यशक्तिः–'ॐ ह्रीं श्रीं कामाकर्षिणी-नित्य-

कर्षिणी, शब्दाकर्षिणी, स्पर्शाकर्षिणी, रूपाकर्षिणी, रसाकर्षिणी, गन्धाकर्षिणी,

शक्तये नमः। कामाकर्षिणी-नित्यशक्ति-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

२.*बुद्ध्याकर्षिणी-नित्यशक्तिः*–'ॐ ह्रीं श्रीं बुद्ध्याकर्षिणी-नित्यशक्तये नमः। बुद्ध्याकर्षिणी-नित्यशक्ति-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

३.*अहङ्काराकर्षिणी-नित्यशक्तिः*–'ॐ ह्रीं श्रीं अहङ्काराकर्षिणी-नित्यशक्तये नमः। अहङ्काराकर्षिणी-नित्यशक्ति-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

४.*शब्दाकर्षिणी-नित्यशक्तिः*–'ॐ ह्रीं श्रीं शब्दाकर्षिणी-नित्यशक्तये नमः। शब्दाकर्षिणी-नित्यशक्ति-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

५.*स्पर्शाकर्षिणी-नित्यशक्तिः*–'ॐ ह्रीं श्रीं स्पर्शाकर्षिणी-नित्यशक्तये नमः। स्पर्शाकर्षिणी-नित्यशक्ति-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

६.*रूपाकर्षिणी-नित्यशक्तिः*–'ॐ ह्रीं श्रीं रूपाकर्षिणी-नित्यशक्तये नमः। रूपाकर्षिणी-नित्यशक्ति-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

७.*रसाकर्षिणी-नित्यशक्तिः*–'ॐ ह्रीं श्रीं रसाकर्षिणी-नित्यशक्तये नमः। रसाकर्षिणी-नित्यशक्ति-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

८.*गन्धाकर्षिणी-नित्यशक्तिः*–'ॐ ह्रीं श्रीं गन्धाकर्षिणी-नित्यशक्तये नमः। गन्धाकर्षिणी-नित्यशक्ति-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

९.*चित्ताकर्षिणी-नित्यशक्तिः*–'ॐ ह्रीं श्रीं चित्ताकर्षिणी-नित्यशक्तये नमः। चित्ताकर्षिणी-नित्यशक्ति-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि

चित्ताकर्षिणी, धैर्याकर्षिणी, स्मृत्याकर्षिणी, नामाकर्षिणी, बीजाकर्षिणी, आत्मा-

नमस्करोमि।'

१०.धैर्याकर्षिणी-नित्यशक्तिः–'ॐ ह्रीं श्रीं धैर्याकर्षिणी-नित्यशक्तये नमः। धैर्याकर्षिणी-नित्यशक्ति-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

११.स्मृत्याकर्षिणी-नित्यशक्तिः–'ॐ ह्रीं श्रीं स्मृत्याकर्षिणी-नित्यशक्तये नमः। स्मृत्याकर्षिणी-नित्यशक्ति-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

१२.नामाकर्षिणी-नित्यशक्तिः–'ॐ ह्रीं श्रीं नामाकर्षिणी-नित्यशक्तये नमः। नामाकर्षिणी-नित्यशक्ति-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

१३.बीजाकर्षिणी-नित्यशक्तिः–'ॐ ह्रीं श्रीं बीजाकर्षिणी-नित्यशक्तये नमः। बीजाकर्षिणी-नित्यशक्ति-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

१४.आत्माकर्षिणी-नित्यशक्तिः–'ॐ ह्रीं श्रीं आत्माकर्षिणी-नित्यशक्तये नमः। आत्माकर्षिणी-नित्यशक्ति-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

१५.अमृताकर्षिणी-नित्यशक्तिः–'ॐ ह्रीं श्रीं अमृताकर्षिणी-नित्यशक्तये नमः। अमृताकर्षिणी-नित्यशक्ति-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

१६.शरीराकर्षिणी-नित्यशक्तिः–'ॐ ह्रीं श्रीं शरीराकर्षिणी-नित्यशक्तये नमः। शरीराकर्षिणी-नित्यशक्ति-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।।२।।'

कर्षिणी, अमृताकर्षिणी तथा शरीराकर्षिणी' इन षोलह नित्य-शक्तियोंका ध्यानपूर्वक पूजन करें। *ध्यान*–'आदौ...सन्दधानाः।।२।।'का उच्चारण करते हुए एकसाथ कामाकर्षिणी आदि षोलह नित्य-शक्तियोंका ध्यान करें। *पूजन*–'ॐ ह्रीं श्रीं कामाकर्षिणीनित्यशक्तये नमः। कामाकर्षिणी-नित्यशक्ति-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि

षोडशदल-चक्रेश्वर्याः त्रिपुरेश्वर्याः पूजनम्

ध्यानम्–

'तां विद्रावणिकां सुसिद्धिलघिमाबौद्धाख्यशास्त्रैर्युतां
साक्षादिन्दुमरीचिगौरवदनां स्मेराननाम्भोरुहाम्।
पाशं सत्यसृणिं ह्यभीतिवरदे दोर्भिः सदा बिभ्रतीं
वन्देऽहं त्रिपुरेश्वरीं शशिधरां सोमात्मचक्रेश्वरीम्॥३॥'

पूजनम्–

त्रिपुरेश्वरी–'ॐ ह्रीं श्रीं षोडशदलचक्रेश्वरीत्रिपुरेश्वर्यै नमः। षोडशदलचक्रेश्वरी-त्रिपुरेश्वरी-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि॥३॥'

॥ इति तृतीयावरणपूजनम् ॥

नमस्करोमि।'का उच्चारण करके कामाकर्षिणी नित्यशक्तिकी श्रीपादुकाका पूजन, तर्पण तथा नमन करें। इसी प्रकार अलग-अलग अन्य नित्यशक्तियोंकी श्रीपादुकाका पूजन, तर्पण तथा नमन करें॥२॥

षोडशदल चक्रेश्वरी त्रिपुरेश्वरीका पूजन–षोडशदल चक्रेश्वरी त्रिपुरेश्वरीका ध्यान पूर्वक पूजन करें। *ध्यान*–'तां...सोमात्मचक्रेश्वरीम्॥३॥'का उच्चारण करते हुए षोडशदल चक्रेश्वरी त्रिपुरेश्वरीका ध्यान करें। *पूजन*–'ॐ...नमस्करोमि॥३॥'का उच्चारण करके षोडशदल चक्रेश्वरी त्रिपुरेश्वरीकी श्रीपादुकाका पूजन, तर्पण तथा नमन करें॥३॥

॥ इति तृतीयावरणपूजनम् ॥

चतुर्थावरणपूजनम्

।। श्रीगायत्रीब्रह्मविद्यायै नमः ।।

अष्टदल-चक्रस्य पूजनम्

ध्यानम्–

'देदीप्यमानं सुरसैन्यपूज्यं
शुभाष्टपत्राब्जमयं मनोज्ञम्।
बन्धूकपुष्पारुणविग्रहं श्री-
सङ्क्षोभणं चक्रमहं भजामि।।१।।'

पूजनम्–

अष्टदल-चक्रम्–'ॐ ह्रीं श्रीं अष्टदलचक्राय नमः। अष्टदल-चक्र-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।।१।।'

पश्चिमादिदक्षिणान्तं वायव्यादिनैर्ऋतान्तश्चाष्टदिक्षु अनङ्गकुसुमादीनामष्टदेवीनां पूजनम्

ध्यानम्–

'आदावनङ्गकुसुमां स्मरमेखलाम्बां
साक्षादनङ्गमदनां मदनातुराञ्च।

अष्टदल चक्रका पूजन–अष्टदल चक्रका ध्यानपूर्वक पूजन करें। *ध्यान*–'देदीप्यमानं...भजामि।।१।।'का उच्चारण करते हुए अष्टदल चक्रका ध्यान करें। *पूजन*–'ॐ...नमस्करोमि।।१।।'का उच्चारण करके अष्टदल चक्रकी श्रीपादुकाका पूजन, तर्पण तथा नमन करें।।१।।

पश्चिमसे दक्षिण तथा वायव्यसे नैर्ऋत पर्यन्त आठों दिशाओंमें अनङ्गकुसुमा

रेखान्तथा मदनवेगिनिकाख्यदेवीं
मारांकुशां मदनमालिनिकां समक्षम्।।
इत्थं स्मितास्त्रिनयना नवयौवनाढ्या
बन्धूकपुष्पसदृशारुणरम्यदेहाः।
नीलाब्जनीलमणिपाशसृणीन्दधाना
अष्टौ हि गुप्ततरयोगिनिकाः स्मरामि।।२।।'

पूजनम्–

१.अनङ्गकुसुमा-देवी–'ॐ ह्रीं श्रीं अनङ्गकुसुमादेव्यै नमः। अनङ्गकुसुमा-देवी-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

२.अनङ्गमेखला-देवी–'ॐ ह्रीं श्रीं अनङ्गमेखलादेव्यै नमः। अनङ्गमेखला-देवी-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

३.अनङ्गमदना-देवी–'ॐ ह्रीं श्रीं अनङ्गमदनादेव्यै नमः। अनङ्ग-मदना-देवी-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

४.अनङ्गमदनातुरा-देवी–'ॐ ह्रीं श्रीं अनङ्गमदनातुरादेव्यै नमः। अनङ्गमदनातुरा-देवी-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

५.अनङ्गरेखा-देवी–'ॐ ह्रीं श्रीं अनङ्गरेखादेव्यै नमः। अनङ्ग-रेखा-देवी-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

६.अनङ्गवेगिनी-देवी–'ॐ ह्रीं श्रीं अनङ्गवेगिनीदेव्यै नमः। अनङ्गवेगिनी-देवी-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

७.अनङ्गाङ्कुशा-देवी–'ॐ ह्रीं श्रीं अनङ्गाङ्कुशादेव्यै नमः। अनङ्गा-ङ्कुशा-देवी-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

आदि आठ देवियोंका पूजन–पश्चिमसे दक्षिण तथा वायव्यसे नैर्ऋत पर्यन्त आठों दिशाओंमें 'अनङ्गकुसुमा, अनङ्गमेखला, अनङ्गमदना, अनङ्गमदनातुरा, अनङ्गरेखा, अनङ्गवेगिनी, अनङ्गाङ्कुशा तथा अनङ्गमालिनी' इन आठ देवियोंका ध्यानपूर्वक पूजन

८.अनङ्गमालिनी-देवी–'ॐ ह्रीं श्रीं अनङ्गमालिनीदेव्यै नमः। अनङ्गमालिनी-देवी-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि॥२॥'

अष्टदल-चक्रेश्वर्याः त्रिपुरसुन्दर्याः पूजनम्

ध्यानम्–

'सर्वाकर्षिणिका-सुसिद्धिमहिमा-श्रीगाणपत्यैर्युता
विद्याक्षाभयसद्वराङ्कितकरा नेत्रत्रयोद्भासिता।
ध्येया सा किल सुन्दरी त्रिपुरयुक् व्योमात्मचक्रेश्वरी॥३॥'

पूजनम्–

त्रिपुरसुन्दरी–'ॐ ह्रीं श्रीं अष्टदलचक्रेश्वरीत्रिपुरसुन्दर्यै नमः। अष्टदलचक्रेश्वरी-त्रिपुरसुन्दरी-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि॥३॥'

॥ इति चतुर्थावरणपूजनम् ॥

करें। *ध्यान–*'आदावनङ्गकुसुमां...स्मरामि॥२॥'का उच्चारण करते हुए एकसाथ अनङ्गकुसुमा आदि आठ देवियोंका ध्यान करें। *पूजन–*'ॐ ह्रीं श्रीं अनङ्गकुसुमादेव्यै नमः। अनङ्गकुसुमादेवी-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'का उच्चारण करके अनङ्गकुसुमा देवीकी श्रीपादुकाका पूजन, तर्पण तथा नमन करें।

इसी प्रकार अलग-अलग अन्य देवियोंकी श्रीपादुकाका पूजन, तर्पण तथा नमन करें॥२॥

*अष्टदलचक्रेश्वरी त्रिपुरसुन्दरीका पूजन–*अष्टदलचक्रेश्वरी त्रिपुरसुन्दरीका ध्यानपूर्वक पूजन करें। *ध्यान–*'सर्वाकर्षिणिका...व्योमात्मचक्रेश्वरी॥३॥'का उच्चारण करते हुए अष्टदलचक्रेश्वरी त्रिपुरसुन्दरीका ध्यान करें। *पूजन–*'ॐ...नमस्करोमि॥३॥'का उच्चारण करके अष्टदलचक्रेश्वरी त्रिपुरसुन्दरीकी श्रीपादुकाका पूजन, तर्पण तथा नमन करें॥३॥

॥ इति चतुर्थावरणपूजनम् ॥

●

पञ्चमावरणपूजनम्

॥ श्रीगायत्रीब्रह्मविद्यायै नमः ॥

चतुर्दशार-चक्रस्य पूजनम्

ध्यानम्–

'सिन्दूरवर्णान्वितचक्रमन्यच्
चतुर्दशारैश्च विनिर्मितञ्च।
सौभाग्यदं देवगणैः सदार्च्यं
स्मरामि भक्त्या मनसा सदैव॥१॥'

पूजनम्–

चतुर्दशार-चक्रम्–'ॐ ह्रीं श्रीं चतुर्दशारचक्राय नमः। चतुर्दशार-चक्र-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि॥१॥'

पश्चिमादिवामावर्तेन सर्वसङ्क्षोभिण्यादीनां चतुर्दशशक्तीनां पूजनम्

ध्यानम्–

'सङ्क्षोभिणीं विद्रवणात्मशक्तिं
चाकर्षिणीं चन्द्रविवर्द्धिनीञ्च।

---

*चतुर्दशार-चक्रका पूजन–*चतुर्दशार चक्रका ध्यानपूर्वक पूजन करें। *ध्यान–*'सिन्दूरवर्णा...मनसा सदैव॥१॥'का उच्चारण करते हुए चतुर्दशार चक्रका ध्यान करें। *पूजन–*'ॐ...नमस्करोमि॥१॥'का उच्चारण करके चतुर्दशार चक्रकी श्रीपादुकाका पूजन, तर्पण तथा नमन करें॥१॥

पश्चिमादि वामावर्त क्रमसे सर्वसङ्क्षोभिणी आदि चौदह शक्तियोंका पूजन–

सम्मोहिनीं स्तम्भनकारिणीं तां
विजृम्भिणीं सर्ववशङ्करीञ्च॥
श्रीरञ्जिनीं श्रीमदमादिनीञ्च
ह्यर्थांश्च सर्वांश्च सुसाधिनीं ताम्।
सम्पत्तिपूर्णामथ मन्त्रदेहां
द्वन्द्वक्षयङ्कारिणिकाभिधाञ्च॥
दिक्तुर्यसङ्ख्या इतरा हि रक्ताः
श्रीसम्प्रदायाभिधयोगिनीस्ताः।
पाशाङ्कुशौ दर्पणपानपात्रे
करैर्दधानाः सततं नमामि॥२॥'

पूजनम्–

१. *सर्वसङ्क्षोभिणी-शक्तिः*–'ॐ ह्रीं श्रीं सर्वसङ्क्षोभिणीशक्तये नमः। सर्वसङ्क्षोभिणी-शक्ति-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

२. *सर्वविद्राविणी-शक्तिः*–'ॐ ह्रीं श्रीं सर्वविद्राविणीशक्तये नमः। सर्वविद्राविणी-शक्ति-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

३. *सर्वाकर्षिणी-शक्तिः*–'ॐ ह्रीं श्रीं सर्वाकर्षिणीशक्तये नमः। सर्वाकर्षिणी-शक्ति-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

४. *सर्वाह्लादिनी-शक्तिः*–'ॐ ह्रीं श्रीं सर्वाह्लादिनीशक्तये नमः। सर्वाह्लादिनी-शक्ति-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

५. *सर्वसम्मोहिनी-शक्तिः*–'ॐ ह्रीं श्रीं सर्वसम्मोहिनीशक्तये नमः। सर्वसम्मोहिनी-शक्ति-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

पश्चिमादि वामावर्त क्रमसे 'सर्वसङ्क्षोभिणी, सर्वविद्राविणी, सर्वाकर्षिणी, सर्वाह्लादिनी,

६. *सर्वस्तम्भिनी-शक्तिः*–'ॐ ह्रीं श्रीं सर्वस्तम्भिनीशक्तये नमः। सर्वस्तम्भिनी-शक्ति-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

७. *सर्वजृम्भिणी-शक्तिः*–'ॐ ह्रीं श्रीं सर्वजृम्भिणीशक्तये नमः। सर्वजृम्भिणी-शक्ति-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

८. *सर्ववशङ्करी-शक्तिः*–'ॐ ह्रीं श्रीं सर्ववशङ्करीशक्तये नमः। सर्ववशङ्करी-शक्ति-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

९. *सर्वरञ्जिनी-शक्तिः*–'ॐ ह्रीं श्रीं सर्वरञ्जिनीशक्तये नमः। सर्वरञ्जिनी-शक्ति-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

१०. *सर्वोन्मादिनी-शक्तिः*–'ॐ ह्रीं श्रीं सर्वोन्मादिनीशक्तये नमः। सर्वोन्मादिनी-शक्ति-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

११. *सर्वार्थसाधिनी-शक्तिः*–'ॐ ह्रीं श्रीं सर्वार्थसाधिनीशक्तये नमः। सर्वार्थसाधिनी-शक्ति-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

१२. *सर्वसम्पत्तिपूर्णा-शक्तिः*–'ॐ ह्रीं श्रीं सर्वसम्पत्तिपूर्णाशक्तये नमः। सर्वसम्पत्तिपूर्णा-शक्ति-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

१३. *सर्वमन्त्रमयी-शक्तिः*–'ॐ ह्रीं श्रीं सर्वमन्त्रमयीशक्तये नमः। सर्वमन्त्रमयी-शक्ति-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

१४. *सर्वद्वन्द्वक्षयङ्करी-शक्तिः*–'ॐ ह्रीं श्रीं सर्वद्वन्द्वक्षयङ्करीशक्तये नमः। सर्वद्वन्द्वक्षयङ्करी-शक्ति-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि॥२॥'

सर्वसम्मोहिनी, सर्वस्तम्भिनी, सर्वजृम्भिणी, सर्ववशङ्करी, सर्वरञ्जिनी, सर्वोन्मादिनी, सर्वार्थसाधिनी, सर्वसम्पत्तिपूर्णा, सर्वमन्त्रमयी तथा सर्वद्वन्द्वक्षयङ्करी' इन चौदह शक्तियोंका ध्यानपूर्वक पूजन करें। *ध्यान*–'सङ्क्षोभिणीं...सततं नमामि॥२॥'का उच्चारण करते हुए एकसाथ सर्वसङ्क्षोभिणी आदि चौदह शक्तियोंका ध्यान करें। *पूजन*–'ॐ ह्रीं श्रीं सर्वसङ्क्षोभिणीशक्तये नमः। सर्वसङ्क्षोभिणीशक्ति-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'का उच्चारण करके सर्वसङ्क्षोभिणी शक्तिकी श्रीपादुकाका पूजन, तर्पण तथा नमन करें। इसी प्रकार अलग-अलग अन्य शक्तियोंकी श्रीपादुकाका पूजन, तर्पण तथा नमन करें॥२॥

चतुर्दशार-चक्रेश्वर्याः त्रिपुरवासिन्याः पूजनम्

ध्यानम्–

'सिन्दूरारुणविग्रहा स्मितमुखी दिव्यैश्चतुर्भिर्भुजैः
विद्यास्फाटिकमालिकाभयवरान् संविभ्रती त्र्यम्बका।
सिद्धीशित्व-वशङ्करी-विविधषण्न्यायादिशास्त्रैर्युता
ध्येया सा त्रिकवासिनी त्रिपुरयुङ् मायात्मचक्रेश्वरी।।३।।'

पूजनम्–

त्रिपुरवासिनी–'ॐ ह्रीं श्रीं चतुर्दशार-चक्रेश्वरी-त्रिपुरवासिन्यै नमः। चतुर्दशार-चक्रेश्वरी-त्रिपुरवासिनी-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।।३।।'

।। इति पञ्चमावरणपूजनम् ।।

---

*चतुर्दशार चक्रेश्वरी त्रिपुरवासिनीका पूजन–*चतुर्दशार चक्रेश्वरी त्रिपुरवासिनीका ध्यानपूर्वक पूजन करें। *ध्यान–*'सिन्दूरारुण...मायात्मचक्रेश्वरी।।३।।'का उच्चारण करते हुए चतुर्दशार चक्रेश्वरी त्रिपुरवासिनीका ध्यान करें। *पूजन–*'ॐ...नमस्करोमि।।३।।'का उच्चारण करके चतुर्दशार चक्रेश्वरी त्रिपुरवासिनीकी श्रीपादुकाका पूजन, तर्पण तथा नमन करें।।३।।

।। इति पञ्चमावरणपूजनम् ।।

षष्ठावरणपूजनम्

।। श्रीगायत्रीब्रह्मविद्यायै नमः ।।

बहिर्दशार-चक्रस्य पूजनम्

ध्यानम्–

'चक्रं चान्यं दाडिमीपुष्पवर्णं
देदीप्ताभं श्रीदशाराङ्किताङ्गम्।
तत्सर्वाढ्यं ह्यर्थसाध्याभिधञ्च
वन्दे जोषं वायुतत्त्वात्मकाढ्यम्।।१।।'

पूजनम्–

बहिर्दशार-चक्रम्–'ॐ ह्रीं श्रीं बहिर्दशारचक्राय नमः। बहिर्दशार-चक्र-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।।१।।'

पश्चिमादिवामावर्तेन सर्वसिद्धिप्रदादीनां दशदेवीनां पूजनम्

ध्यानम्–

'सिद्धिप्रदां सर्वसम्पत्प्रदाञ्च
प्रियङ्करीं मङ्गलकारिणीञ्च।

---

*बहिर्दशार-चक्रका पूजन–*बहिर्दशार चक्रका ध्यानपूर्वक पूजन करें। *ध्यान–*'चक्रं...वायुतत्त्वात्मकाढ्यम्।।१।।'का उच्चारण करते हुए बहिर्दशार चक्रका ध्यान करें। *पूजन–*'ॐ...नमस्करोमि।।१।।'का उच्चारण करके बहिर्दशार चक्रकी श्रीपादुकाका पूजन, तर्पण तथा नमन करें।।१।।

*पश्चिमादि वामावर्त क्रमसे सर्वसिद्धिप्रदा आदि दश देवियोंका पूजन–*पश्चिमादि

कामप्रदां दुःखविमोचिनीं ताम्
अशेषपञ्चत्वविनाशिनीञ्च।।
समस्तदुर्विघ्ननिवारिणीं तां
सर्वाङ्गपूर्वामथ सुन्दरीञ्च।
समस्तसौभाग्यप्रदाभिधाञ्च
योगिन्य एताः किल कौलरूपाः।।
पाशाङ्कुशाभीतिवरान्दधानाः
रक्ताम्बराः स्मेरमुखाब्जयुक्ताः।
बन्धूकरक्ता धृतचन्द्रलेखा
नमाम्यहं रत्नविभूषिताङ्गीः।।२।।'

पूजनम्–

१. *सर्वसिद्धिप्रदा-देवी*–'ॐ ह्रीं श्रीं सर्वसिद्धिप्रदादेव्यै नमः। सर्वसिद्धिप्रदा-देवी-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

२. *सर्वसम्पत्प्रदा-देवी*–'ॐ ह्रीं श्रीं सर्वसम्पत्प्रदादेव्यै नमः। सर्वसम्पत्प्रदा-देवी-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

३. *सर्वप्रियङ्करी-देवी*–'ॐ ह्रीं श्रीं सर्वप्रियङ्करीदेव्यै नमः। सर्वप्रियङ्करी-देवी-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

४. *सर्वमङ्गलकारिणी-देवी*–'ॐ ह्रीं श्रीं सर्वमङ्गलकारिणीदेव्यै नमः। सर्वमङ्गलकारिणी-देवी-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

५. *सर्वकामप्रदा-देवी*–'ॐ ह्रीं श्रीं सर्वकामप्रदादेव्यै नमः। सर्व-

---

वामावर्त क्रमसे 'सर्वसिद्धिप्रदा, सर्वसम्पत्प्रदा, सर्वप्रियङ्करी, सर्वमङ्गल-कारिणी, सर्वकामप्रदा, सर्वदुःखविमोचिनी, सर्वमृत्युविनाशिनी, सर्वविघ्ननिवारिणी, सर्वाङ्गसुन्दरी

कामप्रदा-देवी-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

६. *सर्वदुःखविमोचिनी-देवी*–'ॐ ह्रीं श्रीं सर्वदुःखविमोचिनीदेव्यै नमः। सर्वदुःखविमोचिनी-देवी-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

७. *सर्वमृत्युविनाशिनी-देवी*–'ॐ ह्रीं श्रीं सर्वमृत्युविनाशिनीदेव्यै नमः। सर्वमृत्युविनाशिनी-देवी-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

८. *सर्वविघ्ननिवारिणी-देवी*–'ॐ ह्रीं श्रीं सर्वविघ्ननिवारिणीदेव्यै नमः। सर्वविघ्ननिवारिणी-देवी-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

९. *सर्वाङ्गसुन्दरी-देवी*–'ॐ ह्रीं श्रीं सर्वाङ्गसुन्दरीदेव्यै नमः। सर्वाङ्गसुन्दरी-देवी-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

१०. *सर्वसौभाग्यदायिनी-देवी*–'ॐ ह्रीं श्रीं सर्वसौभाग्यदायिनीदेव्यै नमः। सर्वसौभाग्यदायिनी-देवी-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि॥२॥'

बहिर्दशार-चक्रेश्वर्याः त्रिपुराश्रियः पूजनम्

ध्यानम्–

'उत्तप्तहेमरुचिरां त्रिपुराश्रियं तां
मुक्ताक्षपुस्तकवराभयपाणिपद्माम्।

तथा सर्व-सौभाग्यदायिनी, इन दश देवियोंका ध्यानपूर्वक पूजन करें। *ध्यान*–'सिद्धिप्रदां...रत्नविभूषिताङ्गीम्॥२॥'का उच्चारण करते हुए एकसाथ सर्वसिद्धिप्रदा आदि दश देवियोंका ध्यान करें। *पूजन*–'ॐ ह्रीं श्रीं सर्वसिद्धि-प्रदादेव्यै नमः। सर्वसिद्धिप्रदादेवी-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'का उच्चारण करके सर्वसिद्धिप्रदा देवीकी श्रीपादुकाका पूजन, तर्पण तथा नमन करें। इसी प्रकार अलग-अलग अन्य देवियोंकी श्रीपादुकाका पूजन, तर्पण तथा नमन करें॥२॥

बहिर्दशार चक्रेश्वरी त्रिपुराश्रीका पूजन–बहिर्दशार चक्रेश्वरी त्रिपुराश्रीका

उन्मादिनीनिगमशास्त्रवशित्वयुक्तां
वन्दे सदा पवनचक्रमहाधिराज्ञीम्।।३।।’

पूजनम्–

त्रिपुराश्रीः–‘ॐ ह्रीं श्रीं बहिर्दशारचक्रेश्वरीत्रिपुराश्रियै नमः। बहिर्दशार-चक्रेश्वरी-त्रिपुराश्री-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।।३।।’

।। इति षष्ठावरणपूजनम् ।।

ध्यानपूर्वक पूजन करें। *ध्यान*–‘उत्तप्त...पवनचक्रमहाधिराज्ञीम्।।३।।’का उच्चारण करते हुए बहिर्दशार चक्रेश्वरी त्रिपुराश्रीका ध्यान करें। *पूजन*–‘ॐ...नमस्करोमि।।३।।’का उच्चारण करके बहिर्दशार चक्रेश्वरी त्रिपुराश्रीकी श्रीपादुकाका पूजन, तर्पण तथा नमन करें।।३।।

।। इति षष्ठावरणपूजनम् ।।

सप्तमावरणपूजनम्

॥ श्रीगायत्रीब्रह्मविद्यायै नमः ॥

अन्तर्दशार-चक्रस्य पूजनम्

ध्यानम्–

'अन्यच्चक्रं श्रीजपापुष्पवर्णं
साक्षाच्छ्रीमत्सर्वरक्षाकरं वै।
श्रीदिक्कोणाकारकं तैजसाख्यं
वन्दे दिव्यं सौरशास्त्रात्मरूपम्॥१॥'

पूजनम्–

अन्तर्दशार-चक्रम्–'ॐ ह्रीं श्रीं अन्तर्दशारचक्राय नमः। अन्तर्दशारचक्र-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि॥१॥'

पश्चिमादिवामावर्तेन सर्वज्ञादीनां दशदेवीनां पूजनम्

ध्यानम्–

'सर्वज्ञां तां सर्वशक्तिस्वरूपां
सर्वैश्वर्यादिप्रदामन्यशक्तिम्।

अन्तर्दशार चक्रका पूजन–अन्तर्दशार चक्रका ध्यानपूर्वक पूजन करें। *ध्यान*–'अन्यच्चक्रं...सौरशास्त्रात्मरूपम्॥१॥'का उच्चारण करते हुए अन्तर्दशार चक्रका ध्यान करें। *पूजन*–'ॐ...नमस्करोमि॥१॥'का उच्चारण करके अन्तर्दशार चक्रकी श्रीपादुकाका पूजन, तर्पण तथा नमन करें॥१॥

पश्चिमादि वामावर्त क्रमसे सर्वज्ञा आदि दश देवियोंका पूजन–पश्चिमादि

भूयः सर्वज्ञानरूपात्मिकां तां
सर्वव्याध्युन्मूलनायोत्सुकाञ्च॥
भूयः सर्वाधारमूर्तिञ्च सर्व-
पापघ्नीमानन्दरूपाख्यशक्तिम्।
शक्तिं श्रीमत्सर्वरक्षास्वरूपां
सद्भक्तानामीप्सितार्थप्रदात्रीम्॥
एताः साक्षाद्दिङ्निगर्भाभिधाख्या
मुक्ताहाराश्चन्द्रचूडास्त्रिनेत्राः।
बालार्काभा ज्ञानमुद्रावराढ्याः
श्रीमट्टङ्काभीतिहस्ता नमामि॥२॥'

पूजनम्–

१. *सर्वज्ञा-देवी–*'ॐ ह्रीं श्रीं सर्वज्ञादेव्यै नमः। सर्वज्ञादेवी-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

२. *सर्वशक्तिमयी-देवी–*'ॐ ह्रीं श्रीं सर्वशक्तिमयीदेव्यै नमः। सर्वशक्तिमयी-देवी-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

३. *सर्वैश्वर्यप्रदायिनी-देवी–*'ॐ ह्रीं श्रीं सर्वैश्वर्यप्रदायिनीदेव्यै नमः। सर्वैश्वर्यप्रदायिनी-देवी-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

४. *सर्वज्ञानमयी-देवी–*'ॐ ह्रीं श्रीं सर्वज्ञानमयीदेव्यै नमः। सर्वज्ञानमयी-देवी-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

५. *सर्वव्याधिविनाशिनी-देवी–*'ॐ ह्रीं श्रीं सर्वव्याधिविनाशिनी-देव्यै नमः। सर्वव्याधिविनाशिनी-देवी-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

वामावर्त क्रमसे 'सर्वज्ञा, सर्वशक्तिमयी, सर्वैश्वर्यप्रदायिनी, सर्वज्ञानमयी, सर्वव्याधि-

६. *सर्वाधारस्वरूपिणी-देवी*–'ॐ ह्रीं श्रीं सर्वाधारस्वरूपिणीदेव्यै नमः। सर्वाधारस्वरूपिणी-देवी-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

७. *सर्वपापहरा-देवी*–ॐ ह्रीं श्रीं सर्वपापहरादेव्यै नमः। सर्वपापहरा-देवी-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

८. *सर्वानन्दमयी-देवी*–'ॐ ह्रीं श्रीं सर्वानन्दमयीदेव्यै नमः। सर्वानन्दमयी-देवी-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

९. *सर्वरक्षास्वरूपिणी-देवी*–'ॐ ह्रीं श्री सर्वरक्षास्वरूपिणीदेव्यै नमः। सर्वरक्षास्वरूपिणी-देवी-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

१०. *सर्वेप्सितार्थप्रदा-देवी*–'ॐ ह्रीं श्रीं सर्वेप्सितार्थप्रदादेव्यै नमः। सर्वेप्सितार्थप्रदा-देवी-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि॥२॥'

अन्तर्दशार-चक्रेश्वर्याः त्रिपुरमालिन्याः पूजनम्

ध्यानम्–

'बालार्कमण्डलनिभां धृतचन्द्रलेखां
स्मेराननामरुणवस्त्रसुरत्नभूषाम्।

विनाशिनी, सर्वाधारस्वरूपिणी, सर्वपापहरा, सर्वानन्दमयी, सर्वरक्षास्वरूपिणी तथा सर्वेप्सितार्थप्रदा' इन दश देवियोंका ध्यानपूर्वक पूजन करें। *ध्यान*–'सर्वज्ञां-...नमामि॥२॥'का उच्चारण करते हुए एकसाथ सर्वज्ञा आदि दश देवियोंका ध्यान करें। *पूजन*–'ॐ ह्रीं श्रीं सर्वज्ञादेव्यै नमः। सर्वज्ञादेवी-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'का उच्चारण करके सर्वज्ञा देवीकी श्रीपादुकाका पूजन, तर्पण तथा नमन करें।

इसी प्रकार अलग-अलग अन्य देवियोंकी श्रीपादुकाका पूजन, तर्पण तथा नमन करें॥२॥

अन्तर्दशार चक्रेश्वरी त्रिपुरमालिनीका पूजन–अन्तर्दशार चक्रेश्वरी त्रिपुरमालिनीका ध्यानपूर्वक पूजन करें। *ध्यान*–'बालार्क...नमामि॥३॥'का उच्चारण करते

सोमाग्निसूर्यनयनत्रयशोभिताञ्च
प्राकाम्यसिद्धिसहितां नवयौवनाढ्याम्॥
श्रीसौरदर्शनयुतां समहाङ्कुशां तां
श्रीतैजसात्मकदशारमहाधिराज्ञीम्।
पाशाङ्कुशाभयकपालवराक्षहस्तां
तत्त्वेश्वरीं त्रिपुरमालिनिकां नमामि॥३॥'

पूजनम्–

त्रिपुरमालिनी–'ॐ ह्रीं श्रीं अन्तर्दशारचक्रेश्वरीत्रिपुरमालिन्यै नमः। अन्तर्दशार-चक्रेश्वरी-त्रिपुरमालिनी-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि॥३॥'

॥ इति सप्तमावरणपूजनम् ॥

हुए अन्तर्दशार चक्रेश्वरी त्रिपुरमालिनीका ध्यान करें। *पूजन*–'ॐ...नमस्करोमि॥३॥'का उच्चारण करके अन्तर्दशार चक्रेश्वरी त्रिपुरमालिनीकी श्रीपादुकाका पूजन, तर्पण तथा नमन करें॥३॥

॥ इति सप्तमावरणपूजनम् ॥

अष्टमावरणपूजनम्

॥ श्रीगायत्रीब्रह्मविद्यायै नमः ॥

अष्टार-चक्रस्य पूजनम्

ध्यानम्–

'अन्यं दिव्यं सर्वरोगघ्नचक्रं
रम्यं स्पष्टं ह्यष्टकोणापक्लृप्तम्।
उद्दीप्ताभं पद्मरागप्रभं तद्
वन्दे चाहं श्रीकलात्मस्वरूपम्॥१॥'

पूजनम्–

अष्टार-चक्रम्–'ॐ ह्रीं श्रीं अष्टारचक्राय नमः। अष्टारचक्र-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि॥१॥'

पश्चिमादिवामावर्तेन वशिन्यादीनामष्टवाग्देवताम्बानां पूजनम्

ध्यानम्–

'वाग्देवताम्बां वशिनीति नाम्नीं
कामेश्वरीं वाङ्निलयाधिदेवीम्।

---

*अष्टार-चक्रका पूजन–*अष्टार चक्रका ध्यानपूर्वक पूजन करें। *ध्यान–*'अन्यं...कलात्मस्वरूपम्॥१॥'का उच्चारण करते हुए अष्टार चक्रका ध्यान करें। *पूजन–*'ॐ...नमस्करोमि॥१॥'का उच्चारण करके अष्टार चक्रकी श्रीपादुकाका पूजन, तर्पण तथा नमन करें॥१॥

*पश्चिमादि वामावर्त क्रमसे वशिनी आदि आठ वाग्देवताम्बाओंका पूजन–*पश्चिमादि वामावर्त क्रमसे 'वशिनी, कामेश्वरी, मोहिनी, विमला, अरुणा, जयिनी,

श्रीमोहिनीं तां विमलां तथैव
वाग्देवताम्बामरुणाभिधाञ्च।।
वाग्देवताम्बां जयिनीति नाम्नीं
सर्वेश्वरीं कौलिनिकामिमां वै।।
रक्ताम्बराश्चन्द्रकलावतंसाः
सिन्दूरवर्णान्वितवक्त्रपद्माः।
सदा प्रसन्नाः कुचभारनम्रा
मालाधनुःपुस्तकपाशहस्ताः।।
परापराख्याश्च रहस्ययुक्ता
नमाम्यहं योगिनिकाः सदैव।।२।।'

पूजनम्–

१.*वशिनी-वाग्देवताम्बा*–'ॐ ह्रीं श्रीं वशिनीवाग्देवताम्बायै नमः। वशिनी-वाग्देवताम्बा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

२.*कामेश्वरी-वाग्देवताम्बा*–'ॐ ह्रीं श्रीं कामेश्वरीवाग्देवताम्बायै नमः। कामेश्वरी-वाग्देवताम्बा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

३.*मोहिनी-वाग्देवताम्बा*–'ॐ ह्रीं श्रीं मोहिनीवाग्देवताम्बायै नमः। मोहिनी-वाग्देवताम्बा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

४.*विमला-वाग्देवताम्बा*–'ॐ ह्रीं श्रीं विमलावाग्देवताम्बायै नमः। विमला-वाग्देवताम्बा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

५.*अरुणा-वाग्देवताम्बा*–'ॐ ह्रीं श्रीं अरुणावाग्देवताम्बायै नमः। अरुणा-वाग्देवताम्बा-श्रीपादुकां पूजयामि - तर्पयामि नमस्करोमि।'

सर्वेश्वरी तथा कौलिनी' इन आठ वाग्देवताम्बाओंका ध्यानपूर्वक पूजन करें। *ध्यान–*

६. *जयिनी-वाग्देवताम्बा*–'ॐ ह्रीं श्रीं जयिनीवाग्देवताम्बायै नमः। जयिनी-वाग्देवताम्बा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

७. *सर्वेश्वरी-वाग्देवताम्बा*–'ॐ ह्रीं श्रीं सर्वेश्वरीवाग्देवताम्बायै नमः। सर्वेश्वरी-वाग्देवताम्बा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

८. *कौलिनी-वाग्देवताम्बा*–'ॐ ह्रीं श्रीं कौलिनीवाग्देवताम्बायै नमः। कौलिनी-वाग्देवताम्बा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि॥२॥'

अष्टार-चक्रेश्वर्याः त्रिपुरासिद्धायाः पूजनम्

ध्यानम्–

'रोगघ्नकाष्टारकचक्रनाथां
श्रीखेचरीमुद्रिकया समेताम्।
रक्ताम्बराढ्यां शुभभुक्तिसिद्ध्या
समायुतां वैष्णवदर्शनेन॥
श्रीचन्द्रचूडां शरदिन्दुगौरीं
नेत्रत्रयोद्भासितवक्त्रपद्माम्।
पाशाङ्कुशाभीतिकपालहस्तां
नमामि सिद्धां त्रिपुरेति पूर्वाम्॥३॥'

'वाग्देवताम्बां...समेताम्॥२॥'का उच्चारण करते हुए एकसाथ वशिनी आदि आठ वाग्देवताम्बाओंका ध्यान करें। *पूजन*–'ॐ ह्रीं श्रीं वशिनीवाग्देवताम्बायै नमः। वशिनी-वाग्देवताम्बा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'का उच्चारण करके वशिनी वाग्देवताम्बाकी श्रीपादुकाका पूजन, तर्पण तथा नमन करें।

इसी प्रकार अलग-अलग अन्य वाग्देवताम्बाओंकी श्रीपादुकाका पूजन, तर्पण तथा नमन करें॥२॥

अष्टार चक्रेश्वरी त्रिपुरासिद्धाका पूजन–अष्टार चक्रेश्वरी त्रिपुरासिद्धाका ध्यानपूर्वक पूजन करें। *ध्यान*–'रक्ताम्बराढ्यां...त्रिपुरेति पूर्वाम्॥३॥'का उच्चारण करते हुए अष्टार

पूजनम्–

त्रिपुरासिद्धा–'ॐ ह्रीं श्रीं अष्टारचक्रेश्वरीत्रिपुरासिद्धायै नमः। अष्टारचक्रेश्वरी-त्रिपुरासिद्धा-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।।३।।'

।। इत्यष्टमावरणपूजनम् ।।

चक्रेश्वरी त्रिपुरासिद्धाका ध्यान करें।

पूजन–'ॐ...नमस्करोमि।।३।।'का उच्चारण करके अष्टार चक्रेश्वरी त्रिपुरासिद्धाकी श्रीपादुकाका पूजन, तर्पण तथा नमन करें।।३।।

।। इत्यष्टमावरणपूजनम् ।।

नवमावरणपूजनम्

।। श्रीगायत्रीब्रह्मविद्यायै नमः ।।

त्रिकोण-चक्रस्य पूजनम्

ध्यानम्–

'बन्धूकपुष्पारुणदिव्यरूपं
समस्तसिद्धिप्रदनाम चक्रम्।
कोणत्रयेणैकविनिर्मितञ्च
स्मरामि नादात्मकचित्स्वरूपम्।।१।।'

पूजनम्–

त्रिकोण-चक्रम्–'ॐ ह्रीं श्रीं त्रिकोणचक्राय नमः। त्रिकोणचक्र-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।।१।।'

त्रिकोणस्य पूर्वरिखायाः पूर्वे कल्पित-त्रिरेखायां गुरुसन्ततीनां पूजनम्

ध्यानम्–

'तस्य त्रिकोणस्य च पूर्वरिखा-
पूर्वे त्रिरेखा ननु चिन्तनीयाः।

त्रिकोण चक्रका पूजन–त्रिकोण चक्रका ध्यानपूर्वक पूजन करें। *ध्यान*–'बन्धूक...चित्स्वरूपम्।।१।।'का उच्चारण करते हुए त्रिकोण चक्रका ध्यान करें। *पूजन*–'ॐ...नमस्करोमि।।१।।'का उच्चारण करके त्रिकोण चक्रकी श्रीपादुकाका पूजन, तर्पण तथा नमन करें।।१।।

त्रिकोणकी पूर्वी रेखाके पूर्वमें कल्पित तीन रेखाओंमें गुरु परम्परओंका पूजन–

तासु स्थिताः श्रीगुरुसन्ततीस्ताः
स्वकल्पमार्गेण सदा स्मरामि।।'

प्रथमरेखायां दिव्यौघ-सिद्धौघ-सुमानवौघ-गुरूणां पूजनम्

ध्यानम्–

'दिव्यौघ-सिद्धौघ-सुमानवौघान्
रेखाद्यगान् नौमि गुरूंश्च सर्वान्।।'

पूजनम्–

दिव्यौघः–

१.*ब्रह्मा*–'ॐ ह्रीं श्रीं ब्रह्मदिव्यगुरवे नमः। ब्रह्म-दिव्यगुरु-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

२.*ब्रह्मशक्तिः*–'ॐ ह्रीं श्रीं ब्रह्मशक्तिदिव्यगुरवे नमः। ब्रह्मशक्ति-दिव्यगुरु-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

३.*विष्णुः*–'ॐ ह्रीं श्रीं विष्णुदिव्यगुरवे नमः। विष्णु-दिव्यगुरु-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

४.*विष्णुशक्तिः*–'ॐ ह्रीं श्रीं विष्णुशक्तिदिव्यगुरवे नमः। विष्णुशक्ति-दिव्यगुरु-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

५.*रुद्रः*–'ॐ ह्रीं श्रीं रुद्रदिव्यगुरवे नमः। रुद्र-दिव्यगुरु-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

त्रिकोणकी पूर्वी रेखाके पूर्वमें कल्पित तीन रेखाओंमें 'दिव्यौघ, सिद्धौघ तथा सुमानवौघ', 'श्रीगुरु, परम गुरु, परापर गुरु, परमेष्ठि गुरु, परमाचार्य गुरु, पूर्वसिद्ध गुरु तथा आदिसिद्ध गुरु' और 'श्रीदक्षिणामूर्ति गुरु' इन गुरुपरम्पराओंका ध्यान करें।।

प्रथम रेखामें दिव्यौघ, सिद्धौघ तथा सुमानवौघ गुरुजनोंका पूजन–प्रथम रेखामें दिव्यौघ, सिद्धौघ तथा सुमानवौघ गुरुजनोंका ध्यान करके पूजन करें।

दिव्यौघ–'दिव्यौघ'के अन्तर्गत 'ब्रह्मा, ब्रह्म-शक्ति, विष्णु, विष्णु-शक्ति, रुद्र, रुद्र-शक्ति, ईश्वर, ईश्वर-शक्ति, सदाशिव, सदाशिव-शक्ति, आदिनाथ तथा

६.*रुद्रशक्तिः*–'ॐ ह्रीं श्रीं रुद्रशक्तिदिव्यगुरवे नमः। रुद्रशक्ति-दिव्यगुरु-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

७.*ईश्वरः*–'ॐ ह्रीं श्रीं ईश्वरदिव्यगुरवे नमः। ईश्वर-दिव्यगुरु-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

८.*ईश्वरशक्तिः*–'ॐ ह्रीं श्रीं ईश्वरशक्तिदिव्यगुरवे नमः। ईश्वर-शक्ति-दिव्यगुरु-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

९.*सदाशिवः*–'ॐ ह्रीं श्रीं सदाशिवदिव्यगुरवे नमः। सदाशिव-दिव्यगुरु-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

१०.*सदाशिवशक्तिः*–'ॐ ह्रीं श्रीं सदाशिवशक्तिदिव्यगुरवे नमः। सदाशिवशक्ति-दिव्यगुरु-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

११.*आदिनाथः*–'ॐ ह्रीं श्रीं आदिनाथदिव्यगुरवे नमः। आदि-नाथ-दिव्यगुरु-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

१२.*आदिनाथशक्तिः*–'ॐ ह्रीं श्रीं आदिनाथशक्तिदिव्यगुरवे नमः। आदिनाथशक्ति-दिव्यगुरु-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

सिद्धौघः–

१.*शुकः*–'ॐ ह्रीं श्रीं शुकसिद्धगुरवे नमः। शुक-सिद्धगुरु-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

२.*व्यासः*–'ॐ ह्रीं श्रीं व्याससिद्धगुरवे नमः। व्यास-सिद्धगुरु-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

आदिनाथ-शक्ति' इन बारह दिव्यगुरुओंका पूजन करें। *पूजन*–'ॐ ह्रीं श्रीं ब्रह्म-दिव्यगुरवे नमः। ब्रह्म-दिव्यगुरु-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'का उच्चारण करके दिव्यगुरु ब्रह्माकी श्रीपादुकाका पूजन, तर्पण तथा नमन करें।

इसी प्रकार अलग-अलग अन्य दिव्यगुरुओंकी श्रीपादुकाका पूजन, तर्पण तथा नमन करें।

सिद्धौघ–'सिद्धौघ'के अन्तर्गत 'शुक, व्यास, वामदेव, रैवतक, दत्तात्रेय,

३.*वामदेवः*–'ॐ ह्रीं श्रीं वामदेवसिद्धगुरवे नमः। वामदेव-सिद्धगुरु-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

४.*रैवतकः*–'ॐ ह्रीं श्रीं रैवतकसिद्धगुरवे नमः। रैवतक-सिद्धगुरु-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

५.*दत्तात्रेयः*–'ॐ ह्रीं श्रीं दत्तात्रेयसिद्धगुरवे नमः। दत्तात्रेय-सिद्धगुरु-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

६.*ऋभुक्षजः*–'ॐ ह्रीं श्रीं ऋभुक्षजसिद्धगुरवे नमः। ऋभुक्षज-सिद्धगुरु-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

७.*सनत्सुजातः*–'ॐ ह्रीं श्रीं सनत्सुजातसिद्धगुरवे नमः। सनत्सुजात-सिद्धगुरु-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

८.*सनत्कुमारः*–'ॐ ह्रीं श्रीं सनत्कुमारसिद्धगुरवे नमः। सनत्कुमार-सिद्धगुरु-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

९.*सनातनः*–'ॐ ह्रीं श्रीं सनातनसिद्धगुरवे नमः। सनातन-सिद्धगुरु-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

१०.*सनन्दः*–'ॐ ह्रीं श्रीं सनन्दसिद्धगुरवे नमः। सनन्द-सिद्धगुरु-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

११.*सनकः*–'ॐ ह्रीं श्रीं सनकसिद्धगुरवे नमः। सनक-सिद्धगुरु-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

सुमानवौघः–

ऋभुक्षज, सनत्सुजात, सनत्कुमार, सनातन, सनन्द तथा सनक' इन ग्यारह सिद्ध गुरुओंका पूजन करें। *पूजन*–'ॐ ह्रीं श्रीं शुक-सिद्धगुरवे नमः। शुक-सिद्धगुरु-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'का उच्चारण करके सिद्धगुरु शुककी श्रीपादुकाका पूजन, तर्पण तथा नमन करें।

इसी प्रकार अलग-अलग अन्य सिद्ध गुरुओंकी श्रीपादुकाका पूजन, तर्पण तथा नमन करें।

सुमानवौघ–'सुमानवौघ'के अन्तर्गत 'विष्णु, माधव, महेन्द्र, भास्कर, महेश

१.*विष्णुः*–‘ॐ ह्रीं श्रीं विष्णुसुमानवगुरवे नमः। विष्णु-सुमानवगुरु-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।’

२.*माधवः*–‘ॐ ह्रीं श्रीं माधवसुमानवगुरवे नमः। माधव-सुमानवगुरु-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।’

३.*महेन्द्रः*–‘ॐ ह्रीं श्रीं महेन्द्रसुमानवगुरवे नमः। महेन्द्र-सुमानवगुरु-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।’

४.*भास्करः*–‘ॐ ह्रीं श्रीं भास्करसुमानवगुरवे नमः। भास्कर-सुमानवगुरु-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।’

५.*महेशः*–‘ॐ ह्रीं श्रीं महेशसुमानवगुरवे नमः। महेश-सुमानवगुरु-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।’

६.*नृसिंहः*–‘ॐ ह्रीं श्रीं नृसिंहसुमानवगुरवे नमः। नृसिंह-सुमानवगुरु-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।’

द्वितीयरेखायां स्व-श्रीगुरुक्रमेण सप्तगुरूणां पूजनम्

ध्यानम्–

‘रेखाद्वितीयस्थितसुप्रसिद्धान्
गुरूँश्च सर्वान् स्वगुरुक्रमेण।
शान्तान् द्विनेत्रान् स्फटिकाभशुभ्रान्
सशक्तिकान् नौमि वराभयाढ्यान्॥’

तथा नृसिंह’ इन छह सुमानव गुरुओंका पूजन करें। *पूजन*–‘ॐ ह्रीं श्रीं विष्णु-सुमानवगुरवे नमः। विष्णु-सुमानवगुरु-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।’का उच्चारण करके सुमानवगुरु विष्णुकी श्रीपादुकाका पूजन, तर्पण तथा नमन करें।

इसी प्रकार अलग-अलग अन्य सुमानव गुरुओंकी श्रीपादुकाका पूजन, तर्पण तथा नमन करें॥

द्वितीय रेखामें अपने श्रीगुरु क्रमसे सात गुरुजनोंका पूजन–द्वितीय रेखामें अपने ‘श्रीगुरु, परम गुरु, परापर गुरु, परमेष्ठि गुरु, परमाचार्य गुरु, पूर्वसिद्ध गुरु तथा

पूजनम्–

१. *श्री-गुरुः–*'ॐ ह्रीं श्रीं श्रीगुरवे नमः। श्रीगुरु-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

२. *परम-गुरुः–*'ॐ ह्रीं श्रीं परमगुरवे नमः। परमगुरु-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

३. *परापर-गुरुः–*'ॐ ह्रीं श्रीं परापरगुरवे नमः। परापरगुरु-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

४. *परमेष्ठि-गुरुः–*'ॐ ह्रीं श्रीं परमेष्ठिगुरवे नमः। परमेष्ठिगुरु-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

५. *परमाचार्य-गुरुः–*'ॐ ह्रीं श्रीं परमाचार्यगुरवे नमः। परमाचार्य-गुरु-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

६. *पूर्वसिद्ध-गुरुः–*'ॐ ह्रीं श्रीं पूर्वसिद्धगुरवे नमः। पूर्वसिद्धगुरु-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

७. *आदिसिद्ध-गुरुः–*'ॐ ह्रीं श्रीं आदिसिद्धगुरवे नमः। आदि-सिद्धगुरु-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

तृतीयरेखायां श्रीदक्षिणामूर्तिगुरोः पूजनम्

ध्यानम्–

आदिसिद्ध गुरु' इन सात गुरुजनोंका ध्यानपूर्वक पूजन करें। *ध्यान–*'रेखा-द्वितीय...वराभयाढ्यान्।।'का उच्चारण करके एकसाथ अपने श्रीगुरु आदि सात गुरुओंका ध्यान करें। *पूजन–*'ॐ ह्रीं श्रीं श्रीगुरवे नमः। श्रीगुरु-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'का उच्चारण करके अपने श्रीगुरुकी श्रीपादुकाका पूजन, तर्पण तथा नमन करें।

इसी प्रकार अलग-अलग अन्य गुरुओंकी श्रीपादुकाका पूजन, तर्पण तथा नमन करें।।

*तृतीय रेखामें श्रीदक्षिणामूर्ति गुरुका पूजन–*तृतीय रेखामें श्रीदक्षिणामूर्ति गुरुका ध्यानपूर्वक पूजन करें। *ध्यान–*'शान्तं ... स्मरामि।।२।।'का उच्चारण करते हुए

शान्तं त्रिनेत्रं विधुकान्तिशुभ्रं
संविभ्रतं दोष्कशुभैश्चतुर्भिः।
मुक्ताक्षमालां कलशं सुधायाः
श्रीज्ञानमुद्रामपि पुस्तकञ्च॥
दिव्याम्बरं चन्दनगन्धलेपैः
समुज्ज्वलाङ्गं मणिरत्नकैश्च।
वीरासनस्थञ्च शशाङ्कचूडं
श्रीदक्षिणामूर्तिगुरुं स्मरामि॥२॥'

पूजनम्–

श्रीदक्षिणामूर्तिगुरुः–'ॐ ह्रीं श्रीं श्रीदक्षिणामूर्तिगुरवे नमः। श्रीदक्षिणामूर्तिगुरु-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि॥२॥'

त्रिकोणाद्बहिः प्रत्येककोणयुगलात्मक-षडङ्गयुवतीनां पूजनम्

ध्यानम्–

'स्यन्दे त्रिकोणाद्बहिरङ्गदेव्यः
षडङ्गपूर्वा हि युवत्यभिख्याः।
रक्ताः स्वमुद्राङ्कितपाणिपद्माः
प्रत्येककोणयुगलं स्मरामि॥३॥'

पूजनम्–

१. हृदय-देवी–'ॐ ह्रीं श्रीं हृदयदेव्यै नमः। हृदय-देवी-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

श्रीदक्षिणामूर्ति गुरुका ध्यान करें। *पूजन–*'ॐ...नमस्करोमि॥२॥'का उच्चारण करके श्रीदक्षिणामूर्ति गुरुकी श्रीपादुकाका पूजन, तर्पण तथा नमन करें॥२॥

त्रिकोणके बाहर प्रत्येक कोणमें युगलात्मक रूपसे हृदय देवी आदि छह अङ्ग

२.*शिरो-देवी*–'ॐ ह्रीं श्रीं शिरोदेव्यै नमः। शिरो-देवी-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

३.*शिखा-देवी*–'ॐ ह्रीं श्रीं शिखादेव्यै नमः। शिखा-देवी-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

४.*कवच-देवी*–'ॐ ह्रीं श्रीं कवचदेव्यै नमः। कवच-देवी-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

५.*नेत्र-देवी*–'ॐ ह्रीं श्रीं नेत्रदेव्यै नमः। नेत्र-देवी-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

६.*अस्त्र-देवी*–'ॐ ह्रीं श्रीं अस्त्रदेव्यै नमः। अस्त्र-देवी-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि॥३॥'

त्रिकोणाद्बहिः प्रत्येककोणाग्रे षोडशीतिथ्यादीनां नित्याकलानां पूजनम्

ध्यानम्–

'एतत्त्रिकोणाद्बहिरग्रकोणे
नित्याकलां तां हि तिथिस्वरूपाम्।
दक्षे कलां सप्तदशीञ्च वामे
ह्यष्टादशीं तां सकलाः सुरम्याः॥

युवतियोंका पूजन–त्रिकोणके बाहर प्रत्येक कोणमें युगलात्मक रूपसे 'हृदयदेवी, शिरोदेवी, शिखादेवी, कवचदेवी, नेत्रदेवी तथा अस्त्रदेवी' इन छह अङ्गयुवतियोंका ध्यानपूर्वक पूजन करें। *ध्यान*–'स्यन्दे...स्मरामि॥३॥'का उच्चारण करते हुए एकसाथ हृदय देवी आदि छह अङ्गयुवतियोंका ध्यान करें। *पूजन*–'ॐ ह्रीं श्रीं हृदयदेव्यै नमः। हृदयदेवी-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'का उच्चारण करके हृदयदेवीकी श्रीपादुकाका पूजन, तर्पण तथा नमन करें।

इसी प्रकार अलग-अलग अन्य अङ्गयुवतियोंकी श्रीपादुकाका पूजन, तर्पण तथा नमन करें॥३॥

त्रिकोणके बाहर प्रत्येक कोणके अग्रमें षोडशीतिथि आदि तीन नित्या-कलाओंका पूजन–त्रिकोणके बाहर प्रत्येक कोणके अग्रमें 'षोडशीतिथि नित्याकला,

सिन्दूरवर्णा धृतचन्द्रचूडाः
प्रोत्फुल्लरक्ताब्जदलत्रिनेत्राः।
पाशं सृणिञ्चापशरान्दधानाः
नित्याकलास्ताः सततं स्मरामि॥४॥'

पूजनम्–

त्रिकोणाद्वहिरग्रकोणे षोडशीतिथि-नित्याकलायाः पूजनम्

१.षोडशीतिथि-नित्याकला–'ॐ ह्रीं श्रीं षोडशीतिथिनित्या-कलायै नमः। षोडशीतिथि-नित्याकला-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

त्रिकोणाद्वहिर्दक्षकोणे सप्तदशी-नित्याकलायाः पूजनम्

२.सप्तदशी-नित्याकला–'ॐ ह्रीं श्रीं सप्तदशीनित्याकलायै नमः। सप्तदशी-नित्याकला-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

त्रिकोणाद्वहिर्वामकोणेऽष्टादशी-नित्याकलायाः पूजनम्

३.अष्टादशी-नित्याकला–'ॐ ह्रीं श्रीं अष्टादशीनित्याकलायै

सप्तदशी नित्याकला तथा अष्टादशी नित्याकला' इन तीन नित्याकलाओंका ध्यान-पूर्वक पूजन करें। *ध्यान–*'एतत्त्रिकोणा...स्मरामि॥४॥'का उच्चारण करते हुए एकसाथ षोडशीतिथि नित्याकला आदि तीन नित्याकलाओंका ध्यान करें।

*त्रिकोणके बाहर अग्र कोणमें षोडशीतिथि नित्याकलाका पूजन–*त्रिकोणके बाहर अग्र कोणमें षोडशीतिथि नित्याकलाका पूजन करें। *पूजन–*'ॐ...नमस्करोमि।'का उच्चारण करके षोडशीतिथि नित्याकलाकी श्रीपादुकाका पूजन, तर्पण तथा नमन करें।

*त्रिकोणके बाहर दक्ष कोणमें सप्तदशी नित्याकलाका पूजन–*त्रिकोणके बाहर दक्ष कोणमें सप्तदशी नित्याकलाका पूजन करें। *पूजन–*'ॐ...नमस्करोमि।'का उच्चारण करके सप्तदशी नित्याकलाकी श्रीपादुकाका पूजन, तर्पण तथा नमन करें।

*त्रिकोणके बाहर वाम कोणमें अष्टादशी नित्याकलाका पूजन–*त्रिकोणके बाहर वाम कोणमें अष्टादशी नित्याकलाका पूजन करें। *पूजन–*'ॐ...नमस्करोमि॥४॥'का उच्चारण करके अष्टादशी नित्याकलाकी श्रीपादुकाका पूजन, तर्पण तथा नमन

नमः। अष्टादशी-नित्याकला-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि॥४॥'

त्रिकोणस्य कल्पित-भागचतुष्के जृम्भण-बाणशक्त्यादीनां चतुष्कायुधशक्तीनां पूजनम्

ध्यानम्–

'विचिन्त्य भागं च चतुष्कमत्र
तस्मिन् स्थितां जृम्भणबाणशक्तिम्।
सम्मोहिनीं चापशरीरशक्तिं
श्रीपाशशक्तिं वशकारिणीं च॥
तां स्तम्भनाख्यां सृणिशक्तिमन्याम्
एताश्चतुष्कायुधशक्तिनाम्न्यः।
सर्वाः स्मितास्यामितमस्तकास्ता
वराभयाढ्या अरुणाः स्मरामि॥५॥'

पूजनम्–

त्रिकोणस्य कल्पिताऽग्रभागे जृम्भण-बाणशक्तेः पूजनम्

१. जृम्भण-बाणशक्तिः–'ॐ ह्रीं श्रीं जृम्भणबाणशक्तये नमः। जृम्भण-बाणशक्ति-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

करें॥४॥

त्रिकोणके कल्पित चार भागोंमें जृम्भण बाणशक्ति आदि चार आयुध शक्तियोंका पूजन–त्रिकोणके कल्पित चार भागोंमे 'जृम्भण बाणशक्ति, मोहन चापशक्ति, वशीकरण पाशशक्ति तथा स्तम्भन अङ्कुशशक्ति' इन चार आयुध शक्तियोंका ध्यानपूर्वक पूजन करें। *ध्यान*–'विचिन्त्य...स्मरामि॥५॥'का उच्चारण करते हुए एकसाथ जृम्भण बाणशक्ति आदि चार आयुध शक्तियोंका ध्यान करें।

त्रिकोणके कल्पित अग्र भागमें जृम्भण बाणशक्तिका पूजन–त्रिकोणके कल्पित अग्र भागमें जृम्भण बाणशक्तिका पूजन करें। *पूजन*–'ॐ...नमस्करोमि।'का उच्चारण करके जृम्भण बाणशक्तिकी श्रीपादुकाका पूजन, तर्पण तथा नमन करें।

त्रिकोणस्य कल्पित-दक्षभागे मोहन-चापशक्तेः पूजनम्

२.*मोहन-चापशक्तिः*—'ॐ ह्रीं श्रीं मोहनचापशक्तये नमः। मोहन-चापशक्ति-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

त्रिकोणस्य कल्पित-वामभागे वशीकरण-पाशशक्तेः पूजनम्

३.*वशीकरण-पाशशक्तिः*—'ॐ ह्रीं श्रीं वशीकरणपाशशक्तये नमः। वशीकरण-पाशशक्ति-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

त्रिकोणस्य कल्पित-मध्यभागे स्तम्भनाङ्कुशशक्तेः पूजनम्

४.*स्तम्भनाङ्कुश-शक्तिः*—'ॐ ह्रीं श्रीं स्तम्भनाङ्कुशशक्तये नमः। स्तम्भनाङ्कुशशक्ति-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि॥५॥'

त्रिकोण-चक्रेश्वर्याः श्रीत्रिपुराम्बिकायाः पूजनम्

ध्यानम्—

'इच्छासिद्धिसुशाक्तदर्शनमहाबीजाख्यमुद्रायुतां
श्रीनादाभिधसिद्धिहेतुरुचिरे चक्रे स्थितां नायिकाम्।
चन्द्रार्द्धाङ्कितदिव्यरत्नमुकुटां बालार्ककोटिप्रभां
वन्दे श्रीत्रिपुराम्बिकामभयदां विद्यावरस्त्रक्कराम्॥६॥'

त्रिकोणके कल्पित दक्ष भागमें मोहन चाप शक्तिका पूजन—त्रिकोणके कल्पित दक्ष भागमें मोहन चाप शक्तिका पूजन करें। *पूजन*—'ॐ...नमस्करोमि।'का उच्चारण करके मोहन चाप शक्तिकी श्रीपादुकाका पूजन, तर्पण तथा नमन करें।

त्रिकोणके कल्पित वाम भागमें वशीकरण पाश शक्तिका पूजन—त्रिकोणके कल्पित वामभागमें वशीकरण पाश शक्तिका पूजन करें। *पूजन*—'ॐ...नमस्करोमि।'का उच्चारण करके वशीकरण पाश शक्तिकी श्रीपादुकाका पूजन, तर्पण तथा नमन करें।

त्रिकोणके कल्पित मध्य भागमें स्तम्भन अङ्कुश शक्तिका पूजन—त्रिकोणके कल्पित मध्य भागमें स्तम्भन अङ्कुश शक्तिका पूजन करें। *पूजन*—'ॐ...नमस्करोमि॥५॥'का उच्चारण करके स्तम्भन अङ्कुश शक्तिकी श्रीपादुकाका पूजन, तर्पण तथा नमन करें॥५॥

त्रिकोण चक्रेश्वरी श्रीत्रिपुराम्बिकाका पूजन—त्रिकोण चक्रेश्वरी श्रीत्रिपुराम्बिकाका

पूजनम्–

श्रीत्रिपुराम्बिका–‘ॐ ह्रीं श्रीं त्रिकोणचक्रेश्वरीश्रीत्रिपुराम्बिकायै नमः। त्रिकोणचक्रेश्वरी-श्रीत्रिपुराम्बिका-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि॥९॥’

॥ इति नवमावरणपूजनम् ॥

ध्यानपूर्वक पूजन करें। *ध्यान–*‘इच्छासिद्धि...विद्यावरस्त्रक्कराम्॥९॥’का उच्चारण करते हुए त्रिकोण चक्रेश्वरी श्रीत्रिपुराम्बिकाका ध्यान करें। *पूजन–*‘ॐ...नमस्करोमि॥९॥’का उच्चारण करके त्रिकोण चक्रेश्वरी श्रीत्रिपुराम्बिकाकी श्रीपादुकाका पूजन, तर्पण तथा नमन करें॥९॥

॥ इति नवमावरणपूजनम् ॥

दशमावरणपूजनम्

।। श्रीगायत्रीब्रह्मविद्यायै नमः ।।

बिन्दु-चक्रस्य पूजनम्

ध्यानम्–

'भूयोऽन्यं श्रीबैन्दवाख्यं सुचक्रं
दिव्यं साक्षाच्छ्रीशिवात्माभिधञ्च।
देदीप्ताभं मिश्रबिन्दुस्वरूपं
सर्वानन्दस्वप्रकाशं स्मरामि।।१।।'

पूजनम्–

बिन्दु-चक्रम्–'ॐ ह्रीं श्रीं बिन्दुचक्राय नमः। बिन्दुचक्र-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।।१।।'

पश्चिमादिवामावर्तेन रत्यादीनां पञ्चदशदेवीनां पूजनम्

ध्यानम्–

'आदौ रतिं प्रीतिमथो मनोभवां
श्रीद्राविणीं क्षोभणिकां वशीकराम्।

---

*बिन्दु चक्रका पूजन–*बिन्दु चक्रका ध्यानपूर्वक पूजन करें। *ध्यान–* 'भूयोऽन्यं...स्मरामि।।१।।'का उच्चारण करते हुए बिन्दु चक्रका ध्यान करें। *पूजन–* 'ॐ...नमस्करोमि।।१।।'का उच्चारण करके बिन्दु चक्रकी श्रीपादुकाका पूजन, तर्पण तथा नमन करें।।१।।

*पश्चिमादि वामावर्त क्रमसे रति आदि पन्द्रह देवियोंका पूजन–*पश्चिमादि वामावर्त

आकर्षिणीं चैव सुमीनकेतनां

भूयोऽन्यदेवीं सुभगां भगान्तथा।।

श्रीसर्पिणीं तां भगपूर्वरूपिणीं

भूयश्च शक्तिं भगमालिनीन्तथा।

देवीमनङ्गां समनङ्गमेखलां

चानङ्गपूर्वां मदनातुरामिमाः।।

रक्ताः सुपाशाङ्कुशबाणचापकान्

करैर्दधाना मणिमाल्यभूषिताः।

परापरा योगिनिकाः स्मराम्यहम्।।२।।'

पूजनम्–

१.*रति-देवी*–'ॐ ह्रीं श्रीं रतिदेव्यै नमः। रति-देवी-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

२.*प्रीति-देवी*–'ॐ ह्रीं श्रीं प्रीतिदेव्यै नमः। प्रीति-देवी-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

३.*मनोभवा-देवी*–'ॐ ह्रीं श्रीं मनोभवादेव्यै नमः। मनोभवा-देवी-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

४.*द्राविणी-देवी*–'ॐ ह्रीं श्रीं द्राविणीदेव्यै नमः। द्राविणी-देवी-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

५.*क्षोभिणी-देवी*–'ॐ ह्रीं श्रीं क्षोभिणीदेव्यै नमः। क्षोभिणी-देवी-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

६.वशीकरिणी-देवी–'ॐ ह्रीं श्रीं वशीकरिणीदेव्यै नमः।

क्रमसे 'रति, प्रीति, मनोभवा, द्राविणी, क्षोभिणी, वशीकरिणी, आकर्षिणी, सुमीनकेतना, सुभगा, भगा, भगसर्पिणी, भगमालिनी, अनङ्गा, अनङ्गमेखला तथा

वशीकरिणी-देवी-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

७.आकर्षिणी-देवी–'ॐ ह्रीं श्रीं आकर्षिणीदेव्यै नमः। आकर्षिणी-देवी-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

८.सुमीनकेतना-देवी–'ॐ ह्रीं श्रीं सुमीनकेतनादेव्यै नमः। सुमीनकेतना-देवी-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

९.सुभगा-देवी–'ॐ ह्रीं श्रीं सुभगादेव्यै नमः। सुभगा-देवी-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

१०.भगा-देवी–'ॐ ह्रीं श्रीं भगादेव्यै नमः। भगा-देवी-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

११.भगसर्पिणी-देवी–'ॐ ह्रीं श्रीं भगसर्पिणीदेव्यै नमः। भगसर्पिणी-देवी-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

१२.भगमालिनी-देवी–'ॐ ह्रीं श्रीं भगमालिनीदेव्यै नमः। भगमालिनी-देवी-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

१३.अनङ्गा-देवी–'ॐ ह्रीं श्रीं अनङ्गादेव्यै नमः। अनङ्गा-देवी-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

१४.अनङ्गमेखला-देवी–'ॐ ह्रीं श्रीं अनङ्गमेखलादेव्यै नमः। अनङ्गमेखला-देवी-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

१५.अनङ्गमदनातुरा-देवी–'ॐ ह्रीं श्रीं अनङ्गमदनातुरादेव्यै नमः। अनङ्गमदनातुरा-देवी-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।।२।।'

अनङ्ग-मदनातुरा' इन पन्द्रह देवियोंका ध्यानपूर्वक पूजन करें। *ध्यान*–'आदौ...स्मराम्यहम्।।२।।'का उच्चारण करते हुए एकसाथ रति आदि पन्द्रह देवियोंका ध्यान करें। *पूजन*–'ॐ ह्रीं श्रीं रतिदेव्यै नमः। रतिदेवी-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'का उच्चारण करके रति देवीकी श्रीपादुकाका पूजन, तर्पण तथा नमन करें।

इसी प्रकार अलग-अलग अन्य देवियोंकी श्रीपादुकाका पूजन, तर्पण तथा नमन करें।।२।।

बिन्दु-चक्रेश्वर्याः त्रिपुरभैरव्याः पूजनम्

ध्यानम्–

'आदित्यमण्डलनिभां नरमुण्डमालां
सोमाग्निसूर्यनयनां शिवचक्रनाथाम्।
खण्डेन्दुराजमुकुटां नवयौवनाढ्यां
माणिक्यरत्नखचितारुणवस्त्रभूषाम्।।
संलिप्तशोणितकुचद्वययुक्तदेहां
मालास्वभीतिवरपुस्तकपाणिपद्माम्।
बिन्दौ हि लब्धिशुभयोनिसुशैवशास्त्रैः
युक्तां स्मितां त्रिपुरभैरविकां नमामि।।३।।'

पूजनम्–

त्रिपुर-भैरवी–'ॐ ह्रीं श्रीं बिन्दुचक्रेश्वरी-त्रिपुरभैरव्यै नमः। बिन्दु-चक्रेश्वरी-त्रिपुरभैरवी-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।।३।।'

।। इति दशमावरणपूजनम् ।।

बिन्दुचक्रेश्वरी त्रिपुरभैरवीका पूजन–बिन्दुचक्रेश्वरी त्रिपुरभैरवीका ध्यानपूर्वक पूजन करें। *ध्यान*–'आदित्य ... स्मरामि।।३।।'का उच्चारण करते हुए बिन्दुचक्रेश्वरी त्रिपुरभैरवीका ध्यान करें। *पूजन*–'ॐ...नमस्करोमि।।३।।'का उच्चारण करके बिन्दु-चक्रेश्वरी त्रिपुरभैरवीकी श्रीपादुकाका पूजन, तर्पण तथा नमन करें।।३।।

।। इति दशमावरणपूजनम् ।।

●

एकादशावरणपूजनम्

॥ श्रीगायत्रीब्रह्मविद्यायै नमः ॥

बैन्दव-चक्रान्तर्गत-कल्पित-श्रीमहाबैन्दव-चक्रस्य पूजनम्

ध्यानम्–

'श्रीसर्वानन्दाऽऽख्यचक्रान्तरस्थं
ह्यन्यं चक्रं श्रीमहाबैन्दवाख्यम्।
सद्रूपं वै श्रीपरब्रह्मतत्त्वं
वन्देऽद्वैतं केवलं स्वप्रकाशम्॥१॥'

पूजनम्–

महाबैन्दव-चक्रम्–'ॐ ह्रीं श्रीं महाबैन्दवचक्राय नमः। महाबैन्दव-चक्र-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि॥१॥'

महाबैन्दव-चक्रेश्वर्याः त्रिपुरसुन्दर्याः पूजनम्

ध्यानम्–

'साक्षाच्छ्रीकुलकौलदर्शनमहामुद्रात्रिखण्डायुतां
देवीं सर्वसुकामसिद्धिसहितां ब्रह्मात्मचक्रे स्थिताम्।

बैन्दव चक्रके अन्तर्गत कल्पित श्रीमहाबैन्दव चक्रका पूजन–बैन्दव चक्रके अन्तर्गत कल्पित श्रीमहाबैन्दव चक्रका ध्यानपूर्वक पूजन करें। *ध्यान*–'श्रीसर्वा... स्वप्रकाशम्॥१॥'का उच्चारण करते हुए श्रीमहाबैन्दव चक्रका ध्यान करें। *पूजन*–'ॐ...नमस्करोमि॥१॥'का उच्चारण करके श्रीमहाबैन्दव चक्रकी श्रीपादुकाका पूजन, तर्पण तथा नमन करें॥१॥

महाबैन्दव चक्रेश्वरी त्रिपुरसुन्दरीका पूजन–महाबैन्दव चक्रेश्वरी त्रिपुरसुन्दरीका

रक्तां पाशधनुःशराङ्कुशधरां दिव्यां जगन्मोहिनीं
वन्दे त्रैपुरसुन्दरीं समरसाकाराख्यचक्रेश्वरीम्।।२।।'

पूजनम्–

त्रिपुरसुन्दरी–'ॐ ह्रीं श्रीं महाबैन्दवचक्रेश्वरीत्रिपुरसुन्दर्यै नमः। महाबैन्दव-चक्रेश्वरी-त्रिपुरसुन्दरी-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।।२।।'

कल्पित-षट्कोणकस्य षट्कोणेषु ब्रह्मादीनां षट्शाम्भवानां पूजनम्

ध्यानम्–

'षट्कोणकं तत्र पुनर्विचिन्त्य
षट्शाम्भवान् नौमि पुनः क्रमेण।।३।।'

पूजनम्–

कल्पित-षट्कोणकस्य पश्चिमकोणे ब्रह्म-शाम्भवस्य पूजनम्

ब्रह्म-शाम्भवः–'ॐ ह्रीं श्रीं ब्रह्मशाम्भवाय नमः। ब्रह्म-शाम्भव-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

ध्यानपूर्वक पूजन करें। *ध्यान–*'साक्षाच्छ्रीकुलकौल...चक्रेश्वरीम्।।२।।'का उच्चारण करते हुए महाबैन्दव चक्रेश्वरी त्रिपुरसुन्दरीका ध्यान करें। *पूजन–*'ॐ...नमस्करोमि।।२।।'का उच्चारण करके महाबैन्दव चक्रेश्वरी त्रिपुरसुन्दरीकी श्रीपादुकाका पूजन, तर्पण तथा नमन करें।।२।।

*कल्पित षट्कोणकके षट्कोणोंमें ब्रह्मा आदि छह शाम्भवोंका पूजन–*कल्पित षट्कोणकके षट्कोणोंमें 'ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र, ईश्वर, सदाशिव तथा आदिनाथ' इन छह शाम्भवोंका ध्यानपूर्वक पूजन करें। *ध्यान–*'षट्कोणकं...पुनः क्रमेण।।'का उच्चारण करके एकसाथ ब्रह्मा आदि छह शाम्भवोंका ध्यान करें।

*कल्पित षट्कोणकके पश्चिम कोणमें ब्रह्मा शाम्भवका पूजन–*कल्पित षट्कोणकके पश्चिम कोणमें ब्रह्मा शाम्भवका पूजन करें। *पूजन–*'ॐ ह्रीं श्रीं ... नमस्करोमि।'का उच्चारण करके ब्रह्मा शाम्भवकी श्रीपादुकाका पूजन, तर्पण तथा नमन करें।

कल्पित-षट्कोणकस्य वायव्यकोणे विष्णु-शाम्भवस्य पूजनम्

विष्णु-शाम्भवः–'ॐ ह्रीं श्रीं विष्णुशाम्भवाय नमः। विष्णु-शाम्भव-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

कल्पित-षट्कोणकस्य आग्नेयकोणे रुद्र-शाम्भवस्य पूजनम्

रुद्र-शाम्भवः–'ॐ ह्रीं श्रीं रुद्रशाम्भवाय नमः। रुद्र-शाम्भव-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

कल्पित-षट्कोणकस्य ईशानकोणे ईश्वर-शाम्भवस्य पूजनम्

ईश्वर-शाम्भवः–'ॐ ह्रीं श्रीं ईश्वरशाम्भवाय नमः। ईश्वर-शाम्भव-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

कल्पित-षट्कोणकस्य नैर्ऋत्यकोणे सदाशिव-शाम्भवस्य पूजनम्

सदाशिव-शाम्भवः–'ॐ ह्रीं श्रीं सदाशिवशाम्भवाय नमः। सदाशिव-शाम्भव-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि।'

कल्पित षट्कोणकके वायव्य कोणमें विष्णु शाम्भवका पूजन–कल्पित षट्कोणकके वायव्य कोणमें विष्णु शाम्भवका पूजन करें। *पूजन*–'ॐ ह्रीं श्रीं...नमस्करोमि।'का उच्चारण करके विष्णु शाम्भवकी श्रीपादुकाका पूजन, तर्पण तथा नमन करें।

कल्पित षट्कोणकके आग्नेय कोणमें रुद्र शाम्भवका पूजन–कल्पित षट्कोणकके आग्नेय कोणमें रुद्र शाम्भवका पूजन करें। *पूजन*–'ॐ ह्रीं श्रीं...नमस्करोमि।'का उच्चारण करके रुद्र शाम्भवकी श्रीपादुकाका पूजन, तर्पण तथा नमन करें।

कल्पित षट्कोणकके ईशान कोणमें ईश्वर शाम्भवका पूजन–कल्पित षट्कोणकके ईशान कोणमें ईश्वर शाम्भवका पूजन करें। *पूजन*–'ॐ ह्रीं श्रीं ... नमस्करोमि।'का उच्चारण करके ईश्वर शाम्भवकी श्रीपादुकाका पूजन, तर्पण तथा नमन करें।

कल्पित षट्कोणकके नैर्ऋत्य कोणमें सदाशिव शाम्भवका पूजन–कल्पित षट्कोणकके नैर्ऋत्य कोणमें सदाशिव शाम्भवका पूजन करें। *पूजन*–'ॐ ह्रीं श्रीं...नमस्करोमि।'का उच्चारण करके सदाशिव शाम्भवकी श्रीपादुकाका पूजन, तर्पण तथा नमन करें।

कल्पित-षट्कोणकस्य पूर्वकोणे आदिनाथ-शाम्भवस्य पूजनम्

आदिनाथ-शाम्भवः–'ॐ ह्रीं श्रीं आदिनाथशाम्भवाय नमः। आदिनाथ-शाम्भव-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि॥३॥'

कल्पित-षट्कोणकस्य मध्ये श्रीमहाशाम्भवस्य पूजनम्

ध्यानम्–

'मध्ये च साक्षात्स्थितचित्स्वरूपं
षडन्वयेशं हि महेतिपूर्वम्।
षडाननं द्वादशपाणिपद्मं
श्रीशाम्भवं चन्द्रधरं नमामि॥४॥'

पूजनम्–

श्रीमहाशाम्भवः–'ॐ ह्रीं श्रीं श्रीमहाशाम्भवाय नमः। श्रीमहा-शाम्भव-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि॥४॥'

श्रीचक्रे चतुर्विंशतिगायत्रीवर्णमातृकानां पूजनम्

ध्यानम्–

कल्पित षट्कोणकके पूर्व कोणमें आदिनाथ शाम्भवका पूजन–कल्पित षट्कोणकके पूर्व कोणमें आदिनाथ शाम्भवका पूजन करें। *पूजन*–'ॐ ह्रीं श्रीं...नमस्करोमि।'का उच्चारण करके आदिनाथ शाम्भवकी श्रीपादुकाका पूजन, तर्पण तथा नमन करें॥३॥

कल्पित षट्कोणकके मध्यमें श्रीमहाशाम्भवका पूजन–कल्पित षट्कोणकके मध्यमें श्रीमहाशाम्भवका ध्यानपूर्वक पूजन करें। *ध्यान*–'मध्ये ... नमामि॥४॥'का उच्चारण करते हुए श्रीमहाशाम्भवका ध्यान करें। *पूजन*–'ॐ ह्रीं श्रीं ... नमस्करोमि॥४॥'का उच्चारण करके श्रीमहाशाम्भवकी श्रीपादुकाका पूजन, तर्पण तथा नमन करें॥४॥

श्रीचक्रमें चौबीश गायत्री वर्णमातृकाओंका पूजन–श्रीचक्रमें चौबीश गायत्री वर्णमातृकाओंका ध्यानपूर्वक पूजन करें। *ध्यान*–'नवत्रिकोणै...वेदमातृः॥५॥'का उच्चारण करते हुए एकसाथ चौबीश गायत्री वर्णमातृकाओंका ध्यान करें। *पूजन*–

'नवत्रिकोणै रचितेषु दिव्य-
स्यन्देषु संस्थाः किल वर्णरूपाः।
विभिन्नमूर्त्तीर्हरिकेशपूज्या
वन्दे चतुर्विंशतिवेदमातृः॥५॥'

पूजनम्–

गायत्रीवर्णमातृकाः–'ॐ तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गोदेवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात् ॐ ह्रीं श्रीं श्रीगायत्रीवर्णमातृकाभ्यो नमः। श्रीगायत्रीवर्णमातृका-श्रीपादुकाः पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि॥५॥'

श्रीचक्रे श्रीगायत्रीब्रह्मविद्या-पीठशक्तेः पूजनम्

ध्यानम्–

'स्यन्दे स्थिता मनुमयी रुचिरान्यभागे
पूर्वोक्तवेदजननी सुसमष्टिरूपा।
मुक्ताभविद्रुमसुकाञ्चननीलशुक्ल-
तत्त्वात्मवर्णयुतपञ्चमुखाब्जयुक्ता॥
पाशाङ्कुशाब्जयुगलाभयपात्रशङ्ख-
श्रीमद्रथाङ्गवरसूत्रकरा स्मितास्या।
सङ्गीयते च मुखरैः परमेश्वरी या
तां वै नमामि सततं निगमादिरूपाम्॥६॥'

पूजनम्–

श्रीगायत्री ब्रह्मविद्या पीठशक्तिः–'ॐ तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गोदेवस्य

'ॐ...नमस्करोमि॥५॥'का उच्चारण करके एकसाथ चौबीश गायत्री वर्ण मातृकाओंकी श्रीपादुकाओंका पूजन, तर्पण तथा नमन करें॥५॥

श्रीचक्रमें श्रीगायत्री ब्रह्मविद्या पीठशक्तिका पूजन–श्रीचक्रमें श्रीगायत्री ब्रह्मविद्या

धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात् परो रजसेऽसावदोम् ॐ ह्रीं श्रीं श्रीगायत्रीब्रह्मविद्यायै नमः। श्रीगायत्री-ब्रह्मविद्या-श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमस्करोमि॥६॥'

॥ इत्येकादशावरणपूजनम् ॥

पीठशक्तिका ध्यानपूर्वक पूजन करें। *ध्यान*–'स्यन्दे...निगमादिरूपाम्॥६॥'का उच्चारण करते हुए श्रीगायत्री ब्रह्मविद्या पीठ शक्तिका ध्यान करें। *पूजन*–'ॐ...नमस्करोमि॥६॥'का उच्चारण करके श्रीगायत्री ब्रह्मविद्या पीठशक्तिकी श्रीपादुकाका पूजन, तर्पण तथा नमन करें॥६॥

॥ इत्येकादशावरणपूजनम् ॥

श्रीगायत्रीब्रह्मविद्यापूजनम्

श्रीचक्रावरणपूजनानन्तरं श्रीयन्त्रे श्रीगायत्रीब्रह्म-विद्यायाः पूजनं पञ्चोपचारेण कुर्यात्। यथा–

गन्धम्–'ॐ तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गोदेवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात् परो रजसेऽसावदोम् ॐ ह्रीं श्रीं श्रीगायत्रीब्रह्मविद्यायै नमः। श्रीगायत्रीब्रह्मविद्या-प्रीत्यर्थं लं पृथिव्यात्मकं गन्धं समर्पयामि।'

पुष्पम्–'ॐ तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गोदेवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात् परो रजसेऽसावदोम् ॐ ह्रीं श्रीं श्रीगायत्रीब्रह्मविद्यायै नमः। श्रीगायत्रीब्रह्मविद्या-प्रीत्यर्थं हं आकाशात्मकं पुष्पं समर्पयामि।'

धूपः–'ॐ तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गोदेवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात् परो रजसेऽसावदोम् ॐ ह्रीं श्रीं श्रीगायत्रीब्रह्मविद्यायै नमः। श्रीगायत्रीब्रह्मविद्या-प्रीत्यर्थं यं वाय्वात्मकं धूपमाघ्रापयामि।'

दीपः–'ॐ तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गोदेवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात् परो रजसेऽसावदोम् ॐ ह्रीं श्रीं श्रीगायत्रीब्रह्मविद्यायै नमः। श्रीगायत्रीब्रह्मविद्या-प्रीत्यर्थं रं वह्न्यात्मकं दीपं दर्शयामि।'

श्रीयन्त्रमें श्रीगायत्री ब्रह्मविद्याका पूजन–इस प्रकारसे आवरण पूजनके बाद श्रीयन्त्रमें श्रीगायत्री ब्रह्मविद्याका पूजन 'गन्ध, पुष्प, धूप, दीप तथा नैवेद्य' इन पञ्च उपचारोंसे करें। जैसे:–

गन्ध–'ॐ...समर्पयामि।'का उच्चारण करके श्रीगायत्री ब्रह्मविद्याकी प्रसन्नताके लिए गन्धका अर्पण करें।

पुष्प–'ॐ...समर्पयामि।'का उच्चारण करके श्रीगायत्री ब्रह्मविद्याकी प्रसन्नताके लिए पुष्पका अर्पण करें।

धूप–'ॐ...आघ्रायामि।'का उच्चारण करके श्रीगायत्री ब्रह्मविद्याकी प्रसन्नताके लिए धूपका आघ्राण करावें।

दीप–'ॐ...दर्शयामि।'का उच्चारण करके श्रीगायत्री ब्रह्मविद्याकी प्रसन्नताके

नैवेद्यम्–'ॐ तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गोदेवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात् परो रजसेऽसावदोम् ॐ ह्रीं श्रीं श्रीगायत्रीब्रह्मविद्यायै नमः। श्रीगायत्रीब्रह्मविद्या-प्रीत्यर्थं वं जलात्मकं नैवेद्यं निवेदयामि। मध्ये पानीयम्, उत्तरापोऽशनार्थं मुखप्रक्षालनार्थञ्च जलं समर्पयामि।'

जपविधिः

विनियोगः–'ॐ अस्य श्रीगायत्रीब्रह्मविद्यामन्त्रस्य श्रीदक्षिणामूर्तिः ऋषिः, पङ्क्तिः छन्दः, श्रीगायत्रीब्रह्मविद्या देवता, ॐ बीजम्, ह्रीं शक्तिः, श्रीं कीलकम्, श्रीगायत्रीब्रह्मविद्याप्रीत्यर्थं जपे विनियोगः।'

ऋष्यादिन्यासः–'श्रीदक्षिणामूर्तये ऋषये नमः' शिरसि। 'पङ्क्तिच्छन्दसे नमः' मुखे। 'श्रीगायत्रीब्रह्मविद्यादेवतायै नमः' हृदि। 'ॐ बीजाय नमः' गुह्ये। 'ह्रीं शक्तये नमः' पादयोः। 'श्रीं कीलकाय नमः' नाभौ।

करन्यासः–'ॐ अङ्गुष्ठाभ्यां नमः। ह्रीं तर्जनीभ्यां नमः। श्रीं मध्यमाभ्यां नमः। ॐ अनामिकाभ्यां नमः। ह्रीं कनिष्ठिकाभ्यां नमः। श्रीं करतल-करपृष्ठाभ्यां नमः।'

लिए दीपका दर्शन करावें।

नैवेद्य–'ॐ...समर्पयामि।'का उच्चारण करके श्रीगायत्री ब्रह्मविद्याकी प्रसन्नताके लिए नैवेद्यका निवेदन करें। मध्यमें पानीय, बादमें पीनेके लिए जल तथा मुख प्रक्षालनके लिए जलका अर्पण करें।

जपविधि

विनियोग–'ॐ अस्य श्रीगायत्रीब्रह्मविद्यामन्त्रस्य...जपे विनियोगः।'का उच्चारण करके विनियोग करें।

ऋष्यादिन्यास–'श्रीदक्षिणामूर्तये ऋषये नमः'का उच्चारण करते हुए शिर पर स्पर्श करनेकी भावना करें। इसी प्रकार नाभि पर्यन्त स्पर्श करनेकी भावना करें।

करन्यास–'ॐ अङ्गुष्ठाभ्यां नमः।'का उच्चारण करते हुए दोनों हाथोंकी अङ्गुष्ठाओंका अपनी-अपनी तर्जनी अङ्गुलियोंसे स्पर्श करें। इसी प्रकार अङ्गुष्ठाओंसे अपनी-अपनी अङ्गुलियोंका स्पर्श करते हुए करन्यास करें।

षडङ्गन्यासः–'ॐ हृदयाय नमः। ह्रीं शिरसे स्वाहा। श्रीं शिखायै वषट्। ॐ कवचाय हुम्। ह्रीं नेत्रत्रयाय वौषट्। श्रीं अस्त्राय फट्।'

अक्षरन्यासः–'ॐ नमः' पादादिनाभ्यन्तम्। 'ह्रीं नमः' नाभ्यादि-कण्ठान्तम्। 'श्रीं नमः' कण्ठादि-ब्रह्मरन्ध्रान्तम्।

जपादौ मालापूजनम्–'ॐ माले माले महामाले सर्वतत्त्व-स्वरूपिणि। चतुर्वर्गस्त्वयि न्यस्तः तस्मान्मे सिद्धिदा भव।। ॐ ह्रीं मालायै नमः।' इत्यनेन मालां दक्षिणकरे निधाय, हृत्प्रदेशे समानीय, शिरसि धृत्वा, ततः पात्रे धृत्वा, 'ॐ ह्रीं सिद्ध्यै नमः।' इतिमन्त्रेण मालां गन्धादिभिः सम्पूज्य प्रार्थयेत्। *प्रार्थना*–'त्वं माले सर्वभूतानां सर्वलोकप्रिया मता। शिवं कुरुष्व मे भद्रे यशो वीर्यं च देहि मे।।'

जपः–'ॐ ह्रीं श्रीं' इति श्रीगायत्रीब्रह्मविद्यामन्त्रमष्टोत्तरशत-सङ्ख्याकं (१०८) जपेत्।

षडङ्गन्यास–'ॐ हृदयाय नमः।'का उच्चारण करते हुए हृदयका स्पर्श करें। 'ह्रीं शिरसे स्वाहा।'का उच्चारण करते हुए शिरका स्पर्श करें। 'श्रीं शिखायै वषट्।'का उच्चारण करते हुए शिखाका स्पर्श करें। 'ॐ कवचाय हुम्।'का उच्चारण करते हुए हाथोंसे परस्पर एक दूसरे बाहुओंका स्पर्श करें। 'ह्रीं नेत्रत्रयाय वौषट्।'का उच्चारण करते हुए बीचकी तीन अङ्गुलियोंसे एक साथ दोनों नेत्र तथा भ्रूमध्यका स्पर्श करें। 'श्रीं अस्त्राय फट्।'का उच्चारण करते हुए बीचकी तीन अङ्गुलियोंको शिरके चारों ओर घूमा कर उनसे दूसरी हथेली पर ताड़न करें।

अक्षरन्यास–'ॐ नमः'का उच्चारण करते हुए पैरसे लेकर नाभि तकका स्पर्श करनेकी भावना करें। 'ह्रीं नमः'का उच्चारण करते हुए नाभिसे लेकर कण्ठ तकका स्पर्श करनेकी भावना करें। 'श्रीं नमः'का उच्चारण करते हुए कण्ठसे लेकर ब्रह्मरन्ध्र तकका स्पर्श करनेकी भावना करें।

जपके प्रारम्भमें मालापूजन–'ॐ माले...नमः।'का उच्चारण करते हुए मालाको दायें हाथमें रखकर, हृदय प्रदेशमें लाकर, शिर पर रखकर, उसके बाद पात्रमें रखकर, 'ॐ ह्रीं सिद्ध्यै नमः।' इस मन्त्रसे गन्ध आदि पदार्थोंसे मालाका पूजन करके प्रार्थना करें। *प्रार्थना*–'त्वं...देहि मे।।'का उच्चारण करके मालाकी प्रार्थना करें।

जप–'ॐ ह्रीं श्रीं' इस श्रीगायत्री ब्रह्मविद्या मन्त्रका एक सौ आठ (१०८) बार जप करें।

जपान्ते मालापूजनम्–'ॐ ह्रीं मालायै नमः।' इतिमन्त्रेण मालां गन्धादिभिः सम्पूज्य प्रार्थयेत्। *प्रार्थना*–'त्वं माले सर्वदेवानां सर्वसिद्धिप्रदा मता। तेन सत्येन मे सिद्धिं देहि मातर्नमोऽस्तु ते।। गुह्यातिगुह्यगोप्त्री त्वं गृहाणास्मत्कृतं जपम्। सिद्धिर्भवतु मे देवि त्वत्प्रसादात् सुरेश्वरि।।'

कर्पूरार्तिक्यम्–'ॐ तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गोदेवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात् परो रजसेऽसावदोम् ॐ ह्रीं श्रीं श्रीगायत्रीब्रह्मविद्यायै नमः। श्रीगायत्री-ब्रह्मविद्या-प्रीत्यर्थं कर्पूरार्तिक्यं दीपं दर्शयामि।'

पुष्पाञ्जलिः–'ॐ तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गोदेवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात् परो रजसेऽसावदोम् ॐ ह्रीं श्रीं श्रीगायत्रीब्रह्मविद्यायै नमः। श्रीगायत्री-ब्रह्मविद्या-प्रीत्यर्थं मन्त्रपुष्पाञ्जलिं समर्पयामि।।' इति मन्त्रेण श्रीयन्त्रे पुष्पाञ्जलिमर्पयित्वा प्रणामं कुर्यात्।

देवगणप्रत्यागमनम्–पूजनान्ते श्रीयन्त्रं विहाय सर्वेषां देवगणानां प्रत्यागमनं यथास्थानं कारयेत्। *अक्षतक्षेपणम्*–'यान्तु देवगणाः सर्वे पूजामादाय पार्थिवीम्। इष्टकामसमृद्ध्यर्थं पुनरागमनाय च।।' इतिमन्त्रेणाक्षतक्षेपणेन सर्वदेवानां प्रत्यागमनं कारयेत्। इति शिवम्।।

।। पूजात्मक सपर्याखण्ड सम्पूर्ण ।।

जपके अन्तमें मालापूजन–'ॐ ह्रीं मालायै नमः।' इस मन्त्रसे गन्धादि पदार्थोंसे मालाका पूजन करें। *प्रार्थना*–'त्वं माले सर्वदेवानां...सुरेश्वरि।।'का उच्चारण करके मालाकी प्रार्थना करें।

कर्पूरकी आरती–'ॐ...दर्शयामि।'का उच्चारण करके श्रीगायत्री ब्रह्मविद्याकी प्रसन्नताके लिए कर्पूरकी आरती करें।

पुष्पाञ्जलि–'ॐ...समर्पयामि।।'से श्रीयन्त्रमें पुष्पाञ्जलि अर्पण कर प्रणाम करें।

देवगणप्रत्यागमन–पूजाके अन्तमें श्रीयन्त्रको छोड़कर सभी देवगणोंका प्रत्यागमन करावें। *अक्षतक्षेपण*–'यान्तु...रागमनाय च।।'से अक्षत छोड़ें।। इति शिवम्।।

।। पूजात्मक सपर्याखण्ड सम्पूर्ण ।।

।।श्रीः।।

श्रीविद्यान्तर्गता

गायत्री ब्रह्मविद्या

सविमर्श-'प्रह्लाद'हिन्दीव्याख्यासहिता

(वन्दनात्मकं सपर्याखण्डम्)

❖❖❖

श्रीगायत्रीब्रह्मविद्याचक्रावरणवन्दना

गायत्री ब्रह्मविद्या (वन्दनाखण्ड)

श्रीविद्याके अन्तर्गत श्रीगायत्री ब्रह्मविद्याके चक्रका निरूपण किया गया है। *'गायत्री ब्रह्मविद्या'* यह ग्रन्थ दो खण्डोंमें प्रस्तुत है। प्रथम खण्ड है–'ज्ञानखण्ड' तथा द्वितीय खण्ड है–'सपर्याखण्ड'। 'सपर्याखण्ड' दीक्षात्मक, पूजात्मक तथा वन्दनात्मक है। प्रस्तुत खण्ड 'वन्दनात्मक सपर्याखण्ड'के रूपमें जाना जाता है।

श्रीगायत्रीब्रह्मविद्याचक्रावरणवन्दना

'श्रीगायत्रीब्रह्मविद्याचक्रावरणवन्दना' नामक शीर्षकके अन्तर्गत सम्पूर्ण श्रीगायत्री ब्रह्मविद्याके चक्रकी वन्दना की गयी है। यहाँ पर 'आवरण' शब्दसे ग्यारह आवरणोंका ग्रहण होता है। श्रीगायत्री ब्रह्मविद्याके पूजनका सर्वश्रेष्ठ साधन श्रीयन्त्र है। 'पूजाखण्ड'में श्रीयन्त्रके माध्यमसे 'श्रीचक्र'का स्थूलात्मक पार्थिव पूजन होता है; जबकि 'वन्दनाखण्ड'में सूक्ष्मात्मक वाचिक पूजन होता है।

प्रथमावरणवन्दना

॥ श्रीगायत्रीब्रह्मविद्यायै नमः ॥

श्रीपरदेवतायाः वन्दना

दिव्यां परां सुधवलारुणचक्रताप्तां
मूलादिबिन्दुपरिपूर्णकलात्मरूपाम्।
स्थित्यात्मिकां शरधनुःसृणिपाशहस्तां
श्रीचक्रतां परिणतां सततं नमामि॥१॥

श्रीपरयन्त्रराजस्य वन्दना

भूःपूस्त्रिवृत्तकमथेन्दुकलारविन्दम्
अष्टारकञ्च मनुकोणमथो दशारम्।
दिक्कोणकञ्च गजकोणमथ त्रिकोणं
वन्दे च बिन्दुसहितं परयन्त्रराजम्॥२॥

परदेवताकी वन्दना—मैं उस 'परदेवता'को नमस्कार करता हूँ कि जिसने श्वेत-रक्तवर्णरूपी शिवशक्तिस्वरूपात्मक चक्रताको प्राप्त कर ली है, जो मूलादिसे बिन्दु पर्यन्त सूक्ष्मरूपसे परिपूर्ण है, जो हाथोंमें बाण, धनुष, अङ्कुश तथा पाशका धारण करके स्थूलरूपसे विराजमान है और जिसने श्रीचक्रके रूपमें परिणतिको प्राप्त कर ली है॥१॥

परयन्त्रराजकी वन्दना—मैं चतुरस्र, त्रिवृत्त, षोडशदल, अष्टदल,

भूपुर्बहिः क्रमेण पूर्वाग्नेयदक्षिणनैर्ऋत्यपश्चिमवायव्योत्तरेशानेषु, ईशानपूर्वयोर्मध्ये नैर्ऋत्यपश्चिमयोर्मध्ये चेन्द्रादीनां दशदिक्पालानां वन्दना

देवेन्द्रं तं वज्रहस्तं सुपीतं
रक्ताभं वैश्वानरं शक्तिहस्तम्।
श्रीमत्सौरिं दण्डहस्तञ्च कृष्णं
बन्धूकाभं नैर्ऋतं खड्गहस्तम्।।
पाशाढ्यं श्रीपाशिनं श्वेतवर्णं
वायुं सृण्याढ्यं हरिद्वर्णदेहम्।
पौलस्त्यं वै शुक्लवर्णं गदाढ्यम्
ईशानं श्रीशूलहस्तञ्च शुभ्रम्।।
ब्रह्माणं तं पद्महस्तं सुपीतं
रम्यं श्यामं चक्रहस्तं ह्यनन्तम्।

चतुर्दशार, बहिर्दशार, अन्तर्दशार, अष्टकोण, त्रिकोण तथा बिन्दुके साथ परयन्त्रराजकी वन्दना करता हूँ।।२।।

भूपुरके बाहर क्रमसे पूर्व, आग्नेय, दक्षिण, नैर्ऋत्य, पश्चिम, वायव्य, उत्तर, ईशान, ईशान-पूर्व तथा नैर्ऋत्य-पश्चिममें इन्द्र आदि दश दिक्पालोंकी वन्दना—मैं भूपुरके बाहरमें स्थित गाढ़ पीत वर्णवाला तथा हाथसे वज्रका धारण करनेवाला इन्द्र देव, लाल वर्णवाला तथा हाथसे शक्तिका धारण करनेवाला अग्नि देव, कृष्ण वर्णवाला तथा हाथसे दण्डका धारण करनेवाला यम देव, बन्धूक पुष्पके समान लाल वर्णवाला तथा हाथसे खड्गका धारण करनेवाला नैर्ऋत देव, श्वेत वर्णवाला तथा हाथसे पाशका धारण करनेवाला वरुण देव, हरित वर्णके शरीरवाला तथा हाथसे अङ्कुशका धारण करनेवाला वायु देव, श्वेत वर्णवाला तथा हाथसे गदाका धारण करनेवाला कुवेर देव,

सर्वान् देवान् नौमि भूपुर्बहिस्थान्
पूर्वादारभ्याभिवर्त्तक्रमेण।।३।।

भूपुरस्य वन्दना

रेखात्रयैर्धवलरक्तसुकृष्णवर्णैः
सन्निर्मितं कृतमुखं वसुधाख्यचक्रम्।
रम्यं महाप्रकटयोगिनिकासमेतं
त्रैलोक्यमोहनकरं सततं नमामि।।४।।

पश्चिमद्वारे द्वारपालरूप-सर्वयोगिनीस्वरूप-सर्वभूतानां वन्दना

नानायुधाढ्याः सकलमनोज्ञा
नानाम्बराढ्या विविधाकृतीश्च।
योगिन्य एता अपि सर्वभूतान्
नानास्वरूपानतिभीमरूपान्।।

श्वेत वर्णवाला तथा हाथसे शूलका धारण करनेवाला ईशान देव, गाढ़ पीत वर्णवाला तथा हाथसे कमलका धारण करनेवाला ब्रह्मा देव और रमणीय श्याम वर्णवाला तथा हाथसे चक्रका धारण करनेवाला अनन्त देव—इन सभी दिक्पालोंको पूर्वसे आरम्भ करके अभिवर्त्त क्रमसे नमस्कार करता हूँ।।३।।

भूपुरकी वन्दना—मैं श्वेत, रक्त और अत्यन्त कृष्ण वर्णवाली तीन रेखाओंसे निर्मित, चार द्वारोंसे युक्त, रमणीय, तीनों लोकोंका सम्मोहक तथा महाप्रकट योगिनियोंके समेत भूपुर नामक चक्रको प्रणाम करता हूँ।।४।।

पश्चिमद्वारमें स्थित द्वारपाल सर्वयोगिनीरूपी सर्वभूतोंकी वन्दना—मैं अनेक आयुधोंसे युक्त, अनेक वस्त्रोंसे भूषित, अनेक आकृतिवाली इन सभी योगिनियोंका और सभी भूत जो कि अनेक आकृतिवाले,

अनेकशस्त्राङ्कितहस्तयुक्तान्
अनेकवक्त्रान्वितघोरवक्त्रान्।
स्मराम्यहं तान् सकलान् प्रसन्नान्
श्रीद्वारपालान् किल पश्चिमस्थान्॥५॥

पूर्वद्वारे द्वारपालरूप-क्षेत्रपतेः वन्दना

नीलाञ्जनाभं परमं त्रिनेत्रं
चञ्चत्कृपाणं नृकपालपात्रम्।
श्रीशूलकं सडुमरुं च मुद्रां
दण्डं दधानं रसपाणिपद्मैः॥
श्रीद्वारपालं किल पूर्वसंस्थं
स्मराम्यहं क्षेत्रपतिं प्रसन्नम्॥६॥

दक्षिणद्वारे द्वारपालरूप-गणनायकस्य वन्दना

लम्बोदरं नीलतनुं गजास्यं
पाशाङ्कुशौ चैव कपालशूले।

अत्यन्त भयङ्कर रूपवाले, अनेक शस्त्रोंसे चिह्नित हाथोंवाले, अनेक मुखोंसे युक्त भयङ्कर मुखवाले तथा पश्चिम द्वार पर स्थित हैं उन सभी प्रसन्न द्वारपालोंका स्मरण करता हूँ॥५॥

पूर्वद्वारमें स्थित द्वारपाल क्षेत्रपतिकी वन्दना—मैं काले सुरमेके समान कान्तिमान्, विशाल त्रिनेत्रधारी, षड् भुजाओंमें चमकता हुआ तलवार, नरकपाल पात्र, त्रिशूल, डमरु, मुद्रा तथा दण्डका धारण किये हुए, प्रसिद्ध पूर्वद्वारमें स्थित द्वारपाल प्रसन्नस्वरूप क्षेत्रपतिका स्मरण करता हूँ॥६॥

दक्षिणद्वारमें स्थित द्वारपाल गणनायककी वन्दना—मैं उस गण-

करैर्वहन्तं गणनायकं तं
श्रीद्वारपं नौमि च दक्षिणस्थम्।।७।।

उत्तरद्वारे द्वारपालरूप-वटुकभैरवस्य वन्दना

बालं विशुद्धस्फटिकप्रभास्यं
श्रीशूलदण्डौ दधतं त्रिनेत्रम्।
देवीसुतं श्रीवटुकाभिधानं
श्रीद्वारपं नौमि सदोत्तरस्थम्।।८।।

भूसदने नैऋत्ये तिरस्कर्याः वन्दना

श्यामाननाब्जामरुणत्रिनेत्रां
कृष्णाम्बरां नीलहयाधिरूढाम्।
गदाञ्च खड्गं दधतीं कराभ्याम्
अधस्कराभ्यां मधुपूर्णकुम्भम्।।

नायकको प्रणाम करता हूँ कि जिसका उदर लम्बा है, शरीर नीला है, हाथीके समान मुख है; जिसने हाथोंसे पाश, अङ्कुश, कपाल तथा शूलका धारण किया है और जो दक्षिणी द्वारका द्वारपाल है।।७।।

उत्तरद्वारमें स्थित द्वारपाल वटुक भैरवकी वन्दना—मैं बालरूप, विशुद्ध स्फटिककी प्रभाके समान मुखवाले, त्रिशूल तथा दण्डका धारण करनेवाले, त्रिनेत्रधारी, सदैव उत्तरद्वारमें स्थित रहनेवाले द्वार-पाल, श्रीवटुक नामक देवीके पुत्रको प्रणाम करता हूँ।।८।।

भूपुरके नैऋत्य कोणमें स्थित तिरस्करी देवीकी वन्दना—मैं कृष्ण वर्णके मुखवाली, लाल वर्णकी तीन आँखोंवाली, कृष्ण वर्णके वस्त्र-का धारण करनेवाली, नीलवर्णके घोड़े पर आरूढ़, ऊपरके दोनों हाथोंसे गदा और खड्ग तथा नीचेके हाथोंसे मधुसे भरे हुए घड़ेको

तां दर्शयन्तीं निजरम्ययोनिं
विमोहयन्तीं पशुवर्गकांश्च।
तिरस्करीं चारुमुखीं मनोज्ञां
नैर्ऋत्यसंस्थां मनसा स्मरामि॥९॥

आग्नेये वनदुर्गायाः वन्दना

श्रीश्यामलाङ्गीं धृतचन्द्रचूडां
शङ्खं रथाङ्गं करवालबाणान्।
सत्तर्जनीं चर्म च खेटकाख्यं
चापं भुजाब्जैर्ननु धारयन्तीम्॥
स्मेराननाब्जां मणिरत्नभूषां
रक्ताम्बराढ्यां वनपूर्वदुर्गाम्।
आग्नेयसंस्थां मनसा स्मरामि॥१०॥

ईशाने कामदेवस्य वन्दना

ली हुई, अपनी रम्य योनिका प्रदर्शन करती हुई और पशुवर्गको विमोहित करती हुई नैर्ऋत्य कोणमें स्थित सुन्दर मुखवाली तिरस्करी देवीका मनसे स्मरण करता हूँ॥९॥

आग्नेय कोणमें स्थित वनदुर्गाकी वन्दना—मैं श्याम अङ्गोंवाली, मस्तक पर चन्द्रमाका धारण करनेवाली, करकमलोंसे शङ्ख, चक्र, तलवार, बाण, तर्जनी मुद्रा, चर्म, खेटक तथा चापका धारण करनेवाली, विहसित मुखवाली, मणिरत्नोंसे अलङ्कृत, रक्त वस्त्रका धारण करनेवाली, आग्नेय कोणमें स्थित वनदुर्गाका मनसे स्मरण करता हूँ॥१०॥

ईशान कोणमें स्थित कामदेवकी वन्दना—मैं एक हाथमें बन्धूक

बन्धूकखट्वाङ्गधरं मनोज्ञं
पुष्पेक्षुकोदण्डधरं द्विहस्तम्।
ईशानसंस्थं कुसुमादिभूष्यं
रत्यान्वितं काममहं स्मरामि॥११॥

वायव्ये वसन्तस्य वन्दना

स्मेराननाढ्यं शरदिन्दुगौरं
प्रीत्या युतं श्रीऋतुराजराजम्।
रत्नादिभूषं ललितं वसन्तं
वायव्यसंस्थं सततं नमामि॥१२॥

भूसदन-पार्श्वयोः शङ्खनिधेः पद्मनिधेश्च वन्दना

श्रीपद्ममालाङ्कितदिव्यदेहौ
स्मेराननाब्जौ वरदाभयाढ्यौ।

पुष्प तथा दूसरे हाथमें पुष्पबाण एवं ईखसे बने हुए धनुषका धारण करनेवाले, दो हाथोंवाले, कुसुम आदिसे विभूषित, रतिसे युक्त, अत्यन्त सुन्दर, ईशान कोणमें स्थित कामदेवका स्मरण करता हूँ॥११॥

वायव्य कोणमें स्थित वसन्तकी वन्दना—मैं वसन्तको निरन्तर प्रणाम करता हूँ कि जो विहसित मुखसे युक्त, शरत्कालीन चन्द्रमाके समान गौर वर्णवाला, प्रीतिसे युक्त, ऋतुओंका राजा, रत्न आदिसे अलङ्कृत, सुन्दर तथा वायव्य कोणमें स्थित है॥१२॥

भूपुरके दोनों पार्श्वोंमें स्थित शंखनिधि तथा पद्मनिधिकी वन्दना—मैं उन शंखनिधि तथा पद्मनिधिका स्मरण करता हूँ कि जिनके पद्ममालासे चिह्नित दिव्य शरीर हैं; विहसित मुखकमल, हाथोंमें वर मुद्रा तथा अभय मुद्रा सुशोभित हैं; जो भूपुरके दोनों पार्श्वोंमें स्थित

श्रीपार्श्वसंस्थौ ललितौ प्रसन्नौ
तौ शङ्खपद्माख्यनिधी स्मरामि॥१३॥

पश्चिमद्वारे द्वारनायिकारूपिण्याः कुब्जकेश्याः वन्दना

देवीं खण्डेन्दुचूडां मदमुदितमुखां बर्बराकेशभाराम्
उद्यद्बालार्कभासां कुचभरनमितां सर्वभूषाभिरामाम्।
सिंहस्कन्धाधिरूढामभयवरकरामेकवक्त्रां त्रिनेत्रां
श्रीद्वारेशीं प्रतीच्यां कुलजननमितां कुब्जकेशीं नमामि॥१४॥

उत्तरद्वारे द्वारनायिकारूपिण्याः सिद्धलक्ष्म्याः वन्दना

सत्खट्वाङ्गत्रिशूलाभयवरनृशिरःपाशकुम्भाङ्कुशासि-
पात्राढ्यां सुप्रसन्नां ललितदशभुजां श्रीशरच्चन्द्रगौरीम्।

हैं; सुन्दर तथा प्रसन्नस्वरूप हैं॥१३॥

पश्चिम द्वारमें स्थित द्वारनायिका कुब्जकेशीकी वन्दना—मैं देवी कुब्जकेशीको प्रणाम करता हूँ कि जिसने मस्तक पर अर्द्ध चन्द्रका धारण किया है; जिसके मुखमें दर्पके कारण प्रसन्नता छाई हुई है; जो विखरे हुए बालवाली, उगते हुए सूर्यके समान कांतिवाली, स्तनोंके भारसे झुकी हुई, सभी अलंकरणोंसे सुन्दर लगनेवाली, सिंहके कन्धे पर बैठी हुई, अभय मुद्रा तथा वर मुद्राका धारण करनेवाली, एक मुखवाली, तीन आँखोंवाली, पश्चिम द्वारकी द्वार-नायिका है तथा शक्ति समूहसे वन्दित है॥१४॥

उत्तर द्वारमें स्थित द्वारनायिका सिद्धलक्ष्मीकी वन्दना—मैं खाटके पाया, त्रिशूल, अभय मुद्रा, वर मुद्रा, नरमुण्ड, पाश, कुम्भ, अङ्कुश, तलवार तथा पानपात्रसे युक्त, अत्यन्त प्रसन्नस्वरूप, सुन्दर दश भुजाओंसे युक्त, शरत्कालीन चन्द्रमाके समान गौर वर्णवाली, रुद्रके कंधे पर बैठी हुई, नवयुवति, पाँच मुखोंसे सुशोभित, विहसित

रुद्रस्कन्धाधिरूढामभिनवयुवतिं पञ्चवक्त्राभिरामां
श्रीद्वारेशीमुदीच्यां स्मितमुखकमलां सिद्धलक्ष्मीं स्मरामि॥१५॥

पूर्वद्वारे द्वारनायिकारूपिण्या उन्मन्याः वन्दना

उद्यद्भास्वत्समाभां सुललितवदनामिन्दुचूडां त्रिनेत्राम्
अम्बां पाशाङ्कुशेष्टाभयकरकमलां चारुहासां प्रसन्नाम्।
द्यौस्तन्माणिक्यरत्नैर्ज्वलितसुललितालङ्कृतां रक्तवस्त्रां
श्रीद्वारेशीं हि पूर्वेऽरुणकमलगतामुन्मनीं तां नमामि॥१६॥

दक्षिणद्वारे द्वारनायिकारूपिण्या दक्षिणकालिकायाः वन्दना

दण्डं चक्रं कपालाभयवरडमरून् तर्जनीखेटखड्गान्
खट्वाङ्गं पाशकुण्डीसुसृणिशरधनुर्मुण्डकान् धारयन्तीम्।

मुखोंवाली तथा उत्तर द्वारमें स्थित द्वारनायिका सिद्धलक्ष्मीका स्मरण करता हूँ॥१५॥

पूर्व द्वारमें स्थित द्वारनायिका उन्मनीकी वन्दना—मैं उस उन्मनी देवीको नमस्कार करता हूँ कि जो उगते हुए सूयके समान कान्ति-वाली, अत्यन्त सुन्दर मुखवाली, मस्तक पर चन्द्रमाका धारण करने-वाली, तीन आँखोंवाली माता है; पाश, अंकुश, वर मुद्रा तथा अभय मुद्राका करकमलोंमें धारण करनेवाली, मन्द मुस्कानवाली, प्रसन्नस्वरूप, अलौकिक माणिक्यरत्नोंसे दीप्त सुन्दर अलंकारोंसे अलंकृत, लाल वस्त्रवाली है; लाल कमल पर बैठी हुई है तथा पूर्व द्वारकी द्वारनायिका है॥१६॥

दक्षिण द्वारमें स्थित द्वारनायिका दक्षिण कालिकाकी वन्दना—मैं उस दक्षिण कालिकाको प्रणाम करता हूँ जो दण्ड, चक्र, कपाल, अभय मुद्रा, वर मुद्रा, डमरु, तर्जनी मुद्रा, खेट, खड्ग, खट्वाङ्ग, पाश, कुण्डी, सृणि, शर, धनुष तथा नरमुण्डका धारण करनेवाली,

निश्शेषीं मुक्तकेशीं शशिशकलधरां व्याघ्रचर्माम्बराढ्यां
द्वारेशीं दक्षिणे तां तरुणरविनिभां नौम्यहं पञ्चवक्त्राम्॥१७॥

प्रथमरेखायां क्रमेण पूर्वदक्षिणपश्चिमोत्तरेषु, आग्नेयनैर्ऋत्यवायव्येशानेषु, पूर्वेशानयोर्मध्ये नैर्ऋत्यदक्षिणयोर्मध्ये नैर्ऋत्यपश्चिमयोर्मध्ये चाणिमादीनामेकादशसिद्धीनां *वन्दना*

पूर्णाणिमाञ्च गरिमां लघिमाख्यसिद्धिं
सिद्धिञ्च तां सुमहिमां सकलप्रसिद्धाम्।
ईशित्वसिद्धिमथ शुद्धवशित्वसिद्धिं
प्राकाम्यकां निखिलभुक्तिकरीं स्पृहाख्याम्॥
प्राप्त्याख्यसिद्धिमथ तां सकलार्थसिद्धिम्॥
रेखाद्यगाश्च सकलाः प्रकटादिसिद्धीः
बालेन्दुमौलिमुकुटा निधिवाहनस्थाः।
पाशाङ्कुशाब्जयुगयुक्तकरास्त्रिनेत्रा
रक्ताम्बरा अरुणकान्तियुताः स्मरामि॥१८॥

सम्पूर्ण रूपसे खुले बालवाली, अर्द्धचन्द्रका धारण करनेवाली, व्याघ्र चर्मरूपी वस्त्रसे युक्त है तथा दक्षिणमें द्वारनायिकाके रूपमें स्थित है; मध्याह्न कालीन सूर्यके समान है तथा पाँच मुखोंवाली है॥१७॥

प्रथम रेखामें क्रमसे पूर्व, दक्षिण, पश्चिम, उत्तर, आग्नेय, नैर्ऋत्य, वायव्य, ईशान, पूर्व-ईशान, दक्षिण-नैर्ऋत्य तथा नैर्ऋत्य-पश्चिम स्थित अणिमा आदि एकादश सिद्धियोंकी वन्दना—मैं पूर्ण स्वरूप अणिमा, गरिमा, लघिमा, सर्वप्रसिद्ध महिमा, ईशित्व, शुद्ध वशित्व, प्राकाम्य, सर्वभुक्ति, इच्छा, प्राप्ति तथा सर्वार्थ सिद्धि नामक उन सिद्धियोंका स्मरण करता हूँ; जो कि प्रथम रेखामें स्थित हैं; महा प्रकट सिद्धि योगिनियाँ हैं; मस्तक पर अर्द्ध-चन्द्राकार मुकुटोंका धारण करनेवाली, निधि रूपी वाहनों पर स्थित हैं; पाश, अंकुश,

द्वितीयरेखायां क्रमेण पूर्वदक्षिणपश्चिमोत्तरेषु, आग्नेयनैर्ऋत्यवायव्येशानेषु च ब्राह्म्यादीनामष्टमातृकानां वन्दना

ब्राह्मीमथावरणरूपधरां तथैव
माहेश्वरीमथ कुमारवरस्य सत्ताम्।
श्रीवैष्णवीं विटमुखीं सुरराजशक्तिं
चामुण्डिकामपि महापदयुक्तलक्ष्मीम्॥
अष्टा इमा अरुणपद्मकपालहस्ता
नीलाम्बुजन्मसुषमारुचिरास्त्रिनेत्राः।
वन्दे सदा ह्यरुणवस्त्रसुरत्नभूषाः
रेखारुणे परिगताः प्रकटादिकाम्बाः॥१९॥

तृतीयरेखायां क्रमेण पूर्वदक्षिणपश्चिमोत्तरेषु, आग्नेयनैर्ऋत्यवायव्येशानेषु,

---

कमलयुगलसे युक्त हाथोंवाली, तीन आँखोंवाली, लाल रंगके वस्त्रोंका धारण करनेवाली तथा रक्त वर्णकी कांतिसे युक्त हैं॥१८॥

द्वितीय रेखामें क्रमसे पूर्व, दक्षिण, पश्चिम, उत्तर, आग्नेय, नैर्ऋत्य, वायव्य, ईशान स्थित ब्राह्मी आदि आठ मातृकाओंकी वन्दना—मैं आवरण रूपका धारण करनेवाली ब्राह्मी, उस प्रकार माहेश्वरी, कुमार वरकी सत्ता कौमारी, वैष्णवी, शूकर मुखवाली वाराही, देवराजकी शक्ति माहेन्द्री, चामुण्डा तथा महालक्ष्मी प्रकट अम्बाओंकी सर्वदा वन्दना करता हूँ जो कि लाल कमल तथा कपालसे युक्त हाथोंवाली हैं; जिनके शरीरकी कान्ति नील कमलके समान अत्यन्त सुन्दर है; जो तीन आँखोंवाली हैं; लाल वस्त्र तथा रत्नके आभूषणोंसे अलंकृत हैं और लाल रेखाके चारों ओर विराजमान हैं॥१९॥

तृतीय रेखामें क्रमसे पूर्व, दक्षिण, पश्चिम, उत्तर, आग्नेय,

पूर्वेशानयोर्मध्ये नैर्ऋत्यदक्षिणयोर्मध्ये नैर्ऋत्यपश्चिमयोर्मध्ये च सर्वसङ्क्षोभिण्यादीनामेकादशमुद्राणां वन्दना

सङ्क्षोभिणीं सकलविद्रवणात्मरूपाम्
आकर्षिणीं वशकरीं निखिलोन्मदाख्याम्।
श्रेष्ठाङ्कुशामपि च तां सकलत्रिखण्डां
बीजामथो नभचरीञ्च समस्तयोनिम्॥
पाशाङ्कुशाढ्यनिजमुद्रितदोश्चतुष्का
नेत्रत्रयैर्विकसिताननपङ्कजाढ्याः।
रेखातृतीयगमिताः प्रकटादिमुद्रा
नानातिरम्यमणिरत्नधराः स्मरामि॥२०॥

भूपुरचक्रेश्वर्याः श्रीत्रिपुरायाः वन्दना

बिम्बौष्ठीं शरदिन्दुगौरवदनां रत्नादिभूषोज्ज्वलां
विद्याक्षाब्जयुगाङ्कितैर्भुजवरैः संशोभितां त्र्यम्बकाम्।

नैर्ऋत्य, वायव्य, ईशान, पूर्व-ईशान, दक्षिण-नैर्ऋत्य तथा नैर्ऋत्य-पश्चिम स्थित सर्वसंक्षोभिणी आदि ग्यारह मुद्राओंकी वन्दना—मैं सर्वसंक्षोभिणी, महायोनि, सर्वविद्राविणी, सर्वाकर्षिणी, सर्ववशंकरी, सर्वोन्मादिनी, सर्वमहांकुशा, सर्वखेचरी, सर्वबीजा, सर्वयोनि तथा सर्वत्रिखण्डा मुद्राओंका स्मरण करता हूँ कि जो पाश, अंकुश, तथा अपनी दो मुद्राओंसे युक्त चार भुजाओंवाली हैं; तीन आँखोंवाली तथा प्रसन्न मुखकमलसे युक्त तृतीय रेखामें स्थित हैं; प्रकट मुद्रा योगिनी हैं तथा नाना प्रकारके अत्यन्त सुन्दर मणि-रत्नोंका धारण करनेवाली हैं॥२०॥

भूपुर चक्रेश्वरी श्रीत्रिपुराकी वन्दना—मैं बिम्ब फलके समान लाल ओष्ठवाली, शरत्कालीन चन्द्रमाके समान गौर मुखवाली, रत्नादि

श्रीसङ्क्षोभणिकाणिमाख्यसहितां चार्वाकशास्त्रैर्युतां
साक्षाच्छ्रीत्रिपुरां नमामि धरणीचक्रेश्वरीं मोहिनीम्॥२१॥

॥ इति प्रथमावरणवन्दना ॥

आभूषणोंसे उज्ज्वल कान्तिवाली, पुस्तक, अक्षमाला तथा कमल युगलसे अङ्कित भुजाओंसे सुशोभित, तीन आँखोंवाली, संक्षोभिणी मुद्रा तथा अणिमा सिद्धिके साथ चार्वाक दर्शनसे युक्त, मोहन करनेवाली, भूपुर चक्रकी नायिका श्रीत्रिपुराको नमस्कार करता हूँ॥२१॥

॥ इति प्रथमावरणवन्दना ॥

द्वितीयावरणवन्दना

॥ श्रीगायत्रीब्रह्मविद्यायै नमः ॥

वृत्तत्रय-चक्रस्य वन्दना

वृत्तत्रयैः सुधवलारुणकृष्णवर्णैः
सन्निर्मितं परममातृकयोगिनीभिः।
त्रैवर्गसाधनकरं भुवि दुर्लभञ्च
वृत्तत्रयाख्यमपरं प्रणमामि चक्रम्॥१॥

प्रथमवृत्ते पूर्वादिदक्षिणावर्तेन कालरात्र्यादीनामेकोनत्रिंशन्मातृकानां वन्दना

श्रीकालरात्रीमथ खातिताम्बां
गात्रीञ्च घण्टां विधृताम्बिकाञ्च।
ङार्णात्मिकां भीषणरूपचण्डां
श्रीछात्मिकाञ्चैव जयाख्यमूर्तिम्॥

वृत्तत्रय चक्रकी वन्दना—मैं श्वेत, लाल तथा कृष्ण वर्णके तीन वृत्तोंसे निर्मित, परम मातृका योगिनियोंके साथ धर्म, अर्थ तथा कामरूपी त्रिवर्गको सिद्ध करनेवाले और भूलोकमें दुर्लभ वृत्तत्रय नामक एक अन्य चक्रको प्रणाम करता हूँ॥१॥

प्रथम वृत्तमें पूर्वादि दक्षिणावर्त क्रमसे स्थित कालरात्री आदि ऊनतीस मातृकाओंकी वन्दना—मैं कालरात्री मातृका, उसके बाद खातिता मातृका, मातृका पदका धारण करनेवाली गात्री मातृका तथा

झङ्कारिणीं ज्ञानशरीरिणीञ्च
श्रीटङ्कहस्तामतिदिव्यरूपाम्।
ठङ्कारिणीं चैव डकारिणीञ्च
ढङ्कारिणीञ्चैव णकारिणीं ताम्॥
तकारिणीं थाणिकमूर्तिरूपां
दाक्षायणीञ्चैव तथा च धात्रीम्।
नादामथो पर्वतराजकन्यां
फेट्कारिणीं बन्धिनिकां तथा ताम्॥
श्रीभद्रकालीमथ विष्णुमायां
श्रियञ्च षण्ढाञ्च सरस्वतीञ्च।
पुनश्च तां हंसवतीं समस्ता
एकोनत्रिंशच्छुभमातृकास्ताः॥
अमूः स्मितास्याः सृणिपाशहस्ताः
समुद्यदादित्यनिभास्त्रिनेत्राः।

घण्टा मातृका, ङार्णात्मिका मातृका, भयङ्कर रूपवाली चण्डा मातृका, छात्मिका मातृका तथा जया नामक मूर्तिरूपिणी जया मातृका, झङ्कारिणी मातृका तथा ज्ञानरूपी शरीरवाली ज्ञानशरीरिणी मातृका, अतिदिव्य रूपवाली टङ्कहस्ता मातृका, ठङ्कारिणी मातृका, डकारिणी मातृका और ढङ्कारिणी मातृका तथा णकारिणी मातृका, तकारिणी मातृका, थाणिक मूर्तिरूपिणी थाणी मातृका और दाक्षायणी मातृका तथा उस प्रकार धात्री मातृका, नादा मातृका, उसके बाद पर्वतराजकी पुत्री पार्वती मातृका, फेट्कारिणी मातृका, उस प्रकार बन्धिनी मातृका, भद्रकाली मातृका, उसके बाद विष्णुकी माया माया मातृका

रक्ताम्बराश्चन्द्रकलावतंसा
आद्ये च वृत्ते सततं नमामि॥२॥

द्वितीयवृत्ते पूर्वादिदक्षिणावर्तेनाऽमृतादीनां षोडशमातृकाम्बानां वन्दना

अथोऽमृतां मात्रभिधाम्बिकां ताम्
आकर्षिणीञ्चैव महेन्द्रशक्तिम्।
ईशानिकां शक्तिमुमाख्यशक्तिं
महोर्ध्वकेशीं तत ऋद्धिरात्रीम्॥
ऋद्धीश्वरीञ्चैव लृतां लृकाञ्च
तामेकपादाभिधमातृकाम्बाम्।
ऐश्वर्यिकां तां प्रणवात्मिकां तां
महौषधाञ्चैव महाम्बिकाञ्च॥

तथा श्री मातृका, षण्ढा मातृका और सरस्वती मातृका, फिर हंसवती मातृका, उन सभी ऊनतीस शुभ मातृकाएँ जो विहसित मुखवाली, अङ्कुश तथा पाशका धारण करनेवाली, उगते हुए सूर्यके समान रक्त वर्णवाली, तीन आँखोंवाली, रक्तवर्णके वस्त्रोंसे युक्त तथा अर्द्ध चन्द्रका धारण करनेवाली हैं, को प्रथम वृत्तमें निरन्तर नमस्कार करता हूँ॥२॥

द्वितीय वृत्तमें पूर्वादि दक्षिणावर्त क्रमसे स्थित अमृता आदि षोलह मातृकाम्बाओंकी वन्दना—मैं अब मातृका नामका धारण करनेवाली उस अमृता मातृकाम्बा, आकर्षिणी मातृकाम्बा, महेन्द्रकी शक्ति इन्द्राणी मातृकाम्बा, ईशानकी शक्ति ईशानी मातृकाम्बा, उमा नामक शक्ति उमा मातृकाम्बा, महान् ऊर्ध्वकेशी मातृकाम्बा, उसके बाद ऋद्धिरात्री मातृकाम्बा, ऋद्धीश्वरी मातृकाम्बा, लृता मातृकाम्बा, लृका मातृकाम्बा, उस एक पादवाली एकपादा मातृकाम्बा, उस ऐश्वर्यिका

वर्णात्मिकाः षोडश मातृकाम्बा
एता हि रक्ताः शरचापहस्ताः।
स्मिताननना इन्दुधरास्त्रिनेत्रा
मध्यस्थवृत्ते सततं नमामि॥३॥

तृतीयवृत्ते पूर्वादिदक्षिणावर्तेन कामेश्वर्यादीनां षोडशतिथिमातृकाम्बानां वन्दना

कामेश्वरीं श्रीभगमालिनीञ्च
क्लिन्नाञ्च भेरुण्डकलां हुतस्थाम्।
वज्रेश्वरीं श्रीशिवदूतिकाम्बां
श्रीसत्वराम्बां कुलसुन्दरीञ्च॥
ततश्च श्रीमद्विमलाञ्च नील-
पताकिनीं श्रीविजयात्मिकाञ्च।
श्रीमङ्गलां ज्वालशिखां विचित्रां
श्रीसुन्दरीं षोडश नित्यरूपाः॥

मातृकाम्बा, उस ओङ्कारात्मिका मातृकाम्बा, महान् औषधा मातृकाम्बा, अम्बिका मातृकाम्बा तथा अक्षरात्मिका मातृकाम्बा जो कि षोडश मातृकाम्बा हैं; इन रक्त वर्णवाली, बाण तथा धनुषसे युक्त हाथों-वाली, विहसित मुखवाली, चन्द्रमाका धारण करनेवाली तथा तीन आँखोंवालीको मध्यस्थ वृत्तमें नमस्कार करता हूँ॥३॥

तृतीय वृत्तमें पूर्वादि दक्षिणावर्त क्रमसे स्थित कामेश्वरी आदि षोलह तिथिमातृकाम्बाओंकी वन्दना—मैं कामेश्वरी, भगमालिनी, नित्य-क्लिन्ना, भेरुण्डा, वह्निवासिनी, वज्रेश्वरी, शिवदूती, त्वरिता, कुल-सुन्दरी, उसके बाद विमला, नीलपताका, विजया, मङ्गला, ज्वाला-मालिनी, विचित्रा तथा श्रीसुन्दरी, इन षोलह नित्यरूपा साक्षात्

एता हि साक्षात्तिथिमातृकाम्बाः
पाशाङ्कुशौ चापशरान्दधानाः।
चतुर्भुजा बालरविप्रभास्याः
तार्तीयवृत्ते सततं स्मरामि॥४॥

वृत्तत्रय-चक्रेश्वर्याः त्रिपुरेशिन्याः वन्दना

तप्तस्वर्णनिभां स्मितास्यकमलां विद्यामभीतिं वरं
चाक्षस्रग्दधतीं चतुर्भुजधरां चन्द्रार्द्धचूडामणिम्।
शास्त्रस्मार्तमहासुयोनिगरिमासिद्धित्रयैः संयुतां
वृत्ताख्ये त्रिपुरेशिनीं भगवतीं चक्रेश्वरीं नौम्यहम्॥५॥

॥ इति द्वितीयावरणवन्दना ॥

तिथिमातृकाम्बा, पाश, अङ्कुश, धनुष तथा बाणका धारण की हुई चार भुजाओंवाली, उगते हुए सूर्यकी प्रभाके समान लाल मुखवाली-को तृतीय वृत्तमें निरन्तर स्मरण करता हूँ॥४॥

वृत्तत्रय चक्रेश्वरी त्रिपुरेशिनीकी वन्दना—मैं तपे हुए स्वर्णके समान कान्तिवाली, विहसित मुखवाली, पुस्तक, अभयमुद्रा, वरमुद्रा तथा अक्षमालाका धारण करनेवाली, चार भुजाओंवाली, मस्तक पर चूड़ामणिके रूपमें अर्द्ध चन्द्रका धारण करनेवाली, स्मार्तशास्त्र, महा-योनि मुद्रा तथा गरिमा सिद्धि, इन तीनोंसे युक्त चक्रेश्वरी भगवती त्रिपुरेशिनीको वृत्तत्रय चक्रमें नमस्कार करता हूँ॥५॥

॥ इति द्वितीयावरणवन्दना ॥

तृतीयावरणवन्दना

॥ श्रीगायत्रीब्रह्मविद्यायै नमः ॥

षोडशदल-चक्रस्य वन्दना

श्रीसर्वाशापूरकं पद्मरूपं
दिव्यं शुद्धं श्रीनिशानाथतुल्यम्।
रम्यैः पत्रैरिन्दुभिः शोभमानं
वन्दे चक्रं श्रीसुधावर्षकं हि॥१॥

पश्चिमादिवामावर्तेन कामाकर्षिण्यादीनां षोडशनित्यशक्तीनां वन्दना

आदौ कामाकर्षिणीं नित्यशक्तिं
श्रीमद्बुद्ध्याकर्षिणीं नित्यशक्तिम्।
चाहङ्काराकर्षिणीं नित्यशक्तिं
भूयः शब्दाकर्षिणीं नित्यशक्तिम्॥

षोडशदल चक्रकी वन्दना—मैं सभी आशाओंको पूर्ण करनेवाले, कमलाकार, चन्द्रमाके समान दिव्य तथा शुद्ध षोलह सुन्दर दलोंसे संशोभित, अमृतकी वृष्टि करनेवाले चक्रकी वन्दना करता हूँ॥१॥

षोडशदल चक्रमें पश्चिमादि वामावर्त क्रमसे स्थित कामाकर्षिणी आदि षोलह नित्यशक्तियोंकी वन्दना—मैं सबसे पहले कामाकर्षिणी नित्यशक्ति तथा बुद्ध्याकर्षिणी नित्यशक्ति, अहंकाराकर्षिणी नित्य-शक्ति, फिर शब्दाकर्षिणी नित्यशक्ति, देवी स्पर्शाकर्षिणी नित्यशक्ति

देवीं स्पर्शाकर्षिणीं नित्यशक्तिं
चान्यां रूपाकर्षिणीं नित्यशक्तिम्।
साक्षान्नित्यां श्रीरसाकर्षिणीं तां
भूयो गन्धाकर्षिणीं नित्यशक्तिम्।।
देवीं चित्ताकर्षिणीं नित्यशक्तिं
श्रीमद्धैर्याकर्षिणीं नित्यशक्तिम्।
श्रीमत्स्मृत्याकर्षिणीं नित्यशक्तिं
श्रीमन्नामाकर्षिणीं नित्यशक्तिम्।।
भूयो बीजाकर्षिणीं नित्यशक्तिं
साक्षादात्माकर्षिणीं नित्यशक्तिम्।
नित्यां शक्तिञ्चामृतकर्षिणीं तां
पश्चाद्देहाकर्षिणीं नित्यशक्तिम्।।
वन्दे श्रीमद्गुप्तयोगिन्य एताः
शुभ्रास्त्र्यक्षाः श्रीनिशानाथभूषाः।
हस्तैः पाशं चाङ्कुशं स्फाटिकञ्च
पूर्णं पात्रं सद्वरं सन्दधानाः।।२।।

तथा दूसरी रूपाकर्षिणी नित्यशक्ति, साक्षात् नित्यशक्ति उस रसाकर्षिणी नित्यशक्ति, फिर गन्धाकर्षिणी नित्यशक्ति, देवी चित्ताकर्षिणी नित्यशक्ति, धैर्याकर्षिणी नित्यशक्ति, स्मृत्याकर्षिणी नित्यशक्ति, नामाकर्षिणी नित्यशक्ति, फिर बीजाकर्षिणी नित्यशक्ति, साक्षात् आत्माकर्षिणी नित्यशक्ति तथा उस अमृताकर्षिणी नित्यशक्ति, उसके बाद देहाकर्षिणी नित्यशक्ति जो कि शुभ्र वर्णकी हैं; तीन आँखोंवाली

षोडशदल-चक्रेश्वरी-त्रिपुरेश्वर्याः वन्दना

तां विद्रावणिकां सुसिद्धिलघिमाबौद्धाख्यशास्त्रैर्युतां
साक्षादिन्दुमरीचिगौरवदनां स्मेराननाम्भोरुहाम्।
पाशं सत्यसृणिं ह्यभीतिवरदे दोर्भिः सदा बिभ्रतीं
वन्देऽहं त्रिपुरेश्वरीं शशिधरां सोमात्मचक्रेश्वरीम्।।३।।

।। इति तृतीयावरणवन्दना ।।

हैं; चन्द्रमाका धारण करनेवाली हैं; हाथोंमें पाश, अंकुश, स्फाटिक पूर्णपात्र तथा वर मुद्राका धारण की हुई हैं; इन गुप्त योगिनियोंकी वन्दना करता हूँ।।२।।

षोडशदल चक्रेश्वरी त्रिपुरेश्वरीकी वन्दना—मैं उस विद्राविणी मुद्रा, लघिमा सिद्धि तथा बौद्ध दर्शनसे युक्त, साक्षात् चन्द्रमाकी किरणोंके समान गौर वर्णकी मुखवाली, विहसित मुखकमलवाली, हाथोंमें सर्वदा पाश, अंकुश, अभय मुद्रा तथा वर मुद्राका धारण करनेवाली, चन्द्रमाका धारण करनेवाली, चन्द्रात्मक षोडशदल चक्रेश्वरी त्रिपुरेश्वरी-की वन्दना करता हूँ।।३।।

।। इति तृतीयावरणवन्दना ।।

चतुर्थावरणवन्दना

॥ श्रीगायत्रीब्रह्मविद्यायै नमः ॥

अष्टदल-चक्रस्य वन्दना

देदीप्यमानं सुरसैन्यपूज्यं
शुभाष्टपत्राब्जमयं मनोज्ञम्।
बन्धूकपुष्पारुणविग्रहं श्री-
सङ्क्षोभणं चक्रमहं भजामि॥१॥

पश्चिमादिदक्षिणान्तं वायव्यादिनैरृतान्तश्चाष्टदिक्षु अनङ्गकुसुमादीनामष्टदेवीनां वन्दना

आदावनङ्गकुसुमां स्मरमेखलाम्बां
साक्षादनङ्गमदनां मदनातुराञ्च।
रेखान्तथा मदनवेगिनिकाख्यदेवीं
माराङ्कुशां मदनमालिनिकां समक्षम्॥

अष्टदल चक्रकी वन्दना—मैं देदीप्यमान, देवसैन्योंके द्वारा पूजित, शुभ अष्टदल कमलवाले, सुन्दर, बन्धूक पुष्पके समान लाल वर्णके विग्रहवाले संक्षोभण चक्रका भजन करता हूँ॥१॥

पश्चिमसे दक्षिण तथा वायव्यसे नैरृत अनङ्गकुसुमा आदि आठ देवियोंकी वन्दना—मैं सबसे पहले अनङ्गकुसुमा, माता अनङ्गमेखला, साक्षात् अनङ्गमदना और अनङ्गमदनातुरा, उस प्रकार अनङ्गरेखा, अनङ्गवेगिनी नामकी देवी, अनङ्गाङ्कुशा तथा अनङ्गमालिनी जो सभी विहसित मुखवाली, तीन आँखोंवाली, नवयुवतियाँ हैं; बन्धूक पुष्पके

इत्थं स्मितास्त्रिनयना नवयौवनाढ्या
बन्धूकपुष्पसदृशारुणरम्यदेहाः।
नीलाब्जनीलमणिपाशसृणीन्दधाना
अष्टौ हि गुप्ततरयोगिनिकाः स्मरामि॥२॥

अष्टदल-चक्रेश्वर्याः त्रिपुरसुन्दर्याः वन्दना

सर्वाकर्षिणिका-सुसिद्धिमहिमा-श्रीगाणपत्यैर्युता
विद्याक्षाभयसद्वराङ्कितकरा नेत्रत्रयोद्भासिता।
ध्येया सा किल सुन्दरी त्रिपुरयुक् व्योमात्मचक्रेश्वरी॥३॥

॥ इति चतुर्थावरणवन्दना ॥

समान लाल वर्णके सुन्दर शरीरवाली हैं; नील-कमल, नील-मणि, पाश तथा अङ्कुशका धारण करनेवाली हैं; इन आठ गुप्ततर योगिनियोंका स्मरण करता हूँ॥२॥

अष्टदल चक्रेश्वरी त्रिपुरसुन्दरीकी वन्दना—मैं सर्वाकर्षिणी मुद्रा, महिमा सिद्धि तथा गाणपत्य दर्शनकी विशिष्ट शक्तिसे युक्त, पुस्तक, अक्षमाला, अभय मुद्रा तथा वर मुद्रासे युक्त हाथोंवाली, तीन आँखोंसे सुशोभित, आकाशात्मक अष्टदल चक्रकी प्रसिद्ध चक्रेश्वरी उस त्रिपुरसुन्दरीका ध्यान करता हूँ॥३॥

॥ इति चतुर्थावरणवन्दना ॥

पञ्चमावरणवन्दना

॥ श्रीगायत्रीब्रह्मविद्यायै नमः ॥

चतुर्दशार-चक्रस्य वन्दना

सिन्दूरवर्णान्वितचक्रमन्यच्
चतुर्दशारैश्च विनिर्मितञ्च।
सौभाग्यदं देवगणैः सदार्च्यं
स्मरामि भक्त्या मनसा सदैव॥१॥

पश्चिमादिवामावर्तेन सर्वसङ्क्षोभिण्यादीनां चतुर्दशशक्तीनां वन्दना

सङ्क्षोभिणीं विद्रवणात्मशक्तिं
चाकर्षिणीं चन्द्रविवर्द्धिनीञ्च।
सम्मोहिनीं स्तम्भनकारिणीं तां
विजृम्भिणीं सर्ववशङ्करीञ्च॥
श्रीरञ्जिनीं श्रीमदमादिनीञ्च
ह्यर्थांश्च सर्वांश्च सुसाधिनीं ताम्।
सम्पत्तिपूर्णामथ मन्त्रदेहां
द्वन्द्वक्षयङ्कारिणिकाभिधाञ्च॥

चतुर्दशार चक्रकी वन्दना—मैं अन्य एक चक्र जो कि चतुर्दशार-से विनिर्मित, सिन्दूर वर्णसे युक्त, सौभाग्यको देनेवाला तथा देव-गणोंके द्वारा सर्वदा पूज्य है उसका निरन्तर भक्तिपूर्वक मनसे स्मरण करता हूँ॥१॥

चतुर्दशार चक्रमें पश्चिमादि वामावर्त क्रमसे स्थित सर्वसंक्षोभिणी आदि चौदह शक्तियोंकी वन्दना—मैं सर्वसंक्षोभिणी, सर्वविद्राविणी,

दिक्तुर्यसङ्ख्या इतरा हि रक्ताः
श्रीसम्प्रदायाभिधयोगिनीस्ताः।
पाशाङ्कुशौ दर्पणपानपात्रे
करैर्दधानाः सततं नमामि॥२॥

चतुर्दशार-चक्रेश्वर्याः त्रिपुरवासिन्याः वन्दना

सिन्दूरारुणविग्रहा स्मितमुखी दिव्यैश्चतुर्भिर्भुजैः
विद्यास्फाटिकमालिकाभयवरान् संविभ्रती त्र्यम्बका।
सिद्धीशित्व-वशङ्करी-विविधषण्न्यायादिशास्त्रैर्युता
ध्येया सा त्रिकवासिनी त्रिपुरयुङ् मायात्मचक्रेश्वरी॥३॥

॥ इति पञ्चमावरणवन्दना ॥

सर्वाकर्षिणी, सर्वाह्लादिनी, सर्वसम्मोहिनी, सर्वस्तम्भिनी, सर्वजृम्भिणी, सर्ववशङ्करी, सर्वरञ्जनी, सर्वोन्मादिनी, सर्वार्थसाधिनी, सर्वसम्पत्तिपूर्णा, सर्वमन्त्रमयी तथा सर्वद्वन्द्वक्षयंकारिणी नामक शक्तियाँ जो कि रक्त वर्णवाली तथा हाथोंसे पाश, अङ्कुश, दर्पण और पानपात्रका धारण करनेवाली हैं, उन चौदह सम्प्रदाय योगिनियोंको निरन्तर नमस्कार करता हूँ॥२॥

चतुर्दशार चक्रेश्वरी त्रिपुरवासिनीकी वन्दना—मैं सिन्दूरके समान लाल वर्णके शरीरवाली, विहसित मुखवाली, दिव्य चार भुजाओंसे पुस्तक, स्फाटिक मालिका, अभय मुद्रा तथा वर मुद्राका धारण करनेवाली, तीन आँखोंवाली, ईशिता सिद्धि, सर्ववशङ्करी मुद्रा तथा विविध छह न्यायादि शास्त्रोंसे युक्त, मायात्मक चक्रकी चक्रेश्वरी उस त्रिपुरवासिनीका ध्यान करता हूँ॥३॥

॥ इति पञ्चमावरणवन्दना ॥

षष्ठावरणवन्दना

॥ श्रीगायत्रीब्रह्मविद्यायै नमः ॥

बहिर्दशार-चक्रस्य वन्दना

चक्रं चान्यं दाडिमीपुष्पवर्णम्
देदीप्ताभं श्रीदशाराङ्किताङ्गम्।
तत्सर्वाढ्यं ह्यर्थसाध्याभिधञ्च
वन्दे जोषं वायुतत्त्वात्मकाढ्यम्॥१॥

पश्चिमादिवामावर्तेन सर्वसिद्धिप्रदादीनां दशदेवीनां वन्दना

सिद्धिप्रदां सर्वसम्पत्प्रदाञ्च
प्रियङ्करीं मङ्गलकारिणीञ्च।
कामप्रदां दुःखविमोचिनीं ताम्
अशेषपञ्चत्वविनाशिनीञ्च॥
समस्तदुर्विघ्ननिवारिणीं तां
सर्वाङ्गपूर्वामथ सुन्दरीञ्च।
समस्तसौभाग्यप्रदाभिधाञ्च
योगिन्य एताः किल कौलरूपाः॥

बहिर्दशार चक्रकी वन्दना—मैं एक अन्य चक्रकी हृदयसे वन्दना करता हूँ; जो कि दाड़िम पुष्पके समान लाल वर्णवाला, दीप्त कान्तिवाला, दश अराओंसे अङ्कित अङ्गवाला, सर्वार्थसाधक तथा वायुतत्त्वात्मक है॥१॥

बहिर्दशार चक्रमें पश्चिमादि वामावर्त क्रमसे सर्वसिद्धिप्रदा आदि

पाशाङ्कुशाभीतिवरान्दधानाः
रक्ताम्बराः स्मेरमुखाब्जयुक्ताः।
बन्धूकरक्ता धृतचन्द्रलेखा
नमाम्यहं रत्नविभूषिताङ्गीः॥२॥

बहिर्दशार-चक्रेश्वर्याः त्रिपुराश्रियः वन्दना

उत्तप्तहेमरुचिरां त्रिपुराश्रियं तां
मुक्ताक्षपुस्तकवराभयपाणिपद्माम्।
उन्मादिनीनिगमशास्त्रवशित्वयुक्तां
वन्दे सदा पवनचक्रमहाधिराज्ञीम्॥३॥

॥ इति षष्ठावरणवन्दना ॥

दश देवियोंकी वन्दना—मैं सर्वसिद्धिप्रदा, सर्वसम्पत्प्रदा, सर्वप्रियङ्करी, सर्वमङ्गलकारिणी, सर्वकामप्रदा, सर्वदुःखविमोचिनी, सर्वमृत्युविनाशिनी, सर्वविघ्ननिवारिणी, सर्वाङ्गसुन्दरी तथा सर्वसौभाग्यदायिनी-इन प्रसिद्ध कुलयोगिनियोंको नमस्कार करता हूँ; जो पाश, अङ्कुश, अभय मुद्रा तथा वर मुद्राका धारण करनेवाली, रक्त वर्णके वस्त्रोंसे युक्त, विहसित मुखकमलवाली, बन्धूक पुष्पके समान रक्त वर्णकी कान्तिवाली, अर्द्ध चन्द्रका धारण करनेवाली तथा रत्नोंसे अलंकृत अङ्गोंवाली हैं॥२॥

बहिर्दशार चक्रेश्वरी त्रिपुराश्रीकी वन्दना—मैं अग्निमें तपे हुए सोनेके समान सुन्दर कान्तिवाली उस त्रिपुराश्रीकी सर्वदा वन्दना करता हूँ; जो मुक्ताकी अक्षमाला, पुस्तक, वरमुद्रा तथा अभय मुद्रासे युक्त करकमलवाली है; सर्वोन्मादिनी मुद्रा, वैदिक दर्शन तथा वशित्व सिद्धिसे युक्त है; पवनात्मक बहिर्दशार चक्रेश्वरी है॥३॥

॥ इति षष्ठावरणवन्दना ॥

सप्तमावरणवन्दना

॥ श्रीगायत्रीब्रह्मविद्यायै नमः ॥

अन्तर्दशार-चक्रस्य वन्दना

अन्यच्चक्रं श्रीजपापुष्पवर्णं
साक्षाच्छ्रीमत्सर्वरक्षाकरं वै।
श्रीदिक्कोणाकारकं तैजसाख्यं
वन्दे दिव्यं सौरशास्त्रात्मरूपम्॥१॥

पश्चिमादिवामावर्तेन सर्वज्ञादीनां दशदेवीनां वन्दना

सर्वज्ञां तां सर्वशक्तिस्वरूपां
सर्वैश्वर्यादिप्रदामन्यशक्तिम्।
भूयः सर्वज्ञानरूपात्मिकां तां
सर्वव्याध्युन्मूलनायोत्सुकाञ्च॥

अन्तर्दशार चक्रकी वन्दना—मैं एक दूसरे चक्रकी वन्दना करता हूँ; जो कि जपा पुष्पके समान रक्त वर्णवाला, साक्षात् 'श्री'से युक्त, सर्वरक्षाकर, दश कोणाकार, तैजसात्मक, दिव्य तथा सौर-सिद्धान्तात्मक है॥१॥

अन्तर्दशार चक्रमें पश्चिमादि वामावर्त क्रमसे स्थित सर्वज्ञा आदि दश शक्तियोंकी वन्दना—मैं सर्वज्ञा शक्ति, उस सर्वशक्तिस्वरूपिणी शक्ति, अन्य शक्ति सर्वैश्वर्यप्रदायिनी, सर्वज्ञानस्वरूपिणी, उस सभी

भूयः सर्वाधारमूर्तिञ्च सर्व-
पापघ्नीमानन्दरूपाख्यशक्तिम्।
शक्तिं श्रीमत्सर्वरक्षास्वरूपां
सद्भक्तानामीप्सितार्थप्रदात्रीम्॥
एताः साक्षाद्दिङ्निगर्भाभिधाख्या
मुक्ताहाराश्चन्द्रचूडास्त्रिनेत्राः।
बालार्काभा ज्ञानमुद्रावराढ्याः
श्रीमट्टङ्काभीतिहस्ता नमामि॥२॥

अन्तर्दशार-चक्रेश्वर्याः त्रिपुरमालिन्याः वन्दना

बालार्कमण्डलनिभां धृतचन्द्रलेखां
स्मेराननामरुणवस्त्रसुरत्नभूषाम्।
सोमाग्निसूर्यनयनत्रयशोभिताञ्च
प्राकाम्यसिद्धिसहितां नवयौवनाढ्याम्॥

व्याधियोंके उन्मूलनके लिए उत्सुक सर्वव्याधिविनाशिनी देवी, सर्वाधारस्वरूपिणी और सर्वपापविनाशिनी तथा आनन्दरूपा नामक सर्वानन्दस्वरूपिणी शक्ति, सर्वरक्षास्वरूपिणी तथा सद्भक्तोंको वांछित फल प्रदान करनेवाली सर्वेप्सितार्थप्रदायिनीको नमस्कार करता हूँ; जो साक्षात् निगर्भयोगिनी कहलाती हैं; मुक्ताकी मालाका धारण करने-वाली, मस्तक पर चन्द्रमासे युक्त तीन आँखोंवाली, उगते हुए सूर्यके समान लाल कान्तिवाली, ज्ञान मुद्रा, वर मुद्रा, टङ्क तथा अभय मुद्रासे युक्त हाथोंवाली हैं॥२॥

अन्तर्दशार चक्रेश्वरी त्रिपुरमालिनीकी वन्दना—मैं उगते हुए सूर्यमण्डलके समान लाल कान्तिवाली, अर्द्ध चन्द्रका धारण करने-

श्रीसौरदर्शनयुतां समहाङ्कुशां तां
श्रीतैजसात्मकदशारमहाधिराज्ञीम्।
पाशाङ्कुशाभयकपालवराक्षहस्तां
तत्त्वेश्वरीं त्रिपुरमालिनिकां नमामि।।३।।

।। इति सप्तमावरणवन्दना ।।

वाली, विहसित मुखवाली, लालवर्णके वस्त्र तथा अच्छे रत्नोंका धारण करनेवाली, चन्द्र, वह्नि तथा सूर्यरूपी तीन नेत्रोंसे सुशोभित, प्राकाम्यसिद्धिसे युक्त, नवयुवति, सौरदर्शन तथा सर्वमहाङ्कुशा मुद्रासे युक्त; हाथोंमें पाश, अङ्कुश, अभय मुद्रा, कपाल, वर मुद्रा तथा अक्षमालाका धारण करनेवाली उस तैजसात्मक अन्तर्दशार चक्रेश्वरी तत्त्वेश्वरी त्रिपुरमालिनीको नमस्कार करता हूँ।।३।।

।। इति सप्तमावरणवन्दना ।।

अष्टमावरणवन्दना

॥ श्रीगायत्रीब्रह्मविद्यायै नमः ॥

अष्टार-चक्रस्य वन्दना

अन्यं दिव्यं सर्वरोगघ्नचक्रं
रम्यं स्पष्टं ह्यष्टकोणापक्लृप्तम्।
उद्दीप्ताभं पद्मरागप्रभं तद्
वन्दे चाहं श्रीकलात्मस्वरूपम्॥१॥

पश्चिमादिवामावर्तेन वशिन्यादीनामष्टवाग्देवताम्बानां वन्दना

वाग्देवताम्बां वशिनीति नाम्नीं
कामेश्वरीं वाङ्निलयाधिदेवीम्।
श्रीमोहिनीं तां विमलां तथैव
वाग्देवताम्बामरुणाभिधाञ्च॥

अष्टकोण चक्रकी वन्दना—मैं उस अन्य चक्रकी वन्दना करता हूँ; जो कि अलौकिक रूपवाला, सभी रोगोंका नाश करनेवाला, सुन्दर, स्पष्ट, अष्ट कोणोंसे संयोजित, उद्दीप्त कान्तिवाला, पद्मरागके समान प्रभावाला तथा कलात्मक है॥१॥

अष्टकोण चक्रमें पश्चिमादि वामावर्त क्रमसे स्थित वशिनी आदि आठ वाग्देवताम्बाओंकी वन्दना—मैं वशिनी नामकी वाग्देवताम्बा, वाङ्निलयकी अधिष्ठात्री देवी कामेश्वरी वाग्देवताम्बा, उस प्रकार

वाग्देवताम्बां जयिनीति नाम्नीं
सर्वेश्वरीं कौलिनिकामिमां वै॥

रक्ताम्बराश्चन्द्रकलावतंसाः
सिन्दूरवर्णान्वितवक्त्रपद्माः।
सदा प्रसन्नाः कुचभारनम्रा
मालाधनुःपुस्तकपाशहस्ताः॥
परापराख्याश्च रहस्ययुक्ता
नमाम्यहं योगिनिकाः सदैव॥२॥

अष्टार-चक्रेश्वर्याः त्रिपुरासिद्धायाः वन्दना

रोगघ्नकाष्टारकचक्रनाथां
श्रीखेचरीमुद्रिकया समेताम्।
रक्ताम्बराढ्यां शुभभुक्तिसिद्ध्या
समायुतां वैष्णवदर्शनेन॥

मोहिनी वाग्देवताम्बा तथा विमला वाग्देवताम्बा, अरुणा नामकी वाग्देवताम्बा और जयिनी नामकी वाग्देवताम्बा, सर्वेश्वरी वाग्देवताम्बा तथा उस कौलिनी वाग्देवताम्बाको सदैव नमस्कार करता हूँ; जो कि लाल वस्त्रोंवाली, मस्तक पर अर्द्ध चन्द्रका धारण करनेवाली, सर्वदा प्रसन्न रहनेवाली, स्तनोंके भारसे झुकी हुई हैं तथा हाथोंमें माला, धनुष, पुस्तक तथा पाशका धारण करनेवाली परापर नामक रहस्य-योगिनियाँ हैं॥२॥

अष्टकोण चक्रेश्वरी त्रिपुरा सिद्धाकी वन्दना—मैं सर्वरोगहर अष्टकोण चक्रकी अधिष्ठात्री त्रिपुरा सिद्धाको नमस्कार करता हूँ; जो कि खेचरी मुद्राके साथ, रक्त वस्त्रोंसे युक्त, शुभ भुक्ति सिद्धि तथा

श्रीचन्द्रचूडां शरदिन्दुगौरीं
नेत्रत्रयोद्भासितवक्त्रपद्माम्।
पाशाङ्कुशाभीतिकपालहस्तां
नमामि सिद्धां त्रिपुरेति पूर्वाम्॥३॥

॥ इत्यष्टमावरणवन्दना ॥

वैष्णव दर्शनसे युक्त, मस्तक पर चन्द्रमाका धारण करनेवाली, शरत्कालीन चन्द्रमाके समान गौरवर्णवाली, तीन आँखोंसे सुशोभित मुखकमलवाली तथा पाश, अङ्कुश, अभय मुद्रा और कपालसे युक्त हाथोंवाली है॥३॥

॥ इत्यष्टमावरणवन्दना ॥

नवमावरणवन्दना

॥ श्रीगायत्रीब्रह्मविद्यायै नमः ॥

त्रिकोण-चक्रस्य वन्दना

बन्धूकपुष्पारुणदिव्यरूपं
समस्तसिद्धिप्रदनाम चक्रम्।
कोणत्रयेणैकविनिर्मितञ्च
स्मरामि नादात्मकचित्स्वरूपम्॥१॥

गुरुसन्ततीनां वन्दना

तस्य त्रिकोणस्य च पूर्वरेखा-
पूर्वे त्रिरेखा ननु चिन्तनीयाः।
तासु स्थिताः श्रीगुरुसन्ततीस्ताः
स्वकल्पमार्गेण सदा स्मरामि॥

दिव्यौघ-सिद्धौघ-सुमानवौघ-गुरूणां वन्दना

त्रिकोण चक्रकी वन्दना—मैं बन्धूक पुष्पके समान लाल वर्णसे युक्त दिव्य रूपवाले, तीन कोणोंसे विनिर्मित, नादात्मक, चित्स्वरूप, सर्वसिद्धिप्रद नामक चक्रको नमस्कार करता हूँ॥१॥

गुरुपरम्पराकी वन्दना—मैं उस त्रिकोणकी पूर्वी रेखाके पूर्वमें कल्पित तीन रेखाओंका चिन्तन करता हूँ तथा उनमें स्थित गुरुपरम्पराका अपने कल्पके अनुसार सदैव स्मरण करता हूँ॥

दिव्यौघ, सिद्धौघ तथा सुमानवौघ गुरुजनोंकी वन्दना—मैं प्रथम

दिव्यौघ-सिद्धौघ-सुमानवौघान्
रेखाद्यगान् नौमि गुरूंश्च सर्वान्॥

स्व-श्रीगुरुक्रमेण सप्तगुरूणां वन्दना

रेखाद्वितीयस्थितसुप्रसिद्धान्
गुरूँश्च सर्वान् स्वगुरुक्रमेण।
शान्तान् द्विनेत्रान् स्फटिकाभशुभ्रान्
सशक्तिकान् नौमि वराभयाढ्यान्॥

श्रीदक्षिणामूर्तिगुरोः वन्दना

शान्तं त्रिनेत्रं विधुकान्तिशुभ्रं
संविभ्रतं दोष्कशुभैश्चतुर्भिः।
मुक्ताक्षमालां कलशं सुधायाः
श्रीज्ञानमुद्रामपि पुस्तकञ्च॥
दिव्याम्बरं चन्दनगन्धलेपैः
समुज्ज्वलाङ्गं मणिरत्नकैश्च।

रेखामें स्थित दिव्यौघ, सिद्धौघ तथा सुमानवौघ सभी गुरुजनोंको नमस्कार करता हूँ॥

अपनी श्रीगुरु आदि सात गुरुजनोंकी वन्दना—मैं द्वितीय रेखामें स्थित सुप्रसिद्ध, अपने गुरुके क्रमसे सभी गुरुजनोंको नमस्कार करता हूँ; जो कि शान्त स्वभाववाले, दो आँखोंवाले, स्फटिकके समान शुभ्र कान्तिवाले, वर मुद्रा और अभय मुद्राका धारण करनेवाले तथा अपनी शक्तियोंके साथ विराजमान हैं॥

श्रीदक्षिणामूर्ति गुरुकी वन्दना—मैं शान्त स्वरूपवाले, तीन आँखोंवाले, चन्द्रमाके समान शुभ्र कान्तिवाले, चार शुभ भुजाओंसे

वीरासनस्थञ्च शशाङ्कचूडं
श्रीदक्षिणामूर्तिगुरुं स्मरामि॥२॥

त्रिकोणाद्बहिः प्रत्येककोणाग्रे षडङ्गयुवतीनां वन्दना

स्यन्दे त्रिकोणाद्बहिरङ्गदेव्यः
षडङ्गपूर्वा हि युवत्यभिख्याः।
रक्ताः स्वमुद्राङ्कितपाणिपद्माः
प्रत्येककोणयुगलं स्मरामि॥३॥

त्रिकोणाद्बहिः प्रत्येककोणाग्रे षोडशी-तिथिनित्याकलादीनां नित्याकलानां वन्दना

एतत्त्रिकोणाद्बहिरग्रकोणे
नित्याकलां तां हि तिथिस्वरूपाम्।
दक्षे कलां सप्तदशीं च वामे
ह्यष्टादशीं तां सकलाः सुरम्याः॥

मोतीकी माला, अमृतका कलश, ज्ञान मुद्रा तथा पुस्तकका धारण करनेवाले, दिव्य वस्त्रोंसे युक्त, चन्दन गन्धके लेपसे तथा मणि-रत्नोंसे उज्ज्वल अङ्गवाले, वीरासन पर बैठे हुए, मस्तक पर चन्द्रमाका धारण करनेवाले श्रीदक्षिणामूर्ति गुरुका स्मरण करता हूँ॥२॥

षडङ्गयुवतियोंकी वन्दना—मैं चक्रमें त्रिकोणके बाहर षडङ्गयुवति नामक अङ्गदेवियोंका स्मरण करता हूँ; जो कि रक्त वर्णवाली, अपनी-अपनी मुद्राओंके चिह्नसे अङ्कित हाथोंवाली तथा प्रत्येक कोणमें युगलात्मक रूपसे स्थित हैं॥३॥

षोडशी-तिथि नित्याकला आदि तीन नित्याकलाओंकी वन्दना—मैं इस त्रिकोणके बाहर अग्र कोणमें तिथि स्वरूप उस नित्या कलाका, दक्षमें सप्तदशीका तथा वाममें उस अष्टादशीका निरन्तर

सिन्दूरवर्णा धृतचन्द्रचूडाः
प्रोत्फुल्लरक्ताब्जदलत्रिनेत्राः।
पाशं सृणिञ्चापशरान्दधानाः
नित्याकलास्ताः सततं स्मरामि।।४।।

जृम्भणबाणशक्त्यादीनां चतुष्कायुधशक्तीनां वन्दना

विचिन्त्य भागं च चतुष्कमत्र
तस्मिन् स्थितां जृम्भणबाणशक्तिम्।
सम्मोहिनीं चापशरीरशक्तिं
श्रीपाशशक्तिं वशकारिणीं च।।
तां स्तम्भनाख्यां सृणिशक्तिमन्याम्
एताश्चतुष्कायुधशक्तिनाम्न्यः।
सर्वाः स्मितास्यामितमस्तकास्ता
वराभयाढ्या अरुणाः स्मरामि।।५।।

स्मरण करता हूँ; जो कि सभी मनका रमण करानेवाली हैं; सिन्दूर वर्णवाली हैं; मस्तक पर चन्द्रमाका धारण की हुई हैं; विकसित लाल कमलके समान तीन आँखोंवाली तथा पाश, अङ्कुश, धनुष और बाणका धारण करनेवाली नित्याकलाएँ हैं।।४।।

जृम्भण बाणशक्ति आदि चार आयुध शक्तियोंकी वन्दना—मैं यहाँ पर चार भागोंकी कल्पना करके उनमें स्थित जृम्भण करनेवाली बाण शक्ति, सम्मोहन करनेवाली चाप शक्ति, वशीकरण करनेवाली पाश शक्ति तथा स्तम्भन नामक अङ्कुश शक्तिका स्मरण करता हूँ; जो कि 'चार आयुध शक्ति' कहलाती हैं; सभी विहसित मुखसे युक्त अनगिनत मस्तकोंवाली, वर मुद्रा तथा अभय मुद्रासे युक्त, अरुण

त्रिकोण-चक्रेश्वर्याः श्रीत्रिपुराम्बिकायाः वन्दना

इच्छासिद्धिसुशाक्तदर्शनमहाबीजाख्यमुद्रायुतां
श्रीनादाभिधसिद्धिहेतुरुचिरे चक्रे स्थितां नायिकाम्।
चन्द्रार्द्धाङ्कितदिव्यरत्नमुकुटां बालार्ककोटिप्रभां
वन्दे श्रीत्रिपुराम्बिकामभयदां विद्यावरस्त्रक्कराम्॥६॥

॥ इति नवमावरणवन्दना ॥

वर्णवाली हैं॥५॥

त्रिकोण चक्रेश्वरी श्रीत्रिपुराम्बिकाकी वन्दना—मैं नाद नामक सिद्धिके कारणस्वरूप सुन्दर चक्रमें स्थित चक्रेश्वरी श्रीत्रिपुराम्बिकाकी वन्दना करता हूँ; जो कि उगते हुए सूर्यकी करोडों किरणोंके समान कान्तिवाली, अर्द्ध चन्द्राङ्कित दिव्य रत्नोंसे निर्मित मुकुटका धारण करनेवाली, अभय मुद्रा, पुस्तक, वर मुद्रा तथा अक्षमालासे युक्त हाथोंवाली, इच्छा सिद्धि, शाक्त दर्शन तथा सर्वबीजा नामक मुद्रासे युक्त है॥६॥

॥ इति नवमावरणवन्दना ॥

दशमावरणवन्दना

॥ श्रीगायत्रीब्रह्मविद्यायै नमः ॥

बिन्दु-चक्रस्य वन्दना

भूयोऽन्यं श्रीबैन्दवाख्यं सुचक्रं
दिव्यं साक्षाच्छ्रीशिवात्माभिधञ्च।
देदीप्ताभं मिश्रबिन्दुस्वरूपं
सर्वानन्दस्वप्रकाशं स्मरामि॥१॥

पश्चिमादिवामावर्तेन रत्यादीनां पञ्चदशपरापरयोगिनीनां वन्दना

आदौ रतिं प्रीतिमथो मनोभवां
श्रीद्राविणीं क्षोभणिकां वशीकराम्।
आकर्षिणीं चैव सुमीनकेतनां
भूयोऽन्यदेवीं सुभगां भगान्तथा॥

बिन्दु चक्रकी वन्दना—मैं पुनः एक अन्य बिन्दु नामक सुन्दर चक्रका स्मरण करता हूँ; जो कि दिव्य रूपवाला है; साक्षात् शिवशक्त्यात्मक है; दीप्त कान्तिवाला है; शुक्ल तथा अरुणके मिश्र वर्णवाला बिन्दु रूप है तथा सर्वानन्दमय है॥१॥

रति आदि पन्द्रह देवियोंकी वन्दना—मैं पहले रति, उसके बाद प्रीति, मनोभवा, द्राविणी, क्षोभिणी, वशीकरिणी, आकर्षिणी तथा सुमीनकेतना, पुनः अन्य देवी सुभगा तथा भगा, उस भगसर्पिणी, पुनः देवी भगमालिनी, उस प्रकार देवी अनङ्गा, अनङ्ग मेखला तथा

श्रीसर्पिणीं तां भगपूर्वरूपिणीं
भूयश्च शक्तिं भगमालिनीन्तथा।
देवीमनङ्गां समनङ्गमेखलां
चानङ्गपूर्वां मदनातुरामिमाः।।
रक्ताः सुपाशाङ्कुशबाणचापकान्
करैर्दधाना मणिमाल्यभूषिताः।
परापरा योगिनिकाः स्मराम्यहम्।।२।।

बिन्दु-चक्रेश्वर्याः त्रिपुरभैरव्याः वन्दना

आदित्यमण्डलनिभां नरमुण्डमालां
सोमाग्निसूर्यनयनां शिवचक्रनाथाम्।
खण्डेन्दुराजमुकुटां नवयौवनाढ्यां
माणिक्यरत्नखचितारुणवस्त्रभूषाम्।।
संलिप्तशोणितकुचद्वययुक्तदेहां
मालास्वभीतिवरपुस्तकपाणिपद्माम्।

अनङ्ग मदनातुरा; इन देवियोंका स्मरण करता हूँ जो कि रक्त वर्णकी हैं; मणिकी मालाका धारण की हुई हैं; जिन्होंने हाथोंमें पाश, अङ्कुश, बाण तथा धनुषका धारण किया है तथा जो परापर योगिनियाँ कहलाती हैं।।२।।

बिन्दु चक्रेश्वरी त्रिपुरभैरवीकी वन्दना—मैं बिन्दु चक्रेश्वरी त्रिपुर-भैरवीको नमस्कार करता हूँ जो कि सूर्यमण्डलके समान रक्त वर्णकी कान्तिवाली नवयुवति, नर मुण्डोंकी मालासे युक्त, चन्द्र, सूर्य तथा अग्नि रूपी तीन आँखोंवाली, मस्तक पर अर्द्ध चन्द्रका धारण करने-वाली, माणिक्य रत्नोंसे युक्त, लाल वर्णके वस्त्रोंसे अलङ्कृत, रक्तसे

बिन्दौ हि लब्धिशुभयोनिसुशैवशास्त्रैः
युक्तां स्मितां त्रिपुरभैरविकां नमामि।।३।।

।। इति दशमावरणवन्दना ।।

लिप्त स्तन युगलसे युक्त शरीरवाली, हाथोंमें अक्षमाला, अभय मुद्रा, वर मुद्रा तथा पुस्तकका धारण करनेवाली, बिन्दु चक्रमें प्राप्ति सिद्धि, योनि मुद्रा तथा शैव दर्शनसे युक्त तथा विहसित मुखवाली है।।३।।

।। इति दशमावरणवन्दना ।।

एकादशावरणवन्दना

॥ श्रीगायत्रीब्रह्मविद्यायै नमः ॥

बैन्दव-चक्रान्तर्गत-कल्पित-श्रीमहाबैन्दव-चक्रस्य वन्दना

श्रीसर्वानन्दाख्यचक्रान्तरस्थं
ह्यन्यं चक्रं श्रीमहाबैन्दवाख्यम्।
सद्रूपं वै श्रीपरब्रह्मतत्त्वं
वन्देऽद्वैतं केवलं स्वप्रकाशम्॥१॥

महाबैन्दव-चक्रेश्वर्याः त्रिपुरसुन्दर्याः वन्दना

साक्षाच्छ्रीकुलकौलदर्शनमहामुद्रात्रिखण्डायुतां
देवीं सर्वसुकामसिद्धिसहितां ब्रह्मात्मचक्रे स्थिताम्।
रक्तां पाशधनुःशराङ्कुशधरां दिव्यां जगन्मोहिनीं
वन्दे त्रैपुरसुन्दरीं समरसाकाराख्यचक्रेश्वरीम्॥२॥

बिन्दु चक्रान्तर्गत महाबैन्दव चक्रकी वन्दना—मैं सर्वानन्दमय चक्रके अन्तर्गत महाबैन्दव नामक एक अन्य चक्रकी वन्दना करता हूँ; जो कि परब्रह्म तत्त्वात्मक एकमात्र अद्वैत स्वरूप है॥१॥

महाबैन्दव चक्रेश्वरी त्रिपुरसुन्दरीकी वन्दना—मैं साक्षात् श्रीशक्तिसे सम्बन्धित कौल दर्शन, त्रिखण्डा महामुद्रा तथा सर्वकाम सिद्धिसे युक्त, रक्त वर्णकी कान्तिवाली, पाश, धनुष, बाण तथा अङ्कुशका धारण करनेवाली, दिव्य रूपवाली, जगतको मोहित करनेवाली तथा समरसाकार नामक ब्रह्मात्म चक्रमें स्थित देवी त्रिपुरसुन्दरीकी वन्दना

कल्पित-षट्कोणके ब्रह्मादीनां षट्शाम्भवानां वन्दना

षट्कोणकं तत्र पुनर्विचिन्त्य
षट्शाम्भवान् नौमि पुनः क्रमेण।।३।।

षट्कोणकस्य मध्ये श्रीमहाशाम्भवस्य वन्दना

मध्ये च साक्षात्स्थितचित्स्वरूपं
षडन्वयेशं हि महेतिपूर्वम्।
षडाननं द्वादशपाणिपद्मं
श्रीशाम्भवं चन्द्रधरं नमामि।।४।।

श्रीचक्रे चतुर्विंशतिगायत्रीवर्णमातृकानां वन्दना

नवत्रिकोणै रचितेषु दिव्य-
स्यन्देषु संस्थाः किल वर्णरूपाः।
विभिन्नमूर्त्तीर्हरिकेशपूज्या
वन्दे चतुर्विंशतिवेदमातॄः।।५।।

करता हूँ।।२।।

कल्पित षट्कोणकमें ब्रह्मादि छह शाम्भवोंकी वन्दना—मैं फिर वहाँ पर एक षट्कोणककी कल्पना करके फिर क्रमसे छह शाम्भवोंको नमस्कार करता हूँ।।३।।

षट्कोणकके मध्यमें श्रीमहाशाम्भवकी वन्दना—मैं मध्यमें श्रीमहाशाम्भवको नमस्कार करता हूँ; जो कि छह शाम्भवोंका ईश, साक्षात् चैतन्यस्वरूप, छह मुखोंवाला, बारह हाथोंवाला है तथा मस्तक पर चन्द्रमाका धारण करनेवाला है।।४।।

श्रीचक्रमें चौबीस गायत्री वर्णमातृकाओंकी वन्दना—मैं नौ त्रिकोणोंसे निर्मित दिव्य चक्रोंमें स्थित प्रसिद्ध वर्णरूपिणी, अनेक

वर्णसमष्टिरूपिण्यास्तुरीयाया ब्रह्मगायत्रीवेदमातृकायाः वन्दना

स्यन्दे स्थिता मनुमयी रुचिरान्यभागे
पूर्वोक्तवेदजननी सुसमष्टिरूपा।
मुक्ताभविद्रुमसुकाञ्चननीलशुक्ल-
तत्त्वात्मवर्णयुतपञ्चमुखाब्जयुक्ता॥
पाशाङ्कुशाब्जयुगलाभयपात्रशङ्ख-
श्रीमद्रथाङ्गवरसूत्रकरा स्मितास्या।
सङ्गीयते च मुखरैः परमेश्वरी या
तां वै नमामि सततं निगमादिरूपाम्॥६॥

॥ इत्येकादशावरणवन्दना ॥

मूर्तियोंवाली, ब्रह्मा, विष्णु तथा रुद्रके द्वारा पूजनीय चौबीस गायत्री वर्णमातृकाओंकी वन्दना करता हूँ॥५॥

वर्णसमष्टिरूपिणी तुरीया ब्रह्मगायत्री वेदमाताकी वन्दना—मैं श्रीचक्रके दूसरे भागमें स्थित मन्त्रमयी, सुन्दर कान्तिवाली, पूर्वोक्त वेदमाता, वर्णसमष्टिरूपा, मुक्ताकी आभा, मूँगाके रँग, विशुद्ध स्वर्ण-की कान्ति, नील तथा शुक्ल—इन तत्त्वोंके अपने रँगोंसे युक्त पाँच मुखकमलोंवाली, पाश, अंकुश, दो कमल, अभय मुद्रा, पात्र, शंख, चक्र, वरमुद्रा तथा सूत्रसे युक्त हाथोंवाली, मुस्कानसे युक्त मुखोंवाली तथा जो ध्वनिपूर्वक गायी जाती है उस वेदकारणीभूता परमेश्वरीको निरन्तर नमस्कार करता हूँ॥६॥

॥ इत्येकादशावरणवन्दना ॥

परिशिष्टम्

॥ श्रीगायत्रीब्रह्मविद्यायै नमः ॥

नित्यार्चनम्

श्रीगायत्री-ब्रह्मविद्या-चक्रस्थदेवतानां पूजनार्थं सदैव 'ॐ ह्रीं श्रीं'-पूर्वक-चतुर्थ्यन्तमन्त्रः 'नमः' इत्यन्तो व्यवहृतो भवति। तद्यथा–'ॐ ह्रीं श्रीं श्रीपरदेवतायै नमः।' तथैव 'स्वाहा'शब्दान्तो मन्त्रो होम-कार्यार्थं प्रयुक्तो भवति। तद्यथा–'ॐ ह्रीं श्रीं श्रीपरदेवतायै स्वाहा।' इति। अत्र 'ॐ ह्रीं श्रीं'-पूर्वक-चतुर्थ्यन्तमन्त्रा उल्लिखिताः सन्ति।

प्रथमावरणम्

ॐ ह्रीं श्रीं श्रीपरदेवतायै.

३ श्रीपरयन्त्रराजाय.

३ इन्द्राय.

३ अग्नये.

३ यमाय.

३ नैर्ऋताय.

३ वरुणाय.

३ वायवे.

३ कुवेराय.

३ ईशानाय.

३ ब्रह्मणे.

३ अनन्ताय.

३ भूपुर-चक्राय.

३ सर्वयोगिनीस्वरूपसर्वभूतेभ्यः.

३ क्षेत्रपतये.

३ गणनायकाय.

३ वटुकभैरवाय.

३ तिरस्कर्यै.

३ वनदुर्गायै.

३ कामदेवाय.

३ वसन्ताय.

३ शङ्खनिधये.
३ पद्मनिधये.
३ कुब्जकेश्यै.
३ सिद्धलक्ष्म्यै.
३ उन्मन्यै.
३ दक्षिणकालिकायै.
३ अणिमा-सिद्ध्यै.
३ गरिमा-सिद्ध्यै.
३ लघिमा-सिद्ध्यै.
३ महिमा-सिद्ध्यै.
३ ईशिता-सिद्ध्यै.
३ वशिता-सिद्ध्यै.
३ प्राकाम्यका-सिद्ध्यै.
३ सर्वभुक्तिकरी-सिद्ध्यै.
३ इच्छा-सिद्ध्यै.
३ प्राप्ति-सिद्ध्यै.
३ सर्वार्थ-सिद्ध्यै.
३ ब्राह्मी-मातृकायै.
३ माहेश्वरी-मातृकायै.
३ कौमारी-मातृकायै.
३ वैष्णवी-मातृकायै.
३ वाराही-मातृकायै.
३ माहेन्द्री-मातृकायै.
३ चामुण्डा-मातृकायै.
३ महालक्ष्मी-मातृकायै.
३ सर्वसङ्क्षोभिणी-मुद्रायै.
३ महायोनि-मुद्रायै.
३ सर्वविद्राविणी-मुद्रायै.
३ सर्वाकिर्षिणी-मुद्रायै.
३ सर्ववशङ्करी-मुद्रायै.
३ सर्वोन्मादिनी-मुद्रायै.
३ सर्वमहाङ्कुशा-मुद्रायै.
३ सर्वखेचरी-मुद्रायै.
३ सर्वबीजा-मुद्रायै.
३ सर्वयोनि-मुद्रायै.
३ सर्वत्रिखण्डा-मुद्रायै.
३ भूपुरचक्रेश्वरी-श्रीत्रिपुरायै.
॥५८॥

द्वितीयावरणम्

ॐ ह्रीं श्रीं वृत्तत्रयचक्राय.
३ कालरात्री-मातृकायै.
३ खातिता-मातृकायै.

३ गात्री-मातृकायै.
३ घण्टा-मातृकायै.
३ ङार्णात्मिका-मातृकायै.
३ चण्डा-मातृकायै.
३ छात्मिका-मातृकायै.
३ जया-मातृकायै.
३ झङ्कारिणी-मातृकायै.
३ ज्ञानरूपा-मातृकायै.
३ टङ्कहस्ता-मातृकायै.
३ ठङ्कारिणी-मातृकायै.
३ डकारिणी-मातृकायै.
३ ढकारिणी-मातृकायै.
३ णकारिणी-मातृकायै.
३ तकारिणी-मातृकायै.
३ थाणी-मातृकायै.
३ दाक्षायणी-मातृकायै.
३ धात्री-मातृकायै.
३ नादा-मातृकायै.
३ पार्वती-मातृकायै.
३ फेट्कारिणी-मातृकायै.
३ बन्धिनी-मातृकायै.
३ भद्रकाली-मातृकायै.
३ माया-मातृकायै.
३ श्री-मातृकायै.
३ षण्ढ-मातृकायै.
३ सरस्वती-मातृकायै.
३ हंस-मातृकायै.
३ अमृता-मातृकाम्बायै.
३ आकर्षिणी-मातृकाम्बायै.
३ इन्द्राणी-मातृकाम्बायै.
३ ईशानी-मातृकाम्बायै.
३ उमा-मातृकाम्बायै.
३ ऊर्ध्वकेशी-मातृकाम्बायै.
३ ऋद्धिरात्री-मातृकाम्बायै.
३ ॠद्धीश्वरी-मातृकाम्बायै.
३ ऌता-मातृकाम्बायै.
३ ॡका-मातृकाम्बायै.
३ एकपादा-मातृकाम्बायै.
३ ऐश्वर्यिका-मातृकाम्बायै.
३ ओङ्कारात्मिका-मातृकाम्बायै.
३ औषधा-मातृकाम्बायै.
३ अम्बिका-मातृकाम्बायै.

३ अक्षरात्मिका-मातृकाम्बायै.
३ कामेश्वरी-नित्याकलायै.
३ भगमालिनी-नित्याकलायै.
३ नित्यक्लिन्ना-नित्याकलायै.
३ भेरुण्डा-नित्याकलायै.
३ वह्निवासिनी-नित्याकलायै.
३ वज्रेश्वरी-नित्याकलायै.
३ शिवदूती-नित्याकलायै.
३ त्वरिता-नित्याकलायै.
३ कुलसुन्दरी-नित्याकलायै.
३ विमला-नित्याकलायै.
३ नीलपताका-नित्याकलायै.
३ विजया-नित्याकलायै.
३ सर्वमङ्गला-नित्याकलायै.
३ ज्वालामालिनी-नित्याकलायै.
३ विचित्रा-नित्याकलायै.
३ श्रीसुन्दरी-नित्याकलायै.
३ वृत्तत्रयचक्रेश्वरी-त्रिपुरेशिन्यै.

॥५८+६३=१२१॥

तृतीयावरणम्

ॐ ह्रीं श्रीं षोडशदलचक्राय.
३ कामाकर्षिणी-नित्यशक्तये.
३ बुद्ध्याकर्षिणी-नित्यशक्तये.
३ अहङ्काराकर्षिणी-नित्यशक्तये.
३ शब्दाकर्षिणी-नित्यशक्तये.
३ स्पर्शाकर्षिणी-नित्यशक्तये.
३ रूपाकर्षिणी-नित्यशक्तये.
३ रसाकर्षिणी-नित्यशक्तये.
३ गन्धाकर्षिणी-नित्यशक्तये.
३ चित्ताकर्षिणी-नित्यशक्तये.
३ धैर्याकर्षिणी-नित्यशक्तये.
३ स्मृत्याकर्षिणी-नित्यशक्तये.
३ नामाकर्षिणी-नित्यशक्तये.
३ बीजाकर्षिणी-नित्यशक्तये.
३ आत्माकर्षिणी-नित्यशक्तये.
३ अमृताकर्षिणी-नित्यशक्तये.
३ शरीराकर्षिणी-नित्यशक्तये.
३ षोडशदलचक्रेश्वरीत्रिपुरेश्वर्यै.

॥१२१+१८=१३९॥

चतुर्थावरणम्

ॐ ह्रीं श्रीं अष्टदल-चक्राय.
३ अनङ्गकुसुमा-देव्यै.

३ अनङ्गमेखला-देव्यै.

३ अनङ्गमदना-देव्यै.

३ अनङ्गमदनातुरा-देव्यै.

३ अनङ्गरेखा-देव्यै.

३ अनङ्गवेगिनी-देव्यै.

३ अनङ्गाङ्कुशा-देव्यै.

३ अनङ्गमालिनी-देव्यै.

३ अष्टदलचक्रेश्वरी-त्रिपुरसुन्दर्यै.

॥१३९+१०=१४९॥

पञ्चमावरणम्

ॐ ह्रीं श्रीं चतुर्दशारचक्राय.

३ सर्वसङ्क्षोभिणी-शक्तये.

३ सर्वविद्राविणी-शक्तये.

३ सर्वाकर्षिणी-शक्तये.

३ सर्वाह्लादिनी-शक्तये.

३ सर्वसम्मोहिनी-शक्तये.

३ सर्वस्तम्भिनी-शक्तये.

३ सर्वजृम्भिणी-शक्तये.

३ सर्ववशङ्करी-शक्तये.

३ सर्वरञ्जिनी-शक्तये.

३ सर्वोन्मादिनी-शक्तये.

३ सर्वार्थसाधिनी-शक्तये.

३ सर्वसम्पत्तिपूर्णा-शक्तये.

३ सर्वमन्त्रमयी-शक्तये.

३ सर्वद्वन्द्वक्षयङ्करी-शक्तये.

३ चतुर्दशारचक्रेश्वरीत्रिपुरवासिन्यै.

॥१४९+१६=१६५॥

षष्ठावरणम्

ॐ ह्रीं श्रीं बहिर्दशारचक्राय.

३ सर्वसिद्धिप्रदा-देव्यै.

३ सर्वसम्पत्प्रदा-देव्यै.

३ सर्वप्रियङ्करी-देव्यै.

३ सर्वमङ्गलकारिणी-देव्यै.

३ सर्वकामप्रदा-देव्यै.

३ सर्वदुःखविमोचिनी-देव्यै.

३ सर्वमृत्युविनाशिनी-देव्यै.

३ सर्वविघ्ननिवारिणी-देव्यै.

३ सर्वाङ्गसुन्दरी-देव्यै.

३ सर्वसौभाग्यदायिनी-देव्यै.

३ बहिर्दशारचक्रेश्वरी-त्रिपुराश्रियै.

॥१६५+१२=१७७॥

सप्तमावरणम्

ॐ ह्रीं श्रीं अन्तर्दशारचक्राय.
३ सर्वज्ञा-देव्यै.
३ सर्वशक्तिमयी-देव्यै.
३ सर्वैश्वर्यप्रदायिनी-देव्यै.
३ सर्वज्ञानमयी-देव्यै.
३ सर्वव्याधिविनाशिनी-देव्यै.
३ सर्वाधारस्वरूपिणी-देव्यै.
३ सर्वपापहरा-देव्यै.
३ सर्वानन्दमयी-देव्यै.
३ सर्वरक्षास्वरूपिणी-देव्यै.
३ सर्वेप्सितार्थप्रदा-देव्यै.
३ अन्तर्दशारचक्रेश्वरीत्रिपुरमालिन्यै.

॥१७७+१२=१८९॥

अष्टमावरणम्

ॐ ह्रीं श्रीं अष्टारचक्राय.
३ वशिनी-वाग्देवताम्बायै.
३ कामेश्वरी-वाग्देवताम्बायै.
३ मोहिनी-वाग्देवताम्बायै.
३ विमला-वाग्देवताम्बायै.
३ अरुणा-वाग्देवताम्बायै.
३ जयिनी-वाग्देवताम्बायै.
३ सर्वेश्वरी-वाग्देवताम्बायै.
३ कौलिनी-वाग्देवताम्बायै.
३ अष्टारचक्रेश्वरी-त्रिपुरासिद्धायै.

॥१८९+१०=१९९॥

नवमावरणम्

ॐ ह्रीं श्रीं त्रिकोणचक्राय.
३ ब्रह्म-दिव्यगुरवे.
३ ब्रह्मशक्ति-दिव्यगुरवे.
३ विष्णु-दिव्यगुरवे.
३ विष्णुशक्ति-दिव्यगुरवे.
३ रुद्र-दिव्यगुरवे.
३ रुद्रशक्ति-दिव्यगुरवे.
३ ईश्वर-दिव्यगुरवे.
३ ईश्वरशक्ति-दिव्यगुरवे.
३ सदाशिव-दिव्यगुरवे.
३ सदाशिवशक्ति-दिव्यगुरवे.
३ आदिनाथ-दिव्यगुरवे.
३ आदिनाथशक्ति-दिव्यगुरवे.
३ शुक-सिद्धगुरवे.
३ व्यास-सिद्धगुरवे.
३ वामदेव-सिद्धगुरवे.

३ रैवतक-सिद्धगुरवे.
३ दत्तात्रेय-सिद्धगुरवे.
३ ऋभुक्षज-सिद्धगुरवे.
३ सनत्सुजात-सिद्धगुरवे.
३ सनत्कुमार-सिद्धगुरवे.
३ सनातन-सिद्धगुरवे.
३ सनन्द-सिद्धगुरवे.
३ सनक-सिद्धगुरवे.
३ विष्णु-सुमानवगुरवे.
३ माधव-सुमानवगुरवे.
३ महेन्द्र-सुमानवगुरवे.
३ भास्कर-सुमानवगुरवे.
३ महेश-सुमानवगुरवे.
३ नृसिंह-सुमानवगुरवे.
३ श्री-गुरवे.
३ परम-गुरवे.
३ परापर-गुरवे.
३ परमेष्ठि-गुरवे.
३ परमाचार्य-गुरवे.
३ पूर्वसिद्ध-गुरवे.
३ आदिसिद्ध-गुरवे.
३ श्रीदक्षिणामूर्तिगुरवे.
३ हृदय-देव्यै.
३ शिरो-देव्यै.
३ शिखा-देव्यै.
३ कवच-देव्यै.
३ नेत्र-देव्यै.
३ अस्त्र-देव्यै.
३ षोडशीतिथि-नित्याकलायै.
३ सप्तदशी-नित्याकलायै.
३ अष्टादशी-नित्याकलायै.
३ जृम्भणबाण-शक्तये.
३ मोहनचाप-शक्तये.
३ वशीकरणपाश-शक्तये.
३ स्तम्भनाङ्कुश-शक्तये.
३त्रिकोणचक्रेश्वरीश्रीत्रिपुराम्बिकायै.

॥१९९+५२=२५१॥

दशमावरणम्

ॐ ह्रीं श्रीं बिन्दुचक्राय.
३ रति-देव्यै.
३ प्रीति-देव्यै.
३ मनोभवा-देव्यै.

३ द्राविणी-देव्यै.

३ क्षोभिणी-देव्यै.

३ वशीकरिणी-देव्यै.

३ आकर्षिणी-देव्यै.

३ सुमीनकेतना-देव्यै.

३ सुभगा-देव्यै.

३ भगा-देव्यै.

३ भगसर्पिणी-देव्यै.

३ भगमालिनी-देव्यै.

३ अनङ्गा-देव्यै.

३ अनङ्गमेखला-देव्यै.

३ अनङ्गमदनातुरा-देव्यै.

३ बिन्दुचक्रेश्वरी-त्रिपुरभैरव्यै.

॥२५१+१७=२६८॥

एकादशावरणम्

ॐ ह्रीं श्रीं महाबैन्दवचक्राय.

३ महाबैन्दवचक्रेश्वरीत्रिपुरसुन्दर्यै.

३ ब्रह्म-शाम्भवाय.

३ विष्णु-शाम्भवाय.

३ रुद्र-शाम्भवाय.

३ ईश्वर-शाम्भवाय.

३ सदाशिव-शाम्भवाय.

३ आदिनाथ-शाम्भवाय.

३ श्रीमहाशाम्भवाय.

ॐ तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गोदेवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात् ॐ ह्रीं श्रीं श्रीगायत्रीवर्ण-मातृकाभ्यः.

ॐ तत्सवितुर्वरेण्य भर्गोदेवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात् परो रजसेऽसावदोम् ॐ ह्रीं श्रीं श्रीगायत्रीब्रह्मविद्यायै.

॥२६८+११=२७९॥

श्रीविद्यान्तर्गत-'प्रह्लाद'-साहित्यम्

(आगमतन्त्रम्)

०१. *श्रीचक्रनिरूपणम्।* सविमर्श-'प्रह्लाद' हिन्दीव्याख्यासहितम्। ज्ञान-सपर्याखण्डात्मकम्। लेखकः सम्पादकश्च–गोस्वामी प्रह्लाद गिरि 'वेदान्तकेशरी'।

०२. *श्यामाकाली महाविद्या।* सविमर्श-'प्रह्लाद' हिन्दीव्याख्या-सहिता। ज्ञानसपर्या-खण्डात्मिका। लेखकः सम्पादकश्च–गोस्वामी प्रह्लाद गिरि 'वेदान्तकेशरी'।

०३. *तारा महाविद्या।* सविमर्श-'प्रह्लाद' हिन्दीव्याख्यासहिता। ज्ञान-सपर्याखण्डात्मिका। लेखकः सम्पादकश्च–गोस्वामी प्रह्लाद गिरि 'वेदान्तकेशरी'।

०४. *षोडशी महाविद्या।* सविमर्श-'प्रह्लाद' हिन्दीव्याख्यासहिता। ज्ञान-सपर्या-खण्डात्मिका। लेखकः सम्पादकश्च–गोस्वामी प्रह्लाद गिरि 'वेदान्तकेशरी'।

०५. *भुवनेश्वरी महाविद्या।* सविमर्श-'प्रह्लाद' हिन्दीव्याख्यासहिता। ज्ञानसपर्या-खण्डात्मिका। लेखकः सम्पादकश्च–गोस्वामी प्रह्लाद गिरि 'वेदान्तकेशरी'।

०६. *भैरवी महाविद्या।* सविमर्श-'प्रह्लाद' हिन्दीव्याख्यासहिता। ज्ञान-सपर्या-खण्डात्मिका। लेखकः सम्पादकश्च–गोस्वामी प्रह्लाद गिरि 'वेदान्तकेशरी'।

०७. *छिन्नमस्ता महाविद्या।* सविमर्श-'प्रह्लाद' हिन्दीव्याख्यासहिता। ज्ञानसपर्या-खण्डात्मिका। लेखकः सम्पादकश्च–गोस्वामी प्रह्लाद गिरि 'वेदान्तकेशरी'।

०८. *धूमावती महाविद्या।* सविमर्श-'प्रह्लाद' हिन्दीव्याख्यासहिता। ज्ञानसपर्या-खण्डात्मिका। लेखकः सम्पादकश्च–गोस्वामी प्रह्लाद गिरि 'वेदान्तकेशरी'।

०९. *बगलामुखी महाविद्या।* सविमर्श-'प्रह्लाद'हिन्दीव्याख्या-सहिता। ज्ञानसपर्या-खण्डात्मिका। लेखकः सम्पादकश्च–गोस्वामी प्रह्लाद गिरि 'वेदान्तकेशरी'।

१०. *मातङ्गिनी महाविद्या।* सविमर्श-'प्रह्लाद'हिन्दीव्याख्यासहिता। ज्ञानसपर्या-खण्डात्मिका। लेखकः सम्पादकश्च–गोस्वामी प्रह्लाद गिरि 'वेदान्तकेशरी'।

११. *कमला महाविद्या।* सविमर्श-'प्रह्लाद'हिन्दीव्याख्यासहिता। ज्ञान-सपर्याखण्डात्मिका। लेखकः सम्पादकश्च–गोस्वामी प्रह्लाद गिरि 'वेदान्तकेशरी'।

१२. *बाला त्रिपुरसुन्दरी।* सविमर्श-'प्रह्लाद'हिन्दीव्याख्यासहिता। ज्ञान-सपर्या-खण्डात्मिका। लेखकः सम्पादकश्च–गोस्वामी प्रह्लाद गिरि 'वेदान्तकेशरी'।

१३. *ललिता त्रिपुरसुन्दरी।* सविमर्श-'प्रह्लाद'हिन्दीव्याख्यासहिता। ज्ञानसपर्या-खण्डात्मिका। लेखकः सम्पादकश्च–गोस्वामी प्रह्लाद गिरि 'वेदान्तकेशरी'।

१४. *गायत्री ब्रह्मविद्या।* सविमर्श-'प्रह्लाद'हिन्दीव्याख्यासहिता। ज्ञान-सपर्याखण्डात्मिका। लेखकः सम्पादकश्च–गोस्वामी प्रह्लाद गिरि 'वेदान्तकेशरी'।

●

प्रस्तुत ग्रन्थके सम्बन्धमें........

गायत्री ब्रह्मविद्या। श्रीविद्यान्तर्गता। सविमर्श-'प्रह्लाद'हिन्दी-व्याख्यासहिता। ज्ञान-सपर्याखण्डात्मिका। लेखकः सम्पादकश्च–गोस्वामी प्रह्लाद गिरि 'वेदान्तकेशरी'।

श्रीविद्या साधनाका सर्वश्रेष्ठ साधन दशचक्रात्मक 'श्रीचक्र' है। प्रस्तुत ग्रन्थमें दशचक्रात्मक 'श्रीगायत्री ब्रह्मविद्या चक्र'का निरूपण किया गया है। श्रीदक्षिणामूर्त्ति 'शिव' ही गुरु हैं। श्रीगायत्री ब्रह्म-विद्याकी त्रिबीजा ब्रह्मगायत्री विद्या ही मन्त्र है तथा श्रीगायत्री ब्रह्म-विद्या ही देवता है। श्रीदक्षिणामूर्त्ति गुरुपरम्परामें इसकी उपासना ग्यारह आवरणोंके माध्यमसे की जाती है। प्रस्तुत ग्रन्थमें दो खण्ड हैं–ज्ञान खण्ड तथा सपर्या खण्ड। ज्ञान खण्डमें श्रीविद्याके अन्तर्गत श्रीगायत्री ब्रह्मविद्याके पारम्परिक त्रिबीजा, त्रिपदा तथा तुरीया ब्रह्मगायत्री मन्त्रके अत्यन्त गूढ़ रहस्योंका निरूपण सरल भाषामें किया गया है।

वैदिक ब्रह्मगायत्री मन्त्र क्या है? इसके कितने पाद होते हैं? प्रत्येक पादमें कितने अक्षर होते हैं? अक्षरोंका क्या संकेत है? व्यष्टि तथा समष्टि ब्रह्मगायत्री क्या है? ब्रह्मगायत्रीका त्रिबीजास्वरूप क्या है? ब्रह्मगायत्रीका तुरीयास्वरूप क्या है? क्या तुरीया ब्रह्मगायत्रीकी उपासनासे पूर्णब्रह्मत्वकी अनुभूति होती है? क्या गायत्री ब्रह्मविद्याके रूपमें जानी जाती है? क्या वैदिक ब्रह्मगायत्री मन्त्र स्तुतिपरक अथवा सिद्धान्तपरक वाक्य है? क्या यह पारस्परिक परामर्श वाक्यके रूपमें त्रिदेवोंमें ख्यात है? क्या यह वैदिक ब्रह्मगायत्री मन्त्र श्रवण, मनन तथा निदिध्यासनके द्वारसे ब्रह्मविद्याका बोध कराता है? इन प्रश्नोंके उत्तरोंका विशिष्ट विवेचन ज्ञानखण्डमें प्राप्त है; जबकि सपर्याखण्डके अन्तर्गत स्वदीक्षाकी विधि, पूजाविधि तथा वन्दनाका निरूपण हुआ है। यह एक सम्पूर्ण पद्धति है। ग्रन्थका मूल संस्कृत तथा अनुवाद हिन्दी भाषामें निरूपित है। यह प्रस्तुत संस्करण 'श्रीगायत्री ब्रह्मविद्या परम्परा'का अत्यन्त उपयोगी ग्रन्थरत्न है। इति शिवम्।।

तन्त्रशास्त्र-ग्रन्थाः

काकचण्डीश्वरकल्पतन्त्रम्। 'हरि' हिन्दी व्याख्योपेतम्
सम्पा० एवं व्याख्याकार— पं० हरिहरप्रसाद त्रिपाठी ७५.००

कालीतन्त्रम्। हिन्दीव्याख्यासंवलितम्।
संपा. एवं टीकाकार— प्रो. लक्ष्मीदत्तशास्त्री मालवीय ५०.००

श्रीकालीपटलपञ्चाङ्ग। कालीकवच, महाकाली सहस्रनामस्तोत्र
श्रीकर्पूरादिस्तुति सहितः ४५.००

कालीपूजापद्धतिः। हिन्दी अनुवाद सहित।
संपा.+व्याख्या श्री कपिलदेव नारायण ३७५.००

कालीरहस्यम्। 'शिवदत्ती' हिन्दी टीका सहित। (कालीपञ्चाङ्ग-
कालीतन्त्र-कालीउपासना-कालीपूजापद्धतिरूपात्मकम्)।
सम्पादक— पण्डित शिवदत्त मिश्र शास्त्री ७५.००

गन्धर्वतन्त्रम्। 'ज्ञानवती [illegible] टीका एवं श्लोकानुक्रम[illegible] सहित।
व्याख्याकार— [illegible]धेश्याम चतुर्वेदी ६७५.००

दुर्गासप्तशती। (सचित्र) [illegible]ङ्गला' हिन्दी व्याख्या, पूजा[illegible] सहित।
व्याख्याकार— [illegible] श्री हरेकांत मिश्र।
सप्तशत्यङ्गष्टक [illegible], मन्त्रकोश, नवचण्डी, [illegible]ण्डी,
सहस्रचण्डी विध[illegible] सहित। सोधपूर्ण नवीन सं[illegible] ९५.००

बगलामुखीसाधना पद्धति। (बगलामुखी सहस्रनामावली स[illegible])
हिन्दी टीका सहित। टीकाकार पं. हरिहरप्रसाद त्रिपाठी ७५.००

भारतीय तन्त्रशास्त्र सिद्धान्त और साधना। प्रस्तुत ग्रन्थ चार खण्डों में विभक्त है—
प्रथमखण्ड तत्त्वमीमांसा (सिद्धान्त) पक्ष, द्वितीयखण्ड आचारमीमांसा,
तृतीयखण्ड सृष्टिमीमांसा, चतुर्थखण्ड प्रमुख तान्त्रिक दृष्टियाँ
—डॉ. श्यामाकान्त द्विवेदी 'आनन्द' ७००.००

लक्ष्मीतन्त्रम्। पाञ्चरात्रागमान्तर्गतं। 'सुधा' हिन्दी व्याख्योपेतम्।
सम्पादक एवं व्याख्याकार-डॉ. सुधाकर मालवीय ५७५.००

वास्तुसौख्यम्। श्रीनीलकण्ठप्रणीतटोडरानन्दान्तर्गतं। अपरनाम गृहसौख्यम्।
सान्वय संस्कृत, 'मोहनबोधिनी' हिन्दी टीका, परिशिष्टादि च समुपेतम् (सचित्र)।
सम्पादक एवं अनुवादक-डॉ. श्रीकृष्ण 'जुगनू' २२५.००

षडाम्नायतन्त्रम्। सविमर्श 'निर्मला' हिन्दी अनुवाद सहित।
व्याख्याकार-डॉ. रूपेश कुमार चौहान २२५.००

Also can be had from : **Chowkhamba Sanskrit Series Office,** Varanasi.

ISBN : 978-81-218-0386-1

C. S. S. OFFICE
Rs. 350/-

designed by Shreyashi GRAPHICS, mo. 9839814784